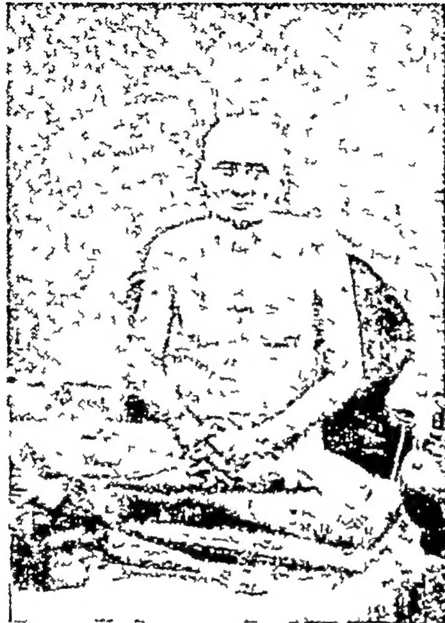


॥ ॐ सिद्धाय नम. ॥

श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचितं

तत्त्वार्थसूत्र-टीका

(पंडित जयचंदजी–कृता)

* सर्वार्थसिद्धि–वचनिका *

–० प्रकाशक ०–

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती श्री १०८ आचार्य शांतिसागर दिगंबर जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्था प्रमाणित

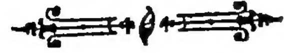
"श्रुतभाण्डार व ग्रंथप्रकाशन समिति, फलटण (जिल्हा, उत्तर सातारा)

"श्री. माणिकचंद मलुकचंद दोशी, मंत्री" व "श्री. तलकचंद वेणीचंद शहा, अध्यक्ष"

वीर संवत् २४८१

मुद्रक : कृ. य. जोशी, बी ए, एफ, आय. ए., विमा मुद्रक आणि प्रकाशक लिमिटेड, सातारा यांचा **विमा छापखाना**

तत्त्वार्थसूत्राणामनुक्रमः



प्रथमोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः

अथ द्वितीयोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः

अथ तृतीयोऽध्यायः

इतितत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः

———o———

अथ चतुर्थोऽध्यायः

शास्त्रजीको नमस्कार करनेके कवित्त।

वीर हिमाचलतैं निकसी, गुरु गौतमके मुखकुंड ढरी है। मोहमहाचल भेद चली, जगकी जडतातप दूर करी है॥ ज्ञानपयोनिधिमांहिरली, बहुभंगतरंगनिसों उछरी है। ता शुचि शारद गंगनदी प्रति, मैं अंजुलिकर शीश धरी है ॥ १ ॥ या जगमंदिरमें अनिवार अज्ञान अँधेर छयो अति भारी। श्रीजिनकी धुनि दीपशिखासम. जो नहिं होत प्रकाशन–हारी ॥ तो किसभांति पदारथपांति, कहां लहते, रहते अविचारी। या विधि संत कहैं धनि हैं, धनि हैं जिनवैन बडे उपकारी ॥ २ ॥

प्रतिदिन शास्त्रस्वाध्यायके प्रारम्भमे इस श्रुतभक्तिको पढना चाहिये।

ॐकारं बिंदुसंयुक्तं नित्यं ध्यायंति योगिनः। कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः ॥ १ ॥

आर्या

अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलमलकलंका। मुनिभिरुपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितं ॥

अज्ञानतिमिरांधानां ज्ञानाञ्जनशलाकया। चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

परमगुरवे नमः, परंपराचार्यगुरवे नमः। सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसंबंधकं भव्यजीवमनःप्रतिबोधकारकमिदं शास्त्रं ❀ श्री.......नामधेयं, अस्य मूलग्रंथकर्तारः श्रीसर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रंथकर्तारः श्रीगणधरदेवास्तेषां वचोऽनुसारमासाद्य ×श्री.......... आचार्य विरचितं ॥

मंगलं भगवान्वीरो मंगलं गौतमो गणी। मंगलं कुंदकुंदाद्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलं ॥ १ ॥

टीप :– ❀ग्रंथनाम ×ग्रंथकर्ताका नाम

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री सर्वार्थसिद्धि–वचनिका–टीका–पंडित जयचंदजी कृताः—

सहायक दातार **श्री. शिवलाल माणिकचंद कोठारी** जीका परिचयः—

प. पू. श्री १०८ चा. च. आचार्यवर्य शांतिसागर महाराजके आदेशसे वीरसंवत २४८० के पर्युषणपर्वमें फलटणमें "श्री श्रुतभांडार और ग्रंथप्रकाशन समिति" की स्थापना चा. च. श्री १०८ आचार्य शांतिसागर दि. जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्थाकी तरफसे हुई उस वख्त आपका शुभागमन धर्मसाधनाके लिए फलटणमें हुवा आचार्यश्रीके धर्मोपदेशका असर आपके ऊपर पडा.

जिनशासनके उद्धारका कार्य स्वाध्याय सुविधाके द्वारा करनेकी आचार्यश्रीकी योजनामें आप तत्काल स्वयं दानशूर बनके सहकारी हो गये। जिससे इस योजनाके तीसरे ग्रंथका छपाई खर्चका बोझ बडे भक्तिभावसे आपने उठाया।

आप उत्तर सातारा जिलेके एक 'बुध' नामके छोटे ग्रामके निवासी हैं। आपका शुभ जन्म दि. २१–४–१९१४ के शुभ दिन हुवा। बचपनसे मातापिताके वियोगके कारण और गरिबीके कारण आपका पहला जीवन अत्यंत कष्टदायक तथा पूरी शिक्षाके विना विताया गया। आपके चाचाजी श्री. जिवराज गुलाबचंद कोठारीजीका ही कुछ आधार था। लेकिन् हिंमतके आधारपर ही स्वावलंबी बनकर और महत्त्वाकांक्षा रखकर बम्बईमें आपने अपनी हरप्रकारकी उन्नती कर ली। बचपनसेही धर्मपर श्रद्धा होनेके कारण आप देवपूजा अर्चा, व्रतोपासना, जिनबिंबप्रतिष्ठा, जिनमंदिर बनानेमें सहायता, ज्ञानदान वगैरहसे धर्मोपार्जन करते आये हैं।

श्री. जिवराज निहालचंद शहा, गुणवरेकरकी सुकन्या सौ. लीलावती आपकी आदर्श धर्मपत्नी बनकर आपके हरएक कार्यमें सहायता और विशेष प्रेरणा दे रही हैं।

आपने श्री सर्वार्थसिद्धि–वचनिका नामक तत्वविवेचनात्मक ग्रंथके प्रकाशनके लिये लगभग रु. २००० प्रदान करके जो अपूर्व सहयोग दिया है, इसलिये आप अनेक धन्यवादके लिये पात्र हैं।

संपादकीय निवेदन

प. पू. चा. च. आचार्यवर्य श्री १०८ शांतिसागर दि. जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्था प्रमाणित "श्रुतभांडार और ग्रंथप्रकाशन समिति" फलटणकी ओरसे प्रकाशित हुये इस सर्वार्थसिद्धि ग्रंथका प्रूफसंशोधनादि कार्य करनेका सौभाग्य आचार्यश्रीके शुभाशिर्वादसे मुझे प्राप्त हुआ सो मैने उस कार्यको बडी सावधानीसे किया है तो भी प्रमादवश दृष्टिदोष आदिकारणोंसे अशुद्धि रह जाना संभव है सो विज्ञजन सुधारकर पढनेकी कृपा करें.

आपका नम्र
प. **अभयकुमार शिवगौडा पाटील शास्त्री**, रागोलीकर
धर्माध्यापक ऐ. प. दि. जैन पाठशाला, **बारामती.**

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः

—o—

अथ षष्ठमोऽध्यायः

इतितत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः

———०———

अथ सप्तमोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः

अथ अष्टमोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः

अथ नवमोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः

———०———

अथ दशमोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यवर्य श्री १०८ शांतिसागर महाराजके आदेशसे श्री दिगंबर जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्थाकी तरफसे ज्ञानदानके लिये छपी हुई

श्रीवीतरागाय नमः

वीर संवत् २४८१] ॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥ [ग्रंथ प्रकाशन, समिति फलटण

॥ अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता ॥

दोहा— श्रीवृषभादि जिनेश्वर। अंत नाम शुभ वीर ॥ मन वच काय विशुद्धकरि। वंदौं परमशरीर ॥ १ ॥
करमधराधर भेदि जिन। मरम चराचर पाय ॥ धरमवरावर कर नमूं। सुगुरुपरापरपाय ॥ २ ॥
शब्दब्रह्मकूं मैं नमूं। स्यात्पदमुद्रित सोय ॥ कहै चराचर वस्तुको। सत्यारथ मल धोय ॥ ३ ॥
आप्त मूल आगमतणूं। एकदेश जु अनूप ॥ तत्त्वारथ शासन सही। करौं वचनिकारूप ॥ ४ ॥

ऐसैं आप्तआगमको नमस्काररूप मंगल करि श्रीउमास्वामी नाम आचार्यविरचित जो दशाध्यायरूप तत्त्वार्थशास्त्र, ताकी देशभाषामय वचनिका लिखिये है। तहां ऐसा संबंधकी सूचना है। जो श्रीवर्धमान अंतिम तीर्थकरकूं निर्वाण भये पीछैं, तीन केवली तथा पांच श्रुतकेवली इस पंचमकालविषैं भये। तिनिमैं अंतके श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामीकूं देवलोक गये पीछै कालदोषतैं केतेइक मुनि शिथिलाचारी भये। तिनिका संप्रदाय चल्या। तिनिमैं केतेइक वर्ष पीछैं एक देवर्षिगण नाम साधु भया। तिहि विचारी, जो, हमारा संप्रदाय तौ बहुत वध्या, परंतु शिथिलाचारी कहावे हैं, सो यह युक्त नही। तथा आगामी हमतैं भी हीनाचारी होयेंगे। सो ऐसा करिये; जो, इस शिथिलाचारकूं कोई बुद्धिकलिपत न कहै। तब तिसके साधनेनिमित्त सूत्ररचना करी। चौरासी सूत्र रचे। तिनिमैं श्रीवर्द्धमानस्वामी अर गौतमगणधरका प्रश्नोत्तरका प्रसंग ल्याय शिथिलाचार पोषणेके हेतु दृष्टांत युक्ति बणाय प्रवृत्ति करी। तिनि सूत्रके आचारांग आदि नाम धरे। तिनिमैं केतेइक विपरीत कथन किये। केवली कवलाहार करै। स्त्रीकूं मोक्ष होय। स्त्री तीर्थकर भये। परिग्रहसहितकूं मोक्ष होय। साधु उपकरण, वस्त्र, पात्र आदि चौदह राखै। तथा रोग ग्लानि आदिकरि पीडित साधु होय तौ मद्यमांससहतका आहार करै तौ दोष नांहीं, इत्यादि लिख्या। तथा तिनिकी साधक कलिपतकथा बणाय लिखी। एक साधूकौं मोदकका भोजन करतांही

आत्मनिंदा करी तब केवलज्ञान उपज्या। एक कन्याकों उपाश्रयमें बुहारी देतैंही केवलज्ञान उपज्या। एक साधु रोगी गुरुको कांधे ले चल्या, आखडता चाल्या, गुरु लाठी कीदई, तब आत्मनिंदा करी ताकूं केवलज्ञान उपज्या। तव गुरु वाकै पगां पड्या। मरुदेवीकूं हस्तीपरी चढेंही केवलज्ञान उपज्या। इत्यादि विरुद्धकथा तथा श्रीवर्द्धमानस्वामी ब्राह्मणीके गर्भमैं आये, तव इंद्र वहांतैं काढि सिद्धारथ राजाकी राणीके गर्भमैं थापे। तथा तिनिकूं केवल उपजे पीछै गोसाला नाम गरु ड्याकूं दीक्षा दीई, सो वानैं तप वहुत कीया, वाकै ज्ञान वध्या, रिद्धि फुरि, तव भगवानसूं वाद कीया, तव वादमैं हाऱ्या, सो भगवानसूं कपायकरि तेजोलेश्या चलाई। सो भगवानकै पेचसका रोग हुवा, तव भगवानकै खेद वहुत हुवा, तव साधांनैं कही, एक राजाकी राणी विलावकै निमिति कूकडा कवूतर मारि भुलस्या है, सो वै हमारे तांई ल्यावो, तव यहू रोग मिटि जासी। तव एक साध वह ल्याया, भगवान् खाया, तव रोग मिट्या। इत्यादि अनेक कल्पितकथा लिखी॥ अर श्वेतवस्त्र, यात्रा, दंड आदि भेप धारि श्वेतांवर कहाये। पीछै तिनिकी संप्रदायमैं केई समझवार भये। तिनिनैं विचार, ऐसे विरुद्धकथन तौ लोक प्रमाण करसी नही। तव तिनिके साधनेकूं प्रमाणनयकी युक्ति वणाय नयविवक्षा खडी करि जैसैं तैसैं साधी। तथापि कहां तांई साधै। तव कोई संप्रदायी तिनि सूत्रनिमैं अत्यंत विरुद्ध देखे तिनिकूं तौ अप्र-माण ठहराय गोपि किये, कमि राखे। तिनिमैं भी केईकनैं पैंतालीस राखे। केईकनैं वत्तीस राखे। ऐसे परस्पर विरोध वध्या। तव अनेक गच्छ भये, सो अवतांई प्रसिद्ध हैं। इनिकै आचारविचारका कछु ठिकाणा नांही। इनहीमै ढुंडिये भये हैं। ते निपट ही निंद्य आचरण धाऱ्या हैं। सो कालदोप है। कछू आचिरज नही, जैनमतकी गौणता इस कालमैं होणी है। ताके निमित्त ऐसैंही वणे॥

वहुरि भद्रवाहुस्वामीपीछैं दिगंवरसंप्रदायमैं केतेक वर्ष तौ अंगनिके पाठी रहे। पीछै अंगज्ञानकी व्युच्छित्ति भई, अरु आचार यथावत् रहवोही कीया। पीछैं दिगंवरनिका आचार कठिन, सो कालदोपतैं यथावत् आचारी विरले रह गये। तथापि संप्रदायमैं अन्यथा प्ररूपणा तौ न भई। तहां श्रीवर्द्धमानस्वामीकों निर्वाण गये पीछे छहसे तियासी वर्प पीछै दूसरे भद्रवाहु नाम आचार्य भये। तिनिके पीछै केतेइक वर्प पीछैं दिगंवरनिकैं गुरुनिके नामधारक च्यार शाखा भई। नंदी, सेन, देव, सिंह ऐसे। इनिमैं नंदिसंप्रदायमैं श्रीकुंदकुंद मुनि तथा श्रीउमास्वामी मुनि तथा नेमिचंद्र, पूज्यपाद, विद्यानंदी, वसुनंदी आदि वडे वडे आचार्य भये। तिनिनैं विचारी; जो शिथिलाचारी श्वेतांवरनिका संप्रदाय तौ वहुत वध्या, सो तौ कालदोप है। परंतु यथार्थ मोक्षमार्गकी प्ररूपणा चलि जाय ऐसे ग्रंथ रचिये तौ केई निकटभव्य होय ते यथार्थ समझि श्रद्धा करै। यथाशक्ति चारित्र ग्रहण करै, तौ यह वडा उपकार है। ऐसैं विचारि केईक मोक्षमार्गकी प्ररूप-

णाके ग्रंथ रचे। तत्त्वार्थसूत्र, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, मूलाचार, गोमटसार, त्रिलोकसार, लब्धिसार, क्षपणासार, आदिक तथा तिनिका अर्थ अविच्छेद होनेके आर्थि तिनिकी टीका करी। बहुरि दूसरा सेनसंप्रदायमैं भूतबली, पुष्पदंत, वृषभसेन, सिद्धसेन, समंतभद्र, जिनसेन, गुणभद्र आदि बडे बडे आचार्य भये। तिनिनैं पट्खंडसूत्र, धवल, जयधवल, महाधवल तथा प्राकृत आदिपुराण आदि ग्रंथ रचे। तथा सिद्धसेन, समंतभद्र आदि स्याद्वादविद्याके अधिकारी भये। तत्त्वार्थसूत्रनिकी महाभाष्य रची। और ग्रंथ बडे बडे रचे। जिनसेननैं आदिपुराण संस्कृत रच्या। गुणभद्रनैं उत्तरपुराण संस्कृत रच्या। बहुरि इसही संप्रदायमैं काष्ठासंघ प्रवर्त्या। बहुरि देवसंप्रदायमैं अकलंकदेव भये। ते स्याद्वादविद्याके अधिकारी भये। तिनिनैं प्रमाणप्रकरण रचे। और भी केई भये, तिनिनैं बडे बडे ग्रंथ रचे। सोमदेवनैं यशस्तिलक काव्य कीया। बहुरि सिंहसंप्रदायमैं वादीभसिंह आदि मुनि भये। तिनिनैं बडे बडे ग्रंथ बणाये। ऐसे च्यारोंही संप्रदायमैं यथार्थ प्ररूपणा तथा आचार चल्या आया। बहुरि अब इस निकृष्टकालमैं दिगंबरनिका संप्रदायमैं यथावत् आचारका तौ अभावही है। जो कहीं है तौ दूर क्षेत्रमैं होगा। बहुरि मोक्षमार्गकी प्ररूपणा तौ ग्रंथनिके माहात्म्यतैं वर्तै है। तहां मेरै ऐसा विचार भया; जो श्रीउमास्वामिकृत दशाध्यायीरूप तत्त्वार्थशास्त्र है, ताकी संस्कृतटीका तौ गंधहस्तिमहाभाष्य है। अर लघुटीका सर्वार्थसिद्धि, तत्त्वार्थवार्तिक–ताकूं राजवार्तिक भी कहै है–तथा श्लोकवार्तिक है। ते तौ पंडितनिके समझनें पढनें लायक है। मंदबुद्धिनिका प्रवेश नांही। तातैं याकी संक्षेपार्थरूप देशभाषामय वचनिका करिये तौ मांदिबुद्धि हू वांचि समझै। तत्त्वार्थकी श्रद्धा करै तौ बडा उपकार है। यहू जानि वचनिकाका प्रारंभ कीया है। तहां मुख्य तौ सर्वार्थसिद्धि नाम संस्कृत टीकाका आश्रय है। बहुरि जहां जहां विशेष लिख्या है सो तत्त्वार्थवार्तिक श्लोकवार्तिकका आश्रय जानना। याविषैं कहीं भूलि चूक होय तो विशेषज्ञानी सोधियो॥

तहां प्रथम ही सर्वार्थसिद्धिटीकाकार मंगल आर्थि आप्तका असाधारणविशेषणरूप श्लोक रच्या है, सो लिखिये हैं॥

मोक्षमार्गस्य नेतारं। भेत्तारं कर्मभूभृताम्॥
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां। वन्दे तद्गुणलब्धये॥ १॥

याका अर्थ— मोक्षमार्गके प्रवर्तावनहारे, कर्मरूप पर्वतके भेदनहारे, समस्ततत्त्वनिके जानानहारेकों मेरै तिनि गुणनकी प्राप्तीके आर्थि मैं वंदौ हौं।

भावार्थ— इस शास्त्रविषैं मोक्षमार्गका उपदेश है। सो जो घातिकर्मका नाशकरि सर्वज्ञ वीतराग भया होय, सोही मोक्षमार्गका प्रवर्तावनहारा आप्त है। तिसहीकूं नमस्कार किया है। जातैं सर्वज्ञवीतरागका प्रवर्ताया ही मोक्षमार्ग प्रमाणसिद्ध होय। काहेतैं? जातैं जो सर्वज्ञ न होय तौ अज्ञानतैं अयथार्थ भी कहै। तथा रागद्वेषसहित होय तौ क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषायतैं अन्यथा कहै। सो प्रमाण नांहीं। तातैं सर्वकौं जाणै, काहूतैं रागद्वेष न होय, ताहीके वचन प्रमाण होय। वैही वस्तूका स्वरूप यथार्थ प्ररूपै। याहीतैं ऐसे विशेषणयुक्तकौं नमस्कार कीया। सो ऐसे तीर्थंकर तथा सामान्य-केवली अरहंत भगवान् हैं। इनहीकूं परमगुरु कहिये। बहुरि जिनिके एकदेश घातिकर्मका नाश एकदेशपणैं परोक्ष समस्त-तत्त्वनिका संक्षेपज्ञान है, तथा तिस संबंधी रागद्वेष भी जिनकै नाहीं है ते अपरगुरु जानने। ते गणधरादि सूत्रकारपर्यंत आचार्य जानने। बहुरि जे सर्वथा एकांततत्त्वका प्ररूपण करै हैं ते गुरु नांही हैं तिनिके वचन प्रमाणविरुद्ध हैं, ते अपने तथा परके घातक हैं, तिनिकौं नमस्कार भी युक्त नांही॥

अथवा इहां ऐसा आशय जानना। जो सर्वज्ञ वीतराग आप्त होय सो ही शास्त्रकी उत्पत्ति तथा शास्त्रका यथार्थज्ञान होनेकौ कारण है। तातै शास्त्रकी आदिविषैं निर्विघ्नपणैं शास्त्रकी समाप्तीके अर्थी ऐसेही विशेषणयुक्तकौं नमस्कार करना योग्य है॥ इहां कोई कहै, आप्तके नमस्कारतैं पापका नाश होय है तातैं विघ्नका उपशम होय तव शास्त्रकी समाप्ति निर्विघ्नपणैं होय है। तातैं ताकूं नमस्कार योग्य है॥ ताकूं कहिये; पापका नाश तौ पात्रदानादिकतैं भी होय है सो आप्तका नमस्कारका नियम कहां रह्या? कोई कहै; परममंगल आप्तका नमस्कार ही है। सो यहभी न कहनां। धर्मके अंग हैं ते सर्वही मंगल हैं॥ कोई कहै: नास्तिकताका परिहार तौ आप्तकूं नमस्कार कीयें होय है, याहीतैं श्रद्धानी पुरुष शास्त्रकौं आदरै है। ताकूं कहिये, नास्तिकताका परिहार तौ मोक्षमार्गके समर्थन करनेतैंही होय है। आप्तके नमस्कारका नियम कैसैं रहै? कोई कहै; शिष्टाचार पालनेकौं आप्तकूं नमस्कार करनांही। तहांभी एही उत्तर। तातैं यहूही युक्त है, शास्त्रकी उत्पत्ति तथा ताका ज्ञान होनेंकूं आप्त ही कारण है ताही हेतूतैं आप्तकूं नमस्कार युक्त है, ऐसा आशय जानना॥ इहां कोई कहै; वक्ताका सम्यग्ज्ञानही शास्त्रकी उत्पत्ति तथा ज्ञान होनेकूं कारण है, आप्तका ही नियम कैसैं कहौ हौ? तहां ऐसा उत्तर, जो वक्ताका सम्यग्ज्ञान भी गुरूपदेशके आधीन है। गणधरदेवनकै भी सर्वज्ञके वचनके अनुसार सम्यग्ज्ञान है। तातैं आप्तहीका नियम है॥ बहुरि इहां कोई पूछै; तुम तत्त्वार्थशास्त्रकी वचनिका करौ हो, सो याकूं तत्त्वार्थशास्त्र ऐसा नाम कैसैं आया? ताका उत्तर, शास्त्रका लक्षण यामैं पाइए है। कैसैं? सोही कहिये है। अक्षरनिके समुदायकूं तौ पद कहिये। बहुरि पदनिके समुदायकूं सूत्र कहिये ताकूं वाक्य भी कहिये, योग भी कहिये, लक्षण भी कहिये। बहुरि सूत्रके

समूहकूं प्रकरण कहिये। बहुरि प्रकरणके समुदायकूं आह्निक कहिये। बहुरि आह्निकके समूहकूं अध्याय कहिये। अध्यायके समूहकूं शास्त्र कहिये। ऐसा शास्त्रका लक्षण यामैं पाइए है तातैं शास्त्र कहिये बहुरि यामैं निर्बाध तत्त्वार्थका प्ररूपण है तातैं तत्त्वार्थशास्त्र कहिये। बहुरि शास्त्राभासमैं ऐसा लक्षण होय तौ तहां तत्त्वार्थका प्ररूपण नांही तातैं ते शास्त्र नांही ॥ इहां कोई पूछे याउपरांति और शास्त्रकूं शास्त्रसंज्ञा कैसी आवैगी? ताका उत्तर; जो और शास्त्र तत्त्वार्थके प्ररूपणके हैं ते सर्व ही याके एकदेश हैं। बहुरि द्वादशांग है सो महाशास्त्र है। यासारिखे अनेक शास्त्र तामैं गर्भित है। ऐसैं यहु तत्त्वार्थ शास्त्र सर्वज्ञवीतराग मोक्षमार्गका प्रवर्तक पुरुषकूं सिद्ध होतैं प्रवर्त्या है। तातैं पुरुषकृत कहिये। ऐसा पुरुष वंदना-योग्य है ॥

इहां मीमांसकमतका आश्रय ले अन्यवादी कहै, जो शब्द सर्वथानित्य कूटस्थ सर्वदेशमैं व्यापक एक है सो तामैं वर्ण पद वाक्य सर्व शाश्वते वसे हैं। पुरुष वक्ता है सो ताकी व्यक्तीकूं प्रगट करै है। तातैं वेद अनादिनिधन अपौरुषेय आगम है। पुरुषकृत नांही। ताका समाधान। शब्द है सो तौ पुद्गलद्रव्यका पर्याय है। श्रोत्र इंद्रियकरि ग्रह्याजाय है, जड है यामैं स्वयमेव वर्णपदवाक्यरूप होना संभवै, नांही पुरुषके अनादि कर्मके संयोगतैं पुद्गलमयशरीरका संबंध है तथा अंगोपांग नामा नामकर्मके उदयतैं हृदय, कंठ, मूर्द्ध, जिव्हा, दंत, नासिका, ओष्ठ, तालु, आदि अक्षरनिके उच्चार करने योग्य स्थान वणे हैं। तिनमैं पुरुषकी इच्छा वा विनां इच्छा अक्षरात्मक वचन प्रवर्तै है। ऐसैं शब्द सर्वथानित्य कहनां प्रमाणविरुद्ध है। पुद्गलद्रव्य द्रव्यअपेक्षा तौ नित्य है। बहुरि पर्यायअपेक्षा अनित्य है। सो शब्द पुरुषके निमित्ततैं वर्णात्मक होय परिणमै है। श्रोत्र इंद्रियगोचर होय है। सर्वथानित्य तौ प्रमाणगोचर नांही। तातैं पौरुषेय ही आगम प्रमाणसिद्ध है। याका संवाद श्लोकवार्तिकमैं है तहांतैं समझना। बहुरि मीमांसक कहै हैं; जो हमारै आम्नाय अकृत्रिम है तथापि जैमिनीय आदि आप्तके कहै सूत्र प्रमाणभूत हैं। तातैं तुमारे सर्वज्ञ वीतरागके प्ररूपे सूत्र कहौ हौ सो यह प्रमाणसिद्ध नांही। ताका समाधान—सूत्रका व्याख्याता सर्वज्ञ वीतराग न होय तौ वाके वचन प्रमाण नांही। अकृत्रिम आम्नाय पुरुषविनांही आपआपने अर्थकों कहै नांही तातैं यथोक्त पुरुष आम्नायका कहनहारा चाहिये। तुम भी प्रमाणका विशेषण ऐसा ही करो हौ, जो प्रमाण निर्दोषकारणतैं उपजै है। तातैं काहेकौ अपौरुषेयपणां निष्कारण पोषणां ॥ बहुरि इहां मीमांसक कहै, जो तुमनैं आप्तका विशेषण सर्वज्ञ कह्या सो सर्वज्ञका जनावनहारा ज्ञापक प्रमाण नांही। इंद्रियनितैं सर्वज्ञ दिखता नांही। कोई ताका एकदेश चिह्न दिखता नांही। सर्वज्ञसमान कोई वस्तु नांही। किसी अर्थका संबंध नांही। वेदमैं लिख्या नांही। ऐसे पांचू ही प्रमाणकै गोचर नांही, अभाव ही सिद्ध होय है। ताकूं कहिये, जो, सर्वज्ञका ज्ञापक प्रमाण

है। सूक्ष्म जे परमाणु तथा धर्मादिक, अंतरित जे रामरावणादिक, दूर जे मेरुपर्वतादिक इन पदार्थनिका उपदेश सत्यार्थ है सो इनका प्रत्यक्ष देखनहारा सर्वज्ञ है तिसपूर्वक है। ए इंद्रियगोचर नाही। इनका चिह्न भी प्रत्यक्ष नाही। बहुरि असर्वज्ञका उपदेशपूर्वक नांही। साक्षात् देखै है ताके कहे सत्यार्थ है। जैसे नदी, द्वीप, देश, कोई साक्षात् देखै ताके कहें सत्यार्थ मानिये तैसैंही सर्वपदार्थ सर्वज्ञके कहे सत्यार्थ हैं॥ कोई कहे धर्म अधर्मका भी निर्णय करना, सकल वस्तूका साक्षात् ज्ञाताताई कहा प्रयोजन है? ताकूं कहिये है। सर्वज्ञविना धर्म अधर्मका भी निर्णय होता नाही। धर्म अधर्मका फल स्वर्ग, मोक्ष, नरक, संसार कहिये है सो धर्म अधर्मका फलकै अरु धर्म अधर्मकै साक्षात्संबंध देख्या होय ताहीका कह्या सत्यार्थ होय। सो सर्वका ज्ञाताविना यह संबंध दिखै नांही। बहुरि मीमांसककूं पूछिये, तुम सर्वज्ञका जनावनहारा ज्ञायक प्रमाणका निषेध करौ हौ; सो सर्व प्राणीनि संबंधी करौ हौ कि तुमसंबंधी करौ हौ? जो सर्व प्राणीनि संबंधी निषेध करौ हौ तौ सर्वक्षेत्रकालके प्राणी तुमनें देखिलीये, तब तुम ही सर्वज्ञ भये। सर्वज्ञका अभाव काहेकूं कहौ। बहुरि तुमही संबंधी कहौ हौ तौ युक्त नांही। तुमकूं पूछे है, समुद्रमें जल केते घडा है? जो न बतावोगे तौ सर्वज्ञका अभाव मति कहौ॥

बहुरि साङ्ख्यमती तथा नैयायिकमती कहै, जो सर्वज्ञ तौ मानना परंतु कर्मका नाशकरि सर्वज्ञ होय है यह बणै नांही। ईश्वर तौ सर्वथा सदामुक्त है, सदाही सर्वज्ञ है। ताकूं कहिये, जो ऐसा सर्वज्ञ ईश्वर जो शरीररहित कहोगे तौ मोक्षमार्गका उपदेशक न बणैगा, शरीरविना वचनकी प्रवृत्ति नाही। बहुरि शरीरसहित कहोगे तौ शरीर कर्मका ही कीया होहै। यासंबंधी सुखदुःखादिक सर्व याकै ठहरैंगे। तातैं घातिकर्मका नाशकरि सर्वज्ञ होय। ताकै अघाति कर्मका उदय रहै। तेतैं शरीरसहित अवस्थान रहै। तातैं वचनकी प्रवृत्ति विना इच्छा होय। ताहीतैं मोक्षमार्गका उपदेश प्रवर्तै यह युक्त है॥ याका विशेष वर्णन आगैं होयगा॥ बहुरि बौद्ध सर्वज्ञ तौ मानै परंतु तत्त्वका स्वरूप सर्वथा क्षणिक स्थापै। यातैं ताकै तौ मोक्षमार्गका उपदेशकी प्रवृत्ति संभवै ही नांही॥ बहुरि नास्तिकवादीकै कछुही संभवै नाही॥ इनि सर्वमतनिका संवाद श्लोकवार्तिकविषैं कीया है तहांतै जाननां। इहां ग्रंथविस्तार बधिजाय तातैं संक्षेप लिख्या है॥ आगैं सर्वार्थसिद्धि टीकाकार सूत्रका प्रारंभका संबंध कहै है॥

कोई भव्य, निकट है सिद्धि जाकै, ऐसा बुद्धिमान अपने हितका इच्छुक है - सो किसी मुनिनके रहनेयोग्य स्थानक उद्यान, परम रमणीक जहां सिंहव्याघ्रादिक क्रूर जीव नाही, भले जीवनिका रहनेका ठिकाणां, ताविषैं मुनिनिकी सभाविषैं बैठे। विनाही वचन अपनें शरीरहीकी शांतमुद्राकरि मानूं मूर्तिक मोक्षमार्गकों निरूपण करते, युक्ति तथा आगमविषैं प्रवीण,

परका हित कहनाही है एक कार्य जिनकै, भले भले बडे पुरुषनिकरि सेवने योग्य, जे निर्ग्रंथआचार्यनिमैं प्रधान, तिनिहि
प्राप्त होयकरि विनयसहित पूछता हुवा – हे भगवन् या आत्माका हित कहां है ? आचार्य कहते भये आत्माका हित
मोक्ष है। तब फेरी शिष्य पूछी जो, मोक्षका कहां स्वरूप है ? अरु याकी प्राप्तिका उपाय कहां है ? तब आचार्य कहै
है जो यहू आतमा जब समस्तकर्ममलकलंकरहित होय तब शरीरकरि भी रहित होय, तब छद्मस्थके चिंतवनमैं न आवै
अरु स्वभावहीतैं भये ऐसे ज्ञानादि गुण जामैं पाइए, तथा निराबाध सुखस्वरूप, अविनश्वर, आत्माकीही इस संसार अव-
स्थातैं अन्य जो अवस्था सो मोक्ष है। सो यहु मोक्ष अत्यंत परोक्ष है। यातैं छद्मस्थ जे अन्यवादी, आपकूं तीर्थकर
मानैं ते याके स्वरूपकूं न पहूंचती जो वाणी ताकरि अन्यथा कल्पै है। प्रथम तौ सांख्यमती कहै है – पुरुषका स्वरूप
चैतन्य है। सो स्वरूप ज्ञेयाकारके जाननैतैं पराङ्मुख है, ऐसा मोक्ष कहै है। सो यह कहनां छताही अणछतारूप है।
जातैं निराकार है सो जडवत् है, गधाके सींगवत् कल्पना है। बहुरि वैशेपिकमती कहै है – आत्माविषैं बुद्धि, इच्छा, द्वेप,
धर्म, अधर्म, सुख, दुःख, संस्कार, यत्न गुण है। तिनिका सर्वथा नाश होय है सो मोक्ष है। सो यहू भी कल्पना झूटी है।
विशेषनिकरि शून्य तौ अवस्तु है। बहुरि बौद्धमती कहै है – जैसे दीपग बुझि जाय प्रकाशरहित होय जाय। तैसे
आत्मा भी ज्ञानादिप्रकाशरहित होय जाय तब निवार्ण कहिये। सो यहू भी कहनां गधाके सींगसारिखा तिनिके वचनकरिही
आवै है॥ आदिशब्दतैं वेदांती ऐसा कहै है जो जैसे घट फूटिजाय तब घटका आकाश प्रगट होय तैसे देहका अभाव
होय तब सर्व ही प्राणी परमब्रह्ममैं लय होय जाय है। ब्रह्मका रूप आनंदस्वरूप है। जहां अत्यंत सुख है, ज्ञानहीकरि
ग्राह्य है, इंद्रियगोचर नांही सो मोक्षविषैं पाइए है ऐसा कहै है। सो भी कहना यथार्थ नांही। जातैं प्राणी तौ जुदे
जुदे अपने स्वरूपमैं तिष्ठै है। परब्रह्ममैं लीन होना कैसै संभवै ? इनकूं आदि जे अनेक मत हैं ते अपनी अपनी बुद्धितैं
अनेक कल्पनां करै हैं। सो मोक्षका स्वरूप यथार्थ सूत्रकार आगै कहसी सो जाननां॥ बहुरि या मोक्षकी प्राप्तिके
उपायप्रति भी अन्यवादी विसंवाद करै हैं। केईक कहै हैं चारित्रादिककी अपेक्षा नांही। केईक कहै हैं ज्ञानचारित्रविना
श्रद्धानमात्रहीतैं मोक्ष हो है। केइक कहै हैं ज्ञानरहित चारित्रमात्रहीतैं मोक्ष होय है ऐसे कहै हैं। सो यहु कहनां
अयुक्त है। जैसैं रोगीकै रोगके दूरि होनेके कारन जे औषधका ज्ञान, श्रद्धान, आचरण, ते जुदे जुदे रोगकूं दूरि न
करि सकै तैसैं मोक्षकी प्राप्तिके उपायभूत जे ज्ञान, श्रद्धान, चारित्र, ते जुदे जुदे मोक्षकूं न करि सकै हैं। तीनोंकी
एकता है सोही मोक्षके प्राप्तिका उपाय है। सोही सूत्रकार जो श्रीउमास्वामी आचार्य सो सूत्र कहै है। यह सूत्र
उपयोगस्वरूप आत्माकी सिद्धि होतैं ताके सुननेकी ग्रहण करनेकी इच्छा होतैं प्रवर्तै है॥

इहां नास्तिकमती कहै है—जो पृथ्वी–अप–तेज–वायूका परिणामविशेष सो स्वरूप चेतनात्मक आत्मा है। सकल–लोकप्रसिद्ध यह मूर्ति है यातैं जुदा कोई और आत्मा नांही। तातैं कौनकै सर्वज्ञवीतरागपणां होय? वा कौनकै मोक्ष होय? वा कौनकै मोक्षमार्गका कहनां वा प्रवर्तनां वा प्राप्तिकी इच्छा होय? बहुरि ये सर्व ही नांही तब मोक्षमार्गका सूत्र काहेकूं वंतै? ताकूं कहिये है, हे नास्तिक! स्वसंवेदनज्ञानतैं आत्मा देखि, प्रत्यक्ष है कि नांही? जो आत्मा नांही है तौ "मैं हौं" यहु स्वसंवेदनज्ञान कौनकै है?। बहुरि नास्तिक कहै यहू स्वसंवेदन भ्रमरूप है। ताकूं कहिये, सदा बाधाकरि रहित होय ताकूं भ्रमरूप कैसे कहिये? तथा भ्रम भी आत्माविना जडकै होय नांही। बहुरि पृथ्वी आदि जडविषैं यहु स्वसंवेदन संभवै नांही। जो या स्वसंवेदनके लोप मानिये तौ काहूकै अपने इष्टतत्त्व साधनकी व्यवस्था न ठहरै। तातैं पृथ्वी आदि स्वरूप जो देह तातैं आत्मा चेतनस्वरूप भिन्न तत्त्व ही है ऐसा माननां। जातैं चेतनका उपादान कारण चेतन ही होय। जडका उपादान कारण जड ही होय। ऐसे न मानिये तौ पृथ्वी आदि तत्त्व भी तेरै न्यारे न ठहरै। सजातीय विजातीय तत्त्वकी व्यवस्था न ठहरै। एकतत्त्व ठहरै तौ नास्तिक च्यारि तत्व कहै है ताकी प्रतिज्ञा बाधित होय। बहुरि नास्तिक कहै जो चैतन्य गर्भादिमरणपर्यंत है, अनादि अनंत नांही। तातैं तत्त्व नाही। ताकूं कहियै द्रव्यतैं अनादि अनंतस्वरूप आत्मा है, पर्यायतैं अनित्य भी है। सर्वथा अनित्य ही माननां बाधासहित है। द्रव्य अपेक्षा भी अनादि अनंत नित्य न मानिये तौ तत्त्वकी व्यवस्थाही न ठहरै॥

बहुरि बौद्धमती सर्ववस्तु सर्वथा क्षणिक मानै है। ताकै बंधमोक्षादिक न संभवै। करै और ही, फल और ही भोगवै, तब बंधमोक्षादिका आश्रयी द्रव्य नित्य मानैं विनां सर्वव्यवस्थाका कहनां प्रलापमात्र है॥ बहुरि सांख्य पुरुषकों सदा शिव कहै है, ताकै बंधमोक्षकी कथनी कहा? प्रकृतिकै बंधमोक्ष है, तौ प्रकृतितैं जड है ताकै बंधमोक्ष कहना भी प्रलाप ही है। बहुरि नैयायिक वैशेषिक गुणकै गुणीकै सर्वथा भेद मानि अर समवाय संबंधसूं एकता मानै है। सो गुण गुणी समवाय ये तीन पदार्थ भये। तहां जीव तौ गुणी, अर ज्ञान गुण, समवाय जीवकूं ज्ञानी कीया। तब जीव तौ जड ठहर्‍या। बंधमोक्ष जडकै कहना निरर्थक है॥ बहुरि समवाय गुणगुणीकै एकता करी, तब समवाय भी तौ जीवतै एक हुवा चाहिये तौ याकूं एक कूंण करैगा। जो दूसरा समवाय मानिये तौ अनवस्था आवै। तातैं यह भी कहना सवाध है॥ बहुरि अद्वैतब्रह्म मानि बंधमोक्ष बतावैं तौ कैसैं बनैं। बंध तौ अविद्यासूं उपजै है ब्रह्मकै अविद्या लागै नांही। न्यारा तत्त्व मानिये तौ द्वैतता आवै। अवस्तु मानिने तौ अवस्तूकी कथनी कहा? तातैं यह भी मानना सवाध है। तातै जैनमत स्याद्वाद हैं। वस्तुका स्वरूप अनंतधर्मात्मक कहै है। यामैं सर्वज्ञ वक्ता तथा तथा गणधरादि यतीनिकी परंपरातैं यथार्थ कथनी है।

तामैं बंध, मोक्ष, तथा बंध करनेवाला, छूटनेवाला आदि सर्व व्यवस्था संभवै है। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ये छह द्रव्य हैं। तिनिमैं जीव तौ अनंतानंत हैं। पुद्गल तिनितै भी अनंतानंत गुणै हैं। धर्म अधर्म आकाश एक एक द्रव्य हैं। काल असंख्याते द्रव्य हैं। इनि सबनिकैं एक एक द्रव्यके तीन कालसंबंधी अनंते अनंते पर्याय हैं। सो इनिकी कथनी सद्रूप, असद्रूप, एकरूप, अनेकरूप, भेदरूप, अभेदरूप, नित्यरूप, अनित्यरूप, शुद्धरूप, अशुद्धरूप इत्यादि नयविवक्षातैं कथंचित् सर्व संभवै हैं। बहुरि निमित्तनैमित्तिकभावतैं पांच तत्त्वकी प्रवृत्ति होय आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध, मोक्ष। आस्रवबंधके भेद पुण्यपाप हैं। ऐसैं कथंचित् सर्व निर्बाध जैसैं वस्तु विद्यमान है तैसैं ही ताकी कथनी है, कल्पित नांही। तातैं तत्त्वार्थसूत्रविषैं वस्तुका कथन यथार्थ है। ताका प्रथमसूत्र ऐसा—

॥ सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥

याका अर्थ—सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र ऐ तीनूं हैं ते भेले भयें एक मोक्षमार्ग है॥ इहां सम्यक् ऐसा पद अव्युत्पन्नपक्ष अपेक्षातौं रूढ है। बहुरि व्युत्पन्नपक्ष अपेक्षा 'अंच्' धातु गति अर्थ तथा पूजन अर्थविषैं प्रवर्ते है, कर्ता अर्थविषैं 'क्विप्' प्रत्यय है, तातैं इहां प्रशंसा अर्थ ग्रहण कीया है। बहुरि यह सम्यक्पदकी प्रत्येक समाप्ति करना तीनां उपरि लगावना। तब ऐसैं कहिये, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चरित्र इनि तीनांहीका स्वरूप लक्षणथकी वा प्रकार भेदथकी तौ सूत्रकार आगैं कहसी। इस सूत्रमैं नाममात्र कहे। बहुरि टीकाकार व्याख्यान करैं हैं। पदार्थनिका यथार्थज्ञानके विषयविषैं श्रद्धानका ग्रहणके अर्थि तौ दर्शनकै सम्यक् विशेषण है। बहुरि जिस जिस प्रकार जीवादिक पदार्थकी व्यवस्था है, तिस तिस प्रकार निश्चयकरि जानना, सो सम्यग्ज्ञान है। याकै सम्यक् विशेषण विमोह संशय विपर्ययकी निवृत्तिकै अर्थि है। बहुरि संसारके कारण जे मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग इनितैं भये आस्रव बंध तिनकी निवृत्ति प्रति उद्यमी जो सम्यग्ज्ञानी पुरुष, ताकै कर्मका जातैं ग्रहण होय ऐसी जो क्रिया ताका निमित्त जो क्रिया, ताका त्याग, सो सम्यक्चारित्र है। तथा कर्मनिका 'आ' कहिये ईषत् 'दान' कहिये खंडन ताका निमित्त जो क्रिया ताका त्याग, आत्माके एकदेशकर्मक्षपणांका कारण परिणामविशेष ताका भी त्याग, तथा कर्मनिका समस्तपणैं क्षयकारणपरिणाम चौदह गुणस्थानके अंतसमयवर्ती सो सम्यक् निवृत्तिरूप चारित्र है, ऐसा भी अर्थ है॥ याकै अज्ञानपूर्वक चारित्रकी निवृत्तिकै अर्थि सम्यक् विशेषण है। जातैं इनि तीननिकी निरुक्ति ऐसी है, 'पश्यति' कहिये जो श्रद्धान करै सो दर्शन है, इहां तो कर्तृसाधन भया। तहां करनहारा आत्मा है सो ही दर्शन है। बहुरि 'दृश्यते अनेन' कहिये श्रद्धिये

याकरी सो दर्शन, इहां करणसाधन भया। बहुरि 'दृष्टिमात्रं' कहिये श्रद्धाना सो दर्शन, इहां भावसाधन भया। दर्शन-क्रियाहीकूं दर्शन कह्या। ऐसैं ही 'जानाति' कहिये जो जानै सो ज्ञान, इहां कर्तृसाधन भया। जाननेवाला आत्मा-हीकूं ज्ञान कह्या। बहुरि 'ज्ञायते अनेन ज्ञानं' जाकरि जानिये सो ज्ञान, इहां करणसाधन भया। बहुरि 'ज्ञातिमात्रं ज्ञानं' जाननां सो ज्ञान, इहां भावसाधन भया। जाननरूप क्रियाकूं ज्ञान कह्या। बहुरि 'चरति इति चारित्रं' इहां आचरण करै सो चारित्र है, ऐसैं कर्तृसाधन भया। जातैं आत्मा ही चारित्र है। बहुरि 'चर्यते अनेन' इहां जाकरि आचरण करिये सो चारित्र है, ऐसैं करणसाधन भया। बहुरि 'चरणमात्रं चारित्रं' इहां भावसाधन भया। ऐसैं आचरनेहीकूं चारित्र कह्या॥

इहां अन्यवादी सर्वथा एकांती तर्क करै — जो ऐसैं कहतैं सो ही कर्ता, सोही करण आया। सो तौ विरुद्ध है। विरुद्ध होय भाव एककूं होय नांही। ताकूं कहिये, तेरै सर्वथा एकांत पक्ष है, जातैं विरोध भासै है। स्याद्वादीनिकै परिणामपरिणामीकै भेदविवक्षाकरि विरोध नांही है। जैसैं अग्नि अपने दाहपरिणामकरि इंधनकूं दग्ध करै है तैसैं इहां भी जाननां। ऐसैं कह्या—जो कर्ता करण क्रियारूप तीन भाव ते पर्यायपर्यायीकै एकपणां अनेकपणांप्रति अनेकांतकी विवक्षाकरि स्वतंत्रपरतंत्रकी विवक्षा एक भी वस्तुविषैं अनेक स्वतंत्र कर्ता परतंत्र करणादि भावविषैं विरोध नांही है। बहुरि इहां कोई पूछै ज्ञानका ग्रहण आदिविषैं चाहिये। जातैं ज्ञानकरि पहलै जानिये, पीछै ताविषैं श्रद्धान होय है। बहुरि व्याकरणका ऐसा न्याय है जो द्वंद्वसमासविषैं जाके अल्प अक्षर होय सो पहली कहनां। ताकूं कहिये यह युक्त नांही। दर्शन ज्ञानकी एककाल उत्पत्ति हैं। जा समय दर्शनमोहका उपशम तथा क्षयोपशम तथा क्षयतैं आत्माकै सम्यग्दर्शन भाव होय है, ताही समय मतिअज्ञान श्रुतअज्ञानको अभाव होय, मतिज्ञान श्रुतज्ञान होय है। जैसैं सूर्यके वादला दूर होतैं प्रताप प्रकाश दोऊ एककाल प्रकट होय तैसैं इहां भी जाननां। बहुरि व्याकरणका न्याय है, जो जाके अल्प अक्षर होय, तातैं जो पूज्य प्रधान होय सो पहली आवै। सो ज्ञानकूं सम्यग्दर्शन सम्यक्रूप करै है, तब सम्यग्ज्ञान नाम पावै हैं। तातैं सम्यग्दर्शन पूज्य प्रधान हैं। तातैं पहले सम्यग्दर्शन ही चाहिये। बहुरि सम्यग्ज्ञानपूर्वक चारित्र सम्यक् होय हैं। तातैं चारित्रकै पहलै ज्ञान कह्या॥ बहुरि मोक्ष सर्वकर्मका अत्यंत अभाव होय ताकूं कहिये। बहुरि ताकी प्राप्तिका उपाय ताकूं मार्ग कहिये। ऐसैं मोक्षमार्गशब्दका अर्थ जाननां॥

इहां मार्गशब्दकै एकवचन कह्या, सो सम्यग्दर्शनादिक तीन हैं, तिनिकी एकता होय सो साक्षत् मोक्षमार्ग है ऐसैं जनावनेके अर्थि है। जुदे जुदे मोक्षमार्ग नांही। इहां साक्षात्पदतैं ऐसा जनावै है, जो तीनूंनिका एकदेश परंपरा मोक्षका

कारण है। अर पूर्णता साक्षात् मोक्षका कारण है॥ बहुरि यहु मोक्षमार्गका स्वरूप विशेषरूप असाधारण जाननां। सामान्यपनैं कालक्षेत्रादिक भी मोक्षप्रति कारण हैं। तातैं सम्यग्दर्शनादिक ही मोक्षमार्ग है यह नियम जाननां। बहुरि ऐसा नियम न कहनां, जो ये मोक्षमार्ग ही है। ऐसैं कहतें ए स्वर्गादि अभ्युदयके मार्ग न ठहरै। तातैं पूर्वोक्त ही कहनां॥ कोई कहै तप भी मोक्षका मार्ग है, यह भी क्यौं न कह्या? ताका उत्तर जो तप है सो चरित्र स्वरूप है। सो चारित्रमें आयगया॥ कोई कहै, सम्यग्दर्शनादि मोक्षके कारण हैं तौ केवलज्ञान उपजै ताहीसमय मोक्ष हुवा चाहिये। ताकूं कहिये, जो अघातिकर्मके नाश करनेंकी शक्ति आत्माकी सम्यग्दर्शनादिककी सहकारिणी है। तथा आयुःकर्मकी स्थिति अवशेष रहै है तातैं केवलीका अवस्थान रहै है। वह शक्ति सहकारिकारण मिलै तब मोक्ष होय है। बहुरि या सूत्रकी सामर्थ्यतैं मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान मिथ्याचारित्र संसारके कारण हैं ऐसा भी सिद्ध हो है॥

आगैं आदिविषैं कह्या जो सम्यग्दर्शन ताका लक्षणनिर्देशके आर्थि सूत्र कहे हैं॥

॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥ २ ॥

याका अर्थ— तत्त्वकरि निश्चय किया जो अर्थ ताका जो श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है॥ ‘तत्’ ऐसा शब्द सर्वनाम पद है तातैं सामान्यवाचक है। याकै भाव अर्थविषैं त्वप्रत्यय होय है। तब तत्त्व ऐसा भया। याका यहु अर्थ, जो जा वस्तूका जैसा भाव तैसा ही ताका होना ताकूं तत्त्व कहिये॥ बहुरि “अर्यते इति अर्थः” जो प्रमाणनयकरि निश्चय कीजिये ताकूं अर्थ कहिये। सो तत्त्व कहिये यथावस्थितस्वरूपकरि निश्चय निर्बाध होय सो तत्त्वार्थ ऐसैं अनेकांतस्वरूप प्रमाणनयसिद्ध है, ताकूं तत्त्वार्थ कहिये॥ अथवा तत्त्व कहिये यथावस्थित वस्तु, सो ही अर्थ कहिये निश्चय कीजिये सो तत्त्वार्थ अभेदविवक्षाकरि ऐसा भी अर्थ है। याका श्रद्धान कहिये प्रतीति रुचि ताकूं तत्त्वार्थश्रद्धान कहिये। तत्त्वार्थ जीवादिक हैं ते आगै कहसी॥

इहां प्रश्न— जो ‘दृशि’ ऐसा धातु है सो देखनेके अर्थविषैं है। तातैं श्रद्धान अर्थ कैसैं होय? ताका उत्तर— धातुनिके अनेक अर्थ हैं। तातैं दोष नांही। बहुरि कहै, जो प्रसिद्ध अर्थ तौ देखना ही है, ताकूं क्यौं छोडिये? ताकूं कहिये, इहां मोक्षमार्गका प्रकरण है, सो यामैं मोक्षका कारण आत्माका परिणाम है। सो ही लैणा युक्त है। देखना अर्थ लीजिये तौ देखणां तौ चक्षु आदि निमित्तकरि अभव्य आदि सर्व जीवनिकै है। सो सर्वहीकै मोक्षका कारणपणा आवै। तातैं वह अर्थ न लियां। इहां प्रश्न— जो अर्थश्रद्धान ऐसा ही क्यौं न कह्या? ताका उत्तर— जो ऐसैं कहै

सर्व अर्थग्रहणका प्रसंग आवै। अर्थ नाम धनका भी है। तथा अर्थ नाम प्रयोजनका भी है। तथा सामान्यअर्थका भी नाम है। तिनिका भी श्रद्धान सम्यग्दर्शन ठहरै। तातैं तिनितैं भिन्न दिखावनेके अर्थि अर्थका तत्त्व विशेषण कीया है। वहुरि प्रश्न– जो तत्त्वश्रद्धान ऐसा ही क्यौं न कह्या? ताका उत्तर— ऐसैं कहै अनर्थ जे सर्वथैकांतवादिनिकारि कल्पित ताका प्रसंग आवै है। तथा भावमात्रका प्रसंग आवै है। केई वादी सत्ता तथा गुणत्व तथा कर्मत्व इनिकूं ही तत्त्व कहै हैं। अथवा तत्त्व एकपणांहीकूं कहै हैं, ताका प्रसंग आवै। केई ऐसैं कहै हैं– जो सववस्तु एक पुरुष ही है। तातैं तिनि सर्वनितैं भिन्न अनेकांतात्मक वस्तूका स्वरूप है, ऐसैं जनावनेके अर्थि तत्त्वार्थका ग्रहण कीया है॥

ऐसा तत्त्वार्थश्रद्धानस्वरूप सम्यग्दर्शन है, सो दोय प्रकार है। एक सरागसम्यक्त्व, एक वीतरागसम्यक्त्व। तहां प्रशम, संवेग, अनुकंपा, आस्तिक्य इनि च्यारि भावनिकारि प्रगट होय; सो तौ सरागसम्यग्दर्शन है। तहां अनंतानुवंधी कषायकी चौकडी संवंधी रागद्वेषादिकका तथा मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्वका जहां उदय नांही ताकूं प्रशम कहिये। वहुरि पंचपरिवर्तनरूप जो संसार तातैं भय उपजना ताकूं संवेग कहिये। वहुरि त्रस स्थावर प्राणीनिविषैं दया होनां ताकूं अनुकंपा कहिये। वहुरि जीवादि तत्त्वनिविषैं युक्ति आगमकरि जैसाका तैसा अंगीकार करनां माननां ताकूं आस्तिक्य कहिये। ए च्यारी चिह्न सम्यग्दर्शनकूं जनावै हैं, ए सम्यग्दर्शनके कार्य हैं। तातैं कार्यकरि कारणका अनुमान होय है। तहां अपनैं तो स्वसंवेदनतैं जाने जाय है। अर परके कायवचनके क्रियाविशेषतैं जाने जाय है। सम्यग्दर्शनविनां मिथ्यादृष्टीके ऐसैं होय नांही। इहां कोई कहै, क्रोधका उपशम तौ मिथ्यादृष्टीकै भी कोईकै होय है, ताकै भी प्रशम आवै। ताकूं कहिये – मिथ्यादृष्टिनिकै अनंतानुवंधी मानका उदय है। सर्वथा एकांततत्त्व मिथ्या है, ताविषैं सत्यार्थका अभिमान है। वहुरि अनेकांतात्मकतत्त्वविषैं द्वेषका अवश्य सद्भाव है। वहुरि स्थावरजीवनिका घात निशंकपणैं करै है। तातैं प्रशम भी नांही, अर संवेग अनुकंपा भी नांही। कोई कहै— स्थावरजीवनिका घात तौ अज्ञानतैं सम्यग्दृष्टीकै भी होय है, तौ ताकै अनुकंपा कैसैं कहिये? ताका उत्तर— जो सम्यग्दृष्टीकै जीवतत्त्वका ज्ञान है, सो अज्ञानतैं तौ घातविषैं प्रवृत्ति नांही। चारित्रमोहके उदयतैं अविरतिप्रमादतैं घात होय, तहां एह अपनां अपराध मानै। ऐसा तौ नाही, जो ए जीव ही नाही तथा जीवनिके घाततैं कहा विगाड है?। जो ऐसा मानै, तो मिथ्यात्वका ही सद्भाव है॥

वहुरि कहै, जो वाकै अपने माने तत्त्वविषैं आस्तिक्य है। ताका उत्तर— मिथ्यादृष्टि तत्त्वकौं सर्वथा एकांत श्रद्धै है। तहां आस्तिक्य है सो मिथ्यात्व अतिदृढ भया। जातैं सर्वथा एकांत वस्तुका स्वरूप नाही। प्रत्यक्षादि प्रमाणकरि वाधित है। तातैं जे सर्वथा एकांत श्रद्धान करै हैं ते अर्हतके मततैं वाह्य हैं, मिथ्यादृष्टी हैं, नास्तिक हैं। वहुरि प्रश्न— जो सम्य–

ग्दर्शन के चिह्न प्रशमादिक कहे तिनिकों आपकै स्वसंवेदनगोचर कहे तिनितैं सम्यक्त्वका अनुमान करना कह्या तौ तत्त्वार्थ-श्रद्धानहीकूं स्वसंवेदनगोचर क्यों न कह्या ? ताका उत्तर— जो तत्त्वार्थश्रद्धानरूप जो सम्यग्दर्शन है सो दर्शनमोहके उपशम क्षयोपशम क्षयतैं जो आत्मस्वरूपका लाभ होय ताकूं कहिये है। सो यहु छद्मस्थकै स्वसंवेदनगोचर नाही अर प्रशमादि स्वसंवेदनगोचर है। तातैं इनितैं सम्यग्दर्शनका अनुमान करनां। ए अभेदविवक्षातैं सम्यग्दर्शनतैं अभिन्न है। तथापि भेदविवक्षातैं भिन्न है। जातैं ए सम्यग्दर्शनके कार्य है तातैं कार्यतैं कारणका अनुमान हो है। केई वादी सम्यग्ज्ञानहीकों सम्यग्दर्शन कहै हैं। तिनप्रति ज्ञानतैं भेद जनावनेकै अर्थ सम्यग्दर्शनके कार्य जे प्रशमादिक ते जुदे कहिये। तिनितैं ताकूं जुदा जानिये ॥

कोई कहै— प्रशमादिक मिथ्यादृष्टिसम्यग्दृष्टीकी कायादिकी क्रियाका व्यवहार समान दीखै तहां कैसे निर्णय होय ? ताका उत्तर— जो आपकै जैसे दीखैं तैसे पैलाका भी परीक्षाकरि निर्णय करनां। बहुरि वीतरागकै सम्यग्दर्शन अपने आत्माके विशुद्ध परिणामतैं ही गम्य है। तहां प्रशमादिकका अधिकार नांही। ऐसैं तत्त्वार्थश्रद्धान दर्शनमोहरहित आत्माका परिणाम है सो सम्यग्दर्शन है। यातैं केई अन्यवादी इच्छादिक कर्मके परिणामकूं सम्यग्दर्शन कहै हैं तिनिका निराकरण भया। जात कर्मका परिणाम कर्मअभावरूप जो मोक्ष ताका कारण होय नाही. ॥

आगै यहु सम्यग्दर्शन जीवादि तत्त्वार्थगोचर है सो कैसें उपजै है ? ऐसा प्रश्न होतैं, सूत्र कहै हैं—

॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥ ३ ॥

याका अर्थ— तत् कहिये सो सम्यग्दर्शन निसर्गतैं अर अधिगमतै मउपजै है। निसर्ग स्वभावकूं कहिये। अधिगम अर्थके ज्ञानकूं कहिये। इनि दोऊकूं सम्यग्दर्शनकी उत्पत्तिरूप क्रियाके कारणकरि कहे। ऐसें सम्यग्दर्शन है सो निसर्ग वा अधिगम इन दोऊनितैं उपजै है ऐसा जाननां। इहां प्रश्न— निसर्गज सम्यग्दर्शनविषैं अर्थका ज्ञान है कि नांही ? जो है यह भी अधि-गमज भया। बहुरि जो अर्थावबोध नांही है तो विनां जाने तत्त्वार्थविषैं श्रद्धान कैसे भया। ताका उत्तर— दोनूं ही सम्यग्दर्शनविषैं अंतरंगकारण तौ दर्शनमोहका उपशम क्षयोपशम क्षय तीनूं ही समान हैं। ताके होतैं जो बाह्य परोपदेशविनां होय ताकूं तौ निसर्गज कहिये। बहुरि जो परोपदेशपूर्वक होय ताकूं अधिगमज कहिये इनिमैं यह भेद है ॥ इहां सूत्रविषैं तत् ऐसा शब्दका ग्रहण, सो पहले सूत्रम सम्यग्दर्शन कह्या है, ताके ग्रहण अर्थि कह्या है। कोई कहै— लगता सूत्रविषैं कह्या सो विना तत् शब्द ही ग्रहण होय है। ताकूं कहिये, मोक्षमार्गका प्रकरण है। अर मोक्षमार्ग

प्रधान है, तातैं विना तत् शब्द ताका ग्रहणका प्रसंग आवै है। तातैं याके प्रसंग दूरि करनेकों तत् शब्द है। जातैं ज्ञानचारित्र ए दोय हेतु नांही वणै है। कैसै? केवलज्ञान तौ श्रुतज्ञानपूर्वक है, तातैं निसर्गपणां नांही संभवै। वहुरि श्रुतज्ञान परोपदेशपूर्वक ही है। स्वयंवुद्धकै श्रुतज्ञान हो है सो भी जन्मांतरके उपदेशपूर्वक है। तातैं याकै भी निसर्गजपनां नांही। वहुरि मति अवधि मनःपर्ययज्ञान निसर्गज ही हैं। इनिकै अधिगमजपनां नाही। कोई कहे— ज्ञानसामान्य तौं दोय हेतुतैं उपजै ऐसा आया। ताका उत्तर— इहां सामान्य अपेक्षा नांही विशेपापेक्षा है। दर्शनके भेदनिकी अपेक्षा तीनूं प्रकारके कैं दोऊ हेतु संभवे हैं। तैसैं ज्ञानके भेदनिमैं जुदा जुदाकै दोऊ हेतु नाही। वहुरि चारित्र है सो अधिगमज ही है। जातैं श्रुतज्ञानपूर्वक है। तातैं मोक्षमार्गका संवंध न लैनेकूं इहां तत् शब्द कह्या है॥

वहुरि प्रश्न— जो निसर्ग भी ज्ञानका नाम, अधिगम भी ज्ञानहीका नाम, उपदेश विना उपदेशका ही भेद है। ऐसैं होतैं ज्ञानहीतैं सम्यक्त्वका उपजना ठहर्‍या। तव ज्ञान कारण ठहर्‍या। अरु सिद्धांत ऐसा है, जो सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान युगपत् होय है। सो यहु कैसैं? ताका उत्तर— सम्यग्दर्शनके उपजावने योग्य ज्ञान ज्ञानावरणीयके विशेपतैं वाह्य परोपदेशत पहलैं होय है। तिसतैं सम्यग्दर्शन उपजै है। पीछै सम्यग्दर्शन होय तव सम्यग्ज्ञान नाम पावै। तातैं यहु अपेक्षा जाननी। याकी उत्पत्तीका विशेप ऐसा है— अंतरंग तौ दर्शनमोहका उपशम क्षयोपशम क्षय होय। वहुरि वाह्य द्रव्य क्षेत्र काल भावादि समस्त कारण मिलै तव उत्पत्ति होय॥ इहां कोई पूछ दर्शनमोहका उपशमादिक कारण है, तौ सर्व ही प्राणिनिकै सदा ही क्यों न होय? ताका उत्तर-दर्शनमोहका उपशमादि करणहारा भी प्रतिपक्षी द्रव्य क्षेत्र काल भाव हैं। ते कौंन सो कहिये? जिनेंद्रविंवादिक तौ द्रव्य हैं। समवसरणादिक क्षेत्र हैं। अर्द्धपुद्गलपरिवर्तनादिक काल है। अधःप्रवृत्तिकरणादिक भाव है। इनिके होतैं दर्शनमोहादिकका उपशमादि हो है। सो इनिका निमित्त होनां भव्य जीवहीकै है। अभव्यकै नाही होय है। यह वस्तुस्वभाव है। ऐसैं निकटभव्यकै दर्शनमोहका उपशमादिक अंतरंग कारण होतैं वाह्य निसर्ग तथा अधिगम ज्ञान होतैं सम्यग्दर्शनकी उत्पत्ति होय है॥

आगैं तत्त्व कहा है? ऐसा प्रश्न होतैं तत्त्वकौं कहै हैं—

जीवाजीवास्रवबन्धसँवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वम् ॥ ४ ॥

याका अर्थ-- जीव, अजीव, आस्रव, वंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष ये सात हैं ते तत्त्व हैं॥ तहां चेतनालक्षण तौ जीव है। सो चेतना ज्ञानचेतना, कर्मचेतना कर्मफलचेतना ऐसैं अनेकरूप है। यातैं उलटा चेतनारहित होय सो

अजीव है । शुभअशुभ कर्मका आगमनका द्वाररूप आस्रव है। जीव अर कर्मके प्रदेश एकक्षेत्रावगाह संबंधरूप बंध है। आस्रवका रुकनां सो संवर है । एकदेशकर्मका क्षय सो निर्जरा है । समस्तकर्मका वियोग (क्षय) सो मोक्ष है इनिका विस्ताररूप व्याख्यान आगैं होयगा । तिनिमैं सर्वफलका आत्मा आश्रय है, तातैं सूत्रमैं आदिविषैं जीव कह्या । ताके उपकारी अजीव है, तातैं ताकै लगता ही अजीव कह्या । जीव अजीव दोऊनिके संबंधतैं आस्रव है, तातैं ताकै अनंतर आस्रव कह्या । आस्रवपूर्वक बंध हो है, तातैं ताकै लगता बंध कह्या संवर होतैं बंधका अभाव हो है, तातैं ताकै लगता ही संवर कह्या । संवरपूर्वक निर्जरा होय है, तातैं ताकै लगता निर्जरा कह्या । अंतकेविषैं मोक्षकी प्राप्ति है, तातैं अंतमैं मोक्ष कह्या । ऐसैं इनिका पाठका अनुक्रम है ॥

इहां कोई कहै- पुण्यपापका ग्रहण यामैं करणां योग्य था, अन्य आचार्यनिनैं नव पदार्थ कहे हैं । ताकूं कहिये— पुण्यपाप आस्रवबंधमें गर्भित हैं, तातैं तिनिका ग्रहण न किया । फेरि कहै, जो ऐसैं है तौ आस्रवादिक भी जीव— अजीवविषैं गर्भित हैं, दोय ही तत्त्व कहने थे । ताका समाधान- जो, इहां प्रयोजनविशेष है सोही कहिये है। इहां प्रकरण मोक्षका है, तातैं मोक्ष तौ अवश्य कह्या ही चाहिये । बहुरि मोक्ष हैं सो संसारपूर्वक है। संसारके प्रधानकारण आस्रव बंध हैं, सो कहनां ही । बहुरि मोक्षके प्रधानहेतु संवरनिर्जरा हैं, ते भी कहना ही । यातैं प्रधानकारण कार्यके अपेक्षा इनिकूं जुदे कहे । सामान्यमैं अंतर्भूत है तोऊ विशेषका कहना प्रयोजन आश्रय है । जैसैं सेनाविषैं क्षत्रिय भेले होय तब कहै ' सर्व आये तथा फलाणे बडे सुभट हैं ते भी आये ' ऐसैं इहां भी जाननां ॥ बहुरि कोई तर्क करै, सूत्रविषैं तत्त्व-शब्द तौ भाववाची एकवचन नपुंसकलिंग है । बहुरि जीवादिक द्रव्यवाचक बहुवचन पुरुषलिंग धर्‍या सो यहु कैसैं ? ताका उत्तर- जो, द्रव्य भाव तौ अभेदरूप है, तातैं दोष नांही । बहुरि लिंग संख्या तत्त्वशब्द भाववाची है, तहां एकवचन ही होय है, तथा नपुंसकलिंगी है, तातैं अपनी लिंगसंख्याकौं छोडै नांही, तातैं दोष नांही । ऐसैं ही आदिसूत्रविषै जाननां ॥

इहां विशेष कहिये हैं-- मोक्षमार्गके प्रकरणमैं श्रद्धानके विषय सात ही तत्त्व हैं । अन्यवादी केई तत्त्व एक ही कहै हैं । केई प्रकृतिपुरुष दोय कही इनिके पचीस भेद कहै हैं । केई द्रव्यगुणादि सप्त पदार्थ कहै । केई पृथ्वी आदि पंच तत्त्व कहै हैं । केई प्रमाणप्रमेय आदि षोडश पदार्थ कहै हैं । तथा एकद्रव्य अनंतपर्यात्मक है । ऐसैं अनंत द्रव्य हैं ॥ तहां आचार्य मध्यमप्रस्थान विचारी कहै हैं । संक्षेप कहै तौ विशेष ज्ञानी ही समझै । विस्तार कहै तौ कहांताई कहै । तातैं अवश्य श्रद्धानका विषय थे ते कहे । केई कहै हैं, एक जीव ही तत्त्वार्थ है; सो अयुक्त है । परकूं जीवकी सिद्धि वचनतैं कराई है । वचन है सो अजीव है । जो वचनकूं भी जीव कहिये, तौ याकै स्वसंवेदन

चाहिए, सो नांही । बहुरि वह कहै, दूजा जीव होय तौ ताकै स्वसंवेदन कहिये एक ही परमात्मा है, सो अविद्याकरि बहुत दीखै है । ताका उत्तर — जो जीव तौ बहुत हैं, ताकूं एक अविद्याकरि दीखै है । जो तू कहै 'मोसिवाय दूजा कोई नांही' तौ दूजा भी कहै, मोसिवाय और कोई नांही । तौ एकै कहै सर्वशून्यता आवै है। जो कहै 'मोसिवाई' दूजा है कि नांही ? ऐसा संशय है । तौ अद्वैतका भी निर्णय न होयगा । जो कहै, 'आगमतैं एक पुरुषकी सिद्धी है' ताकूं कहिये, हमारे आगमतैं नानापुरुषकी सिद्धि है । प्रत्यक्ष प्रमाणतैं हमारा आगम तौ सिद्ध हो है । अर एक पुरुष कहनहारा आगम प्रत्यक्षप्रमाणतैं मिलै नाही । बहुरि जैसैं वचन अजीव है, तैसैं अजीव भी पृथ्वी आदि बहुत हैं । बहुरि जीवकै कायादिककी क्रियारूप आस्रव है । बहुरि बंध है सो पुरुषका भी धर्म है । जातैं जडका ही धर्म होय तौ पुरुष बंधका फल काहेकूं पावै । बहुरि संवर निर्जरा मोक्ष है ते भी जीवके धर्म है । ऐसैं पांचौंही तत्त्व जीव अजीव इनि दोऊनिके धर्म हैं ते श्रद्धानके ज्ञानके चारित्रके विषय हैं । अन्य सर्वविषय इनिमैं अंतर्भूत हैं

आगैं कहै हैं, कि, याप्रकार कहे जे सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिक तत्त्व तिनिका लोकव्यवहारविषैं व्यभिचार आवै हैं। नाममात्रकूं भी जीव कहै हैं। स्थापनामात्रकूं भी जीव कहै हैं। द्रव्यकूं भी जीव कहै हैं। भावकूं भी जीव कहै हैं। तातैं तिनिका यथार्थस्वरूप समझें विना अन्यथापनां आवै है। ताके निराकरण अर्थ सूत्र कहै हैं—

नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव इनि च्यारिनिकरि तिनि जीवादिकपदार्थनिका न्यास कहिये निक्षेप है। जो वस्तूमें जो गुण न पाईए ताविषैं लोकव्यवहारप्रवृत्तिके अर्थि अपने उपयोगतैं नाम करना, ताकूं नाम कहिये। इहां गुणशब्दतैं द्रव्य कर्म जाति ए सर्व भी ग्रहण करणा। तहां जातिद्वार नाम तौ जैसैं गऊ अश्व घट हैं। गुणद्वार जैसैं काहूकूं धवलगुणकै द्वार धवल कहिये। कर्मद्वार जैसैं चलतेकूं चलता कहिये। द्रव्यद्वार जैसैं कुंडल द्रव्य पहरै होय, ताकूं कुंडली कहिये, तथा दंड लिये होय ताकूं दंडी कहिये। इनिविना वक्ता इच्छातैं वस्तुका नाम धरै, ताकूं नामनिक्षेप कहिये। जैसैं पुरुषका हाथी- सिंह नाम धर्या तहां हाथीके तथा सिंहके द्रव्य गुण क्रिया जाति कछु भी न पाइये, तहां वक्ताकी इच्छा ही प्रधान है। इहां कोई पूछै— नामका व्यवहार अनादिरूढ है, जैसैं जाति ऐसा जातीका नाम, गुण ऐसा गुणका नाम, कर्म ऐसा कर्मका नाम इत्यादि ए नाम कैसै हैं ? ताका उत्तर— जो, अनादिहीतैं वक्ता हैं, अनादिहीतैं ये नाम हैं। प्रधानगुणपणांका विशेष हैं, तहां वक्ता वस्तूके गुण आदि प्रधानकरि किसीका नाम कहै, तहां तौ

जुदा ताकूं तद्व्यतिरिक्त कहिये । ताका भी कर्मनोकर्मकरि भेद दोय । तहां जिस वस्तूका निक्षेप करिये ताका व्याख्यानका शास्त्रका जाननेवाले पुरुषका शरीर वर्तमानकूं भी वाका निक्षेप कहिये; बहुरि आगामी जेतै काल रहेगा ताकूं भी कहिये, बहुरि जीवपर्याय छोडे पीछे मृतकशरीर है ताकूं भी कहिये । जातैं लोकमैं ऐसा व्यवहार है जो मृतकशरीरकूं भी कहै जो यह फलाणां पुरुष है । बहुरि जा वस्तूका निक्षेप करिये ताहीकूं अगली पर्यायकी अपेक्षा लेय पहलै ही कहिये जो यह फलाणा वस्तु है ताकूं भाविनोआगमद्रव्यनिक्षेप कहिये । बहुरि जाका निक्षेप करिये ताका कारण ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्मकूं ताका तद्व्यतिरिक्त कर्मद्रव्यनिक्षेप कहिये । बहुरि आहारादि पुद्गलके स्कंध जे शरीरादिरूप परिणवनेकूं वाह्यकारण तिनिकूं तद्व्यतिरिक्त नोकर्मद्रव्यनिक्षेप कहिये ॥

बहुरि वर्तमान जिस पर्यायकरि रहित जो द्रव्य होय ताकूं भावनिक्षेप कहिये । ताके दोय भेद; एक आगमभाव, एक नोआगमभाव । तहां जा वस्तूका निक्षेप करिये ताका कथनका शास्त्रका जाननेवाला पुरुषका जिस काल वा शास्त्रविषैं उपयोग होय तिस काल वा वस्तूका आगमभावनिक्षेप वा पुरुषकों कहिये ॥ बहुरि जो वस्तु जिस पर्यायविषैं वर्तमानकालमैं है ताकूं नोआगमभावनिक्षेप कहिये । इहां उदाहरण कहिये हैं । जैसैं जीव ऐसा शब्दका अर्थ स्थापिये तहां जीवनगुणादिककी अपेक्षा विना अजीवका किसीका नाम जीव ऐसा कहिये ताकूं जीवका नामनिक्षेप कहिये । तथा जीवके विशेपपर्यायकरि लगाईये तब मनुष्यादि जीवनिक्षेप कहिये । बहुरि काष्ठचित्रामादिक मूर्तिविषैं जीव ऐसा तथा मनुष्यादिजीव ऐसा स्थापन करना सो स्थापनाजीव है । बहुरि द्रव्यजीव दोय प्रकार । तहां जीवके कथनका शास्त्र जाननेवाला पुरुष तिस शास्त्रविषैं उपयोगरहित होय ताकूं आगमद्रव्यजीवनिक्षेप कहिये ॥

बहुरि नोआगमद्रव्यजीव तीन प्रकार । तहां जीवके कथनके शास्त्रकूं जाननेवाला पुरुषका शरीर भूत, भविष्य, वर्तमान तीन प्रकारकूं नोआगमद्रव्यका पहला भेद ज्ञायकशरीर नोआगमद्रव्यजीव कहिये । तथा मनुष्यजीवादिकका भी ऐसै ही जाननां । बहुरि सामान्यजीव नोआगमभाविद्रव्य तौ है ही नाही । जातैं जीवनभावकरि सदा विद्यमान है । बहुरि विशेप अपेक्षा मनुष्यादि भाविनोआगमद्रव्यजीवकरि लगाईये । तहां कोई जीव मनुष्यपर्यायविषैं देव आयुकर्म बांध्या, तहां अवश्य देव होयगा । तहां मनुष्यपर्यायविषैं ही देव कहनां ताकूं भाविनोआगमदेवजीव कहिये । बहुरि तद्व्यतिरिक्तके भेद दोय । तहां सामान्यजीवअपेक्षा तौ किसी कर्मकै उदयतैं जीव होतां नांही । बहुरि विशेषजीवअपेक्षा मनुष्यनामा नामकर्मके द्रव्यकूं मनुष्यनाम तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यमनुष्यजीव कहिये सो तद्व्यतिरिक्तका भेद है । बहुरि मनुष्य आहारा-

दिक करै है तिनितैं शरीरवृद्धि होय है यहु नोकर्म है । तातैं आहारादिकूं तद्व्यतिरिक्तका दूसरा भेद नोकर्मद्रव्यजीव कहिये ॥

वहुरि भावजीव भी दोय प्रकार है । तहां जीवके कथनका शास्त्रका जाननेवाला पुरुष जिस काल उस शास्त्रविषैं उपयोगसहित होय ताकूं आगमभावजीव कहिये । विशेषापेक्षाकरि मनुष्यजीवका कथनका शास्त्रका जाननेवाला तिसविषैं उपयोगसहित होय तव मनुष्यआगमभावजीव निक्षेप कहनां । वहुरि जीवपर्यायकरि सदाविद्यमान है सो नोआगमभावजीव है । विशेषापेक्षाकरि मनुष्यजीवपर्याय विद्यमान होय तव मनुष्यनोआगमभावजीव है । ऐसे ही अन्य जीवादिपदार्थनिकै निक्षेपविधि लगावणां । इहां प्रयोजन ऐसा जो लोकव्यवहारमैं कोई नामका भाव समझिजाय तथा स्थापनाकूं भावादिक जानै तौ ताकै यथार्थ समझावनै निमिति यह निक्षेपविधि है । ऐसा जाननां ॥ वहुरि सूत्रविषैं तत् शब्द है सो सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिपदार्थ सर्वहीके ग्रहणके अर्थि है । सर्वहीपरि निक्षेप लगावणें । द्रव्यार्थिकनयतैं तौ नाम स्थापना द्रव्य ए तीन निक्षेप हैं । वहुरि पर्यायार्थिकनयकरि भावनिक्षेप है ॥

आगै नामादिनिक्षेपविधिकरि थापे जे आकाररूप सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिकपदार्थ तिनिका यथार्थ अधिगम काहेतैं होय है? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं–

॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥

याका अर्थ– प्रमाण नय इनिकरि जीवादिक पदार्थनिका अधिगम हो है ॥ नाम आदि निक्षेपविधिकरि अंगीकार करे जे जीवादिक तिनिका यथार्थस्वरूपका ज्ञान प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाणकरि तथा द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयनिकरि होय है । तहां प्रमाणनयनिका लक्षण तथा भेद तौ आगै कहसी । तहां प्रमाण दोय प्रकार है । एक स्वार्थ एक परार्थ। तहां स्वार्थ तौ ज्ञानस्वरूप कहिये । वहुरि परार्थ वचनरूप कहिये । तामैं च्यारि ज्ञान तौ स्वार्थरूप हैं । वहुरि श्रुतप्रमाण ज्ञानरूप भी है वचनरूप भी है । तातैं स्वार्थपरार्थ दोऊ प्रकार है । वहुरि श्रुतप्रमाणके भेद विकल्प हैं ते नय हैं । इहां कोई पूछै नयशब्दके अक्षर थोडे हैं तातैं द्वंद्वसमासमैं पूर्वनिपात चाहिये । ताका उत्तर– प्रमाण प्रधान है, पूज्य है। सर्व नय हैं ते प्रमाणके अंग हैं। जातैं ऐसैं कह्या है वस्तूकौं प्रमाणतैं ग्रहण करि वहुरि सत्त्व, असत्त्व, नित्य, अनित्य इत्यादि परिणामके विशेषतैं अर्थका अवधारण करना सो नय है । वहुरि प्रमाण सकल धर्म अर धर्मीकूं विषय करै है । सोही कह्या है सकलादेश तौ प्रमाणाधीन है । वहुरि विकलादेश नयाधीन है । तातैं प्रमाणहीका पूर्वनिपात युक्त

तथा संसर्गका भी प्रतिसंसर्ग गुणपर्यायनितैं भेद ही है, एक ही होय तौ अन्यका संसर्ग न ठहरै, तातैं संसर्गकारि भी भेदवृत्ति है । तथा शब्द भी सर्वगुणपर्यायनिका जुदा जुदा वाचक है । एक मनुष्यपणां ऐसा ही वचन होय तौ सर्वकै एकशब्दवाच्यपणाकी प्राप्ति आवै । ऐसैं मनुष्यपणांनै आदि देकारि सर्व ही गुणपर्यायनिकै एक मनुष्यनाम वस्तुविषैं अभेदवृत्तीका असंभव होते भिन्नभिन्न स्वरूपनिकै भेदवृत्ति भेदका उपचार करिये । ऐसैं इनि दोऊ भेदवृत्ति भेदोपचार, अभेदवृत्ति अभेदोपचारतैं एकशब्दकारि एक मनुष्यादि वस्तु अनेकधर्मात्मपणांकूं स्यात्कार है सो प्रगट करनेवाला है ॥

सो याके सप्तभंग हैं सो कैसे उपजै हैं? ताका उदाहरण कहिये हैं । जैसे एक घटनामा वस्तु है सो कथंचित् घट है; कथंचित् अघट है. कथंचित् घट अघट है, कथंचित् अवक्तव्य है, कथंचित् घट अवक्तव्य है, कथंचित् अघट अवक्तव्य है । ऐसे विधिनिषेधकी मुख्य गौणविवक्षाकारि निरूपण करनां । तहां याकी अपेक्षा प्रगट करिये है । तहां अपने स्वरूपकारि कथंचित् घट है। परके स्वरूपकारि कथंचित् अघट है। तहां घटका ज्ञान तथा घटका अभिधान कहिये संज्ञाकी प्रवृत्तिका कारण जो घटाकार चिह्न, सो तौ घटका स्वात्मा कहिये स्वरूप है। बहुरि जहां घटका ज्ञान तथा घटका नामकी प्रवृत्तीकूं कारण नांही ऐसा पटादिक, सो परात्मा कहिये परका स्वरूप है। सो अपने स्वरूपका ग्रहण परस्वरूपका त्यागकी व्यवस्थारूप ही वस्तूका वस्तुपनां है। जो आपविषैं परते जुदा रहनेका परिणाम न होय तौ सर्व पर घटस्वरूप होय जाय। अथवा परतैं जुदा होते भी अपने स्वरूपका ग्रहणका परिणाम न होय तौ गदहाके सींगवत् अवस्तु होय। ऐसे ये विधिनिषेधरूप दोय भंग भये, ताके सात कहि लेने ॥ १ ॥

बहुरि नाम स्थापना द्रव्य भावनिविषैं जाकी विवक्षा करिये, सो तौ घटका स्वात्मा है। जाकी विवक्षा न करिये सो परात्मा है । तहां विवक्षितस्वरूपकारि घट है। अविवक्षित स्वरूपकारि अघट है। जो अन्यस्वरूप भी घट होय विवक्षितस्वरूपकारि नहीं होय तौ नामादिकका व्यवहारका लोप होय । ऐसे ये च्यारिनिके दोय दोय भंग होय ॥ २ ॥ अथवा विवक्षित घटशब्दवाच्यसमानाकार जे घट तिनिका सामान्यका जे विशेषाकार घट तिनिविषैं कोई एक विशेष ग्रहण करिये ताविषैं जो न्यारा आकार है, सो तौ घटका स्वात्मा है, अन्य सर्व परात्मा है । तहां अपना जुदा रूपकारि घट है। अन्यरूपकारि अघट है । जो अन्यरूपकारि भी घट होय तौ सर्व घट एक घटमात्र होय । तब सामान्याश्रय व्यवहारका लोप होय । ऐसे ये दोय भंग भये । इहां जेते विशेष घटाकार होय तेतेही विधिनिषेधके भंग होय ॥ ३ ॥ अथवा तिसही घटविशेषविषैं कालांतरस्थायी होते पूर्व उत्तर कपालादि कुशूलांत अवस्थाका समूह सो घटकै परात्मा । बहुरि ताकै मध्यवर्ती घट सो स्वात्मा सो तिस स्वात्माकारि घट है । जातैं ताविषै ताके कर्म वा गुण दीखै

है । बहुरि अन्यस्वरूपकरि अघट है । जो कपालादि कुशूलांत स्वरूपकरि भी घट होय तौ घटअवस्थाविषै भी तिनिकी प्राप्ति होय । उपजायवा निमित्त तथा विनाशके निमित्त पुरुषका उद्यम निष्फल होय । तथा अंतरालवर्ती पर्याय घटस्वरूपकरि भी घट न होय तौ घटकरि करनेयोग्य फल न होय । ऐसैं ये दोय भंग भये ॥ ४ ॥ अथवा क्षण क्षण प्रति द्रव्यके परिणामकै उपचय अपचय भेदतैं अर्थांतरपना होय है । यातैं ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षातैं वर्तमानस्वभावकरि घट है । अतीत अनागत स्वभावकरि अघट है । ऐसैं न होय तौ वर्तमानकी ज्यौं अतीत अनागत स्वभावकरि भी घट होय तब एकसमयमात्र सर्वस्वभाव होय । बहुरि अतीत अनागतकी ज्यौं वर्तमान स्वभाव भी होय तौ वर्तमानघटस्वभावका अभाव होते घटका आश्रयरूप व्यवहारका अभाव होय । जैसे विनस्या तथा नांही उपज्यां घटकै घटका व्यवहारका अभाव है तैसे यहभी ठहरै ऐसैं दोय भंग यह भये ॥ ५ ॥ अथवा तिस वर्तमान घटविषैं रूपादिकका समुदाय परस्पर उपकार करनेवाला है । ता विषैं पृथुबुध्नोदरादि आकार है सो घटका स्वात्मा है । अन्य सर्व परात्मा है । तिस आकार तौ घट है । अन्य आकारकरि अघट है । घटका व्यवहार तिसही आकारतैं है । तिस विना अभाव है । तो पृथुबुध्नोदराद्याकारकरि भी घट न होय तौ घट काहेका ? । बहुरि जो इतर आकारकरि घट होय तौ आकारशून्यविषैंभी घटव्यवहारकी प्राप्ति आवै । ऐसैं ये दोय भंग हैं ॥ ६ ॥ अथवा रूपादिकका संनिवेष जो रचनाविशेष आकार तहां नेत्रकरि घट ग्रहण होय है। ता व्यवहारविषैं रूपको प्रधानकरि घट ग्रहण कीजिये तहां रूप घटका स्वात्मा है । बहुरि यामैं रसादिक हैं ते परात्मा हैं । सो घटरूपकरि तौ घट है रसादिककरि अघट है । जातैं ते रसादिक न्यारे न्यारे इंद्रियनिकरि ग्राह्य हैं । जो नेत्रकरि घट ग्रहण कीजिये है तैसे रसादिक भी ग्रहण करै तौ सर्वकै रूपपणांका प्रसंग आवै तौ अन्य इंद्रियनिकी कल्पना निरर्थक होय । बहुरि रसादिककीज्यों रूपभी घट ऐसा नेत्र नांही ग्रहण करै तौ नेत्रगोचरता या घटमैं न होय । ऐसैं ये दोय भंग भये ॥ ७ ॥ अथवा शब्दके भेदतैं अर्थका भेद अवश्य है । इस न्यायकरि घट कुट शब्दनिकै अर्थभेद है । तातैं घटनेतैं तौ घट नाम है । बहुरि कुटिलतातैं कुट नाम है । तातैं तिस क्रियारूप परिणतिके समयही तिस शब्दकी प्रवृत्ति हो है । इस न्यायतैं घटनक्रियाविषैं कर्तापणां है सो ही घटका स्वात्मा है । कुटिलतादिक परात्मा है । तहां घटक्रियापरिणतिक्षणहीमैं घट है । अन्यक्रियामैं अघट है। जो घटनक्रियापरिणति मुख्यकरि भी घट न होय तौ घटव्यवहारकी निवृत्ति होय बहुरि जो अन्यक्रिया अपेक्षा भी घट होय तौ तिस क्रियाकरि रहित जे पटादिक तिनिविषैभी घटशब्दकी वृत्ति होय । ऐसे ये दोय भंग भये ॥ ८ ॥ अथवा घट शब्द उच्चारते उपज्या जो घटकै आकार उपयोग ज्ञान सो तौ घटका स्वात्मा है । अरु बाह्य घटाकार है सो परात्मा है ।

बाह्य घटके अभाव होतैं भी घटका व्यवहार है । सो घट उपयोगाकारकरि घट है । बाह्याकारकरि अघट है । जो उप-
योगाकार घटस्वरूपकरि भी अघट होय तौ वक्ता श्रोताके हेतुफलभूत जो उपयोगाकार घटके अभावतैं तिस आधीन
व्यवहारका अभाव होय । बहुरि जो उपयोगतैं दूरिवर्ती जो बाह्य घट भी घट होय तौ पटादिककै भी घटका प्रसंग
होय । ऐसे ये दोय भंग भये ॥ ९ ॥ अथवा चैतन्यशक्तिका दोय आकार हैं । एक ज्ञानाकार है एक ज्ञेयाकार है ।
तहां ज्ञेयतैं जुद्या नांही ऐसा आरसाका विनां प्रतिबिंब आकारवत् तौ ज्ञानाकार है । बहुरि ज्ञेयतैं जुद्या प्रतिबिंवसहित
आरसाका आकारवत् ज्ञेयाकार है । तहां घट ज्ञेयाकाररूप ज्ञान तौ घटका स्वात्मा है । घटका व्यवहार याहीतैं चलै है।
बहुरि विना घटाकार ज्ञान है सो परात्मा है । जातैं सर्वज्ञेयतैं साधारण है । सो घट ज्ञेयाकारकरि तौ घट है । विना
घटाकार ज्ञानकरि अघट है । जो ज्ञेयाकारकरि भी घट न होय तौ तिसके आश्रय जो करणेयोग्य कार्य है ताका
निरास होय । बहुरि ज्ञानाकारकरि भी घट होय तौ पटादिकका आकार भी ज्ञानका आकार है सोभी घट ठहरै ।
ऐसै ये दोय भंग हैं ॥ १० ॥

ऐसैंही इनके पांच पांच भंग आर कहिये तब सात सात भंग होय, सो भी दिखाईये हैं। एक घट तथा अघट
दोय कहे ते परस्पर भिन्न नांही हैं। जो जुदे होय तो एक आधारपणांकरि दोऊके नामकी तथा दोऊके ज्ञानकी एक
घट वस्तुविषैं वृत्ति न होय, घटपटवत्। तातैं परस्पर आविनाभाव होते दोऊमैं एकका अभाव होते दोऊका अभाव होय।
तब इसके आश्रय जो व्यवहार ताका लोप होय। तातैं यहु घट है सो घट अघट दोऊ स्वरूप है। सो अनुक्रमकरि
वचनगोचर है ॥ ३ ॥ बहुरि जो घट अघट दोऊ स्वरूप वस्तुकूं घटही कहिये तौ अघटका ग्रहण न होय। अघटही
कहिये तौ घटका ग्रहण न होय। एकही शब्दकरि एककाल दोऊ कहै न जाय तातैं अवक्तव्य है ॥ ४ ॥ बहुरि घट-
स्वरूपकी मुख्यताकरि कह्या जो वक्तव्य तथा युगपत् न कह्या जाय ताकी मुख्यताकरि घट अवक्तव्य है ॥ ५ ॥ तैसैं
कह्या प्रकारकरि अघट अवक्तव्य है ॥ ६ ॥ बहुरि तैसैं क्रमकरि दोऊ कहे जाय युगपत् कहे न जाय ताकरि घट अघट
अवक्तव्य है ॥ ७ ॥ ऐसैं यहु सप्तभंगी सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिक पदार्थनिविषैं द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयका
मुख्यगौणभेदकरि लगाइये तब अनंत वस्तु तथा अनंत धर्मके परस्पर विधिनिषेधतैं अनंत सप्तभंगी होय हैं । इनिहीका
सर्वथा एकांत अभिप्राय होय तब मिथ्यावाद है ॥

बहुरि वचनरूप प्रमाणसप्तभंगी तथा नयसप्तभंगी होय है ॥ इहां प्रमाणविषय तौ अनंतधर्मात्मक वस्तु है । तहां
एकही वस्तुका वचनकै सर्वधर्मनिकी अभेदवृत्तिकरि तथा अन्यवस्तुके अभेदके उपचारकरि प्रमाणसप्तभंगी होय है । बहुरि

है । बहुरि अन्यस्वरूपकारि अघट है । जो कपालादि कुशूलांत स्वरूपकारि भी घट होय तौ घटअवस्थाविषै भी तिनिकी प्राप्ति होय । उपजायवा निमित्त तथा विनाशकै निमित्त पुरुषका उद्यम निष्फल होय । तथा अंतरालवर्ती पर्याय घटस्वरूपकारि भी घट न होय तौ घटकरि करनेयोग्य फल न होय । ऐसैं ये दोय भंग भये ॥ ४ ॥ अथवा क्षण क्षण प्रति द्रव्यके परिणामकै उपचय अपचय भेदतैं अर्थांतरपना होय है । यातैं ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षातै वर्तमानस्वभावकारि घट है । अतीत अनागत स्वभावकारि अघट है । ऐसैं न होय तौ वर्तमानकी ज्यौं अतीत अनागत स्वभावकारि भी घट होय तब एकसमयमात्र सर्वस्वभाव होय । बहुरि अतीत अनागतकी ज्यौं वर्तमान स्वभाव भी होय तौ वर्तमानघटस्वभावका अभाव होते घटका आश्रयरूप व्यवहारका अभाव होय । जैसे विनस्या तथा नांही उपज्यां घटकै घटका व्यवहारका अभाव है तैसे यहभी ठहरै ऐसैं दोय भंग यह भये ॥ ५ ॥ अथवा तिस वर्तमान घटविषैं रूपादिकका समुदाय परस्पर उपकार करनेवाला है । ता विषैं पृथुबुध्नोदरादि आकार है सो घटका स्वात्मा है । अन्य सर्व परात्मा है । तिस आकार तौ घट है । अन्य आकारकारि अघट है । घटका व्यवहार तिसही आकारतैं है । तिस विना अभाव है । तो पृथुबुध्नोदराद्याकारकारि भी घट न होय तौ घट काहेका ? । बहुरि जो इतर आकारकारि घट होय तौ आकारशून्यविषैंभी घटव्यवहारकी प्राप्ति आवै । ऐसैं ये दोय भंग हैं ॥ ६ ॥ अथवा रूपादिकका संनिवेष जो रचनाविशेष आकार तहां नेत्रकारि घट ग्रहण होय है। ता व्यवहारविषैं रूपको प्रधानकारि घट ग्रहण कीजिये तहां रूप घटका स्वात्मा है । बहुरि यामैं रसादिक हैं ते परात्मा हैं । सो घटरूपकारि तौ घट है रसादिककारि अघट है । जातैं ते रसादिक न्यारे न्यारे इंद्रियनिकारि ग्राह्य हैं । जो नेत्रकारि घट ग्रहण कीजिये है तैंसे रसादिक भी ग्रहण करै तौ सर्वकै रूपपणांका प्रसंग आवै तौ अन्य इंद्रियनिकी कल्पना निरर्थक होय । बहुरि रसादिककीज्यौं रूपभी घट ऐसा नेत्र नांही ग्रहण करै तौ नेत्रगोचरता या घटमैं न होय । ऐसै ये दोय भंग भये ॥ ७ ॥ अथवा शब्दके भेदतैं अर्थका भेद अवश्य है । इस न्यायकरि घट कुट शब्दनिकै अर्थभेद है । तातैं घटनेतैं तौ घट नाम है । बहुरि कुटिलतातैं कुट नाम है । तातैं तिस क्रियारूप परिणतिके समयही तिस शब्दकी प्रवृत्ति हो है । इस न्यायतैं घटनक्रियाविषैं कर्तापणां है सो ही घटका स्वात्मा है । कुटिलतादिक परात्मा है । तहां घटक्रियापरिणतिक्षणहीमैं घट है । अन्यक्रियामैं अघट है। जो घटनाक्रियापरिणति मुख्यकारि भी घट न होय तौ घटव्यवहारकी निवृत्ति होय बहुरि जो अन्यक्रिया अपेक्षा भी घट होय तौ तिस क्रियाकारि रहित जे पटादिक तिनिविषैंभी घटशब्दकी वृत्ति होय । ऐसे ये दोय भंग भये ॥ ८ ॥ अथवा घट शब्द उच्चारते उपज्या जो घटकै आकार उपयोग ज्ञान सो तौ घटका स्वात्मा है । अरु बाह्य घटाकार है सो परात्मा है ।

बाह्य घटके अभाव होतैं भी घटका व्यवहार है। सो घट उपयोगाकारकारि घट है। बाह्याकारकारि अघट है। जो उपयोगाकार घटस्वरूपकारि भी अघट होय तौ वक्ता श्रोताके हेतुफलभूत जो उपयोगाकार घटके अभावतैं तिस आधीन व्यवहारका अभाव होय। बहुरि जो उपयोगतैं दूरिवर्ती जो बाह्य घट भी घट होय तौ पटादिककै भी घटका प्रसंग होय। ऐसे ये दोय भंग भये ॥ ९ ॥ अथवा चैतन्यशक्तिका दोय आकार हैं। एक ज्ञानाकार है एक ज्ञेयाकार है। तहां ज्ञेयतैं जुड्या नांही ऐसा आरसाका विनां प्रतिबिंब आकारवत् तौ ज्ञानाकार है। बहुरि ज्ञेयतैं जुड्या प्रतिबिंबसहित आरसाका आकारवत् ज्ञेयाकार है। तहां घट ज्ञेयाकाररूप ज्ञान तौ घटका स्वात्मा है। घटका व्यवहार याहीतैं चलै है। बहुरि विना घटाकार ज्ञान है सो परात्मा है। जातैं सर्वज्ञेयतैं साधारण है। सो घट ज्ञेयाकारकारि तौ घट है। विना घटाकार ज्ञानकारि अघट है। जो ज्ञेयाकारकारि भी घट न होय तौ तिसके आश्रय जो करणेयोग्य कार्य है ताका निरास होय। बहुरि ज्ञानाकारकारि भी घट होय तौ पटादिकका आकार भी ज्ञानका आकार है सोभी घट ठहरै। ऐसै ये दोय भंग हैं ॥ १० ॥

ऐसैंही इनके पांच पांच भंग आर कहिये तब सात सात भंग होय, सो भी दिखाईये हैं। एक घट तथा अघट दोय कहे ते परस्पर भिन्न नांही हैं। जो जुदे होय तो एक आधारपणांकारि दोऊके नामकी तथा दोऊके ज्ञानकी एक घट वस्तुविषैं वृत्ति न होय, घटपटवत्। तातैं परस्पर अविनाभाव होते दोऊमैं एकका अभाव होते दोऊका अभाव होय। तब इसके आश्रय जो व्यवहार ताका लोप होय। तातैं यहु घट है सो घट अघट दोऊ स्वरूप है। सो अनुक्रमकारि वचनगोचर है ॥ ३ ॥ बहुरि जो घट अघट दोऊ स्वरूप वस्तुकूं घटही कहिये तौ अघटका ग्रहण न होय। अघटही कहिये तौ घटका ग्रहण न होय। एकही शब्दकारि एककाल दोऊ कहै न जाय तातैं अवक्तव्य है ॥ ४ ॥ बहुरि घटस्वरूपकी मुख्यताकारि कह्या जो वक्तव्य तथा युगपत् न कह्या जाय ताकी मुख्यताकारि घट अवक्तव्य है ॥ ५ ॥ तैसैं कह्या प्रकारकारि अघट अवक्तव्य है ॥ ६ ॥ बहुरि तैसैं क्रमकारि दोऊ कहे जाय युगपत् कहे न जाय ताकारि घट अघट अवक्तव्य है ॥ ७ ॥ ऐसैं यहु सप्तभंगी सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिक पदार्थनिविषैं द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयका मुख्यगौणभेदकारि लगाइये तब अनंत वस्तु तथा अनंत धर्मके परस्पर विधिनिषेधतैं अनंत सप्तभंगी होय हैं। इनिहीका सर्वथा एकांत अभिप्राय होय तब मिथ्यावाद है ॥

बहुरि वचनरूप प्रमाणसप्तभंगी तथा नयसप्तभंगी होय है ॥ इहां प्रमाणविषय तौ अनंतधर्मात्मक वस्तु है। तहां एकही वस्तुका वचनकै सर्वधर्मनिकी अभेदवृत्तिकारि तथा अन्यवस्तुके अभेदके उपचारकारि प्रमाणसप्तभंगी होय है। बहुरि

नयका विषय एकधर्म है तातैं तिस धर्मकी भेदवृत्तिकरि तथा अन्यनयका विषय जो अन्यधर्म ताके भेदके उपचारकरि नयसप्तभंगी होय है। इहां कोई पूछै, अनेकांतही है ऐसै भी एकांत आवै है तब अनेकांतही कैसे रह्या? ताका उत्तर — यहु सत्य है, जो अनेकांत है सो भी अनेकांतही है। जातैं प्रमाणवचनकरि तौ अनेकांतही है। नयवचनकरि एकांतही है। ऐसें एकांतही सम्यक् है जातैं प्रमाणकी सापेक्षा भई। बहुरि जहां निरपेक्ष एकांत है सो मिथ्या है। इहां कोई कहै, अनेकांत तौ छलमात्र है। पलेकी युक्ति बाधनेकूं अवलंबन है। तहा कहिये छलका लक्षण तौ अर्थका विकल्प उपजाय पैलेका वचन खंडन करना है। सो अनेकांत ऐसें नाही। जातैं दोय धर्मकी प्रधान गौणकी अपेक्षाकरि वस्तु जैसे है तैसें कहै है, यामैं छल कहां? बहुरि कोई कहै, दोय पक्ष साधना तौ संशयका कारण है। ताकूं कहिये, जो, संशयका स्वरूप तौ दोऊ पक्षका निश्चय न होय तहां है। अनेकांतविषैं तौ दोऊ पक्षके विषय प्रत्यक्ष निश्चित हैं। तातैं संशयके कारण नाही। बहुरि विरोधभी नाही। जातैं नयकरि ग्रहे जे विरुद्धधर्म तिनिका मुख्यगौणकथनके भेदतैं सर्वथा भेद नांही है। जैसैं एकही पुरुषविषैं पितापणा पुत्रपणां इत्यादिक विरुद्धधर्म हैं, तिनिके कहनेकी मुख्य-गौणविवक्षाकरि विरोध नांही तैसें इहां भी जाननां ॥

आगैं प्रमाणनयनिकरि जाणे जे जीवादिक पदार्थ, तिनिके अधिगमका अन्य उपाय दिखावनेकै अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानतः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान इनि छह अनुयोगकरि भी सम्यग्दर्शन आदि तथा जीव आदि पदार्थनिका अधिगम होय है ॥ तहां निर्देश तौ स्वरूपका कहनां। स्वामित्व कहिये अधिपतिपनां साधन कहिये उत्पत्तिका कारण। अधिकरण कहिये अधिष्ठान आधार। स्थिति कहिये कालका प्रमाण। विधान कहिये प्रकार ॥ ऐसे इनिका द्वंद्वसमासकरि बहुवचनरूप करण अर्थ प्रमाणनयकी ज्यों जाननां। संक्षेपतैं तौ अधिगमका उपाय प्रमाणनय कहे। बहुरि मध्यमस्थानतैं शिष्यके आशयके वशकरि इनि निर्देश आदि अनुयोगनिकरि कहना। तहा कहा वस्तु है? कौनकै है? काहेकरि है? कौनविषैं है, कितेककाल है? के प्रकार है? ऐसे छह प्रश्न होतैं, इनिका उत्तर कहनां ते निर्देशादिक हैं। उदाहरण— सम्यग्दर्शन कहा है? ऐसैं प्रश्न होतै तत्त्वार्थश्रद्धान है सो सम्यग्दर्शन है। अथवा याके नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव कहने सो निर्देश है। बहुरि सम्यग्दर्शन कौनकै है? ऐसा प्रश्न होतैं सामान्य-करि तौ जीवकै है ऐसा कहना ॥

बहुरि विशेषकारि कहना तब गतिके अनुवादकारि नरकगातविषैं सर्वपृथ्वीनिमैं नारकी जीवनिकै पर्याप्तककै औपशमिक क्षायोपशमिक है। बहुरि पहली पृथ्वीविषैं पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवनिकै क्षायिक अरु क्षायोपशमिक है। बहुरि तिर्यग्गतिविषैं तिर्यंच पर्याप्तककै औपशमिक होय हैं। बहुरि क्षायिक क्षायोपशमिक पर्याप्तक अपर्याप्तक दोऊनिहीकै होय है। बहुरि तिर्यंचणीकै क्षायिक नांही है। औपशमिक क्षायोपशमिक पर्याप्तककैही होय है। अपर्याप्तककै नांही होय है। ऐसेही मनुष्यगतिविषैं पर्याप्तक अपर्याप्तककै क्षायिक क्षायोपशमिक है। बहुरि औपशमिक पर्याप्तकहीकै होय है। बहुरि मनुष्यणीकै तीनूंही हैं। सो पर्याप्तकहीकै है अपर्याप्तककै नांही है। बहुरि याकै क्षायिकसम्यक्त्व भाव वेदकारिही है। बहुरि देवगतिविषैं देव पर्याप्तक अपर्याप्तकनिकै तीनूंही है। तहां औपशमिक अपर्याप्तककै चारित्रमोहका उपशमकारि उपशमश्रेणीविषैं मरण करै तिनिकै द्वितीयोपशम होय॥ यह प्रथमोपशम अपर्याप्तमैं काहूकैही न होय है। बहुरि भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी देवनिकै अरु इनिकी देवांगनाकै अर सौधर्म ईशानकी कल्पवासिनी देवांगनानिकै क्षायिक तौ होयही नांही। अरु इनिकै पर्याप्तकनिकै औपशमिक क्षायोपशमिक है॥

बहुरि इंद्रियानुवादकारि संज्ञी पंचेंद्रियजीवनिकै तीनूंही हैं। अन्यकै नाही है॥ बहुरि कायके अनुवादकारि त्रसकायिकजीवनिकै तीनूंही हैं अन्यकै नांही हैं॥ बहुरि योगके अनुवादकारि मन वचन काय तीनूंही योगकै तीनूंही हैं। अयोगीनकै क्षायिकही है॥ बहुरि वेदके अनुवादकारि तीनूंही वेदवालेकै तीनूंही हैं। वेदरहितकै औपशमिक क्षायिकही हैं। बहुरि कषायके अनुवादकारि क्रोध मान माया लोभ च्यार्यों कषायवालेकै तीनूंही हैं। कषायरहितकै औपशमिक क्षायिक हैं॥ बहुरि ज्ञानके अनुवादकारि मति आदि पांचूंही ज्ञानवालेकै सामान्यकारि तीनूंही हैं। केवलज्ञानीनिकै क्षायिकही है॥ बहुरि संयमके अनुवादकारि सामायिकच्छेदोपस्थापनासंयमीनिकै तीनूंही है। परिहारविशुद्धिवालेकै औपशमिक नांही है, अन्य दोय हैं। सूक्ष्मसांपराय यथाख्यात संयमीनिकै औपशमिक क्षायिक है। संयतासंयतकै अरु असंयतके तीनूंही हैं॥ बहुरि दर्शनके अनुवादकारि चक्षु अचक्षु अवधिदर्शनवालेकै तीनूंही है। केवलदर्शनवालोंकै क्षायिकही है॥ लेश्याके अनुवादकारि छहू लेश्यावालोंकै तीनूं होय हैं। लेश्यारहितकै क्षायिकही है॥ बहुरि भव्यानुवादकारि भव्यकै तीनूंही हैं अभव्यकै नांही है॥ बहुरि सम्यक्त्वके अनुवादकारि जहां जो सम्यग्दर्शन तहां सोही जानना॥ बहुरि संज्ञीके अनुवादकारि संज्ञीनिकै तीनूंही हैं। असंज्ञीनिकै नांही है। दोऊनितैं रहितकै क्षायिकही है॥ आहारकके अनुवादकारि आहारकनिकै तीनूंही हैं। अनाहारकनिकै छद्मस्थकै तीनूंही हैं। केवली समुद्घातसहितकै क्षायिकही है॥ ऐसैं चौदह मार्गणाभेदकारि सम्यग्दर्शनका स्वामित्व कह्या॥

वहुरि सम्यग्दर्शन काहेकरि उपजै है? ऐसैं पूछै याका साधन कहै हैं॥ तहां साधन दोय प्रकारका है। अभ्यंतर, बाह्य। तहां अभ्यंतर तौ दर्शनमोहकर्मका उपशम क्षय क्षयोपशम ये तीन हैं। वहुरि बाह्य नारकी जीवनिकै तीसरी पृथिवीताई तौ कोई जीवकै जातिस्मरण है, कोईकै धर्मका श्रवण है, कोईकै तहांसंबंधी वेदनादुःख है। वहुरि चवथी पृथिवीतैं लगाय सातमीताई जातिस्मरण अरु वेदनाका अनुभव ये दोयही कारण हैं। वहुरि तिर्यचनिकै कोईकै जातिस्मरण है, कोईकै धर्मश्रवण है, कोईकै जिनबिंबका दर्शन है। वहुरि मनुष्यनिकैभी तैसैंही है। वहुरि देवनिकै कोईकै जातिस्मरण है। कोईकै धर्मश्रवण है। कोईकै तीर्थंकरकेवलीनिका कल्याणिकादिकी महिमाका दर्शन है। कोईकै देवनिकी ऋद्धीका देखना है, सो आनतकै पहली सहस्रारस्वर्गताई है। वहुरि आनत प्राणत आरण अच्युतनिकै देवऋद्धिदर्शनविनां अन्य तीन कारण हैं। वहुरि नवग्रैवेयकवासीनिकै केईकै जातिस्मरण है, केईकै धर्मश्रवण है। वहुरि अनुदिश अनुत्तर विमान-वासीनिकै यहु कल्पना नाही है। तहां सम्यग्दर्शनवालेही उपजै हैं॥

वहुरि सम्यग्दर्शनका अधिकरण कहा है? ऐसैं पूछै कहै हैं। अधिकरण दोय प्रकार है। बाह्य अभ्यंतर। तहां अभ्यंतर तौ स्वस्वामिसंबंधकै योग्य आत्माही है। जातैं कारकनिकी प्रवृत्ति विवक्षातैं है। वहुरि बाह्य अधिकरण एक राजू चोडी चोदा राजू उंची लोकनाडी है। सम्यग्दर्शन त्रसनाडीहीमैं पाईए है॥ वहुरि सम्यग्दर्शनकी स्थिति केती है? ऐसैं पूछैं; कहै है। औपशमिककी जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्तकी है क्षायिककी संसारी जीवकै जघन्य अंतर्मुहूर्तकी, उत्कृष्ट तेतीस सागर अर अंतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष घाटी दोय कोडि पूर्व अधिक है। अरु मुक्तजीवकै सादि अनंत काल है। वहुरि क्षायोपशमिककी जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट छ्यासठि सागरोपमकी है॥ वहुरि सम्यग्दर्शन केते प्रकार है? ऐसैं पूछै कहै हैं। तहां सामान्यतैं तौ सम्यग्दर्शन एक है। वहुरि निसर्गज अधिगमज भेदतैं दोय प्रकार है। वहुरि औपशमिक-क्षायिक-क्षायोपशमिक-भेदतैं तीन प्रकार है। ऐसे शब्दतैं तौ संख्यातभेद है॥ वहुरि अर्थतैं असंख्यात तथा अनंत भेद हो है। ते श्रद्धाता श्रद्धान करनेयोग्य वस्तुके भेदतैं जानने॥ ऐसैं विधान कह्या॥ ऐसैं निर्देशादिककी विधि ज्ञानचारित्रविषैं वहुरि जीव आदि पदार्थनिविषैं आगमकै अनुसार लगावणी॥

इहां विशेष कहिये हैं। ये निर्देशादिक श्रुतप्रमाणके विशेष व्यवहार अशुद्धद्रव्यार्थिककूं कह्या है। सो शब्दात्मक तथा ज्ञानात्मक दोऊही प्रकार जाननें। इनितैं अधिगम जीवादिकका होय है॥ वहुरि कोई अन्यवादी कहै— वस्तुका स्वरूप तौ वचनगोचर नांही, निर्देश काहेका करिये? ताकूं कहिये— यह तेरा कहना सत्य है की नाही? जो कहेगा सत्य है तौ वस्तूका कहना भी सत्य है। वहुरि कहैगा मेरा कहना भी असत्य है, तौ काहेकूं कहै। असत्यकूं कौन अंगी-

कार करैगा ? बहुरि कोई वादी कहै, काहुकै काहूका संबंध नांही, तातैं कोईका कोई स्वामी नांही, तातैं स्वामित्व कहना अयुक्त है। ताकूं कहिये— जो, संबंध न होय तौ सर्वव्यवहारका लोप होय। तातैं कथंचित् संबंध प्रमाणसिद्ध है। तहां द्रव्य क्षेत्र काल भावकी प्रत्यासत्ति कहिये निकटताका विशेष है, सो संबंध है। तहां कोई पर्यायके कोई पर्यायकरि समवायतैं निकटता है। ताकूं द्रव्यप्रत्यासत्ति कहिये। जैसैं स्मरणके अर अनुभवकै एक आत्माविषैं समवाय है। ऐसैं न होय तौ जाका अनुभव पूर्व होय ताहीका स्मरण कैसैं होय ? बहुरि बगुलाकी पंक्तीकै अर जलकै क्षेत्रप्रत्यासत्ति है। बहुरि सहचर जे सम्यग्दर्शन ज्ञानसामान्य तथा शरीरविषैं जीव अर स्पर्शविशेष तथा पहली पीछे उदय होय ऐसे भरणी कृत्तिका नक्षत्र तथा कृत्तिका रोहिणी नक्षत्र इनिकै कालप्रत्यासत्ति है। तथा गऊ गवयका एकरूप तथा केवलीसिद्धके केवलज्ञान एकस्वरूपपणां ऐसे भावप्रत्यासत्ति है सो यहु प्रत्यासत्ति है, सो ही संबंध है। यामैं बाधा नांही। तातैं जो संबंध है सोही स्वामीपणांकी सिद्धि करै है। बहुरि यहु संबंध है सो ही कार्यकारणभावकी सिद्धि करै है। ऐसैं न होय तौ मोक्षका उपायादिक सर्वव्यवहारका लोप होय। तातैं साधन भी प्रमाणसिद्ध है॥

बहुरि आधार-आधेयभाव द्रव्यगुणादिकका प्रसिद्ध ही है। बहुरि स्थिति है सो भी प्रमाणसिद्ध है। सर्वथा क्षण-स्थायीही तत्त्वकूं माने सर्वव्यवहारका लोप होय। ऐसैंही विधान प्रमाणसिद्ध है। जो एकप्रकारही वस्तु मानिये तौ प्रत्यक्ष अनेक वस्तु है ते कैसे लोप करिये ? अर प्रत्यक्षकूं असत्य मानिये तब शून्यताका प्रसंग आवै। तातैं निर्देश आदिकरि जीव आदि पदार्थनिका अधिगम करनां॥ इहां उदाहरण— निश्चय व्यवहार तौ नय, अरु दोऊ युगपत् प्रमाण इनिकरि करणां, तहां निश्चयनय तौ इहां एवंभूतकूं कह्या है। बहुरि व्यवहार अशुद्ध द्रव्यार्थिककूं कह्या है। तहां निश्चयनयतैं तौ अनादिपारिणामिक जो चैतन्यरूप जीवतत्त्व, ताकरि परिणमता होय, ताकूं जीव कहिये। बहुरि व्यवहारनयकरि औपशमिक आदि च्यारि भावस्वरूप जीवकूं कहै हैं। बहुरि निश्चयतैं तौ अपने चैतन्य परिणामका स्वामी है॥ व्यवहारतैं च्यार्‍यों भावनिका स्वामी है। बहुरि निश्चयतैं तौ जीवत्वपरिणामका साधन है। व्यवहारतैं च्यार्‍योंही भावनिका साधन है। बहुरि निश्चयतैं अपने प्रदेशनिकै आधार है। व्यवहारतैं शरीरकै आधार है। बहुरि निश्चयतैं जीवन समयस्थिति है। व्यवहारतैं दोय समय आदि स्थिति है तथा अनादि सांत स्थिति है। बहुरि निश्चयतैं अनंत-विधान है। व्यवहारतैं नारक आदि संख्यात असंख्यात अनंत विधान है। बहुरि प्रमाणतैं दोऊं नयका समुदायरूप स्वभाव है। इत्यादि जीवादि पदार्थनिविषैं आगमतैं अविरोध निर्देशादिका उदाहरण जाननां॥

आगै, कह्या इनिहीकरि जीवादिकका अधिगम होय है, कि और भी अधिगमका उपाय है? ऐसैं पूछैं कहै हैं कि और भी है, ऐसा सूत्र कहै हैं—

॥ सत्सङ्ख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभावाल्पबहुत्वैश्च ॥ ८ ॥

याका अर्थ— सत्, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अंतर, भाव, अल्पवहुत्व इनि आठ अनुयोगनिकरि भी जीवादिक पदार्थनिका अधिगम होय है ॥ तहां सत् ऐसा अस्तित्वका निर्देश है। सत् शब्द प्रशंसादिकवाची भी है, सो इहां न लेणां। वहुरि संख्या भेदनिकी गणना है। क्षेत्र निवासकूं कहिये सो वर्तमानकालका लेणा। स्पर्शन त्रिकालगोचर है। वहुरि काल निश्चयव्यवहारकरि दोय प्रकार है, ताका निर्णय आगै कहसी। वहुरि अंतर विरहकालकूं कहिये। भाव औपशमिक आदि स्वरूप है। अल्पवहुत्व परस्पर अपेक्षाकरि थोरा घणां विशेषकी प्रतिपत्ति करना। इन आठ अनुयोगनिकरि सम्यग्दर्शनादिक वहुरि जीवादिक पदार्थनिका अधिगम जाननां ॥ इहां प्रश्न— जो, पहले सूत्रमैं निर्देशका ग्रहण है ताहीतैं सत्का ग्रहण सिद्ध भया। वहुरि विधानके ग्रहणतैं संख्याकी प्राप्ति भई। अधिकरणके ग्रहणतैं क्षेत्रका अर स्पर्शनका ज्ञान होय है। स्थितिके ग्रहणतैं कालका ग्रहण आया। भावका ग्रहण नामादि निक्षेपविषैं हैही। फेरि इनिका ग्रहण इन सूत्रमैं कौन अर्थि किया? ताका समाधान आचार्य कहै हैं— जो; यह तौ सत्य है। पहले सूत्रतैं सिद्ध तौ होय है। परंतु तत्त्वार्थका उपदेश भेदकरि दीजिये है। सो शिष्यके आशयतैं है। जातैं केई शिष्य तौ संक्षेपरुचिवाले हैं थोरेमें वहुत समझै। वहुरि केई शिष्य विस्ताररुचिवाले हैं, वहुत कहै समझैं। वहुरि केई शिष्य मध्यमरुचिवाले हैं, वहुतसंक्षेपतैं भी नाही समझैं। वहुत विस्तार किये भी नाही समझैं। वहुरि सत्पुरुपनिकै कहनेका प्रयास है सो सर्वही प्राणीनिके उपकारकै अर्थ है। यातैं अधिगमका उपाय भेदकरि कह्या है। जो ऐसैं न कहै तौ प्रमाणनयनिकरि ही अधिगमकी सिद्धि हो है। अन्य कहना निष्प्रयोजन ठहरै। तातैं भेदकरि कहनां युक्त है ॥

तहां जीवद्रव्यकूं आश्रयकरि सत् आदि अनुयोग द्वार निरूपण करिये हैं। जीव हैं ते चौदह गुणस्थाननिविषैं व्यवस्थित हैं। तिनिके नाम— १ मिथ्यादृष्टि। २ सासादनसम्यग्दृष्टि। ३ सम्यङ्मिथ्यादृष्टि। ४ असंयतसम्यग्दृष्टि। ५ संयतासंयत। ६ प्रमत्तसंयत। ७ अप्रमत्तसंयत। ८ अपूर्वकरण गुणस्थानविषैं उपशमक क्षपक। ९ अनिवृत्ति वादर सांपरायस्थानविषैं उपशमक क्षपक। १० सूक्ष्मसांपरायस्थानविषैं उपशमक क्षपक। ११ उपशांतकषाय वीतराग छद्मस्थ। १२ क्षीणकषाय वीतरागछद्मस्थ। १३ सयोगकेवली। १४ अयोगकेवली। ऐसैं चौदह गुणस्थान जानने। वहुरि इनिकूं

जीवसमास संज्ञा भी कही है । सो इनिके निरूपणाके अर्थि चौदह मार्गणास्थान जानने । तिनिके नाम— गति ४ । इंद्रिय ५ । काय ६ । योग १५ । वेद ३ । कषाय २५ । ज्ञान ८ । संयम ७ । दर्शन ४ । लेश्या ६ । भव्य २ । सम्यक्त्व ६ । संज्ञी २ । आहारक २ । ऐसैं ॥

तहां सत्प्ररूपणा दोय प्रकार है । सामान्यकरि, विशेषकरि । तहां सामान्यकरि तौ गुणस्थानविषैं कहिये । विशेष-करि मार्गणाविषैं कहिये । तहां प्रथम ही सामान्यकरि तौ मिथ्यादृष्टि सतरूप है । सासादनसम्यग्दृष्टि सत्स्वरूप है । ऐसैं चौदहही गुणस्थान सत्स्वरूप कहने । बहुरि विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं सर्व पृथिवीनिविषैं आदिके च्यारि गुणस्थान हैं बहुरि तिर्यंच गतिविषैं च्यारि आदिके संयतासंयतकरि अधिक ऐसैं पांच हैं । मनुष्यगति-विषैं चौदहही हैं । देवगतिविषै नरकवत् च्यारि हैं ॥

बहुरि इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रियतैं लगाय चतुरिंद्रियपर्यंत एक मिथ्यादृष्टिगुणस्थान है । पंचेंद्रियविषैं चौदहही है ॥

बहुरि कायके अनुवादकरि पृथिवीकाय आदि वनस्पतिपर्यन्त पांच स्थावरकायविषैं एक मिथ्यादृष्टिगुणस्थानही है । त्रसकायविषैं चौदहही हैं ॥

योगके अनुवादकरि मन वचन काय तीनूंही योगविषैं तेरह गुणस्थान हैं । तातैं आगैं चौदहवा अयोगकेवलीमैं योग नांही है ॥

वेदके अनुवादकरि तीनूंही वेदनिमैं मिथ्यादृष्टितैं लगाय अनिवृत्तिबादरतांई नव गुणस्थान हैं । वेदरहित गुणस्थान अनिवृत्तिबादरतैं लगाय अयोगकेवलीपर्यंत छह गुणस्थान हैं । इहां अनिवृत्ति बादरसांपरायके छह भाग कीये । तहां तीन भाग आदिकैमैं वेद है । अंतके तीन भाग वेदरहित । तातैं दोऊ जायगा गिण्या ॥

कपायके अनुवादकरि क्रोध-मान-मायाविषैं तौ मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायतांई नव गुणस्थान हैं । लोभ कपायविषै तेही सूक्ष्मसांपराय अधिक दश गुणस्थान हैं । बहुरि कषायरहित उपशांतकषायतैं लगाय अयोगकेवलीतांई च्यारि गुणस्थान हैं ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान विभंग इनि तीनविषैं मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि हैं । मति श्रुत अवधि इनि तीन ज्ञाननिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंत नव गुणस्थान है । मनःपर्यय ज्ञानविषैं प्रमत्त-संयत आदि क्षीणकषायपर्यंत सात गुणस्थान हैं । केवलज्ञानविषैं सयोगकेवली अयोगकेवली दोय गुणस्थान हैं ।

संयमके अनुवादकरि संयमी तौ प्रमत्त आदि अयोगकेवलीतांई । तहां सामायिक छेदोपस्थापनशुद्धि संयमी तौ प्रमत्त-

सयंत आदि अनिवृत्तिबादरसांपराय गुणस्थानतांई च्यारि हैं। परिहारविशुद्धिसंयमी अप्रमत्त है, प्रमत्तसंयत भी हैं।
सूक्ष्मसांपरायशुद्धिसंयमी एक सूक्ष्मसांपरायस्थानही है। यथाख्यातविहारशुद्धिसंयमी उपशांतकपाय आदि अयोगकेवलीतांई
च्यारि गुणस्थान हैं। संयतासंयत एक संयतासंयत गुणस्थानविषैंही है। असंयत, मिथ्यादृष्टि आदि च्यारि गुणस्थान
आदिकेविषैंही है॥

दर्शनके अनुवादकारि चक्षुअचक्षु दर्शनविषैं मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकपायपर्यंत बारह गुणस्थान है। अवधिदर्शनविषैं
असंयतसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकपायपर्यंत नव गुणस्थान हैं केवलदर्शनविषैं सयोगकेवली अयोगकेवली हैं॥

लेश्याके अनुवादकारि कृष्ण नील कापोत लेश्याविषैं मिथ्यादृष्टि आदि असंयत सम्यग्दृष्टीपर्यन्त है। तेज पद्मलेश्या-
विषैं मिथ्यादृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यन्त सात है। शुक्ललेश्याविषैं मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंत तेरह हैं। लेश्यारहित
अयोगकेवली है॥

भव्यके अनुवादकारि भव्यविषैं चौदहही हैं। अभव्यविषैं आदिका एकही है। सम्यक्त्वके अनुवादकारि क्षायिकसम्य-
क्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्ट्यादि अयोगकेवलीपर्यंत ग्यारह हैं। क्षायोपशमिकसम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्ट्यादि अप्रमत्तपर्यंत
च्यार हैं। औपशमिकसम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि आदि उपशांत कपायपर्यंत आठ है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्य-
ङ्मिथ्यादृष्टि मिथ्यादृष्टि अपने अपने गुणस्थान हैं॥

संज्ञीके अनुवादकारि संज्ञीकेविषैं आदितैं लगाय बारह गुणस्थान हैं। असंज्ञीकेविषैं एक मिथ्यादृष्टिही है। दोऊंतैं
रहित सयोगकेवली अयोगकेवली है॥

आहारकके अनुवादकारि आहारकविषैं मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंत तेरह हैं। अनाहारकविषैं विग्रहगतिविषैं
मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि ए तीन गुणस्थान हैं। समुद्घातसहित सयोगकेवली है अर अयोगकेवली
है बहुरि सिद्धपरमेष्ठी हैं ते अतीतगुणस्थान हैं। ऐसैं सतकी प्ररूपणा तौ कही॥

अब संख्याप्ररूपणा कहिये हैं। सो भेदनिके गणनाकूं संख्या कहिये हैं। सो दोय प्रकार। सामान्यकरि गुणस्थान
विषैं, विशेषकरि मार्गणानिविषैं। तहां सामान्यकरि मिथ्यादृष्टि जीव तौ अनंतानंत हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्या-
दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत पल्यके असंख्यातवै भागपरिमाण हैं। प्रमत्तसंयत पृथक्त्व कोडिसंख्या हैं। इहां
पृथक्त्व ऐसी आगममें संज्ञा है। सो तीन कोडीकै उपरि नवकोडीकै नीचै जानना। ते ५९३९८२०६ है। अप्रमत्त-
संयतसंख्या है ते प्रमत्तसंयतनितै आधे हैं। ते २९६९९१०३ है। बहुरि च्यारि उपशमश्रेणीवाले प्रवेशकारि तौ एक

अथवा दोय तीन आदि उत्कृष्ट चोवनतांई हैं। बहुरि इनिका सर्वकालके भेले होय तव संख्यात हैं। एक गुणस्थानके २९९। च्यारिनिके जोडिये तव ११९६ होय। च्यारि क्षपक श्रेणीवाले बहुरि अयोगकेवली प्रवेशकरि एक दोय तीन आदि उत्कृष्ट एकसो आठतांई अपनां अपनां कालके भेले होय तव संख्यात होय। एक गुणस्थानमैं ५९८। पांच गुणस्थानके जोडिये तव २९९० होय। सयोगकेवली प्रवेशकरि एक दोय तीन आदि उत्कृष्ट एकसो आठतांई है। या गुणस्थानके भेले होय तव पृथक्त्व लाख होय हैं ते ८९८५०२ होय। ऐसैं प्रमत्तसंयततैं लगाय अयोगकेवलीपर्यंत सर्वसंयमी जोडिये तव नवकोडि तीन घाटि होय हैं। ८९९९९९९७ ॥

बहुरि विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं पहली पृथिवीविषैं नारकी जीव मिथ्यादृष्टि असंख्यात जगच्छ्रेणी–परिमाण हैं। सो जगत् प्रतरके असंख्यातवैं भाग हैं। बहुरि दूसरी पृथिवीतैं लगाय सातमीतांई मिथ्यादृष्टि श्रेणीकै असंख्यातवैं भाग परिमाण हैं। सो असंख्यातवां भाग असंख्यात कोडि योजनके प्रदेश होय तेते जानने। बहुरि सर्वही पृथिवीनिविषैं सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि पल्योपमकै असंख्यातवै भाग परिमाण हैं। बहुरि तिर्यंचगतिविषैं तिर्यंचजीव मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई पल्यकै असंख्यातवैं भाग परिमाण हैं। मनुष्यगतिविषैं मनुष्य मिथ्यादृष्टि श्रेणीकै असंख्यातवै भाग हैं। सो असंख्यातवा भाग असंख्यात–कोडि योजनके प्रदेशमात्र जाननां। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई संख्यात हैं। ते सासादनविषैं बावन कोडि हैं। मिश्रविषैं एकसो च्यारि कोडि है। असंयत सातसैं कोडि हैं संयतासंयत तेरह कोडि हैं। बहुरि प्रमत्तसंयत आदिकी संख्या सामान्योक्त कहिये गुणस्थाननिमैं कही सो संख्या जाननी ॥

देवगतिविषैं देव मिथ्यादृष्टि असंख्यात श्रेणी परिमाण हैं। सो प्रतरके असंख्यातवैं भाग हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि पल्योपमके असंख्यातवै भागपरिमाण हैं ॥

इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रिय मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं। द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय असंख्यात श्रेणीपरिमाण हैं। सो प्रतरके असंख्यातवैं भाग हैं। पंचेंद्रियविषैं मिथ्यादृष्टि असंख्यात श्रेणीपरिमाण हैं। सो प्रतरकै असंख्यातवै भाग हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंत गुणस्थानवत् संख्या जाननी ॥

कायके अनुवादकरि पृथिवीकायिक अप्कायिक तेजस्कायिक वायुकायिक असंख्यातलोक परिमाण हैं। वनस्पतिकायिक अनंतानंत हैं। त्रसकायिककी संख्या पंचेंद्रियवत् जाननी ॥

योगका अनुवादकरि मनोयोगी वचनयोगी मिथ्यादृष्टि असंख्यातश्रेणीपरिमाण हैं। ते प्रतरकै असंख्यातवै भाग हैं।

काययोगीनिविषैं मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं। तीनूं योगवाले सासादनसम्यग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई तौ पल्यके असंख्यातवै भागपरिमाण हैं। प्रमत्तसंयत आदि सयोगकेवलीतांई संख्यात हैं। अयोगकेवली गुणस्थानवत् संख्या ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीवेद पुरुषवेदवाले मिथ्यादृष्टि असंख्यातश्रेणी परिमाण हैं। प्रतरकै असंख्यातवै भाग हैं। नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि अनंतानंत है। बहुरि स्त्रीवेदी नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् संख्या है। प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिवादरसांपरायतांई संख्यात हैं। पुरुषवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् संख्या हैं। प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिवादरसांपरायतांई गुणस्थानवत् संख्या है। वेदरहित अनिवृत्तिवादरसांपराय आदि अयोगकेवलीतांई सामान्योक्त कहिये गुणस्थानवत् संख्या है ॥

कषायके अनुवादकरि क्रोधमानमायाविषैं मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् संख्या है। प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिवादरसांपरायतांई संख्यात हैं। लोभकषायवालेका पहलै कह्या सोही अनुक्रम है। विशेष यह, जो, सूक्ष्मसांपरायसंयतका गुणस्थानवत् संख्या है। कषायरहित उपशांतकषाय आदि अयोगकेवलीतांई गुणस्थानवत् संख्या है ॥

ज्ञानक अनुवादकरि मति-अज्ञान श्रुत-अज्ञानवाले मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि आदि गुणस्थानवत् संख्या है। विभंगज्ञानी मिथ्यादृष्टि असंख्यातश्रेणीपरिमाण हैं। ते प्रतरके असंख्यातवै भाग हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि पल्योपमकै असंख्यातवै भाग हैं। मतिश्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायतांई गुणस्थानवत् संख्या है। अवधिज्ञानी असंयतसमग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् संख्या है। प्रमत्तसंयत आदि क्षीणकषायतांई संख्यात हैं। मनःपर्ययज्ञानी प्रमत्तसंयत आदि क्षीणकषायतांई संख्यात हैं। केवलज्ञानी अयोगी सयोगी गुणस्थानवत् संख्या है ॥

संयमके अनुवादकरि सामायिकच्छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयत प्रमत्तआदि अनिवृत्तिवादरसांपरायतांई गुणस्थानवत् संख्या है। परिहारविशुद्धिसंयत प्रमत्त अप्रमत्त संख्यात हैं। सूक्ष्मसांपरायशुद्धिसंयत यथाख्यात विहारशुद्धिसंयत संयातासंयत असंयतकी गुणस्थानवत् संख्या है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवाले मिथ्यादृष्टि असंख्यातश्रेणीपरिमाण हैं। ते प्रतरकै असंख्यातवै भाग हैं। अचक्षुर्दर्शनवाले मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं। दोऊही सासादनसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायतांई सामान्योक्त कहिये गुणस्थानवत् है। अवधिदर्शनवाले अवधिज्ञानिवत् हैं। केवलदर्शनवाले केवलज्ञानीवत् हैं ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण-नील-कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टितांई गुणस्थानवत् संख्या है। पीतपद्मलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयततांई स्त्रीवेदवत् है। प्रमत्त अप्रमत्त संयत संख्यात हैं। शुक्ललेश्यावाले

मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयततांई पल्योपमके असंख्यातवैं भाग हैं। प्रमत्त अप्रमत्त संयत संख्यात हैं अपूर्वकरण आदि सयोगकेवलीतांई गुणस्थानवत् संख्या है। अलेश्यावाला गुणस्थानवत् संख्या है॥

भव्यके अनुवादकारि भव्यविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंत गुणस्थानवत् संख्या है। अभव्य अनंत हैं॥

सम्यक्त्वके अनुवादकारि क्षायिकसम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि पल्यकै असंख्यातवैं भाग हैं। संयतासंयत आदि उपशांतकषायपर्यंत मनुष्य संख्यात हैं। च्यारि क्षपक श्रेणीवाला सयोगकेवली अयोगकेवली गुणस्थानवत् है। क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्ततांई गुणस्थानवत् है। औपशमिकसम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि असंयतासंयत पल्योपमके संख्यातवै भाग हैं। प्रमत्ताप्रमत्त संयत संख्यात हैं। च्यारि औपशमिक गुणस्थानवत् संख्या है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टि मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवत् संख्या है॥

संज्ञीके अनुवादकारि संज्ञाविषैं मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंत चक्षुर्दर्शनिवत् संख्या है। असंज्ञी मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं। दोऊरहित गुणस्थानवत् संख्या है॥

आहारकके अनुवादकारि आहारकनिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंत गुणस्थानवत् संख्या है। अनाहारकनिविषैं मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थानवत् संख्या है। सयोगकेवली संख्यात हैं। अयोगकेवली गुणस्थानवत् संख्या है। ऐसै संख्याका निर्णय कीया॥

अब क्षेत्रप्ररूपणा कहिये हैं। तहां क्षेत्र दोय प्रकार है। सामान्यकारि गुणस्थाननिका विशेषकारि मार्गणाका। तहां सामान्यकरि मिथ्यादृष्टिनिका सर्वलोक क्षेत्र है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। सयोगकेवलीनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। अथवा समुद्घातके प्रतर अपेक्षा लोकके असंख्यात बहुभाग है। पूरण अपेक्षा सर्वलोक है॥ विशेषकारि गतिके अनुवादकारि नरकगतिविषैं सर्व पृथिवीनिविषैं नारकीनिका च्यार गुणस्थानविषैं लोकका असंख्यातवा भाग है। तिर्यंचगतिविषै तिर्यंचानिका मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् क्षेत्र है। मनुष्यविषैं मनुष्यनिका मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिका लोककै असंख्यातवैं भाग है। सयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है। देवगतिविषैं देवनिका च्यारि गुणस्थानविषैं लोककै असंख्यातवैं भाग है। इंद्रियके अनुवादकारि एकेंद्रियनिका क्षेत्र सर्वलोक है। विकलत्रयका लोकका असंख्यातवा भाग है। पंचेंद्रियनिका मनुष्यवत् है। इहां कोई पूछै, मनुष्य तौ अढाई द्वीपमैंही उपजे हैं। पंचेंद्रिय त्रसनाडीमैं उपजे हैं। मनुष्यवत् कैसै कह्या? ताका समाधान— जो, पंचेंद्रिय केतेक इनिके उपजनेके ठिकाणैही उपजै हैं। सर्वत्र त्रसनाडीमैं नांही उपजै हैं। तातैं लोकका असंख्यातवा भागही है॥

कायके अनुवादकरि पृथिवीकायिक आदि वनस्पतिपर्यतका सर्वलोक क्षेत्र है। त्रसकायिकका पंचेंद्रियवत् क्षेत्र है॥

योगका अनुवादकरि वचन मनोयोगवाले मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यतनिका लोककै असंख्यातवा भाग है। काययोगीनिका मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिका अर अयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है। वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषवेदीनिका मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिवादरपर्यंतनिका लोकके असंख्यातवा भाग है। नपुंसकवेदनिका मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिवादरपर्यंतनिका अरु वेदरहितानिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

कषायके अनुवादकरि क्रोध मान माया कषायवालेनिका अर लोभ कषायवालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिवादर-पर्यंतनिका अर सूक्ष्मसांपरायीनिका अर कषायरहितनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

ज्ञानके अनुवादकरि मतिअज्ञान श्रुतअज्ञानवालेनिका मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टिवालेनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है। विभंगज्ञानीनिका मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टिनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। मति-श्रुत-अवधिज्ञानीनिका असंयत-सम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका अर मनःपर्ययज्ञानीनिका प्रमत्तसंयत आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका अर केवलज्ञानी अयोगीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

संयमके अनुवादकरि सामायिक च्छेदोपस्थापनशुद्धि संयतनिका च्यारि गुणस्थाननिका अर परिहारविशुद्धिसंयत प्रमत्त अप्रमत्तनिका अर सूक्ष्मसांपराय शुद्धसंयतनिका अर यथाख्यात विहारशुद्धसंयतका च्यारि गुणस्थाननिका अर संयता-संयतका अर असंयतके च्यारि गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। अचक्षुर्दर्शनवालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है। अवधिदर्शनवालेनिका अवधिज्ञानीवत् है। केवलदर्शनवालेनिका केवलज्ञानीवत् है॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण-नील-कापोतलेश्यावालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टिपर्यंतनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है। पीत-पद्मलेश्यावालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। शुक्ललेश्या-वालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। सयोगकेवलीनिका अर लेश्यारहित अयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यनिका चौदहही गुणस्थानका सामान्योक्त कहिये गुणस्थानवत् क्षेत्र है। अभव्यनिका सर्वलोक है॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टिनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका अर क्षायोपशमिकसम्यग्दृष्टिनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका अर औपशमिकसम्यग्दृष्टिनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि उपशांतकषायपर्यंतनिका अर सासादनसम्यग्दृष्टिनिका अर सम्यङ्मिथ्यादृष्टिनिका अर मिथ्यादृष्टिनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

संज्ञीके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवत् तौ संज्ञीनिका क्षेत्र है । अर असंज्ञीनिका सर्वलोक है । तिन दोऊनितैं रहितनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है ॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है । सयोगकेवलीनिका लोककै असंख्यातवै भाग है । अनाहारकनिका मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि अयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है । सयोगकेवलीनिका लोकका असंख्यातवा भाग है । अर प्रतर अपेक्षा अर पूरण अपेक्षा सर्वलोक है । ऐसैं क्षेत्रका निर्णय कीया ॥

आगैं स्पर्शन कहिये हैं । तहां लोकके एक एक राजू घनरूप खंड कल्पिये तब तीनसै तियालीस राजू होय । ताविषैं जीव स्पर्शन करै है । सो च्यारि प्रकार है । स्वस्थानविहार अपेक्षा, परस्थानविहार अपेक्षा, मारणांतिकसमुद्घात अपेक्षा, उत्पाद अपेक्षा । सो कहिये हैं । सो प्ररूपणा दोय प्रकार है । सामान्यकरि गुणस्थाननिविषैं, विशेषकरि मार्गणानिविषैं । तहां प्रथमही सामान्यकरि मिथ्यादृष्टिनिकरि सर्व लोक स्पर्शिये है । सासादनसम्यग्दृष्टिनिकरि लोकका असंख्यातवा भाग स्वस्थानविहारकी अपेक्षा है । अर परस्थानविहार अपेक्षा सासादनवर्ती देव तीसरी पृथिवीतांई विहार करै सो दोय राजू तौ ए भये। अर अच्युतस्वर्गतांई ऊपरी विहार करै तातैं छह राजू ए भये। ऐसैं आठ राजू स्पर्शैं। ऐसैं इनिकूं आठ चतुर्दश भाग कहे । तहां त्रसनाडी चोदह राजू है । सो तीनसे तियालीस भागमैं चौदह भाग लिये, तिनिमैंसूं आठ भाग तथा द्वादश भाग कहे, तहां तेता राजू जाननां । इहां सासादनमैं बारह भाग भी कहे हैं, ते मारणांतिक अपेक्षा हैं । सो सासादनवाला सातवी पृथिवीविना छठी पृथिवीतैं मारणांतिक करै सौ मध्यलोकमैं आवै, सो पांच राजू तौ ये भये । अरु मध्यलोकतैं बादरपृथिवीकायिकादिविषैं सासादनवाला उपजै तब मारणांतिक समुद्घातकरि लोकका अंततांई स्पर्शै, सो सात राजू ये भये । ऐसैं बारह राजू स्पर्शै है । सो देशोन कहिये कछू घाटि स्पर्शै है । बहुरि सम्यङ्मिथ्यादृष्टिनिकरि अर असंयतसम्यग्दृष्टिनिकरि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शीये है । अथवा चौदह भागमैंसूं आठ भाग कछु घाटि स्पर्शीये है । सो अच्युतदेवता परस्थानविहार अपेक्षा है । बहुरि संयतासंयतवालेका लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्श है । अथवा चौदह भागमैंसूं छह भाग कछु घाटि है । इहां अच्युतस्वर्गमैं उपजै सो

मारणांतिक समुद्घात करै, ताकी अपेक्षा है । वहुरि प्रमत्तसंयत आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका क्षेत्रवत् स्पर्शन है ॥

विशेषकरि गतिका अनुवादकरि प्रथमपृथिवीविर्षै नारकीनिकै च्यारि गुणस्थानवालेकै लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्श है । दूसरीतैं लगाय छठी पृथिवीतांईके नारकीनिकै मिथ्यादृष्टिनिकै सासादनसम्यग्दृष्टीनिकै लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्श है । अर चोदह भागमैंसूं एक भाग दोय भाग तीन भाग च्यारि भाग पांच भाग कछू घाटि है । यहू मारणांतिक अपेक्षा है । सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिनिकै लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्श है । वहुरि सातमी पृथिवीवाले मिथ्यादृष्टिनिकै लोकका असंख्यातवा भाग है । अर छह भाग देशोन चोदह भागमैंसूं है सो मारणांतिक अपेक्षा है । वहुरि तीन गुणस्थानवालेकै लोकका असंख्यातवा भाग है । वहुरि तिर्यंचगतिविर्षै तिर्यंचमिथ्यादृष्टिनिकै सर्वलोक है । सासादनसम्यग्दृष्टिनिकै लोककै असंख्यातवा भाग है । असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयतनिकै लोकका असंख्यातवा भाग है । अर चोदह भागमैंसूं छह भाग कछु घाटि मारणांतिक अपेक्षा है । वहुरि मनुष्यगतिविर्षै मिथ्यादृष्टी मनुष्यलोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । अर मारणातिक अपेक्षा सर्वलोक स्पर्शै है । सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । चोदह भागमैंसूं सात भाग कछू घाटि मारणांतिक अपेक्षा स्पर्शै है । सम्यङ्मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै क्षेत्रवत् स्पर्शन है । देवगतिविर्षै देव मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै हैं । अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग नव भाग देशोन परस्थानविहार अपेक्षा तीसरी पृथिवीतांई गमन मारणांतिक अपेक्षा लोकके अग्रभागविर्षै उपजै तव स्पर्शै । सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । चौदह भागमैंसूं आठ भाग परस्थानविहार अपेक्षा स्पर्शै कछू घाटि है ॥

इंद्रियनिके अनुवादकरि मिथ्यादृष्टि एकेंद्रिय सर्वलोक स्पर्शै । विकलत्रय लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । मारणांतिक अपेक्षा सर्वलोक स्पर्शै । पंचेंद्रियविर्षै मिथ्यादृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । परस्थानविहार अपेक्षा चौदह भागमैंसूं आठ भाग देशोन मारणांतिक अपेक्षा सर्वलोक स्पर्शै । वहुरि सासादन आदि सर्वगुणस्थानवर्तीकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

कायके अनुवादकरि स्थावरकायिक तौ सर्वलोक स्पर्शै है त्रसकायिकनिकै पंचेंद्रियवत् स्पर्शन है ॥

योगके अनुवादकरि वचनमनोयोगीनिकै मिथ्यादृष्टिनिकै लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग देशोन है । अर सर्वलोक भी है । अर सासादनसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है । सयोगकेवलीनिकै लोकका असंख्यातवा भाग है । काययोगीनिकै मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिकै अर अयोगकेवलीनिकै गुणस्थानवत स्पर्शन है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि लोककै असंख्यातवा भाग स्पर्शै है। अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग नव भाग देशोन स्पर्शै है। अथवा सर्वलोक भी स्पर्शै है। सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवां भाग स्पर्शै है। अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग नव भाग देशोन स्पर्शै है। सम्यङ्मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है। नपुंसक वेदविषैं मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टीनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है। सम्यङ्मिथ्यादृष्टीनिकै लोकका असंख्यातवां भाग है। असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत लोकका असंख्यातवां भाग स्पर्शै है अर चौदह भागमैंसूं छह भाग देशोन मारणांतिक अपेक्षा स्पर्शै है। प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायपर्यंतवाले अर वेदरहितनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

कषायके अनुवादकरि च्यारि कषायवालेनिकै अर कषायरहितनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है। ज्ञानके अनुवादकरि मतिअज्ञान श्रुतअज्ञानवाले मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टिनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है। विभंगज्ञानीकै मिथ्यादृष्टीनिकै असंख्यातवां भाग है। अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग देशोन है अर सर्वलोक भी है। सासादनसम्यग्दृष्टीनिकै गुण-स्थानवत् स्पर्शन है मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवलज्ञानीनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

सँयमके अनुवादकरि सर्वसंयतनिकै अर संयतासंयतानिकै अर असंयतनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवाले मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतानिकै पंचेंद्रियवत् स्पर्शन है। अचक्षुर्दर्शन-वालेनिकै मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतानिकै अवधिदर्शन केवलदर्शनवालेनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण-नील-कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि सर्वलोक स्पर्शै हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है। अर पांच भाग च्यारि भाग देशोन चौदह भागमैंसूं स्पर्शै हैं। इहां कोई पूछै है, जो, बारह भाग क्यों न कहे ? ताका समाधान— जो नरकमैं अवस्थितलेश्या है। छठी पृथ्वीवाला मारणांतिक करै सो मध्यलोकमैं आवै पांच राजू स्पर्शै है। अर जिनिके मतमैं सासादनवाला एकेंद्रियविषैं नाही उपजै, तिनिके मतकी अपेक्षा बारह भाग नांही कहै हैं। अर सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि लोककै असंख्यातवां भाग स्पर्शै है। पीतलेश्यावाला मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवां भाग अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग नव भाग देशोन स्पर्शै है। सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग देशोन स्पर्शै है। संयता-संयत लोकका असंख्यातवा भाग अर मारणांतिक अपेक्षा प्रथमस्वर्गका ड्योढ राजूतांई स्पर्शै है। तातैं अद्यर्धदेशोन चौदह भागमैंसूं कह्या है। अर प्रमत्त अप्रमत्त संयत लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है। पद्मलेश्यावाला मिथ्यादृष्टि आदि

असंयतसम्यग्दृष्टिपर्यंत लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । अर आठ भाग देशोन चौदहमैंसूं अर संयतासंयत लोकका असंख्यातवा भाग अर चौदह भागमैंसूं पांच भाग देशोन स्पर्शै । प्रमत्त अप्रमत्त संयत लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । शुक्ललेश्यावाला मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयतपर्यंत लोकका असंख्यातवा भाग अर चौदह भागमैंसूं छह भाग देशोन स्पर्शै । प्रमत्त आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिकै अर लेश्यारहितनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

भव्यनिके अनुवादकारि भव्यनिकै मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है । अभव्य सर्वलोक स्पर्शै है ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकारि क्षायिकसम्यग्दृष्टिनिके असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिके गुणस्थानवत् स्पर्शन है । विशेष यहु, जो, संयतासंयतनिका लोकका असंख्यातवा भागही है । क्षायोपशमिकसम्यग्दृष्टिनिका गुणस्थानवत् स्पर्शन है । औपशमिकसम्यक्त्ववालेनिका असंयतसम्यग्दृष्टीनिका गुणस्थानवत् है। अन्यका लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शन है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टीनिका गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

संज्ञीके अनुवादकारि संज्ञीनिका चक्षुर्दर्शनिवत् है। असंज्ञी सर्वलोक स्पर्शै हैं । तिनि दोऊनिकारि रहितका गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

आहारकके अनुवादकारि आहारकनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकपायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् स्पर्शन है । सयोग-केवलीनिका लोकका असंख्यातवा भाग है । अनाहारकविषैं मिथ्यादृष्टि सर्व लोक स्पर्शै है । सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग अर चौदह भागमैंसूं ग्यारह भाग देशोन स्पर्शै है । सो छठी पृथिवीतैं मध्यलोकमैं उपजै, ताकै उत्पाद अपेक्षा तौ पाच राजू, अर अच्युततैं मध्यलोकमैं आय उपजै, ताकै उत्पाद अपेक्षा छह ऐसैं ग्यारह राजू कहे मारणांतिक अपेक्षा बारह राजू होय है । परंतु मारणांतिकमैं अनाहारक नांही । तातैं उत्पाद अपेक्षा ग्यारह है । असं-यतसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । अर चौदह भागमैंसूं छह भाग देशोन स्पर्शै है। सयोगकेवली लोकका असंख्यातवा भाग अर सर्वलोक स्पर्शै है । अयोगकेवलीनिका लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शन है । ऐसे स्पर्शनका व्याख्यान कीया ॥

आगै कालका निरूपण करिये हैं । सो दोय प्रकार है । सामान्यकारि गुणस्थानविषैं विशेषकारि मार्गणानिविषैं । तहां सामान्यकारि मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है। एक जीवकी अपेक्षा तीन भंग हैं । अभव्यकै तौ अनादि अनंत है । भव्यकै अनादि सांत है, सादि सांत है । तहां सादि सांत जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन

कछू घाटि है । बहुरि सासादनसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है । उत्कृष्ट पल्योपमकै असंख्यातवै भाग है । एकजीव अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली है । सम्यङ्मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपमकै असंख्यातवै भाग है । एक जीव अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । असंयत सम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तेतीस सागर कछू अधिक है । बहुरि संयतासंयतका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछू घाटि है । प्रमत्त अप्रमत्त संयतका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । बहुरि च्यारि उपशमश्रेणीवाला गुणस्थाननिका नानाजीवकी अपेक्षा अर एक जीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । बहुरि च्यारि क्षपकश्रेणीवाला आठवां नवमां दशमां बारहमा गुणस्थानका बहुरि अयोगकेवलीका नानाजीवकी अपेक्षा अर एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी अरु उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । बहुरि सयोगकेवलीनिका नानाजीवकी अपेक्षा तौ सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछु घाटि है ॥

विशेषकारि गतिके अनुवादकारि नरकगतिविषैं नारकीनिकै सातूंही पृथ्वीविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा तौ सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट एक सागर, तीन सागर, सात सागर, दश सागर, सतरा सागर, बाईस सागर, तेतीस सागर, यथासंख्य अनुक्रमतैं आयुपरिमाण है । सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यङ्मिथ्यादृष्टीका गुणस्थानवत् काल है । असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट आयुप्रमाण कछु घाटि है। तिर्यग्गतिविषैं तिर्यंचनिकै नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनंतकाल है। सो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन है। सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यग्मिथ्यादृष्टीका अरु संयतासंयतका गुणस्थानवत् काल है । असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्य है । मनुष्यगतिविषैं मनुष्यनिकै मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सवकाल है । एक जीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्य पृथक्त्व कोडी पूर्व अधिक है। सासादनसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । एक जीव अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली है। सम्यग्मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा एक जीवकी अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल है । असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तीन पल्य कछु अधिक है । बाकीके गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् काल है ॥ देवगतिविषैं देवनिकै मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है एकजीवप्रति जघन्य अंतर्मुहूर्त है ।

गुणस्थानवत् काल है । असंयतसम्य-
उत्कृष्ट इकतीस सागरोपम है । सासादनसम्यग्दृष्टीका अर सम्यग्मिथ्यादृष्टीका गुणस्थानवत् काल है । असंयतसम्य-
ग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम है ॥

इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रियनिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट
अनंत काल है सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है । विकलत्रयका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एक जीवकी अपेक्षा जघन्य
क्षुद्रभव उत्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष है । पंचेंद्रियविषैं मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी
अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट हजार सागर पृथक्त्व कोडी पूर्व अधिक है । सासादन आदि सर्व गुणस्थाननिका गुण-
स्थानवत् काल है ॥

कायके अनुवादकरि पृथिवी अप् तेज वायुकायिकका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य क्षुद्र-
भव उत्कृष्ट असंख्यात लोकपरिमाण काल है । वनस्पतिकायिकका एकेंद्रियवत् काल है । त्रसकायिकनिविषैं मिथ्यादृष्टिका
नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्व कोडी
पूर्व अधिक है । बाकीके गुणस्थाननिका पंचेंद्रियवत् काल है ।

योगके अनुवादकरि वचनमनोयोगीनिविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्त संयत सयोग-
केवलीनिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त सासादनसम्यग्दृष्टीका
गुणस्थानवत् है सम्यग्मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट पल्योपमकै असंख्यातवै भाग काल है ।
एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एक समय है । उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । च्यारि उपशमकनिका च्यारि क्षपकनिका नाना-
जीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है । उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल है । काययोगीनिविषै मिथ्यादृष्टीका
नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है । उत्कृष्ट अनंतकाल है । सो असंख्यात
पुद्गलपरिवर्तन है । अवशेष गुणस्थाननिका मनोयोगिवत् काल है । अयोगीनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीवेदविषैं मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट
पृथक्त्व सौ पल्यकाल है । सासादनसम्यग्दृष्टी आदि अनिवृत्तिवादरसांपरायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है । तहा विशेष
यहु— जो, असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट पचावन-
पल्य कछु घाटि काल है । पुरुषवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त
है । उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है । सासादन सम्यग्दृष्टि आदि अनिवृत्तिवादरसांपरायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है ।

नपुंसकवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अनंतकाल
है सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् है। विशेष यहु
है जो, असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस
सागर कछु घाटि काल है। वेदरहितानिका गुणस्थानवत् काल है ॥

कषायके अनुवादकरि च्यारि कषायनिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यंतनिका मनोयोगिवत् काल है। दोय उपशम-
श्रेणीका दोय क्षपकश्रेणीका गुणस्थाननिका अर केवललोभका अर कषायरहितनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मति अज्ञान श्रुतअज्ञानवाले मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टीनिका गुणस्थानवत् काल है। विभंग-
ज्ञानीविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर
कछु घाटि हैं। सासादनसम्यग्दृष्टीका गुणस्थानवत् काल है। मति-श्रुत-अवधि मनःपर्ययज्ञानीनिका अर केवलज्ञानीनिका
गुणस्थानवत् काल है ॥

संयमके अनुवादकरि सामायिकच्छेदोपस्थापन परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसांपराय यथाख्यात शुद्धिसंयतनिका अर संयता-
संयतनिका अर असंयत च्यारि गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् काल है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवालेनिविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एक जीव की अपेक्षा जघन्य
अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट दोय हजार सागर है। सासादनसम्यग्दृष्टिनिका क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है। अचक्षु-
दर्शनवालेनिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है। अवधि केवलदर्शनवालेनिका अवधि
केवलज्ञानिवत् काल है ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्णनीलकापोतलेश्याविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा
जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर, सतरा सागर, सात सागर कछु अधिक है, सो नरककी अपेक्षा है। सासा-
दनका अर सम्यग्मिथ्यादृष्टीका गुणस्थानवत् काल है। असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी
अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर, सतरा सागर, सात सागर कछु घाटि है। पीतपद्मलेश्याविषैं मिथ्यादृष्टि
असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट दोय सागर अठारह
सागर कछु अधिक है सो स्वर्गकी अपेक्षा है। सासादन सम्यग्मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् काल है। संयतासंयत प्रमत्त
अप्रमत्त संयतनिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है। शुक्ल-

लेश्याविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल- है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट इकतीस सागर कछु अधिक है । सासादनसम्यग्दृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिका अर लेश्यारहितका गुणस्थानवत् काल है । विशेष यहु जो, संयतासंयतका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है ॥

भव्यके अनुवादकारि भव्यविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा दोय भंग है । अनादि सांत सादि सांत । तहां सादिसांत जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अर्धपुद्गलपरिवर्तन कछु घाटि है। सासादन आदि केवलीपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है । अभव्यनिका अनादि अनंत काल है ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकारि क्षायिकसम्यग्दृष्टीनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है । क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टीनिका चार्‍यौं गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् काल है । औपशमिक सम्यक्त्वविषैं असंयत–सम्यग्दृष्टि संयतासंयत इनि दोऊनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पल्योपमकै असंख्यातवै भाग है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । प्रमत्त अप्रमत्त संयतका अर च्यारि उपशमश्रेणीवालेका नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एक समय है उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्या–दृष्टिनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

संज्ञीके अनुवादकारि मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिवादरपर्यंतनिका पुरुषवेदवत् काल है । अवशेषका गुणस्थानवत् काल है । असंज्ञीनिका मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ क्षुद्रभवमात्र है। सासके अठारहवै भाग अर उत्कृष्ट अनंतकाल है। सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है। दोऊ नामकारि रहितनिका गुणस्थानवत् काल है।

आहारकका अनुवादकारि आहारकविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अंगुलकै असंख्यातवा भाग है । सो असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी परिमाण है । अंगुलिकै प्रदेश अर इनिके समय समान हैं । अवशेषनिका गुणस्थानवत् काल है। अनाहारकविषैं मिथ्यादृष्टिका नाना–जीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है । उत्कृट तीन समय है। सासादनसम्यग्दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है। उत्कृष्ट आवलीकै असंख्यातवां भाग है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है उत्कृष्ट दोय समय है । सयोगकेवलीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ तीन समय है । उत्कृष्ट असंख्यातसमय है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अर उत्कृष्ट तीन समय है । अयोगकेवलीका गुणस्थानवत् काल है । ऐसैं कालका वर्णन किया है ॥

आगैं अंतरका निरूपण करिये हैं । तहां विवक्षित गुणकै अन्यगुण पलट न होतैं फिर तिसही गुणकी प्राप्तितैं पहलै बीचिका काल सो अंतर है । सो दोय प्रकार कहिये है । सामान्यकरि तौ गुणस्थानविषैं, विशेषकरि मार्गणाविषैं । तहां सामान्यकरि मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट एकसोबत्तीस सागर देशोन कहिये कछु घाटि है । सासादनसम्यग्दृष्टिका अंतर नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एक समय, उत्कृष्ट पल्यका असंख्यातवा भाग है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ पल्यका असंख्यातवा भाग, उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गल-परिवर्तन देशोन है । सम्यग्मिथ्यादृष्टिका अंतर नानाजीवकी अपेक्षा सासादनवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन देशोन है । असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका नानाजीवकी अपेक्षा तौ अंतर नाही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन देशोन है । च्यारि उपशमश्रेणावालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन देशोन है । अर च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका अर अयोगकेवलीनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय, उत्कृष्ट छह महिना है । एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। अर सयोगकेवलीका नानाजीवकी अपेक्षा अर एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है ॥

विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं नारकीनिका सात पृथिवीविषैं मिथ्यादृष्टी असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट एक सागर तीन सागर सात सागर दश सागर सतरा सागर बाईस सागर तेतीस सागर देशोन है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है । उत्कृष्ट पल्यका असंख्यातवा भाग है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट एक तीन सात दश सतरा बाईस तेतीस सागर देशोन है । तिर्यंच गतिविषैं तिर्यंचानिकै मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मु[illegible] है। उत्कृष्ट तीन पल्य देशोन है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि च्यारिनिका गुणस्थानवत् अंतर है। मनुष्यगतिविषैं मनुष्यनिकै मिथ्यादृष्टिका तिर्यंचवत् है। सासादनसम्यग्दृष्टीका अर सम्यग्मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य पल्योपमका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तीन पल्य पृथक्त्व कोडिपूर्व अधिक है । असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं हैं । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तीन पल्य पृथक्त्व कोडिपूर्व अधिक है । संयतासंयत प्रमत्तअप्रमत्त संयतका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंत-

मुंहूर्त है । उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडिपूर्व है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पृथक्त्वकोडिपूर्व है । अवशेपनिका गुणस्थानवत् अंतर है । देवगतिविषैं देवनिकैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट एकतीस सागर देशोन है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है । एकजीवका अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है, उत्कृष्ट इकतीस सागर है, सो देशोन है ॥

इंद्रियनिके अनुवादकारि एकेंद्रियनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव है । उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । विकलत्रयका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव है । उत्कृष्ट अनंतकाल है । सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है । ऐसैं इंद्रियप्रति अंतर कह्या है । गुणस्थानकी अपेक्षा एक मिथ्यात्वही है तातैं अंतर नांही है । पंचेंद्रियविषैं मिथ्यादृष्टिका अंतर गुणस्थानवत् हैं । सासादनसम्यग्दृष्टिका अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यंतनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक हैं । अवशेपनिका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

कायके अनुवादकरि पृथिवी अप्, तेज, वायुकायिकनिकै नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अनंतकाल है सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है । वनस्पतिकायिकनिकै नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यातलोक है । इहां असंख्यातलोककै प्रदेश हैं ते ते कालके समय ग्रहण है । ऐसैं कायकी अपेक्षा अंतर कह्या है ॥ गुणस्थानकी अपेक्षा अंतर नांही है । त्रसकायिकविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् अंतर है । सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग है । अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । असंयत-सम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यंतनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है, उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । अवशेपनिका पंचेंद्रियवत् अंतर है ॥

योगके अनुवादकरि काय वचन मन योगिनिकै मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयत सयोगकेवलीनिकै नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है। च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नाना- जीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है। च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका अर अयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नाही है॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पंचावन पल्य कछु घाटि है। सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौपल्य है। असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यंतानिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौपल्य है। दोय उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौपल्य है। दोय क्षपकश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एक- समय उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष हैं एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। पुरुषवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् है। सासा- दनसम्यग्दृष्टि अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ पल्योपमकै असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। दोय उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। दोय क्षपकश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है। उत्कृष्ट एकवर्ष कछु अधिक है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। नपुंसकवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर देशोन है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अनिवृत्ति— उपशमपर्यंतनिका गुणस्थानवत् अंतर है। अर दोय क्षपकश्रेणीवालेनिका स्त्रीवेदवत् है। वेदरहित अनिवृत्ति बादरसांपराय उपशमक सूक्ष्मसांपराय उपशमकका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अरु उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है। उपशांतकषायका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। अवशेष गुणस्थानवत् अंतर है॥

कषायके अनुवादकरि क्रोध मान माया लोभ कषायकै मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्ति उपशमश्रेणावालातांई मनोयोगीवत् अंतर है। अर दोय क्षपकश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट एकवर्ष कछु अधिक है। केवललोभ-सूक्ष्मसांपरायोपशमकका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। सूक्ष्मसांपराय क्षपक-श्रेणीवालेनिका गुणस्थानवत् है। कपायरहित च्यारि गुणस्थाननिविषैं उपशांतकपायका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। अवशेष तीन गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान विभंगज्ञानवालेविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। सासादनसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। मति-श्रुत-अवधि-ज्ञानवालेविषैं असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट कोडिपूर्व देशोन है। संयतासंयतका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट छयासठि सागरोपम कछु अधिक है। प्रमत्त अप्रमत्तसंयतका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम कछु अधिक है। च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट छयासठि सागरोपम कछु अधिक है। च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका गुणस्थानवत् अंतर है। तहां विशेष यहु- अवधिज्ञानीनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। मनःपर्ययज्ञानीनिका प्रमत्त अप्रमत्तसंयमीनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है। च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछु घाटि है। च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका अवधि-ज्ञानीवत् अंतर है। दोऊके केवलज्ञानीनिका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

संयमके अनुवादकरि सामायिकच्छेदोपस्थापनाशुद्धसंयमिविषैं प्रमत्त अप्रमत्त संयमीका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है। दोऊ उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछु घाटि है। दोऊ क्षपक-श्रेणीवालेनिका गुणस्थानवत् अंतर है। परिहारविशुद्धिसंयमी प्रमत्त अप्रमत्तका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है। सूक्ष्मसांपरायसंयमिविषैं उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। क्षपकश्रेणीवालेनिका गुणस्थानवत् अंतर है। यथाख्यातसंयमिविषैं

अकषायवत् अंतर जाननां । संयतासंयतका नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । असंयतविषैं
मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर
देशोन है । अवशेष तीनूं गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवालेविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् अंतर है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका
नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य पल्यकै असंख्यातवै भाग अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट दोय
हजार सागर कछु घाटि है । असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है । एक-
जीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट दोय हजार सागर कछु घाटि है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नाना-
जीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट दोय हजार सागर देशोन है ।
च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका गुणस्थानवत् है । अचक्षुर्दर्शनविषैं मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् है ।
अवधिदर्शनवालेनिका अवधिज्ञानीवत् है । केवलदर्शनवालेनिका केवलज्ञानीवत् है ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण नील कापोत लेश्यावालेनिविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर
नाही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर सतरा सागर सात सागर कछु घाटि है ।
सो नारकी अपेक्षा है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सामान्यवत् है । एकजीवकी अपेक्षा
जघन्य पल्योपमका असंख्यातवा भाग है । अंतर्मुहूर्त भी है । उत्कृष्ट तेतीस सागर सतरा सागर सात सागर है । सो
कछु घाटि है । पीतपद्मलेश्याविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा
जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट दोय सागर अठरा सागर कछु अधिक है । सासादन सम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका
नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग है। अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट
दोय सागर अठरा सागर कछु अधिक है । संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्त संयतका नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा
अंतर नाहीं है । शुक्ललेश्यावालाविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाही है । एकजीवकी
अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट इकतीस सागर कछु घाटि है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टिका नाना-
जीवकी अपेक्षा अंतर गुणस्थानवत् है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ पल्यके असंख्यातवै भाग है । अर अंतर्मुहूर्त है।
उत्कृष्ट इकतीस सागर कछु घाटि है सयंतासंयत अर अप्रमत्तसंयतका पीतलेश्यावत् है । अप्रमत्तसंयतका नानाजीवकी
अपेक्षा अंतर नाहीं है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । तीन उपशमश्रेणीवालेनिका नाना-

जीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । उपशांत कषायका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है । एकजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है । च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका अर सयोगकेवलीनिका अर लेश्यारहितका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका गुणस्थानवत् अंतर है । अभव्यनिका नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिक सम्यग्दृष्टिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव प्रति जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछु घाटि है । संयतासंयत अर प्रमत्त अप्रमत्त संयतनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है , एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर कछु अधिक है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर कछु अधिक है । अवशेषनिका गुणस्थानवत् अंतर है । क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टीनिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाहीं है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट कोडिपूर्व देशोन है । संयतासंयतका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट छ्यासठि सागरोपम देशोन है । प्रमत्त अप्रमत्त संयतका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांहीं है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर कछु अधिक है । औपशमिक सम्यग्दृष्टिनिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है उत्कृष्ट सात राति दिन है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । संयतासंयतका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट चौदह राति दिनका अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । प्रमत्त अप्रमत्त संयतका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है । उत्कृष्ट पंदरह राति दिन है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । तीन उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है । उत्कृष्ट पृथक्त्ववर्षका अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य भी उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त है । उपशांतकषायका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । सासादनसम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है । उत्कृष्ट पल्यकै असंख्यातवै भाग है । एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांहीं है । मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अर एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है ॥

संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीनिविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् अंतर है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नाना–

जीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है । असंयत सम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्ततांई नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है । च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका गुणस्थानवत् अंतर है । असंज्ञीके नानाजीवकी अपेक्षा अर एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । दोऊ नामकरि रहितनिका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

आहारके अनुवादकरि आहारकनिविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् अंतर है । सासादनसम्यग्दृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ पल्योपमका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अंगुलका असंख्यातवा भाग आकाशके प्रदेश जेते हैं तेते समय हैं । ते असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल है। असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तगुणस्थानपर्यंत नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट अंगुलका असंख्यातवा भाग है । ते असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणीके समयप्रमाण हैं । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अंगुलका असंख्यातवा भाग है । सो असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणीके समयप्रमाण है च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका अर सयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् अंतर है । अनाहारकनिविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अर एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। सासादनसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है । उत्कृष्ट पल्यकै असंख्यातवै भाग है । एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है । उत्कृष्ट पृथक्त्व महिना है । एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । सयोगकेवलीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । ऐसैं अंतरका निश्चय किया ॥

आगै भावकूं प्रगट कीजिये ॥ तहां भाव दोय प्रकार । सामान्यकरि गुणस्थान, विशेषकरि मार्गणा । तहां प्रथमही सामान्यकरि मिथ्यादृष्टि तौ औदयिक भाव है । सासादनसम्यग्दृष्टिके पारिणामिक भाव है । सम्यग्मिथ्यादृष्टिके क्षायोपशमिक भाव है। असंयतसम्यग्दृष्टिके औपशमिक अथवा क्षायिक अथवा क्षायोपशमिक भाव है । इहां असंयतपणां है सो औदयिकभावकरि है । संयतासंयत प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत ऐसैं क्षायोपशमिक भाव है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका औपशमिक भाव है । च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिविषैं अर सयोगकेवलीनिविषैं क्षायिक भाव है ॥

विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं प्रथमपृथिवीविषैं नारकी मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टिपर्यंतनिके गुणस्थानवत् भाव है । दूसरी पृथिवी आदि सातमीपर्यंत मिथ्यादृष्टि सासादन सम्यङ्मिथ्यादृष्टीनिकै गुणस्थानवत् है । असंयतसम्यग्दृष्टिकै औपशमिक क्षायोपशमिकभाव है । असंयत है सो औदयिकभावकरि है । तिर्यंचगतिविषैं तिर्यंचनिकै मिथ्यादृष्टि संयतासंयत पर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है । मनुष्यगतिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिके गुणस्थानवत् भाव है । देवगतिविषैं देवनिकै मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टिपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रिय विकलत्रयनिकै औदयिक भाव है । पंचेंद्रियनिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

कायके अनुवादकरि स्थावरकायिकनिकै औदयिक भाव है । त्रसकायिकनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

योगके अनुवादकरि कायवचनमनोयोगीनिकै मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिकै अर अयोगकेवलीनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषनपुंसकवेदीनिकै अर वेदरहितनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

कषायानुवादकरि क्रोधमानमायालोभकषायवालेनिकै अर कषायरहितनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मति अज्ञान श्रुत अज्ञान विभंगज्ञानवालेनिकै अर मतिश्रुत अवधि मनःपर्यय केवलज्ञानिनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

संयमके अनुवादकरि सर्वही संयतनिकै अर संयतासंयतनिकै अर असंयतनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

दर्शनानुवादकरि चक्षुर्दर्शन–अचक्षुर्दर्शन–अवधिदर्शन–केवलदर्शनवालेनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

लेश्याके अनुवादकरि छह लेश्यावालेनिकै अर लेश्यारहितनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यनिकै मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है । अभव्यनिकै पारिणामिक भाव है ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीकै क्षायिकभाव तौ क्षायिकसम्यक्त्व है । अर असंयतपणां है सो औदयिकभावकरि है । संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयतनिकै क्षायोपशमिक भाव है । सम्यक्त्व क्षायिक है सो क्षायिकभावकरि है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिकै औपशमिक भाव है । सम्यक्त्व इहां क्षायिकभावकरि हो है । अवशेषनिके गुणस्थानवत् भाव है । क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टीविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीकै क्षायोपशमिक भाव है सो तौ

क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है । असंयत है सो औदयिकभावकरि है । संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयतनिकै क्षायोपशमिक भाव है क्षायोपशमिकसम्यक्त्व है । औपशमिकसम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीकै औपशमिक भाव उपशमसम्यक्त्व है । असंयत है सो औदयिकभावकरि है । संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयतनिकै क्षायोपशमिक भाव है। सम्यक्त्व औपशमिक है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिकै औपशमिक भाव उपशमसम्यक्त्व है । सासादनसम्यग्दृष्टिनिकै पारिणामिक भाव है । सम्यग्मिथ्यादृष्टिकै क्षायोपशमिक भाव है । मिथ्यादृष्टीकै औदयिक भाव है ॥

संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीनिकै गुणस्थानवत् है । असंज्ञीनिकै औदयिक भाव है । दोऊ संज्ञारहितानिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकनिकै अर अनाहारकनिकै गुणस्थानवत् भाव है । ऐसैं भावका निरूपण मोहकर्मकी अपेक्षा उदाहरणरूप समाप्त भया ॥

आगै अल्पबहुत्वका वर्णन कीजिये है । सो दोय प्रकार । सामान्यकरि, विशेषकरि । तहां प्रथमही सामान्यकरि तीन उपशमश्रेणीवाले सर्वतैं स्तोक कहिये थोरा है ॥ ते अपने अपने गुणस्थानकालविषैं प्रवेशकरि तुल्यसंख्या है । अर उपशांतकषायवाले भी तितनेही है । बहुरि तीन क्षपकश्रेणीवाले इनितैं संख्यातगुणा है । अर क्षीणकषाय छद्मस्थ वीतराग भी तितनेही है । अर सयोगकेवली अयोगकेवली प्रवेशकरि तुल्यसंख्या है । अर सयोगकेवली अपने कालविषैं भेले होय ते इनितैं संख्यातगुणां हैं । बहुरि अप्रमत्तसंयत संख्यातगुणां हैं । तिनितैं प्रमत्तसंयत संख्यातगुणां हैं । तिनितैं संयतासंयत असंख्यातगुणां है । तिनितैं सासादनसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणां हैं । तिनितैं सम्यग्मिथ्यादृष्टि असंख्यातगुणां हैं । तिनितैं असंयतसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणां हैं । तिनितैं मिथ्यादृष्टि अनंतगुणां हैं ॥

विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं सर्वपृथ्वीनिविषैं नारकी जीव सर्वतैं स्तोक सासादनसम्यग्दृष्टि हैं । तिनितैं संख्यातगुणां सम्यग्मिथ्यादृष्टि हैं । तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि हैं । तिनितैं असंख्यातगुणां मिथ्यादृष्टि हैं । तिर्यंचगतिविषैं तिर्यंच सर्वतैं थोरा संयतासंयत हैं । अन्यकी संख्या गुणस्थानवत् है । मनुष्यगतिविषैं मनुष्यनिकै उपशमश्रेणीवाले आदिविषैं अर प्रमत्तसंयतनितांई गुणस्थानवत् है । तिनितैं संख्यातगुणां संयतासंयत हैं । तिनितैं सासादनसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणां हैं । तिनितैं संख्यातगुणां सम्यग्मिथ्यादृष्टि हैं । तिनितैं असंयतसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणां हैं । देवगतिविषैं देवनिके नारकीवत् अल्पबहुत्व है ॥ इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रिय विकलत्रयविषैं गुणस्थानभेद नांही । तातैं अल्पबहुत्वका अभाव है ॥ इंद्रियकी अपेक्षा कहिये । तहां पंचेंद्रिय आदि एकेंद्रियपर्यंत उत्तरोत्तर बहुत्व है । पंचेंद्रियनिके गुणस्थानवत् है । विशेष यहु जो मिथ्यादृष्टि असंख्यातगुणेही है ॥

कायके अनुवादकरि स्थावरकायविषैं गुणस्थानभेद नांही, तातैं अल्पबहुत्वका अभाव है। कायप्रति कहिये है, तहां सर्वतैं थोरा तेजस्कायिक हैं, तिनितैं बहुत पृथिवीकायिक हैं, तिनितैं बहुत अप्कायिक हैं, तिनितैं बहुत वातकायिक हैं। सर्वतैं अनंतगुणां वनस्पतिकायिक हैं। त्रसकायिकनिकै पंचेंद्रियवत् है ॥

योगके अनुवादकरि वचनमनयोगीनिकै पंचेंद्रियवत् अर काययोगीनिकै गुणस्थानवत् अल्पबहुत्व है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषवेदीनिकै पंचेंद्रियवत् है। नपुंसकवेदीनिकै अर वेदरहितनिकै गुणस्थानवत् अल्पबहुत्व है ॥

कषायके अनुवादकरि क्रोधमानमायाकषायवालेनिकैं पुरुषवेदवत् है। विशेष यहु जो मिथ्यादृष्टि अनंतगुणा है। लोभ कषायवालेनिकै दोय उपशमश्रेणीवाले तुल्यसंख्या हैं। अर क्षपकश्रेणीवाले तिनितैं संख्यातगुणां है। सूक्ष्मसांपराय शुद्धसंयत उपशमश्रेणीवाले विशेषकरि अधिक हैं। तिनितैं सूक्ष्मसांपराय क्षपकश्रेणीवाले संख्यातगुणां है। अवशेषनिकै गुणस्थानवत् है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मतिअज्ञान श्रुतअज्ञानवालेनिविषैं सर्वतैं स्तोक सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं अनंतगुणां मिथ्यादृष्टि है। विभंगज्ञानिनिविषैं सर्वतैं थोरा सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं असंख्यातगुणां मिथ्यादृष्टि है। मतिश्रुतअवधिज्ञानीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाले है। तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाले है। तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है। मनःपर्ययज्ञानिनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाले है। तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाले है तिनितै संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। केवलज्ञानीनिविषैं अयोगकेवलीनितैं संख्यातगुणां सयोगकेवली है ॥

संयमके अनुवादकरि सामायिकच्छेदोपस्थापनशुद्धसंयतनिविषैं दोऊं उपशमश्रेणीवाले तुल्यसंख्या है। तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाले है। तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। परिहारविशुद्धिसंयतनिविषैं अप्रमत्तनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। सूक्ष्मसांपरायशुद्धसंयमीनिविषैं उपशमश्रेणीवालेनितैं क्षपकश्रेणीवाले संख्यातगुणां है। यथाख्यातविहारशुद्धसंयतनिविषै उपशांतकषायनितैं क्षीणकषायवाले संख्यातगुणां है। अयोगकेवली तितनेही है। तिनितैं संख्यातगुणां सयोगकेवली है। संयतासंयतनिविषैं गुणस्थान एकही है। तातैं अल्पबहुत्व नांही। असंयतनिविषैं सर्वतै स्तोक सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितै संख्यातगुणां सम्यग्मिथ्यादृष्टि है तिनितैं असंयतसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणां है। तिनितैं अनंतगुणां मिथ्यादृष्टि है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवालेनिकै मनोयोगीवत् है । अचक्षुर्दर्शनवालेनिकै काययोगीवत् है । अवधिदर्शनवालेनिकै अवधिज्ञानीवत् है । केवलदर्शनवालेनिकै केवलज्ञानीवत् है ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्णनीलकापोतलेश्यावालेनिकै असंयतवत् है । पीतपद्मलेश्यावालेनिकै सर्वतैं स्तोक अप्रमत्तसंयत है । तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है । ऐसैं अन्यगुणस्थानवाले पंचेंद्रियवत् है । शुक्ललेश्यावालेनिकै सर्वतैं स्तोक उपशमश्रेणीवाले है । तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाले है । तिनितैं संख्यातगुणां सयोगकेवली है । तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है । तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है । तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है । तिनितैं असंख्यातगुणां सासादनसम्यग्दृष्टि है । तिनितैं असंख्यातगुणां सम्यग्मिथ्यादृष्टि है । तिनितैं असंख्यातगुणां मिथ्यादृष्टि है । तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है ॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यनिके गुणस्थानवत् अल्पबहुत्व है । अभव्यनिके अल्पबहुत्व नांही है ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाले है । अन्य प्रमत्तसंयतनितांई गुणस्थानवत् है । तिनितैं संयतासंयत संख्यातगुणां है । तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है । क्षायोपशमिकसम्यग्दृष्टि है तिनिविषैं सर्वतैं स्तोक अप्रमत्तसंयत है । तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है । तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है । तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है । औपशमिकसम्यग्दृष्टीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाले है । तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है । तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है । तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है । तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है । अवशेषनिकै अल्पबहुत्व नांही है । जातैं विवक्षित एक एक गुणस्थानही है ॥

संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीनिकै चक्षुर्दर्शनवालेवत् है । असंज्ञीनिकै अल्पबहुत्व नांही है । दोऊ संज्ञारहितानिकै केवलज्ञानीवत् है ॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकनिकै काययोगीवत् है । अनाहारकनिकै सर्वतैं स्तोक सयोगकेवली है । तिनितैं संख्यातगुणां अयोगकेवली है । तिनितैं असंख्यातगुणां सासादनसम्यग्दृष्टि है । तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है । तिनितैं अनंतगुणां मिथ्यादृष्टि है । ऐसैं मिथ्यादृष्टि आदिनिकै गत्यादिकविषैं मार्गणाकरि सो सामान्यकरि है । तहां सूक्ष्मभेद आगमतैं अविरोधकरि अंगीकार करनां ॥

इहां सत् आदिका संक्षेप भावार्थ ऐसा जाननां— जो, सत् कहिये वस्तु है, ऐसा अस्तित्वका कहना ।

संख्या कहिये यह वस्तु केती है, ऐसैं भेदनिकी गणना कहनां । क्षेत्र कहिये यह वस्तु वर्तमानकालमैं एते क्षेत्रमैं है, ऐसा कहना । स्पर्शन कहिये यह वस्तु तीन कालमैं एते क्षेत्रमैं विचरै है, ऐसा कहनां । काल कहिये निश्चय व्यवहाररूप है, सो जिस वस्तुकी अपेक्षा जेता कालका परिमाण कहनां । अंतर कहिये एकगुणतैं दूसरै गुण जाय फेरी तिसही गुण आवै ताकै वीचि जेते काल रहैं, सो विरहकाल है, ताकूं अंतर कहिये, ताका कहनां । भाव कहिये औपशमिक आदि पांच भाव हैं, तिनिका कहना । अल्पवहुत्व कहिये परस्पर दोयकी अपेक्षातैं संख्याका हीनाधिकपणां कहनां । ऐसैं इनि आठ अनुयोगनिकरि वस्तुका अधिगम होय है । तिसका उदाहरण जीवनामा वस्तुका गुणस्थान मार्गणाकरि कह्या सो जाननां । ऐसैंही यथासंभव आगमके अनुसार सर्ववस्तुपरि लगावणां । केई नास्तिकवादी वस्तूकूं सर्वथा अभावरूपही कहै हैं, तिनिका निराकरण सत् कहनेतैं होय है । केई वस्तुकूं सर्वथा एक अभेद कहै हैं, तिनिका निषेध भेदनिकी गणनातैं जाननां । केई वस्तुके प्रदेश नांही मानै हैं तिनिका निषेध क्षेत्र कहनेतैं जाननां । केई वस्तुकूं सर्वथा क्रियारहित मानै हैं तिनिका निषेध स्पर्शन कहनेतैं जाननां । अथवा जो कोई वस्तुका सर्वथा कदाचित् प्रलय होना मानै है तथा क्षणिकही मानै है तिनिका निषेध कालका नियम कहनेतैं होय है । केई वस्तुकूं क्षणिकही मानै हैं तिनिका निषेध अंतरके नियम कहनेतैं होय है । केई वस्तूकूं एकही मानै है तथा अनेकही मानै हैं तिनिका निषेध अल्पवहुका नियम कहनेतैं होय है । ऐसैं वस्तु अनंतधर्मात्मक है । ताके द्रव्य क्षेत्रकाल भावकी अपेक्षा विधिनिषेधतैं प्रमाण नय निक्षेप अनुयोगकी विधिकरि साधनेतैं यथार्थज्ञान होनेतैं अधिगमज सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होय है । सो याका विधिनिषधेका चर्चा श्लोकवार्तिकमैं विशेषकरि है तहांतैं जाननां । ऐसैं आदिविषैं कह्या जो सम्यग्दर्शन ताका लक्षण उत्पत्ति निमित्त स्वामी विषय न्यास अधिगमका उपाय कह्या । याके संबंधकरि जीवादिकका भी सत् परिमाणादिक कहै हैं ॥

याके अनंतर सम्यग्ज्ञान विचारनेयोग्य है, सो कहै हैं—

॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥ ९ ॥

याका अर्थ— मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल ए पांच ज्ञान है ॥ ज्ञानशब्द न्यारान्याराकै लगाईये ऐसै पांचूही ज्ञान भये । तहां मतिज्ञानावरणीयकर्मके क्षयोपशमतैं इंद्रियमनकरि पदार्थनिकूं जानै सो, अथवा जाकरि जाणिये सो, अथवा जाननेमात्र सो, मतिज्ञान है । वहुरि श्रुतज्ञानावरणीयकर्मके क्षयोपशमतैं वक्ताकरि कही वस्तूका नाम सुननेकरि जानै सो, अथवा जाकरि सुनि वस्तुकूं जानिये सो, अथवा जो श्रवणकरि जाननें मात्र सो श्रुतज्ञान है । इन दोऊनिका

समीप निर्देश कार्यकारणभावतैं कह्या । मतिज्ञान कारणरूप है श्रुतज्ञान कार्यरूप है । बहुरि अवधिज्ञानावरणीयकर्मके क्षयोपशमतैं द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्यादा लीयें रूपी पदार्थकूं प्रत्यक्षपणैं करि जो जानैं, अथवा जाकरि जानिये, अथवा जानने मात्र सो अवधिज्ञान है । बहुरि मनःपर्ययज्ञानावरणीयकर्मके क्षयोपशमतैं परके मनविषैं प्राप्त जो पदार्थ ताकूं जाणैं, अथवा जाकरि जानिये, तथा जो जानना सो मनःपर्ययज्ञान कहिये । इहां परके मनविषैं प्राप्त जो पदार्थकूं मन ऐसी संज्ञा साहचर्यतैं कही है । इहां कोई कहै याकै मतिज्ञानका प्रसंग आवै है ? ताकूं कहिये इहां मनकी अपेक्षा–मात्रही है, कार्यकारणभाव नांही है । अपने प्रतिपक्षी कर्मके क्षयोपशममात्रतैंही भया है । ताकूं अपने परके मनकी अपेक्षामात्रतैं मनःपर्यय ऐसी संज्ञाकरि कह्या है । जैसैं काहूनें कही या बादलेविषैं चंद्रमाकूं देखो, तहां बादलेकी अपेक्षा–मात्र है । चंद्रमा बादलेतैं भया तौ नांही । तैसैं इहां भी जाननां । बहुरि जा ज्ञानके अर्थि तपस्वी मुनि 'केवंते' कहिये सेवन करै ताकूं केवलज्ञान कहिये । इहां 'केवृ सेवने' ऐसीं धातुतैं केवलशब्द निपज्या है । अथवा यहु ज्ञान असहाय है बाह्य कछु सहाय न चाहै है । जैसैं मतिश्रुतज्ञान इंद्रिय प्रकाशादिकका सहायतैं जानैं है, तैसैं इहां नांही, केवल एक आत्माहीतैं प्रवर्तै है । तातैं केवल कहिये । अब इनिका सूत्रविषैं प्रयोगके क्रमका प्रयोजन कहै हैं ॥

केवलज्ञान अंतविषैं पाईये है, तातैं अंतहीमैं धर्‍या है । ताकै निकट मनःपर्ययज्ञान हो है, तातैं ताके समीप धर्‍या है । तातैं ये दोऊ ज्ञान संयमी मुनिनिहीकै होय है । बहुरि तातैं दूरवर्ति अवधि है तातैं मनःपर्ययकै समीप याकों कह्या । बहुरि प्रत्यक्ष तीनूं ज्ञाननिकै पहलै परोक्ष मति श्रुत ज्ञान कहे । जातैं ए दोऊ सुगम हैं । सर्वप्राणिनिकै बाहुल्यपणैं पाइये है । इनकी पद्धती सुणिये है परिचय कीजिये है । अनुभवमैं आवै है । ऐसैं ए पांच प्रकार ज्ञान है । इनके भेद आगै कहसी । इहां मतिमात्रके ग्रहणतैं स्मरणादिक भी मतिज्ञानहीमैं लेनैं । केई वादी कहै हैं इंद्रियबुद्धिही एक मतिज्ञान है ताका निराकरण है । तथा केयी अनुमानसहित मति मानै हैं । केई अनुमान तथा उपमानसहित मानैं हैं । केई अनु–मान उपमान अर्थापत्तिसहित तथा अभाव आगमसहित मानैं है । तिनि सर्वनिका निराकरण है । ए सर्वही मति–ज्ञानमैं गर्भित जाननें । कोई कहै मति श्रुत ज्ञान तौ एकही है । जातैं दोऊ लार है एकही आत्माविषैं वसैं हैं । विशेष भी इनिमैं नांही । ताकूं कहिये इन तीनूंही हेतुतैं इनिकै सर्वथा एकता नाहीं है। कोई प्रकार कहै तौ विरोध नांही हैं । जाते लार रहै है इत्यादि कहना दोय विना बनैं नांही । बहुरि विषयके भेदतैं भी भेदही है । श्रुतज्ञानका विषय सर्व–तत्त्वार्थकूं परोक्ष जाननां है । मतिज्ञानका एता नांही । ऐसैं इनिकी भेदाभेदकी चरचा श्लोकवार्तिकतैं जाननी । इहां कोई पूछै–सम्यग्दर्शनका तौ लक्षणका सूत्र न्यारा कह्या बहुरि ज्ञानका न कह्या सो कारण कहा ? ताका उत्तर जो, जहां शब्दकी

निरुक्तिमैं व्यभिचार आवै तहां न्यारा लक्षण कह्या चाहिये। यातैं दर्शन नाम देखनेका प्रधान है। तातैं श्रद्धानार्थके निमित्त लक्षण न्यारा कह्या। बहुरि ज्ञानविषैं निरुक्तिहीतैं अर्थ अव्यभिचारी है, तातैं लक्षण न्यारा न कह्या ऐसा आशय है ॥

आगैं कहै हैं, जो पूर्वैं कह्या था, जो, प्रमाणनयकरि अधिगम होय है। तहां केई तौ ज्ञानकूं प्रमाण मानै हैं। केई सन्निकर्षकूं प्रमाण मानै है। केई इंद्रियकूं प्रमाण कहै हैं। यातैं अधिकारमैं लीये जे मत्यादि ज्ञान तिनिकै प्रमाणपणाके प्रगट करनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥

याका अर्थ— तत् कहिये पूर्वे कहे जे पांच ज्ञान ते दोय प्रमाण है। इहां तत् शब्द है सो अन्यवादी सन्निकर्ष तथा इंद्रियकूं प्रमाण कल्पै हैं ताके निषेधके अर्थ है। तत् कहिये सो मत्यादिक ज्ञान कहे सोई प्रमाण हैं। अन्य नांही है। इहां अन्यवादी पूछै जो, सन्निकर्ष तथा इंद्रियकूं प्रमाण मानिये तौ दोष कहां? ताकूं कहिये हैं, जो, सन्निकर्षकूं प्रमाण मानिये तो सूक्ष्म अंतरित विप्रकृष्ट जो परमाणू रामरावणादिक, मेरुपर्वतादिक पदार्थ है तिनिका प्रमाणविषैं अग्रहणका प्रसंग आवै। ते पदार्थ इंद्रियनितैं सन्निकर्ष होय नाहीं। याहीतैं सर्वज्ञका अभाव आवै। ऐसैंही इंद्रियकूं प्रमाण मानिये तौ येही दोष आवै। जातैं नेत्रादिकका अल्पविषय है। तथा ज्ञेय अनंत है। तथा सर्वही इंद्रियनिकै सन्निकर्ष भी नांही है। नेत्र अर मनकै प्राप्यकारी कहिये पदार्थनिका प्राप्त होनेका अभाव है, अप्राप्यकारी है ताका वर्णन आगै करसी ॥

इहां अन्यवादी कहै हैं, जो तुमनें ज्ञानकूं प्रमाण कह्या, तौ याका फलका अभाव आवैगा। बहुरि प्रमाणका फल चाहियेही। बहुरि हम कहै हैं तहां फलका सद्भाव नीकै वणै है। जो सन्निकर्ष तथा इंद्रिय तौ प्रमाण है अरु यातैं अर्थका ज्ञान हो है सो प्रमाणतैं जुदा फल हो है, यह कहना युक्त है। ताकूं कहिये, जो तैं कह्या सो अयुक्त है। जातैं जो सन्निकर्षप्रमाण होय अर्थका ज्ञान फल होय तौ प्रमाता अर प्रमेय जो अर्थ ते दोऊ भिडिजाय, तव सन्निकर्ष होय है। सो याका फल जो अर्थका ज्ञान, सो प्रमाताकै अरु प्रमेय पदार्थकै दोऊनिकै हुवा चाहिये। ऐसैं होतैं अन्यपदार्थकै भी अर्थका ज्ञानकी प्राप्ति आवै है। बहुरि वे कहै, जो, अर्थका ज्ञान तौ चेतन जो आत्मा ताकै होय है। अन्य जडके कैसैं होय? तौ वाकूं कहिये, आत्माकूं ज्ञानस्वभाव तौ तू मानै नांही। अरु समवायतैं चेतन मानै है,

सो ऐसैं तौ आत्मा भी चेतनाविना जडही ठहरेगा । बहुरि ज्ञानस्वभावही मानैगा तौ तेरी प्रतिज्ञाकी हानि आवैगी। तातैं हम कहै हैं सो युक्त है । ज्ञानकूं प्रमाण कहतैं फलका अभाव है । यह दोप नांही आवै है । कथंचिद्भेदाभेदरूप याका फल भी है । प्रथम तौ अर्थका यथार्थज्ञान होय तब तिस अर्थकेविषैं प्रीति उपजै है । कर्मकरि मैला जो यह आत्मा ताकै इंद्रियनिके आलंबनतैं अर्थका ज्ञान होय । ताविषैं उपादेय जानि प्रीति उपजै हैं । सो यह प्रीति वा प्रमाणका फल है । बहुरि यथार्थज्ञान होय तब रागद्वेषके अभावतैं मध्यस्थभाव होय सो दूसरा यह फल है । बहुरि पहलैं अर्थका अज्ञान था ताका नाश भया सो तीसरा यह फल है । ऐसैं हमारे प्रमाण फलरहित नांही है ॥

अब या प्रमाणशब्दका अर्थ कहै हैं । 'प्रमीयते अनेन' कहिये याकरि वस्तु प्रमाण करिये ऐसैं तौ करणसाधन भया । बहुरि 'प्रमिणोति' कहिये जो वस्तुकूं प्रमाण करनेवाला, सो प्रमाण है, ऐसैं कर्तृसाधन भया । बहुरि 'प्रमितिमात्रं' कहिये वस्तुका प्रमाण करना सो भावसाधन भया । याकों क्रियासाधन भी कहिये । इहां कोई पूछै, इस प्रमाणकरि कहा प्रमाण करिये? ताकूं कहिये, जीवादिक पदार्थ प्रमाण करिये । फेरि पूछै, जो, जीवादिकका अधिगम तौ प्रमाणकरि करिये । बहुरि प्रमाणका अधिगम काहेकरि करिये ? जो अन्य प्रमाण कल्पिये तौ अनवस्था दूपण आवै है । तहां कहिये अनवस्था न आवैगी । जैसैं घटादिक प्रकाशनेविषैं दीपक कारण है; तैसैं अपने स्वरूपके प्रकाशनेविषैं भी वेही दीपक कारण है । अन्य प्रकाश नांही हेरिये है; तैसैं प्रमाण भी स्वपरप्रकाशक अवश्य माननां । प्रमेयकी ज्यों प्रमाणके अन्य-प्रमाणकी कल्पना कीजै तो स्वरूपका जाननेका प्रमाणकै अभाव होय, तब स्मरणका भी अभाव होय है। बहुरि स्मरणका अभाव मानिये तौ व्यवहारका लोप होय है । तातैं स्वपरप्रकाशक प्रमाण मानना योग्य है । बहुरि इहां प्रमाणे ऐसा प्रथमाविभक्तीका द्विवचन कह्या है । सो एक तीन आदि प्रमाणकी संख्या अन्यवादी मानै है ताके निषेधकै अर्थि है । तथा आगै दोय संख्याका सूत्र भी कहसी ताके जनावने अर्थि है । अन्यवादी चार्वाक तौ एक प्रत्यक्ष प्रमाणही मानै है । बहुरि बौद्ध प्रत्यक्ष अनुमान ये दोय प्रमाण मानै है । बहुरि नैयायिक वैशेषिक सांख्य हैं ते प्रत्यक्ष अनुमान आगम उपमान ऐसैं च्यारि प्रमाण मानै है । बहुरि मीमांसक च्यारि तौ ए अरु अर्थापत्ति अभाव ऐसे छह प्रमाण मानै हैं । सो प्रत्यक्ष परोक्ष ए दोय संख्या कहनेतैं सर्वप्रमाण इनिमैं गर्भित होय हैं ॥

ऐसैं ए पंचज्ञान प्रमाण कहे । तहां सम्यक् अधिकारतैं सम्यग्ज्ञान है । मिथ्याज्ञान प्रमाण नांही । इहां प्रश्न जो, ऐसा कह्या है " यथा यत्राविसंवादस्तथा तत्र प्रमाणता ॥ " याका अर्थ; जहां जिसप्रकार विसंवाद न आवै तहां तैसैं प्रमाणता । सौ काहूकै विपर्ययज्ञान है तहां ताकै बाधा विसंवाद न आवै तेतैं प्रमाण ठहऱ्या । तथा काहूकै कालांतरमैं

बाधा आवै । काहूके क्षेत्रांतरमैं बाधा आवै । तथा केईकै कवहू बाधा न आवै । अर विशेषज्ञानीके ज्ञानमैं बाधा दीखै है । तहां जेतैं बाधा न आवै तेतैं प्रमाण ठहरै है। सो सम्यग्ज्ञान तौ ऐसा चाहिये जो संशय विपर्यय अनध्यवसाय-रहित सर्वकाल सर्वक्षेत्र सर्वप्राणीनिकै समान होय । कोई प्रकार बाधा न आवै । जो जहां जैसैं अविसंवाद होय तहां तैसैं प्रमाणता है यह वचन कैसैं सिद्ध होयगा ? ताका उत्तर- जो, सर्वथा निर्बाध तौ केवलज्ञान है । मतिश्रुत है सो तौ अपने विषयविषैं भी एकदेशप्रमाण है । बहुरि अवधि मनःपर्यय है सो अपने विषयविषैं सामस्त्यकरि प्रमाण है । अधिकविषयविषैं प्रमाण नाही । तातैं च्यार्योंही क्षयोपशमज्ञान प्रमाण भी है अप्रमाण भी है । तातैं जिस विषयविषैं निर्बाध साधै तहां तौ प्रमाण है । बहुरि जहां बाधा आवै तहां अप्रमाण है । जो ऐसैं न होय तौ केवलज्ञान ही प्रमाण ठहरै । अन्यज्ञान अप्रमाण ठहरै । तौ व्यवहारका लोप होय । तातैं एक ही ज्ञान प्रमाण भी है अप्रमाण भी है । जैसैं काहू पुरुषकै नेत्रविषैं विकार था, ताकूं एक चंद्रमाके दोय दीखै, तहां निर्विकारनेत्रवालेकी अपेक्षा दोय चंद्रमाकी संख्या तौ सबाध भई । बहुरि चन्द्रमाका सामान्यपणां निर्बाध है । तथा निर्विकार नेत्रवालेकूं चंद्रमा तौ एकही दीखै, परंतु निकटही दीखै है । ऊगता जमीसूं लगता दीखै । सो याकी ऊंचाईका योजनांकी अपेक्षा सबाध है । तथा शास्त्रकरि ग्रहणका काल तौ निश्चय किया है सो तौ निर्बाध है । परंतु दोय अंगुल च्यारि अंगुल ग्रहण होगा, यह कहनां निर्बाध नांही है । जातैं यह विमान केता चौडा है ? तामैं केता आच्छादित हुवा ? यह तौ प्रत्यक्षज्ञानी जानैं, याकी अपेक्षा सबाध है । ऐसैं मतिश्रुत अपने विषयविषैं भी प्रमाणाप्रमाणस्वरूप है । तथा अन्य भी उदाहरण- जैसैं पर्वत तथा वृक्षोंका समूहरूप वन इत्यादि वस्तु दूरितैं तौ औरसा ही दीखै निकट गये औरसा ही दीखै ऐसैं जाननां। इहां कोई पूछै, जो ऐसैं है तौ यहु याका ज्ञान प्रमाण है यहु याका ज्ञान अप्रमाण है ऐसा नियम कैसैं कहिये ? बहुरि नियम कियाविना व्यवहार कैसैं प्रवर्तैगा ! ताका उत्तर- जो, व्यवहार मुख्यगौणकी अपेक्षातैं प्रवर्तै है । जैसैं काहू वस्तूमैं सुगंध देखि लोक कहै यह सुगंध द्रव्य है, तहां वा द्रव्यविषैं स्पर्शादिक भी पाईये हैं । परंतु वाकी मुख्यता न करै । तातैं जिनके मतविषैं एकांततैं ज्ञान प्रमाण अप्रमाण दोऊ स्वरूप नांही है तिनिकै यह छद्मस्थका ज्ञानकै प्रमाणता न आवैगी । तब अपना मत भी न सिद्ध होगा ॥

बहुरि अन्यवादी ज्ञानकोंही प्रमाण मानि याका स्वरूप लक्षण एकांततैं अन्यप्रकार कहै हैं । सो भी सबाध है । तहां बौद्धमती कहै हैं, जो ' अविसंवादि ज्ञानं प्रमाणं, कहिये जामैं विसंवाद न होय सो ज्ञान प्रमाण है । ताकूं पूछिये; जो कहैगा प्रमाताकी इच्छा जहां पूरि होय जाय तहां अविसंवाद है, तौ स्वप्नादिकका ज्ञान भी प्रमाण ठहरैगा, तहां भी

तहां अविसंवाद है, तौ गीतादि शब्दका
वांछापूरण होय जाय हैं। बहुरि कहैगा, जो जहां वस्तूकै अर्थक्रिया ठहरै, तहां अविसंवाद है, तौ गीतादि शब्दका
ज्ञान तथा चित्रामादिकका ज्ञानकै प्रमाणता ठहरैगी। तहां स्वरूपमात्रका ज्ञान है, अर्थक्रिया नांहीं है। ऐसैं बौद्धकरि
मान्या अविसंवाद लक्षण बाधासहित है॥ बहुरि और भी मतके एकांततैं प्रमाणके लक्षण तथा विशेषण जुदे जुदे करै
हैं ते युक्तिशास्त्रतैं बाधासहित हैं। ते श्लोकवार्तिकादिकतैं जानने। जैनमतमें तौ " स्वापूर्वार्थव्यवसायात्मकं ज्ञानं प्रमाणम् "
ऐसा लक्षण परीक्षामुखविषैं कह्या है। और शास्त्रमैं पाठांतर कह्या है। सोही निर्बाध है। बहुरि प्रमाणका प्रमाणपणां
कैसैं होय? तहां सर्वथा एकांतवादी केई तौ तिस प्रमाणहीतैं प्रमाणपणांका निश्चय होय है ऐसैं कहै हैं। केई अन्यतैं
प्रमाणता होहै ऐसैं कहै हैं। सो यहु बाधासहित है। स्याद्वादकरि अभ्यासदशामैं तौ प्रमाणका निश्चय प्रमाणहीतैं होय
है। बहुरि विना अभ्यासदशामैं परतैं निश्चय होय है ऐसा निर्बाध सिद्ध किया है। कोई कहै हैं " प्रमाणपणा
प्रवृत्तिसामर्थ्यतैं निश्चय होय है" सो प्रमाणकरि प्रतीतिमैं आया जो पदार्थ ताके निकटि होतैं वाके फलकी प्राप्ति
होय तब जानिये कि यह प्रमाण है। यहू प्रवृत्तिसामर्थ्यतैं प्रमाणता आई, परंतु इहां अनवस्था दूषण होय है। जातैं
प्रवृत्तिसामर्थ्यका समानजातीय ज्ञानकी प्रमाणता अन्यप्रवृत्तिसामर्थ्यतैं होयगी तब अनवस्था आवैहीगी। बहुरि प्रवृत्ति है
सो तौ जे परीक्षावान् हैं तिनिकै तौ प्रमाणका निश्चय होय तब होय है। बहुरि लौकिकजनकै विना निश्चय भी प्रवृत्ति
हो है। बहुरि परीक्षावान् भी कोई पदार्थनिविषैं अपरीक्षावान् है। जातैं सर्वपदार्थनिकी परीक्षा तौ सर्वज्ञकै है अन्य तौ
कोई प्रकार परीक्षक है कोई प्रकार अपरीक्षक है। सो परीक्षक है सोहू अपरीक्षक है, ऐसैं जाननां॥

बहुरि इहां कोई पूछै, अन्यवादीनिके प्रमाणनिकी संख्याका निराकरण कैसैं है? ताकूं कहिये है, जे अन्यवादी
चार्वाक एक प्रत्यक्षप्रमाणही मानै है ताकै परके चित्तकी वृत्तिकी सिद्धि अनुमानविना होयगी नांही। ताकै अर्थि अनुमान
मानैगा तब एकही प्रमाण माननां कैसैं सिद्ध होयगा? बहुरि बौद्धमती प्रत्यक्ष अनुमान ए दोय प्रमाण मानै है। ताकै
साध्यसाधनके व्याप्तिसिद्धि करनेकूं स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ए तीन प्रमाण चाहियेगा। तब दोयकी संख्या न रहैगी।
व्याप्तिका ज्ञान प्रत्यक्ष अनुमानतैं नाही होयगा। स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ए प्रत्यक्ष अनुमानमैं गर्भित न होयगा। बहुरि
श्रुत कहिये आगमप्रमाण है। सो आप्तके शब्दके श्रवणतैं होय है। सो यह भी प्रत्यक्ष अनुमानमैं गर्भित न होयगा
तब तीन प्रमाण होयगा। बहुरि शब्द तथा उपमानसहित च्यारि प्रमाण मानै है तथा अर्थापत्तिसहित पांच तथा
अभावसहित छह मानै है। तिनकै स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ये तिनिमैं गर्भित न होयगे तब संख्या बाधि जायगी। तातैं तिनिकी
संख्याका नियम नही ठहरे है। तातैं प्रत्यक्ष परोक्ष ए दोय संख्यामैं सर्व भेद गर्भित होय है। तातैं यह नियम निर्बाध है॥

आगै, कहे जे पंचप्रकार ज्ञान ते दोय प्रमाणविषैं गर्भित कीये तथा दोयकी संख्या अन्य प्रकार भी आवै है। तातैं ताकी निवृत्तीकै अर्थि सूत्र कहै हैं ॥

॥ आद्ये परोक्षम् ॥ ११ ॥

याका अर्थ— पांच ज्ञाननिविषैं आद्यके दोय मतिश्रुतज्ञान परोक्ष प्रमाण है। आदि शब्द हैं सो प्रथमका वचन है। जातैं आदिविषैं होय ताकों आद्य कहिये। इहां कोई पूछै 'आद्ये' ऐसा द्विवचन है तहां मतिश्रुत दोय आये। तहां आदि तौ एक मति है। दूसरा श्रुतकै आदिपणां कैसे आवै? ताका उत्तर-- जो मुख्य उपचारकी कल्पनातैं दोऊकै आद्यपनां कह्या है। तहां मतिज्ञान तौ मुख्य आदि हैही। बहुरि श्रुत है सो याके समीपही है तातैं उपचारतैं प्रथम कह्या। सूत्रविषैं द्विवचन है ताकी सामर्थ्यतैं गौणका भी ग्रहण हुवा। याका समास ऐसैं हो है। 'आद्यं च आद्यं च आद्ये मतिश्रुते, ऐसैं जाननां। ये दोऊही परोक्षप्रमाण हैं ऐसा संबंध करनां। इहां कोई पूछै इनिकै परोक्षपणां काहेतैं है? ताका उत्तर— ए दोऊही ज्ञान परकी अपेक्षा लिये है। मतिज्ञान तौ इंद्रियमनतैं होय है। श्रुतज्ञान मनतैं होय है। सो यह सूत्र आगैं कहसी। यातैं पर जे इंद्रिय मन तथा प्रकाश उपदेशादि जे वाह्यनिमिति तिनिकी अपेक्षा सहाय लेकरि मतिश्रुतज्ञानावरणीयका क्षयोपशमसहित आत्माकै उपजै है। तातैं परोक्ष कहिये। याहीतैं उपमानादिक प्रमाण भी ऐसैही उपजै है ते भी याहीमें गर्भित होय हैं। अथवा परोक्ष शब्दका ऐसा भी अर्थ है; जो अक्ष कहिये इंद्रिय तिनितैं दूरवर्ती होय ताकूं परोक्ष कहिये सो श्रुतज्ञान। तथा स्मरण प्रत्यभिज्ञान तर्क स्वार्थानुमान ए भी इंद्रियनितैं दूरवर्ती है। ऐसैं ए मतिज्ञानमैं गर्भित हैं। तातैं ए भी परोक्षही हैं। बहुरि अवग्रह ईहा अवाय धारणाज्ञान जे मतिज्ञानके भेद हैं ते इंद्रियनितैं भिडिकरि होय है। तौ भी अक्ष कहिये आत्मा तातैं दूरवर्ती हैं। तातैं इनिकूं व्यवहारकरि तौ प्रत्यक्ष कहैं हैं। परंतु परमार्थतैं परोक्षही है॥ बहुरि केई कहै है, परोक्षज्ञान तौ अस्पष्ट जाननां है। सो पदार्थके आलंवनरहित है। तातैं मनोराज्यादिककी ज्यो निरर्थक है। ते विना समझ्यां कहै है। जातैं अर्थका आलंवन तौ प्रत्यक्ष परोक्ष दोऊनिविषैंही है। परंतु स्पष्टता अस्पष्टताका कारण नाहीं। प्रत्यक्ष परोक्ष भेद ऐसें है जहां अन्यका अंतर पडे नांही। तथा अन्यका सहायविना विशेषनिसहित पदार्थनिकूं जानैं सो तौ स्पष्ट है। बहुरि वीचिमैं अन्यका अंतर पडै तथा सहाय चाहै। तथा विशेषनिसहित पदार्थनिकूं न जानै सो अस्पष्ट कहिये। मनोराज्यादिकवत् तौ जाकूं कहिये जाका कछु साक्षात् तथा परंपराय विषयही न होय ऐसें जाननां ॥

आगै इनि परोक्षनितैं अन्य जे तीन ज्ञान तिनिकूं प्रत्यक्ष कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥

याका अर्थ— अन्यत् कहिये पांच ज्ञानसैं तीन ते प्रत्यक्षप्रमाण है ॥ 'अक्ष्णोति' कहिये जानै सो अक्ष कहिये आतमा
ताहीकूं आश्रयकारि उपजै अन्यका सहाय न चाहै ताकूं प्रत्यक्ष कहिये । कैसा है आत्मा ? पाया है कर्मका क्षयोपशम
जानैं । अथवा क्षीण हुवा है कर्मका आवरण जाका ऐसा आत्माकै होय है सो ऐसा अवधि मनःपर्यय केवलज्ञान है ।
कोई कहै ऐसे तौ अवधिदर्शन केवलदर्शन भी है । आत्माहीका आश्रय ले उपजै है ते भी प्रमाण ठहरै । ताकूं कहिये,
यहू दोष न आवै है । इहां सूत्रमैं ज्ञानहीका अधिकार है । तातैं ज्ञानही लेना, दर्शन न लेना । बहुरि कोई कहै, जो,
विभंग तो ज्ञान है ताका प्रसंग आवैगा यहु भी आत्माहीकूं आश्रय ले उपजै है । ताकूं कहिये इहां सम्यक्का अधि-
कार है, तातैं विभंगज्ञान न लेनां । यहु विपर्ययस्वरूप है । जातैं मिथ्यात्वके उदयतैं विपरीतपदार्थकौं ग्रहै है । तातैं
यहु सम्यक् नाहीं ॥

इहां वैशेषिकका आश्रयतैं प्रश्न है; जो, इंद्रियव्यापारतैं होय सो प्रत्यक्ष कहिये । विना इंद्रियव्यापार होय सो परोक्ष
कहिये । ये लक्षण यथार्थ बाधारहित है सो माननां । ताका उत्तर जो, यहु अयुक्त है । ऐसैं होय तौ आप्त सर्वज्ञकै
प्रत्यक्षज्ञानका अभाव होय । जो इंद्रियज्ञानही प्रत्यक्ष मानिये तौ आप्तकै प्रत्यक्षज्ञान न होय । जो आप्तकै भी इंद्रिय-
पूर्वक ज्ञान कलिपये तौ ताकै सर्वज्ञपणांका अभाव होय । जो कहै, सर्वज्ञकै मनसूं भया प्रत्यक्ष है तौ मनके चिंतवन-
पूर्वककै भी सर्वज्ञपणाका तौ अभावही आवैगा । बहुरि कहै, जो ताकै सर्वपदार्थनिके ज्ञानकी आगमतैं सिद्धि हो है ।
सो ऐसैं भी नाहीं । जातैं आगम तौ प्रत्यक्षज्ञानपूर्वक होय सो प्रमाण है ॥

बहुरि बौद्धमती कहै है योगीश्वरनिकै अलौकिक दिव्यज्ञान औरही जातिका है। तौ ऐसैं कहै प्रत्यक्षप्रमाण तौ ताकै
न आवैगा । जातैं ऐसा मानै है, जो इंद्रियप्रति वर्तै ताकूं प्रत्यक्ष कहिये । सो ऐसा मान्यां तब दिव्यज्ञान कहनेतैं भी
प्रत्यक्षपना तौ न ठहरै । बहुरि और भी दोष आवै है । जो सर्वज्ञका तौ अभाव होय है । अरु प्रतिज्ञाकी हानी होय
है । सोई दिखाईये है । योगीश्वरकै जो ज्ञान है सो एक एक पदार्थकूं क्रमतैं ग्रहण करै है कि अनेकपदार्थका ग्रहण
करनेवाला है ? जो एक एक पदार्थकों क्रमतैं ग्रहण करै है; तौ सर्वज्ञपणां नांही ठहरै है । जातैं ज्ञेय तौ अनंत है;
सर्वकूं एककाल जाने सर्वज्ञ होय । बहुरि जो अनेक पदार्थकूं ग्रहण करै है; तौ जो बौद्धमती प्रतिज्ञा करी है ताकी

हानि आवै है। सो प्रतिज्ञा कहा? 'एक विज्ञान तौ दोय पदार्थकूं न जानै है बहुरि दोय विज्ञान एक पदार्थकूं न जानै है' ऐसी प्रतिज्ञा है. ताकी हानि होय है। अथवा सर्वसंस्कार हैं ते क्षणिक हैं ऐसी प्रतिज्ञा करै है, ताकी भी हानि होय है। जातैं अनेकक्षणवर्ती एक विज्ञान मान्या है। अनेक पदार्थका ग्रहण क्रमकरि होय है। बहुरि वे कहै; जो, अनेक पदार्थका ग्रहण एकक्षणवर्तिविज्ञानकै तिस एक कालहीमैं होय है, तौ यह बनै नांही। जातैं जा क्षणमैं ज्ञान उपज्या सो तौ क्षण वा ज्ञानका स्वरूपका लाभही होय। जब आप भया ता पीछै अपना जो कार्य 'पदार्थका जाननां' ताप्रति व्यापार करै है। उपजनेहीकै क्षण तौ जानै नांही। बहुरि वे कहै; जो, दीपकवत् जिस समय भया तिस समय पदार्थ प्रकाशै, तौ यहु दृष्टांत मिलै नांही। जातैं दीपक तौ अनेकक्षणवर्ती है। ताकै पदार्थनिका प्रकाशन होय है। बहुरि तिस योगीश्वरके ज्ञानकूं विकल्पतैं भेदनितैं रहित मानिये तव शून्यताका प्रसंग आवै है। जातैं सर्वपदार्थनिकूं भिन्न जानेविना तौ वह ज्ञान शून्यही है॥

बहुरि अकलंकदेव आचार्यनै प्रत्यक्षके तीन विशेषण किये हैं। स्पष्ट, साकार, अंजसा ऐसै। तिनिका अर्थ—स्पष्ट तौ जो वीचिमैं अन्यकी प्रतीतिका व्यवधान न होय अर वस्तुकूं विशेषनिसहित जानै ऐसा है। सो द्रव्यार्थिकनयकी प्रधानता करिये तव तौ मतिश्रुतज्ञान अस्पष्टही है। जातैं द्रव्यका समस्तपणाकूं ए जानै नांही। इंद्रिय मन प्रकाशादि-कके सहायतैं किंचित् जानै हैं। बहुरि पर्यायार्थिक नयकी प्रधानता करिये तव मतिज्ञान व्यवहारके आश्रयतैं किंचित् स्पष्ट भी जानै है॥ बहुरि साकार कहनेतैं निराकारदर्शनका निषेध है। बहुरि अंजसा कहनेतैं विभंगज्ञान तथा इंद्रिय-मनकरि अन्यथाज्ञान हो है ताका निषेध है। ऐसैं कहनेतैं सूत्रतैं भी विरोध नाहीं है। जातैं प्रत्यक्ष ऐसा कहनेतैं तौ आत्माधीन है, इंद्रियाधीन नांहीं है। बहुरि ज्ञानकी अनुवृत्तितैं दर्शनका निषेध है। बहुरि सम्यक्के अधिकारतैं कुज्ञानका निषेध है, ऐसैं जाननां॥

इहां कोई प्रश्न करै, सकलप्रत्यक्ष जो केवलज्ञान सो योगीश्वरनिकै है ऐसा काहेतैं जानिये? ताका उत्तर; जो, भलै प्रकार जाका निर्णय किया जो बाधकप्रमाणका अभाव तातैं जानिये, जो, योगिश्वरनिकै केवलज्ञान है। जातैं समस्त आवरणके नाशतैं उपजै सो केवलज्ञान है। समस्त वस्तुकूं एककाल इंद्रियादिकै सहायविना सोही ज्ञान जानै, जाकै आवरण न होय। ताका बाधक अल्पज्ञान है नाहीं। जा ज्ञानका जोही साधक तथा बाधक होय। अन्यज्ञानका अन्यज्ञान बाधक होय नांही यह न्याय है। बहुरि बौद्धमती प्रत्यक्षका लक्षण निर्विकल्प सत्यार्थ कहै हैं। सो सर्वथा निर्विकल्पक होय सो तौ सत्यार्थ होय नांही। विपर्यय भी निर्विकल्पक है। निर्विकल्पकतैं अर्थका निश्चयही होता नांही।

सन्निकर्ष होय ताकूं प्रत्यक्ष कहै हैं । सो
सत्यार्थ काहेतैं होय ? बहुरि नैयायिकमती इंद्रियमनकै अर आत्माकै पदार्थतैं सन्निकर्ष होय ताकूं प्रत्यक्ष कहै हैं । सो
यह भी अयुक्त है । जातैं ईश्वरकै ज्ञान इंद्रियमनतैं होय तौ सर्वज्ञपनां न होय । जातैं इंद्रियनिकैं अर सर्वपदार्थनिकै
संबंध नांही । तातैं जो सूत्र प्रत्यक्षका कह्या सोही निराबाध है ॥

आगै, कह्या जो परोक्ष प्रत्यक्ष दोय प्रकार प्रमाण तिनिमैं आदि प्रकारके विशेषकी प्राप्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥ १३ ॥

याका अर्थ— मति स्मृति संज्ञा चिंता अभिनिबोध ए पांच अनर्थांतर कहिये अन्य अर्थ नांही । मतिज्ञानहीके
नाम हैं ॥ आदिविषैं कह्या जो मतिज्ञान ताके येते पर्यायशब्द कहिये नामांतर है । जातैं ए सर्वही मतिज्ञानावरण कर्मके
क्षयोपशमकरि उपज्या जो उपयोग ताही संबंधी हैं । इनकी श्रुतज्ञानादिविषैं प्रवृत्ति नांही । तहां मननं कहिये मानना
इंद्रियमनतैं अवग्रहादिरूप साक्षात् जाननां सो तौ मति कहिये । स्मृति कहिये स्मरण । जानेका पीछै यादि करना सो
स्मृति स्मरण कहिये । संज्ञा संज्ञान कहिये । जानेको यादिकरि वर्तमान जानेकै जोडिकरि जाननां सो संज्ञान कहिये ।
याकूं प्रत्यभिज्ञान भी कहिये । चिंतनं चिंता कहिये यहु चिन्ह है तहां इसका चिन्ही भी होय है इत्यादि ऐसा चिंतवन
करनां सो चिंता कहिये । याकूं तर्क भी कहिये । अभिनिबोधनं कहिये सन्मुख लिंगादि देखि लिंगी आदिका निश्चय
करै सो अभिनिबोध कहिये । याकूं स्वार्थानुमान भी कहिये । इनि शब्दनिका भावसाधनरूप अर्थ किया है । बहुरि
करणसाधन कर्तृसाधन आदि भी यथासंभव जाननां । इनिका नामभेदतैं अर्थभेद होतै भी रूढिके बलतैं मतिके नामां–
तरही जानने । जैसैं इंद्र शक्र पुरंदर ऐसैं नामभेदतै अर्थभेद होतैं भी समभिरूढनयकी अपेक्षातैं एक इंद्रहीके नाम हैं ।
बहुरि इनिका अन्य अन्य अर्थ करिये तब मत्यादि अन्य अन्य होयही हैं । तथापि मतिज्ञानावरणक्षयोपशमकरि उपयोग
ताहि न उलंघि वर्तै है । इहां ऐसा अर्थ है । बहुरि सूत्रमैं इति शब्द है सो प्रकारवाची है । या मतिज्ञानका येते
पर्यायशब्द हैं ऐसा इतिका अर्थ जाननां । तथा अभिधेयार्थवाची भी कहिये । जो मति स्मृति संज्ञा चिंता अभिनिबोध
ऐसैं येते शब्दनिकरि जो अर्थ कहिये सो एक मतिज्ञान है ॥

इहां विशेष कहिये है । सूत्रविषैं इति शब्द प्रकारवाची है । सो बुद्धि तौ मतिका प्रकार जाननां । जातैं पदार्थके
ग्रहणके शक्तिस्वरूपकूं बुद्धि कहिये है बहुरि मेधा स्मृतिका प्रकार है । जातैं शब्दके स्मरणकी शक्तिकूं मेधा कहियें है ।
बहुरि प्रज्ञा चिंताका प्रकार है । जातैं वितर्कपणाका निषेध स्वरूप है । बहुरि प्रतिभा उपमा ये संज्ञाका प्रकार है ।

जातैं सामान्य पदार्थको सादृश्य दिखावनेरूप है। बहुरि संभव, अर्थापत्ति, अभाव ए स्वार्थानुमानके प्रकार हैं। जातैं ये सर्व लिंगहीतैं जानिये हैं। इहां कोई कहै स्मृति तौ अप्रमाण है सो प्रमाणविषैं कैसैं अंतर्भूत होयगी? ताकूं कहिये; जो, स्मृति अप्रमाण होय तौ प्रत्यभिज्ञान न होय तब व्याप्तिका भी ग्रहण न होय। तब अनुमान काहेतैं होय? अरु अनुमान न होय तब प्रत्यक्षकै भी प्रमाणता न ठहरै। तब सर्वशून्यता आवै। तातैं स्मृतिप्रमाण मानेही अन्यप्रमाण सिद्ध होय है। बहुरि स्मृतिकी ज्यों अपने विषयविषैं प्रत्यभिज्ञान भी बाधारहित है। अतीतवस्तुका यादि करनां जो स्मरण सो याका कारण है। सो अतीतकूं यादिकरि वर्तमानमैं तिसही वस्तूकूं देखि बहुरि अतीत वर्तमानकी एकता जोडरूपकूं जाननां तथा अतीत सारिखी वस्तु देखि दोऊके समानताका जाननां सो प्रत्यभिज्ञान है सो सत्यार्थ है। जैसैं मैं बालक था सोही मै अब युवा हूं बूढा हूं इत्यादि। तथा पहलैं घट देख्या था तैसाही यह दूसरा घट है इत्यादि। याके भेद बहुत हैं सो प्रमाणशास्त्रतैं जानने।

बहुरि साध्यसाधनके अविनाभावसंबंधरूप जो व्याप्ति, ताका जाननां सो तर्क है। सो भी प्रमाण है। सो यहु अप्रमाण होय तौ अनुमान भी प्रमाण न ठहरै। बहुरि अनुमानादिकमैं यहु गर्भित होय नाही। तातैं न्याराही प्रमाता जाननां। याका उदाहरण- जैसैं धूम अग्निका संबंध देखिकरि ऐसा निश्चय किया; जो, जहां जहां धूम है तहां तहां नियमकरि अग्नि है। ऐसैं निश्चय करनेका नाम तर्क है। सो सत्यार्थ है, तातैं प्रमाण है। जो यहु ज्ञान अप्रमाण होय तौ अनुमान प्रमाण कैसैं ठहरै? बहुरि साधन कहिये लिंग-चिन्ह, तातैं साध्य कहिये जाननें योग्य वस्तु लिंगी चिन्हवान्, ताका निश्चय करनां सो स्वार्थानुमान है। तहां साधन ताकूं कहिये, जाकी जहा साध्यवस्तु न होय, तहां प्राप्ति न होय। तथा जहां साधन होय तहां साध्य होयही होय॥

बहुरि साध्यके तीन विशेषण हैं, शक्य, अभिप्रेत, अप्रसिद्ध। तहां जो साधनेकी योग्यता लीये होय सोही साध्य। जामैं योग्यता नांही सो साध्य नांही, जैसै आकाशके फूल। बहुरि जो साधनेवाला पुरुष अभिप्रायमैं ले, सोही साध्य, तिसविना जगत्‌मैं अनेक वस्तु हैं ते वाकै साध्य नांही। बहुरि पहलै सिद्ध न हूवा होय, सो साध्य। सिद्ध भये फेरी साधना अफल है। ऐसैं साध्यके सन्मुख जो पूर्वोक्त साधनकरि नियमरूप ज्ञान होय, तातैं याकूं अभिनिवोध भी कहिये। इहां कोई कहै; शास्त्रमैं मतिज्ञानसामान्यका नाम अभिनिवोध कह्या है; तुम स्वार्थानुमानकूं अभिनिवोध कैसैं कह्या? ताका उत्तर-जो, सामान्यार्थकी विशेषविषैं प्रवृत्ति हौतैं विरोध नांही। जो अवग्रहादि अनेकभेदरूप मतिज्ञान कहिये तदि तौ सामान्यकूं अभिनिवोध कहिये। बहुरि जब विशेष लीजिये तब स्वार्थानुमानकूं भी कहिये। तहां साधनके

संक्षेपतैं दोय भेद हैं; उपलब्धि अनुपलब्धि । तहां इंद्रिय मनकरि वस्तुका सद्भावका ग्रहण होय सो तौ उपलब्धि कहिये । बहुरि अभावका ग्रहणकूं अनुपलब्धि कहिये । तहां कार्योपलब्धि जैसैं; या पर्वतमैं अग्नि है, जातैं अग्निका कार्य धूम दीखै है । बहुरि कारणोपलब्धि जैसैं; वर्षा होसी, जातैं याका कारण बादल सघन दीखै है । स्वभावोपलब्धि जैसैं, वस्तु उत्पादव्ययध्रौव्यस्वरूप है; जातैं सत्त्वस्वरूप है । सत्त्वका स्वभाव ऐसाही है । ऐसैं ये तीन भेद भये । इत्यादि साधनके अनेक भेद हैं, सो श्लोकवार्तिकतैं जानने ॥ बहुरि अन्यवादी अर्थापत्त्यादिक प्रमाण न्यारे मानै हैं ते सर्व इस मतिज्ञानमैं अंतर्भूत होय हैं, ऐसैं जाननां ॥

आगैं या मतिज्ञानका स्वरूपका लाभविषैं निमित्त कहां है? ऐसैं प्रश्न होतैं सूत्र कहे हैं—

॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥ १४ ॥

याका अर्थ— तत् कहिये सो मतिज्ञान इंद्रिय अर अनिंद्रिय है निमित्त कहिये कारण जाकूं ऐसा है ॥ प्रथम तौ इंद्रियशब्दका अर्थ कहै हैं । इन्दति कहिये परम ऐश्वर्यरूप वर्तै सो इंद्र है । तहां अर्थतैं आत्माका नाम इंद्र कह्या, सो ऐसा ज्ञानस्वभाव जो आत्मा, ताकै ज्ञानावरणकर्मका ऐसा क्षयोपशम होय, जो आप आपतैंही पदार्थनिकूं जाननेकूं असमर्थ होय । ताकै पदार्थ जाननेका कारण चिन्ह होय ताकूं इंद्रिय कहिये । जातैं व्याकरण ऐसा है 'तस्य लिंगम्' इस अर्थमैं इंद्रशब्दकै प्रत्यय आया है । अथवा ऐसा भी अर्थ जो गूढ अर्थकूं जनावै ताकूं लिंग कहिये । तहां आत्मा गूढ है अदृष्ट है । ताके अस्तित्वकूं जनावनेविषैं चिन्ह है तातैं आत्माका लिंग इंद्रिय है । जैसैं लोकमैं अग्निका धूम लिंग है तैसैं जाननां । ऐसै यह स्पर्शादि इंद्रिय हैं ते करण हैं । सो कर्ता जो आत्मा तिसविना न होय ऐसैं ज्ञाता जो आत्मा ताका अस्तित्व जनावै है । अथवा इंद्र ऐसा नाम कर्मका कहिये । ताकरि ये रचे हैं निपजाये हैं । तातैं भी इंद्रिय ऐसा कहिये । ते स्पर्शनादि आगैं कहसी ॥

बहुरि अनिंद्रिय नाम मनका है । याकूं अंतःकरण भी कहिये । इहां कोई पूछै है– इंद्र जो आत्मा ताहीका लिंग जो मन ताका नाम इंद्रियका प्रतिषेधकरि अनिंद्रिय ऐसा नाम कैसैं दिया? ताका उत्तर–जो, इहां इंद्रियका प्रतिषेधकर नाही है । 'न इन्द्रियं अनिन्द्रियं' ऐसैं कहनेमैं ईषत् अर्थ लेना । किंचित् इंद्रियकूं अनिंद्रिय कह्या है । जैसैं काहू कन्याकूं अनुदरा नाम कह्या, तहां जाके उदर न होय ताकूं अनुदरा कहिये ऐसा अर्थ न लेना । जाका ईषत् किंचित् पतला क्षीण उदर होय ताकूं अनुदरा कहिये ऐसा अर्थ लेना । बहुरि कोई पूछै है– इहां ईषत् अर्थ कैसैं है? ताका

उत्तर— ए इंद्रिय हैं ते प्रतिनियत कहिये नियमरूप जुदाजुदा जिनका देश अरु विषय है ऐसैं हैं। बहुरि कालांतरस्थायी हैं। जा कालमैं विषयत उपयुक्त न होय ता कालमैं भी अवस्थित हैं। बहुरि मन है सो यद्यपि इंद्र कहिये आत्मा ताका लिंग है तथापि नियमकरि एकही देशविषैं तथा एकही विषयका ग्राहक नाही। अन्यकालमैं जाका अवस्थान नाही अनवस्थित है चंचल है। याहीतैं याकूं अंतःकरण कहिये अभ्यंतर इंद्रिय कह्या है। जातैं गुणदोषका विचार स्मरणविषैं इंद्रियनिकी याकै अपेक्षा नाही है। बहुरि नेत्रादिककी ज्यौं बाह्यतैं अन्य मनुष्यादिक तिनिकरि न जाणिये है। ताहीतैं अंतर्गत इंद्रिय ऐसा कहिये है। ऐसै ईषत् अर्थ याविषैं संभवै है॥

बहुरि कोई पूछै है- सूत्रविषैं तत् शब्द किस प्रयोजनकूं है? ताका उत्तर- तत् शब्द मतिज्ञानके कहनेकै अर्थि है। बहुरि कोई कहै है- मतिज्ञान तौ लगताही है अनंतरही है। यातैं ऐसा परिभाषा है, जो, अनंतरकी विधिका सूत्र होयकै निषेधका होय। यातैं ता मतिज्ञानका विना तत् शब्दही ग्रहण होय है। तत् शब्द निरर्थक है। ताकूं कहिये हैं- इहां तत् शब्द है सो इस सूत्रके अर्थि भी है बहुरि अगले सूत्रके अर्थि भी है। जो मत्यादिक पयाय शब्दकरि कहनेमैं आवै। ऐसा मतिज्ञान है सो इंद्रियानिंद्रियनिमित्तक है। ऐसैं तौ इस सूत्रकै अर्थि भया। बहुरि सोही मतिज्ञान अवग्रह ईहा अवाय धारणास्वरूप है ऐसै अगिले सूत्रकै अर्थि भया। जो ऐसैं न होय तत् न कहिये तौ पहलैं मत्यादिशब्दकरि वाच्यज्ञान है ऐसैं कहिवेकरि इंद्रिय अनिंद्रियनिमित्तक श्रुतज्ञान है ऐसा प्रसंग आवै। तथा सोही श्रुतज्ञान अवग्रह ईहा अवाय धारणास्वरूप है ऐसा अनिष्ट अर्थका संबंध होय है। बहुरि यहु विशेष जाननां- जो ए इंद्रिय मन है ते मतिज्ञानके बाह्य उत्पत्तिनिमित्त हैं। अंतरंग निमित्त तौ मतिज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशम ही है॥

आगैं कहै हैं, ऐसैं मतिज्ञानका उत्पत्तिका निमित्त तौ जाण्या, परंतु याके भेद केते हैं? यह निर्णय न भया। ऐसा प्रश्न होतै याके भेदनिकी प्राप्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ अवग्रहेहावायधारणाः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— अवग्रह ईहा अवाय धारणा ए च्यारि मतिज्ञानके भेद हैं॥ इनिका लक्षण कहिये हैं। विषय जे रूपादिक बहुरि विषयी जे इंद्रिय तिनका संबंध होतै ताका लगताही तौ दर्शन हो है। ताके लगताही वस्तुमात्रका ग्रहण सो अवग्रह है। जैसैं नेत्रकरि यह श्वेतरूप है ऐसैं ग्रहण सो अवग्रह है। बहुरि अवग्रहकरि ग्रहण किया जो वस्तु ताका विशेषकी वांछा सो ईहा है। जैसैं अवग्रहकरि श्वेतरूप देख्या सो कहा बगुलाकी पंक्ति है अथवा कहा धुजा है?

ऐसैं याकूं संशय न जानना। जातैं संशय तौ दोय पक्षविपैं अनिश्चित ज्ञान है अप्रमाण है। बहुरि ईहा एकही पक्षविपैं वांछारूप ज्ञान हैं। जो वगुलाकी पंक्ति है तौ वाहीकी वांछा है। जो पताका है तौ वाहीकी वांछा है। बहुरि ईहाकरि जान्या था ताका विशेप अवयवादिकका निर्णय होनेतैं जैसा है तैसा नियमरूप निश्चय होना सो अवायज्ञान है। जैसैं ईहाविपैं बगुलाकी पंक्तीकी तर्फ वांछा थी। परंतु धुजाका निपेध न किया। अव इहां ऊंचा चढना नीचा आवनां पंख हलावनां इत्यादि क्रिया-चिन्ह देखी ऐसा निश्चय भया जो वगुलाकीपंक्तिही है, धुजा नांही है; तहां अवायज्ञान कहिये। बहुरि अवायकरि निश्चय किया जो वस्तु ताका ऐसा दृढज्ञान होय जो और कालमैं न भूलने यादि आवनेकूं कारण होय, तहां धारणा-ज्ञान हो है। जैसैं अवायज्ञानकरि प्रभातिमैं वगुलाकीपंक्ति देखी थी सोही यहु अव मैं देखी ऐसे ज्ञानकूं कारण जो ज्ञान, सो धारणाज्ञान कहिये। ऐसैं इनि अवग्रहादिकनिका कहनेका अनुक्रम इनकी उत्पत्तिके अनुक्रमतैं कह्या है ॥

इहां ऐसा भावार्थ जाननां — जो वस्तु सामान्यविशेषस्वरूप है तिस वस्तुकै अरु इंद्रियनिकै संवंध होतैं प्रथम तौ सामान्य अवलोकनरूप निराकार दर्शन होय है तापीछै ता वस्तुका सामान्यविशेपरूप साकार ग्रहण होय ताकूं अवग्रह कहिये। तापीछै तिसही वस्तूमैं विशेष वहुत हैं तिनिमैंतैं कोई वस्तुके विशेपरूप जाननेकी अभिलापारूप ज्ञान प्रवर्ता, जो, 'यह फलाणा विशेष होगा' ताकूं ईहा कहिये। तापीछै तिसही विशेषकी क्रियाचिन्हि देखी यहु निश्चय भया, जो, 'यहु अभिलापामैं ग्रहण हुईथी सोही है' ताकूं अवाय कहिये। तापीछै तिसहीविपैं ऐसा ज्ञान दृढ भया, जो, 'अन्यकालमैं वाकूं भूलिसी नाही' ताकूं धारणा कहिये। इनिमैं विपयका भेद भया, तातैं गृहीतका ग्रहण नाही है। बहुरि सामान्यपणैं वस्तुका रूप ग्रहण है, तातैं नय भी नांही है। बहुरि विषय सत्यार्थ निर्बाध है तातैं प्रमाण है। बहुरि इंद्रियमनकै पदार्थसंबंध होनेतैं किंचित् स्पष्टता भी इनिमैं है। तातैं व्यवहारकरि प्रत्यक्ष भी इनिकूं कहिये हैं। परमार्थतैं परोक्षही है। बहुरि अन्यवादी सर्वथा एकांत वस्तुका स्वरूप मानै हैं। तिनिकै अवग्रहादिक भेदरूप ज्ञानकी कथनीही नांही ऐसैं जानना ॥

आगैं, कह्या जे अवग्रहादिक तिनिके भेदकी प्राप्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ बहुबहुविधक्षिप्रानिस्सृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥ १६ ॥

याका अर्थ—कहे जे अवग्रहादिक, ते बहु आदि छह बहुरि छहही इनके प्रतिपक्षी तिनिसहित बारह भये, तिनिका ज्ञान होय है ॥ प्रकृत कहिये पूर्व कहे जे अवग्रहादिक ज्ञानरूपक्रियाका विशेष तिनिकी अपेक्षारूप या सूत्रविपैं षष्ठी-

विभक्तीकरि कर्मका निर्देश किया है। तहां वहु शब्द तौ यहां संख्या तथा विपुल कहिये समूहपणाका वाचक है। जातैं दोऊमैं विशेष नांही। सामान्यसंख्या तथा वहुतका ग्रहण करनां। जैसैं एक दोय बहुत ऐसैं तौ संख्या। बहुरि भात वहुत है दालि बहुत है इहां विपुलताही है संख्या न कही। बहुरि विधशब्द प्रकारवाची है, जैसैं बहुतप्रकार है। बहुरि क्षिप्रशब्दका ग्रहण कालकी अपेक्षा है। जैसैं कोई वस्तु शीघ्र परिणमै बहुरि अनिःसृत कहिये जाका समस्त पहले शरीरादिक प्रगट नीसरे न होय सो अनिःसृत है। बहुरि अनुक्त कहिये अभिप्रायहीकारि जाका ग्रहण होय काहूके कहनेकी यामैं मुख्यता नांही। बहुरि ध्रुव कहिये निरंतर जाका जैसाका तैसा ग्रहण होवो करै ताकूं कहिये। बहुरि सेतर कहिये इनिके प्रतिपक्षीकरि सहित लेणै। सो बहुतका तौ प्रतिपक्षी एक तथा अल्प। बहुविधका एकविध। क्षिप्रका अक्षिप्र। अनिःसृतका निःसृत। अनुक्तका उक्त। ध्रुवका अध्रुव। ऐसैं ये बारह भये। तिनि अवग्रहके बारहके बारह भेद भये। बहुतका अवग्रह, अल्पका अवग्रह, बहुविधका अवग्रह, एकविधका अवग्रह, क्षिप्रका अवग्रह, अक्षिप्रका अवग्रह, अनिःसृतका अवग्रह, निःसृतका अवग्रह, अनुक्तका अवग्रह, उक्तका अवग्रह, ध्रुवका अवग्रह, अध्रुवका अवग्रह, ऐसैं बारह भेदरूप अवग्रह है। ऐसैंही ईहा, अवाय, धारणा इनि तीनिकै भी बारह बारह भेद कीजिये। तब सर्व मिलै अठतालीस ४८ होय हैं॥

बहुरि ये पांच इंद्रिय एक मन इनि छहूंनिकरि होय है। तातैं छहवार अठतालीसकूं जोडिये तब दोयसे अठ्यासी भेद होय हैं। बहुरि बहु आदिक छहके नाम सूत्रमैं कहै अरु छह इनि प्रतिपक्षीकूं इतर कहे, ताका प्रयोजन यह है– जो बहु आदिक तौ मतिज्ञानावरणका क्षयोपशम बहुत होय तब होय है। तातैं ये प्रधान हैं। तातैं इनिकूं पहलै कहे। बहुरि अन्य हैं ते तिसतैं थोरे क्षयोपशमतैं होय हैं। तातैं तिनिकूं पीछै कहे। इहां कोई पूछै है; बहुविषैं अरु बहुविधविषैं कहा विशेष है? तहां कहिये बहुपणा तौ बहुविषैं भी है बहुविधविषैं भी है। परंतु एकप्रकार नानाप्रकारका विशेष है। बहुरि कोई पूछै उक्त निस्सृतविषैं कहां विशेष है? समस्त नीसऱ्या प्रकट होय ताकूं निःसृत कहिये उक्त भी ऐसाही है। तहां कहिये परके उपदेशपूर्वक ग्रहण होय सो उक्त है आपहीतैं ग्रहण होय सो निःसृत है यह विशेष है। बहुरि केई आचार्य क्षिप्र निःसृत ऐसा पाठ पढै हैं। तामैं निःसृत पहले छहमैं आवै है। ते याका ऐसैं उदाहरण कहै हैं। जैसैं श्रोत्रइंद्रियकरि पहली शब्दका अवग्रह हुवा। तहां यहु मयूरका शब्द है तथा कुरचिका शब्द है ऐसैं कोई जाणै ताकूं तौ निःसृत कहिये बहुरि अनिस्सृत यातैं अन्य शब्दमात्रही है ऐसा जाने है बहुरि कोई पूछै, ध्रुवअवग्रहविषैं अरु धारणाअवग्रहविषैं कहा विशेष है? तहां कहिये है– क्षयोपशमकी प्राप्तिके कालविषैं शुद्धपरिणामके संतान–

करि पाया जो क्षयोपशम तातैं पहले समय जैसा अवग्रह भया तैसाही द्वितीयादिक समयनिविषैं होय है कछु कम भी नाही होय अरु अधिक भी नाही होय है ताकूं तौ ध्रुवावग्रह कहिये। तथा शुद्धपरिणामका अरु संक्लेशपरिणामका मिश्रपणां मिलापतैं क्षयोपशम होय है। तातैं उपज्या जो अवग्रह सो कोई कालविषैं बहुतका होय। कोई कालविषैं अल्पका होय। कोई कालविषैं बहुविधका होय। कोई कालविषैं एकविधका होय। ऐसैं हीन अधिकपणातैं अध्रुव अवग्रह होय है। बहुरि धारणा है जो जा पदार्थकूं ग्रह्या ताकूं नाही भूलनेका कारण रूप ज्ञान है। ऐसै इनि दोऊनिका बडा अंतर है॥ ऐसै अवग्रहादिक बहु आदिक पदार्थनिका होय है सो सत्यार्थ निर्बाध प्रमाण स्याद्वादमतविषैं सिद्ध होय है। जे सर्वथा एकांतवादी हैं तिनिकै ए ज्ञानके भेद तथा पदार्थके भेद संभवै नांही॥

आगैं, जो ए अवग्रहादिक बहु आदिकके जाननेवाले हैं, तथापि बहु आदिक किसके विशेष हैं? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं—

॥ अर्थस्य ॥ १७ ॥

याका अर्थ— ए बहु आदिक बारह हैं। ते अर्थके विशेषण हैं॥ नेत्रादिक इंद्रियनिका विषय है सो तौ अर्थ है, ताके बहु आदि विशेषण हैं। इनिकरि विशिष्ट जो अर्थ कहिये वस्तु ताकै अवग्रहादिक होय है। इहां कोई पूछै है; जे बहु आदिक हैं ते अर्थ तौ हैही। फेरी सूत्र कहनेका कहा प्रयोजन? ताका उत्तर–– जो तैं पूछ्या, सो तौ सत्य है। परंतु इहां अन्यवादी कल्पना करै है तिनिका निषेधकै आर्थि 'अर्थस्य' ऐसा जुदा सूत्र कह्या है। केई वादी ऐसा मानै है, कि रूप आदि गुण हैं तेही इंद्रियनिकरि स्पर्शिये हैं। तिनिकाही अवग्रह है। द्रव्यका न हो है। सो यह कहना अयुक्त है। जातैं रूपादिक गुणनिकी तौ मूर्ति आकार नांही जो इंद्रियनिकै स्पर्श होय। यहु मूर्ति तौ द्रव्यकीही है। ताहीतैं इंद्रिय भिडै है। तव फेरि वादी कहै है, जो, ऐसैं है तौ लोक ऐसैं कहै है, जो रूप मैं देख्या, गंध मैं सूंघ्या, सो यहु कहनां न ठहरै। ताकूं कहिये, जो, पर्यायनिकूं प्राप्त होय है तथा पर्याय जाकूं प्राप्त होय ताकूं अर्थ कहिये है। सो अर्थ गुणपर्यायनिका समुदाय द्रव्यही है। ताकै इंद्रियनितैं संबंध होतैं तातैं अभिन्न जे रूपादिक गुण तिनिविषैं ऐसा व्यवहार प्रवर्तै है, जो, रूप देख्या, गंध सूंघ्या इत्यादि॥

आगैं कहै हैं, कहा ए अवग्रहादिक सर्वही इंद्रिय मनके होय हैं कि कछु विषयविशेष हैं? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं ––

॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥ १८ ॥

याका अर्थ— व्यंजन कहिये अव्यक्त जो शब्दादिक ताकै अवग्रहही होय है। ईहादिक न होय हैं ऐसा नियम है॥ तहां व्यंजन ऐसा शब्दादिका समूह अव्यक्त होय ताका अवग्रह होय। इहां कोई पूछै है यह सूत्र काहेके आर्थि कह्या? ताका उत्तर, जो, नियमकै अर्थि है। व्यंजनका अवग्रहही होय है। ईहादिक नांही होय है। ऐसा नियमकै आर्थि है। फेरि कोई कहै; जो, ऐसैं है तौ नियमका वाचक एवकारशब्द इहां चाहिये। ताकूं कहिये, जो, एवकार नांही चाहिये। जातैं जाका विधान पहली सूत्रमैं सिद्ध हुवा होय ताकूं फेरि कहनां सो यह कहनाही नियमका वाचक है। अवग्रहका विधान पहली सूत्रमैं सिद्ध हुवा। इस सूत्रमैं फेरि अवग्रहका नाम कह्या, तातैंही नियम सिद्ध भया। एवकार काहेकूं कहिये? बहुरि इहां कोई प्रश्न करै है– अवग्रहका ग्रहण अर्थमैं तथा व्यंजनमैं तुल्य हैं। इनिमैं विशेष कहा है? ताका उत्तर अर्थावग्रह व्यंजनावग्रह इनि दोऊनिमैं व्यक्त अव्यक्तका विशेष है। सोही कहिये है। जैसैं नवा मांटिका डीवाविषैं जलका कणां क्षेपिये तहां दोय तीन आदि कणाकारि सींच्या जेतैं ओला न होय तेतैं तो अव्यक्त है। बहुरि सोही डीवा फेरि फेरि सींच्या हुवा मंद मंद ओला होय तव व्यक्त है। तैसैंही श्रोत्रादि इंद्रियनिका अवग्रहविषैं ग्रहण-योग्य जे शब्दादि परिणया पुद्गलस्कंध ते दोय तीन आदि समयनिविषैं ग्रह्या हुवा जेतैं व्यक्त ग्रहण न होय तेतैं तौ व्यंजनावग्रह हो है। बहुरि फेरि फेरि तिनिका ग्रहण होय तव व्यक्त होय, तव अर्थावग्रह होय है। ऐसैं व्यक्तग्रहणतैं पहलैं तौ व्यंजनावग्रह कहिये। बहुरि व्यक्त ग्रहणकूं अर्थावग्रह कहिये। यातैं अव्यक्तग्रहणरूप जो व्यंजनावग्रह तातैं ईहादिक न होय है ऐसैं जाननां॥

आगैं, सर्वही इंद्रियनिकै व्यंजनावग्रहका प्रसंग होतैं जिनि इंद्रियनिकै व्यंजनावग्रह न संभवै, तिनिका निषेधकै आर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥ १९ ॥

याका अर्थ— नेत्र इंद्रिय अरु मन इनि दोऊनिकारि व्यंजनावग्रह न होय है। जातैं ए दोऊ अप्राप्यकारी कहिये पदार्थतैं भिडिकारि स्पर्शनकारि नांही जानै हैं दूरिहीतैं जानै हैं। जातैं अप्राप्य कहिये विना स्पर्श्या अविदिकं कहिये सन्मुख आया निकट प्राप्त हूवा बाह्य प्रकाशादिककारि प्रगट कीया ऐसा पदार्थकूं नेत्र जाणे है। बहुरि मन है सो विना

स्पर्श्या-दूर तिष्ठ्या पदार्थकूं विचारमैं ले है। यातैं इनि दोऊनिकै व्यंजनावग्रह नाही हो है। बहुरि इहां कोई पूछै है, जो, नेत्रकै अप्राप्यकारिपणां कैसैं निश्चय कीजिये? ताका उत्तर— जो, आगमतैं तथा युक्तितैं निश्चय कीजिये है। सो प्रथम तौ शास्त्रमैं कह्या है, जो, शब्द तौ स्पर्शतैं सुणिये है। बहुरि रूप है सो अस्पर्शतैं देखिये है। बहुरि गंध स्पर्श रस ये स्पर्शे तथा संधाणरूप भये जाणिये है। यहु तौ आगम है। बहुरि यहु युक्ति है जो नेत्र है ते अप्राप्यकारी है, जातैं यह स्पर्शकूं नाही जानै है। जो प्राप्यकारी होय तो स्पर्शन इंद्रियकी ज्यों स्पर्श्या जो अंजन ताका रूपकूं देख ले। सो अंजनका रूपकूं नेत्र नाही जानै है। यातैं मनकी ज्यौं नेत्र अप्राप्यकारी है ऐसा निश्चय कीजिये। तातैं नेत्र मन इनि दोऊविना अवशेष च्यारि इंद्रियनिकै व्यंजनावग्रह होय है। ऐसैं या व्यंजनावग्रहके बहु आदि बारह विषयकी अपेक्षा अठतालीस ४८ भेद होय हैं। ऐसैं अर्थावग्रहके २८८ मिलि मतिज्ञानके तीनसै छतीस ३३६ भेद होय हैं। बहुरि नेत्रके अप्राप्यकारीकी विधिनिषेधकी चरचा विशेषकारि श्लोकवार्तिकमैं है। तहांतैं जाननी ॥ कोई कहै, जैसैं नेत्र दूरतैं जानै है तैसैं शब्द भी दूरतैं सुणिये है। तातैं अप्राप्यकारी कहै है। ताकूं कहिये, ऐसैं नाही है। जातैं जिस ठिकाणतैं शब्द उपजै है तहांतैं लगाय कर्णइंद्रियके प्रदेशतांईके पुद्गल शब्दरूप होय जाय है, तब सुणिये है। ऐसैंही गंधद्रव्य जहां तिष्ठै है तहांतैं लगाय नासिका इंद्रियके प्रदेशतांईके पुद्गल गंधरूप होय जाय हैं। ते सूंघिये हैं ऐसैं कर्णइंद्रिय तथा घ्राणइंद्रिय प्राप्यकारी है। ऐसैं नेत्र नाही हैं। यहू अप्राप्यकारीही है ॥

आगैं शिष्य पूछै है, जो, मतिज्ञान तौ स्वरूपतैं तथा भेदनिसहित कह्या। ताकै लगता श्रुतज्ञान कह्या है। ताका अब लक्षण तथा भेद कहनेयोग्य है। ऐसैं पूछै आचार्य सूत्र कहे हैं—

॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥ २० ॥

याका अर्थ— श्रुतज्ञान है सो मतिज्ञानपूर्वक है। बहुरि दोय भेदरूप है। ते दोय भेद अनेक भेदरूप तथा बारह भेदरूप हैं ॥ यहां यहु श्रुतशब्द है सो सुननेकूं ग्रहणकरी निपजाया है। तो भी रूढिके वशतैं कोईके ज्ञानका विशेष है तामैं वर्तै है। भावार्थ, ज्ञानका नाम है। जैसैं कुशल ऐसा शब्द है सो कुश जो डाभ ताकूं छेदै ताकूं कुशल कहिये। ऐसैं व्युत्पत्तितैं निपजाया है। तौ भी रूढिके वशतैं प्रवीण पुरुषका नाम है तैसैं जानना। बहुरि यह ज्ञानविशेष कह्या सो कहा है? ऐसैं पूछै कहै हैं। ' श्रुतं मतिपूर्वं ' कहिये श्रुत है सो मतिपूर्वक है। ऐसैं श्रुतकै प्रमाणरूप ज्ञानपणां है। जो पूरै उत्पत्ति करै ताकूं पूर्व ऐसा कहिये। सो पूर्व ऐसा नाम निमित्तका भया जाकूं

कारण भी कहिये, बहुरि मतिके स्वरूप पहलै कह्याही था। सो मति है कारण जाकूं ताकूं मतिपूर्वक कहिये। इहां कोई कहै, जो, मतिपूर्वक श्रुत कह्या सो यहु भी मतिस्वरूपपणांकूंही प्राप्त होयगा। जातैं लोकविषैं कारणसारिखाही कार्य देखिये है। तहां कहिये हैं, जो, यहु एकांत नाही अन्यसारिखा भी होय है। जैसैं घट है सो दंड चाक आदि कारणकरि निपजै है, परंतु तिस स्वरूप नाही है। बहुरि ऐसा भी है, जो, बाह्यकारण तौ मतिज्ञानादिक विद्यमान होय अरु जाकै श्रुतज्ञानावरणकर्मका प्रवल उदय होय तौ श्रुतज्ञान होय नाही। श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशमका प्रकर्ष होय तब श्रुतज्ञान उपजै है। ऐसैं मतिज्ञान निमित्तमात्र जाननां। मतिसारिखाही श्रुतज्ञान न जाननां ॥

बहुरि इहां कोई कहै है, जो, श्रुतकूं तौ अनादिनिधन मानिये है। याकूं मतिपूर्वक कहनेतैं नित्यपणांका अभाव होय है। जातैं जाका आदि है सो अंतसहित भी होय है। बहुरि पुरुषका कियापणातैं अप्रमाण भी ठहरै है ॥ तहां आचार्य कहै हैं। यह दोष नाही है। द्रव्यादिक सामान्यकी अपेक्षा तौ श्रुत अनादिनिधन मानिये है। काहू पुरुष कोई क्षेत्रकालविषैं नवीन किया नाही। बहुरि तिनि द्रव्य क्षेत्र काल भावनिकी विशेषकी अपेक्षाकरि श्रुतका आदि भी संभवै है। तथा अंत भी संभवै है। यातैं मतिपूर्वक कहिये है। जैसैं अंकुर है सो वीजपूर्वक हो है। सोही संतानकी अपेक्षाकरि अनादिनिधन चल्या आवै है। बहुरि अपौरुषेयपणां प्रमाणका कारण नाही है। जो ऐसे होय तौ चोरि आदिका उपदेशका संतान अनादिनिधन अपौरुषेय चल्या आवै है। सो यहु भी प्रमाण ठहरै। या उपदेशका कर्ता कोईकूं यादी नाही, जो, वा पुरुषनैं चोरीका उपदेश चलाया है। बहुरि अनित्य प्रत्यक्षादि प्रमाणही है। अनित्यके प्रमाणता कहिये तौ कहा विरोध है? बहुरि कोई कहै है, प्रथम उपशमसम्यक्त्वकी उत्पत्ति होतैं ज्ञान भी सम्यक् तिसही कालमैं होय है। तातैं मतिपूर्वकपणां श्रुतकै कैसै ठहरै? ताकूं कहिये। यह कहना अयुक्त है। जातैं ज्ञानकै सम्यक्पणा सम्यक्त्वकी अपेक्षातैं भया है। ज्ञानका स्वरूपका लाभ तौ अनुक्रमतैंही है। ऐसैं मतिपूर्वकपणामैं विरोध नाही ॥

बहुरि कोई कहै है, मतिपूर्वक श्रुत है यह लक्षण तौ अव्यापक है—सर्वश्रुतज्ञानमैं व्यापै नांही। जातैं श्रुतपूर्वक श्रुत मानिये है। सोही कहिये हैं। शब्दरूप परिणया जे पुद्गलस्कंध ते अक्षर पदरूप भये। तब घट आदि शब्द कर्ण इंद्रियका विषय भया। तथा ताके रूपादिक नेत्र आदिके विषय भये, पीछे तेही पहलै श्रुतज्ञानके विषय भये। तिनिमैं कछु व्यभिचार नाही। तिनितैं कीया है संकेत जानैं ऐसा पुरुष है सो घट ऐसैं शब्दके गोचर जो घटनामा पदार्थ तातैं जलधारणादिक जे कार्य तिसरूप जो दूसरा संबंधका विशेष ताही प्राप्त हो है। तथा धूमादिक पदार्थतैं

अग्न्यादिक वस्तुकूं प्राप्त हो है। तिस काल श्रुतज्ञानतैं श्रुतज्ञानभया ऐसैं कहतै आचार्य उत्तर कहै हैं। जो, यह दोष नांही हैं। तिस श्रुतज्ञानकै भी उपचारतैं मतिपूर्वकपणांही कहिये। जातैं श्रुतज्ञानकै भी कोई ठिकाणै मतिहीका उपचार कीजिये है। जातैं मतिपूर्वकही सोही श्रुतज्ञान भया है ऐसैं जाननां। बहुरि सूत्रमैं भेदशब्द है सो जुदा जुदा कहनां दोय भेद भी है, अनेक भेद भी है बारहभेद भी है ऐसैं। तहां दोय भेद तौ अंगबाह्य अर अंगप्रविष्ट ऐसै हैं॥

बहुरि अंगबाह्य तौ अनेकभेदरूप है। तिनिके नाम दशवैकालिक उत्तराध्ययन आदिक ते चौदह प्रकीर्णक कहावै हैं; तिनिके नाम— सामायिक। चतुर्विंशति स्तव। वंदना। प्रतिक्रमण। वैनायिक। कृतिकर्म। दशवैकालिक। उत्तराध्ययन। कल्पव्यवहार। कल्पाकल्प। महाकल्प। पुंडरीक। महापुंडरीक। निषेधिका। ऐसैं चौदह हैं॥ बहुरि अंगप्रविष्टके बारह भेद हैं। ते कौन सोही कहिये हैं। १ आचार। २ सूत्रकृत। ३ स्थान। ४ समवाय। ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति। ६ ज्ञातृधर्मकथा। ७ उपासकाध्ययन। ८ अंतकृद्दश। ९ अनुत्तरोपपादिक दश। १० प्रश्नव्याकरण। ११ विपाकसूत्र। १२ दृष्टिवाद। ऐसै बारह॥ तहां दृष्टिवादके भेद परिकर्म। सूत्र। प्रथमानुयोग। पूर्वगत। चूलिका ऐसै पांच॥ तहां परिकर्मके भेद १ चंद्रप्रज्ञप्ति। २ सूर्यप्रज्ञप्ति। ३ जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति। ४ द्वीपसागरप्रज्ञप्ति। ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति बहुरि चूलिकाके पांच भेद। १ जलगता। २ स्थलगता। ३ मायागता। ४ रूपगता। ५ आकाशगता। ऐसै पांच॥ बहुरि पूर्वगतके भेद चौदह। १ उत्पाद। २ अग्रायणी। ३ वीर्यप्रवाद। ४ अस्तिनास्तिप्रवाद। ५ ज्ञानप्रवाद। ६ सत्यप्रवाद। ७ आत्मप्रवाद। ८ कर्मप्रवाद। ९ प्रत्याख्याननामधेय। १० विद्यानुवाद। ११ कल्याणनामधेय। १२ प्राणावाय। १३ क्रियाविशाल। १४ लोकबिंदुसार ऐसैं चौदह है। ऐसैं बारह अंग कहै॥ तिनिके वीस अंक प्रमाण अपुनरुक्त अक्षर हैं। तिनिके पद एकसो बारह कोडि तियालीस लाख अठावन हजार पांच है। एक पदके अक्षर सोलासे चौतीस कोडि तियासी लाख सात हजार आठसे अठ्यासी हैं। प्रकीर्णकनिके अक्षर आठ कोडि एक लाख इक्यासीसे पचहत्तरि हैं॥

अर पूर्वनिकी उत्पत्ति ऐसैं है। प्रथम पर्यायज्ञान अक्षरकै अनंतवै भाग सूक्ष्मनिगोद लब्धपर्याप्त जीवतैं लगाय बधता बधता पर्यायसमास ज्ञान हो हैं। बहुरि अक्षरज्ञान, अक्षरसमासज्ञान, पदज्ञान पदसमासज्ञान, संघातज्ञान, संघातसमासज्ञान, प्रतिपत्तिज्ञान, प्रतिपत्तिसमासज्ञान, अनुयोगज्ञान, अनुयोगसमासज्ञान, प्राभृतज्ञान, प्राभृतसमासज्ञान, प्राभृतप्राभृतज्ञान, प्राभृतप्राभृतसमासज्ञान, वस्तुज्ञान, वस्तुसमासज्ञान, पूर्वज्ञान, पूर्वसमासज्ञान ऐसैं वीस स्थानरूप पूर्वकी उत्पत्ति जाननी। बहुरि पूर्वके चौदह भेद कहे तिनिमैं एकसो पिच्याणवै वस्तु हो हैं। अर एक एक वस्तुमैं वीस वीस प्राभृत कहै हैं। ते गुणतालीससैं प्राभृत होय हैं। इनि अंग अर अंगबाह्यश्रुतके अक्षरनिकी तथा पदनिकी संख्या तथा

तिनिमैं जो जो प्रधानताकरि व्याख्यान हैं सो विशेषकरि गोमटसारमैं कह्या है । तहांतैं जाननां ॥

इहां कोई फेरि पूछै है, जो यहु श्रुतज्ञान दोय भेदरूप वारह भेदरूप है सो यहु विशेष काहेतैं भया है? तथा ताकी प्रमाणता कैसै है। ताका उत्तर यहु विशेष वक्ताके विशेपतैं हैं । वक्ता तीन प्रकार है । प्रथम तो सर्वज्ञ है तहां तीर्थंकर तथा सामान्यकेवली वहुरि श्रुतकेवली । वहुरि तिनिके पीछले सूत्रकार टीकाकारतांई भये आचार्य । तिनकूं आरातीय ऐसा नाम कहिये । तहां सर्वज्ञपरमर्षि जिनिकै छद्मस्थके चिंतवनमैं न आवै ऐसी आचिंत्य विभूतिका विशेष पाईये । तिनितैं अर्थतैं आगम कह्या । ताका प्रमाणपणां तौ प्रत्यक्षज्ञानीपणांतैं तथा निर्दोपपणातैंही है वहुरि तिनिके निकटवर्ती जे बुद्धिके अतिशय तथा ऋद्धिकरि युक्त ऐसैं गणधर श्रुतकेवली तिनिकरि रचे अंगपूर्वरूप सूत्र हैं । ताका प्रमाणपणां सर्वज्ञकी प्रमाणतातैं हैही । ते सर्वज्ञके निकटवर्तीही हैं । वहुरि आरातीय जे उनके पीछले आचार्य तिनितैं इस कालदोपतैं थोरी आयु थोरी बुद्धि, थोरे सामर्थ्यके धारी जे शिष्य तिनिके उपकारकै अर्थि दशवैकालिकादिक रचे है । ताका प्रमाणपणां अर्थतैं जो सर्वज्ञ तथा गणधरनितैं कह्या है सोही यह है ऐसै है। जैसैं क्षीरसमुद्रका जल एक घटमैं भरि ल्यावै सो क्षीरसमुद्रकाही है । तैसैं यह सर्वज्ञकी परंपरातैं अर्थ ले अपनी बुद्धिके अनुसार कह्या सो वहही है ऐसै जाननां ॥

इहां कोई पूछै, जो श्रुतशव्दकरि ज्ञानही ग्रहण किया, तौ ऐसैं वचनरूप जो द्रव्यश्रुत ताकै श्रुतपणां कैसै प्रसिद्ध है ? ताका उत्तर- जो, द्रव्यश्रुतकै श्रुतपणा उपचारतैं आवै है । जातै श्रुतशव्दका कहनांही श्रुतकै द्रव्यश्रुतपणा जनावै है । द्रव्यश्रुत है सो भावश्रुतज्ञानका निमितिकारण है । याहीके निमित्ततैं भावश्रुतज्ञानके भेद भी अंगवाह्य अंगप्रविष्ट आदि भये हैं । जो ऐसैं न होय, तौ ज्ञानका श्रुत ऐसा नाम काहेकूं है? ज्ञानका वाचकही स्पष्ट नाम कहते वहुरि अंग आदिके भेद कहनेतैं अन्यवादी च्यारि भेदरूप वेद कहै हैं । तथा पडंग वेदके कहै हैं । तथा वेदकी सहस्र शाखा कहै हैं । तिनतैं न्यारापणां प्रगट होय है । ते श्रुताभास हैं प्रमाण नांही । वहुरि श्रुत है सो परोक्षप्रमाण है । वहुरि मतिपूर्वक कहनेतै अवध्यादि निमितितैं भी न होय है । अर सर्वथा नित्यपणाका निपेध है वहुरि कोई श्रुतपूर्वक भी श्रुत हो है । तथापि सो भी मतिपूर्वकही है । जातैं जाकै पूर्ववचन आवै तव वचनके श्रवणरूप मतिज्ञान तौ अवश्य होयही । ताकै पीछै श्रुतज्ञान होय । तातैं साक्षात् तौ मतिपूर्वकही होय है । वहुरि स्मृति आदि ज्ञान भी श्रुतज्ञान नांही है । जातैं स्मृति तौ मतिज्ञानहीका विशेप है ॥

वहुरि जे मीमांसक शव्दात्मक द्रव्यश्रुत वेदकूं कहै हैं, ताकूं ज्ञानपूर्वक नाही कहै हैं । सर्वथा नित्य कहै है ।

तिनिके प्रमाणतैं विचारिये तब बहुत विरोध आवै है । जातैं वेदका उच्चार तौ ज्ञानपूर्वकही है । बहुरि कहै, जो, शब्दकी व्यक्ति ज्ञानपूर्वक है शब्द तौ नित्यही है । तहां कहिये जो शब्दकी व्यक्ति शब्दतैं भिन्न तौ नाही शब्दरूपही है ॥ बहुरि कहै हैं, जो, वचनके उच्चारकै ज्ञानपूर्वकपणां है । वचन तौ नवीन नाही नित्यही है । जातैं याका कर्ता कह्या नाही । बडे बडे ज्ञानी भये याका कर्ता तौ काहूकूं भी यादि न भया । ताकूं कहिये वेदका कर्ता वैशेषिकमतके तौ ब्रह्माके कहै है । जैमिनी कालासुरकूं कहै हैं । बौद्धमती स्वाष्टकातकूं कहै हैं । अपनी अपनी संप्रदायमैं सर्वही कर्ता कहै हैं । तातैं ऐसैं कैसैं कहिये ? जो काहूनें कर्ता कह्या नाही । जो कहै बहुतकर्ता बताये तातैं यह जानिये कि कर्ता कहना असत्यही है । ताकूं कहिये बहुत कर्ता भये अकर्ता कैसै कहिये । बहुरि अन्य आगमतैं ऐसा महान्‌पणा भी वेदकै नाही । जातैं कहिये, जो, ऐसा काहूतैं किया जाता नाही तातैं अकर्ता कहिये ॥

बहुरि कहै, जो, वेदका पढणां वेदका पढनैंपूर्वकही है । जो पहले कोई पढ्या होय तातैं पढिये है सो यह कहना भी अन्यतैं समान है । अपने अपने आगमकूं सर्वही अपने अपने आप्तकूं पढावनेवाला कहै है । बहुरि कहै आगमके अर्थकूं साक्षात् प्रत्यक्षकरि वक्ता होय है । तौ ऐसैंही कर्ता कहिये तौ कहा विरोध है ? बहुरि पढावनेवाले विना वेदका पढनां कैसे होय ? जो कहै ब्रह्मा स्वर्गविषैं आप अध्ययन करै है पीछै मनुष्यलोकमैं आय औरनिकूं पढावै है, तौ ऐसै तौ सर्वही शास्त्रके पढने पढावनेवाले कहिये । जो ऐसैंही अकृत्रिमता ठहरै तौ सर्वही शास्त्र अकृत्रिम ठहरै । बहुरि कहै जो मैं पूर्व शास्त्र पढे थे तेही अबहू पढाऊं हूं । ऐसा अनुभव तौ काहूकै दीखै नाही । तहां कहिये तत्काल हुवा बालक बच्चा माताका दूध खीचै है सो अनुभवविना कैसै खीचै है ? जो वाकै अनुभव है तौ खीचैं है, तैसेही शास्त्रका संस्कार पढने पढावनेवालेकै होय तौ कहा विरोध ? बहुरि जो अक्षर पद वाक्यनिविषैं व्युत्पत्ति काव्य रचनेवाले कवीश्वरनिकै देखिये है तैसैंही वेदकी रचनाका कर्ता कहिये तौ यामैं कहा विरोध है ? तथा ऐसैं भी सुणिये है सामगण तौ सामवेद किया बहुरि रुचिगिरा रिचा करी । तातैं वेदकै अपौरुपेयपणां कहा रह्या ? तातैं भारतादिककी ज्यौं वेद भी पदवाक्यस्वरूप है सो पौरुषेयपणाही संभवै है ॥

बहुरि वेदकै अकृत्रिमपणां प्रमाणताका कारण मानिये तौ ऐसैंही सर्वपदार्थनिकै अकृत्रिमपणां प्रमाणताका कारण क्यौं न कहिये । बहुरि निर्दोष कारणतैं उपजनां । बहुरि अपूर्वार्थपणां बाधारहितपणां प्रमाणताका कारण है । सो अनुमानादि प्रमाणविषैं समान है । तातैं निष्प्रयोजन वेदकै अपौरुषेयपणां काहेकूं कल्पिये । तातैं आगमकै प्रमाणता भी स्याद्वादमतमैं असंभव बाधकप्रमाणतैं साधी है सोही सत्यार्थ है । बहुरि कोई कहै जो शब्दपूर्वकही ज्ञान है ऐसा एकांत है । जातैं

ऐसा पदार्थही लोकविषै नांही जो नामविनां होय तथा नामविना निश्चय जाका होय । ताका उत्तर–अकलंकदेव आचार्य ऐसै कह्या है, जो नाम कहे पहली स्मृति संज्ञा चिंता अभिनिबोध भेद लिये मतिज्ञान प्रवर्ते हैं । अवशेष शब्दपूर्वक श्रुतज्ञान है । ऐसै कहनेतैं जो अन्यवादी कहै है, ज्ञानके पूर्व जो निरंतर वचनरूपपणां होय तौ ज्ञानका प्रकाश होय नांही । सो ऐसा कहनां भी निराकरण भया । वचनरूपताविनाही मतिज्ञान प्रकाशै है ।

बहुरि शब्दाद्वैतवादीकी मानि कहकारि निराकरण कीजिये है । बहुरि वह कहै, जो, वाणी च्यारि प्रकार है— वैखरी मध्यमा पश्यंती सूक्ष्मा । तहां उर कंठ आदि स्थाननिकूं भेदकारि पवन नीसऱ्या ऐसा जो वक्ताका सासोछ्वास है कारण जाकूं ऐसा अक्षररूप प्रवर्तती ताकूं तौ वैखरी कहिये । बहुरि वक्ताकी बुद्धि तौ जाका उपादान है कारण है बहुरि सासोछ्वासकूं उलंघि अनुक्रमतैं प्रवर्तती ताकूं मध्यमा कहिये । बहुरि जामै विभाग नाहीं सर्व तरह संकोच्या है क्रम जानैं ऐसी पश्यंती कहिये । बहुरि अंतर प्रकाशरूप स्वरूपज्योतीरूप नित्य ऐसी सूक्ष्मा कहिये । तिनिमैं वैखरी मध्यमा इनि दोऊविना तौ इंद्रियज्ञान प्रवर्तै है । सो तौ स्वसंवेदन हमारै इष्ट है । हम भी मानै हैं ॥

बहुरि पश्यंती तथा सूक्ष्मा विनाज्ञान नांहीं प्रवर्तै है । जातैं निश्चयात्मक व्यापारस्वरूप जो ज्ञान सो जो पश्यंती अभेदरूप वाणी ताविना कैसैं प्रवर्तै? तथा सर्वव्यापक नित्य एकरूप शाश्वती बीजरूप सर्ववाणीका कारण सर्वज्ञानविषैं प्रकाशरूप जो सूक्ष्मा वाणी ताविनां कैसैं प्रवर्तै? ऐसै शब्दाद्वैतवादी कहै हैं । ताकूं कहिये– जो, शब्दब्रह्म तौ तू निरंश मानै है, ताविषैं च्यारि अवस्था कैसै होय? जो होय तौ अंशसहित हूवा अनित्य ठहरै । अद्वैतपणां कैसै ठहरै? जो कहै अविद्यातैं च्यारि अवस्था दीखै है तौ अविद्या कोणकै है? शब्दब्रह्म तौ निरंश है ताकै अविद्या कैसै वणै? तथा निरंश शब्दकी सिद्धि कैसै प्रमाणतैं करिये? इंद्रियनिकारि तौ जाका ग्रहण नांही तथा जाका कछु एकताका लिंग नांही अर स्वसंवेदनमैं आवै नांही, अर आगमतैं भेदकी भी सिद्धि है अभेदकी सिद्धि नांही, बहुरि केवल आगमहीतैं अन्यप्रमाणविनां तत्त्वकी सिद्धि भी प्रमाणभूत नांही, बहुरि शब्दब्रह्मतैं जुदा ही आगम भी कछु है नांही, बहुरि ताके भेद अविद्यारूप बतावै तौ अविद्यातैं ताकी सिद्धि कैसै होय । इत्यादि युक्तितैं निरंशशब्दब्रह्मकी सिद्धि होती नाही । तथा ताकी च्यारि वाणीरूप अवस्था होनाही वणैं नाही । बहुरि हमारै स्याद्वादीनिकै सर्वप्रकार सिद्धि हो है ॥

वाणी द्रव्यभाव भेदतैं दोय प्रकार है । तहां द्रव्यवचन दोय प्रकार; एक द्रव्यरूप एक पर्यायरूप । तहां श्रोत्रेंद्रियकै ग्रहणमैं आवै ऐसा वचन तौ पर्यायरूप है । ताकूं वैखरी ऐसा नाम किया ॥ बहुरि भाषावर्गणारूप परिणये जे पुद्गल–स्कंध तिनिकूं द्रव्यवचन कहिये ताकूं मध्यमा ऐसा नाम किया । बहुरि भाववचन दोय प्रकार है । ताके दोय भेद ।

तहां ज्ञानावरणीयकर्मका उदयका अभावतैं भया जो आत्माकै अक्षरके ग्रहण करणेकी तथा कहनेकी शक्ति ताकूं तौ लब्धि कहिये, ताका सूक्ष्मा नाम किया । बहुरि तिस लब्धिकै अनुसारी व्यक्तिरूप भया जो अक्षरके ग्रहण करणेरूप तथा कहनेरूप द्रव्यवचनकूं कारण जो भाव ताकूं उपयोग कहिये ताका नाम पश्यंती किया । सो ए दोऊ आत्माके परिणाम हैं । शब्दरूप पुद्गल नाही; शब्दकूं निमित्त है । सो इस लब्धि तथा उपयोगकूं चिद्रूपसामान्य ग्रहणकरि अक्षररूप नाम कहनेकै पहली तौ मतिज्ञानही कहिये । सो तौ वचनपूर्वक नाही प्रवर्तै है । बहुरि वचनपूर्वक जो प्रवर्तै सो श्रुतज्ञान है सो वचनपूर्वकही कहिये । ऐसैं कहनेतैं सर्व जघन्य तौ लब्ध्याक्षरज्ञान ताके भी श्रुतज्ञानपणां सिद्ध होय है । सो स्पर्शन इंद्रियतैं भया जो मतिज्ञान तिसपूर्वक होय है । ऐसैं मतिपूर्वक श्रुत कहनेमैं विरोध नाही है ॥

बहुरि अन्यवादी उपमानप्रमाण जुदा कहै हैं । सो भी इस श्रुतप्रमाणमैंही अंतर्भूत होय है । सोही कहिये हैं । प्रसिद्ध समानधर्मपणांतैं जो साध्यवस्तुको साधिये, ताकूं उपमान कहिये । जैसैं गऊसारिखा यह गवय है । तथा वैधर्म्यतैं भी होय है, जैसैं जो महिष है सो गऊ नाही है । ऐसैं साधर्म्यवैधर्म्यकरि जो संज्ञासंज्ञिसंबंधकी प्राप्ति सो उपमानका अर्थ है । सो ऐसैं याकूं शब्दप्रमाणतैं न्यारा कहै है । तिनिकै दोय आदि संख्याका ज्ञान भी न्यारा प्रमाण ठहरैगा । तथा उपरिले नीचलेका ज्ञान तौ सोपानकेविषैं, तथा पर्वतादिविषैं थिरताका ज्ञान, अपने वंशादिविषैं महान्पणैका ज्ञान, चंद्रमासूर्यादिविषैं दूरवर्तीपणाका ज्ञान सरसूं आदिविषैं छोटापणाका ज्ञान, रुई आदिविषैं हलकापणाका ज्ञान, अपना घर आदिविषैं निकटवर्तीपणांका ज्ञान, त्रिकूटाचोकूटा आदिविषैं आकारका ज्ञान, कोईविषैं वक्रपणादिका ज्ञान, ए सर्व न्यारे प्रमाण ठहरैंगे । तब आप मानी जो प्रमाणकी संख्या ताका विघटन होगा । तातैं जो संज्ञासंज्ञिसंबंधतैं पदार्थका ज्ञान होय है सो सर्व आप्तके उपदेशपूर्वक है । तातैं आगमप्रमाणमैं अंतर्भूत होय है । ऐसैंही अन्य भी उदाहरण हैं ॥

जैसैं सिंहासनपरि बैठा होय सो राजा होय । सुवर्णके सिंहासनपरि बैठी पट्टराणी होय । इस तरफ बैठा होय सो मंत्री होय । यहु यातैं पूर्वदिसाकी तरफ है । यह यातैं दक्षिणदिसाकी तरफ है । यहु यातैं उत्तरदिसाकी तरफ है । याका यहु नाम है इत्यादि वाक्य पूर्वैं सुणे थे । ताका संस्कार फेरि इनको देखे तब राजादिकका ज्ञान होय । बहुरि षण्मुख स्वामिकार्तिकेय है, ब्रह्मा चतुर्मुख है । ऊंची नासिकावाला सुखदेव है । दूधजलकूं न्यारा करनेवाला जाकै चूंच है सो हंस है । सप्तपत्रवाला अशोकवृक्ष है ऐसैं वाक्यनितैं यथार्थकी प्राप्ति सो भी आगम है । तथा रूपकादि अलंकारनितैं

ज्ञान होना सो भी आगमप्रमाण है । ऐसैंही उपमानप्रमाण भी आगमप्रमाणही है । बहुरि पूर्वै जाकूं देख्या था तथा बहुरि फेरि देख्या; तब जाणी "यहु पूर्वै देख्या सोही है ऐसा जानै" ताकूं प्रतिभा कहिये सो प्रत्यभिज्ञान है, सो मतिज्ञानही है । याकै पूर्वै शब्द लगाये तब आगमप्रमाण है । बहुरि संभव अभाव अर्थापत्ति अनुमान ए सर्वही नाम-पूर्वक तौ आगमप्रमाण है । विनां नाम मतिज्ञानरूप प्रमाण है । ऐसैं मतिज्ञान श्रुतज्ञान ए दोऊ पूर्वै सूत्रमैं परोक्ष-प्रमाण कहे ते जानने ॥

आगैं प्रत्यक्षप्रमाण कहनेयोग्य है । सो दोय प्रकार है, देशप्रत्यक्ष सकलप्रत्यक्ष । तहां देशप्रत्यक्ष अवधि मनःपर्यय ज्ञान है । सर्वप्रत्यक्ष केवलज्ञान है । तहां पूछै है जो ऐसैं है तौ प्रथमही अवधिज्ञान तीन प्रकारके प्रत्यक्षविषैं आदि है सो कहिये? ऐसैं पूछै कहै हैं— अवधि दोय प्रकार है एक भवप्रत्यय दूसरा क्षयोपशमनिमित्तक । तहां भवप्रत्ययकूं कहै हैं—

॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥ २१ ॥

याका अर्थ— भवप्रत्यय अवधि है सो देवनारकीनिकै होय है ॥ तहां पूछै हैं— भव कहा? तहां उत्तर— आयु नामकर्मका उदयका है निमित्त जाकूं ऐसा आत्माका पर्याय सो भव कहिये बहुरि प्रत्यय नाम कारणका है । सो भव है कारण ताकूं ताहि भवप्रत्यय कहिये । ऐसा अवधिज्ञान देवनारकी जीवनिकै होय है । इहां कोई पूछै है जो, ऐसैं है तौ क्षयोपशमनिमित्तपणां तिनकै न ठहऱ्या । आचार्य कहै है । ऐसा दोष इहां नांही आवै है । जातैं भवके आश्रयतैं इनिकै क्षयोपशम होय है । तातैं प्रधानकारण है ऐसा उपदेश है । जैसैं पक्षीनिकैं गमन आकाशविषैं होय है तहां भवही प्रधान निमित्त है किसिका सिखाया नांही है । तैसैं देवनारकीनिकै व्रतनियमतपश्चरणके अभाव होतैं भी होय है, यातैं भवप्रत्यय कहिये है । बहुरि भवप्रत्यय देवनारकीकैही है अन्यकै नांही ऐसा नियम जानना । जो ऐसैं न होय तौ भव तौ सर्वजीवनिकैं साधारण है । तब सर्वहीकै याकी प्राप्ति आवै । बहुरि अवधिकी हीनाधिकप्रवृत्ति भी देखिये है । तातैं यहु क्षयोपशमका विशेष है । बहुरि देवनारकी सर्वहीकै अवधि नांही कहिये । सम्यग्दृष्टिनि-हीकै अवधिज्ञान कहिये । जातैं अवधि ऐसा सूत्रमैं ग्रहण है तातैं मिथ्यादृष्टीनिकै विभंगअवधि कहिये । बहुरि इनिकै हीनाधिक अवधिका व्याख्यान अन्यशास्त्रनितैं जानना ॥

आगैं दूसरा भेदकूं कहै हैं—

॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥

याका अर्थ– क्षयोपशम है निमित्त जाकूं ऐसा छह भेदरूप अवधि है सो शेष जे मनुष्य तिर्यंच तिनिकै होय है॥ तहां अवधिज्ञानावरणकर्मके देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय होतैं बहुरि सर्वघातिस्पर्धकनिका उदय अभाव है लक्षण जाका ऐसा क्षय, बहुरि तेही सर्वघातिस्पर्धक उदयकूं न प्राप्त भये सत्ता अवस्थारूप उपशम है निमित्त जाकूं सो क्षयोपशम–निमित्त अवधि कहिये। सो शेष जे देवनारकीतैं अवशेष रहै मनुष्य तिर्यंच तिनिकै होय है। तिनिमैं भी जिनकै अवधियोग्य सामर्थ्य होय तिनहीकै होय है। जे असैनी तिर्यंच तथा अपर्याप्तक मनुष्य तिर्यंच इस सामर्थ्यतैं रहित होय, तिनिकै न होय है। बहुरि संज्ञी पर्याप्तविषैं भी सर्वहीकै न होय है केई सम्यग्दर्शनादि निमित्तकरि सहित होय। तथा जिनिकै कर्मका उपशम क्षय होय तिनहीकै होय है। इहां कोई पूछै, क्षयोपशमविनां तौ अवधि होय नांही, सूत्रमैं क्षयोपशमशब्द ग्रहणका कहा प्रयोजन है? ताकूं कहिये इहां क्षयोपशमका ग्रहण नियमकै अर्थि है। इहां क्षयोप–शमही निमित्त है भव नांही है॥

सो यह अवधि छह भेदरूप है। अनुगामी, अननुगामी, वर्धमान, हीयमान, अवस्थित, अनवस्थित ऐसै छह भेद हैं। तहां भवांतरकूं गमन करता जो जीव ताकी लारही अन्यभवमैं साथि सूर्यके प्रकाशकी ज्यों चल्या जाय सो तौ अनुगामी कहिये। बहुरि जो भवांतरमैं साथि न जाय जिस भवमैं उपजै तिसहीमैं रहजाय, जैसैं पूठि पीछै प्रश्न करने–वाला पुरुषका वचन परके हृदयमैं प्रवेश न करै तैसैं यहु अवधि जाननां सो अननुगामी कहिये। बहुरि जो सम्य–ग्दर्शनादिगुणरूप विशुद्धपरिणामनिकी वृद्धि होनेतैं जिस परिणामकूं लिये उपज्या तातैं वधताही जाय असंख्यातलोकपरि–माणस्थानकनितांई वधै जैसैं बांसनिकै परस्पर भिडनेतैं उपज्या जो अग्नि सो सूके पत्रादिक संचयरूप भया जो इंधनका समूह तापरि पड्या हूवा वधताही जाय तैसैं यह अवधि वर्धमान कहिये। बहुरि जो सम्यग्दर्शनादिगुणकी हानिरूप जो संक्लेशपरिणाम तिनिकी वृद्धीके योगतैं जिस परिमाणकूं लीये उपज्या होय तातैं घटताही जाय अंगुलकै असंख्यातवै भागमात्र स्थानकनितांई घटै जैसैं परिमाणरूप है उपादानका संतान जाका ऐसा जो अग्नि ताकी शिखा घटतीही जाय तैसैं यह अवधि हीयमान जाननां। बहुरि जो सम्यग्दर्शनादिगुणका अवस्थानतैं जिस परिणामकूं लीये उपज्या तेताही रहै पर्यायके अंततांई तथा केवलज्ञान उपजै तहांतांई घटै वधै नांही, जैसैं पुरुषके कोई तिला आदिका चिन्ह जैसा है तैसाका तैसाही रहै, तैसैं यह अवधि अवस्थित जाननां। बहुरि जो सम्यग्दर्शनादि गुणके घटने वधनेके योगतैं जितने

परिमाणकूं लीये उपजै तातैं वधै भी घटै भी जैसैं पवनके वेगकरि प्रेर्या जलका लहरी घटै वधै, तैसैं यह अवधि अनवस्थित कहिये । ऐसैं यह अवधि छह प्रकार हो है ॥

वहुरि श्लोकवार्तिकमैं याका ऐसा व्याख्यान है– जो अवधिज्ञानावरण क्षयोपशम तौ अंतरंग कारण है । सो दोऊ प्रकारकी अवधिमैं पाईये है। याविना तौ अवधिज्ञान उपजैही नांही। तातैं यहां वाह्यनिमित्तकी अपेक्षा कथन कीजिये। तव भवप्रत्ययकूं तौ प्रधानकारण भवही है । वहुरि यहू क्षयोपशमनिमित्तक कह्या ताकूं गुणप्रत्यय भी कहिये। तहां क्षयोपशमशब्दकरि चारित्रमोहके क्षयतैं भया जो क्षायिकचारित्र वहुरि चारित्रमोहके उपशमतैं भया उपशमचारित्र, वहुरि दोऊतै भया क्षयोपशमचारित्र यामैं संयमासंयम भी आय गया । ऐसै तीन प्रकार चारित्र नामा गुण जो वाह्यनिमित्त तातै उपजै सो क्षयोपशमनिमित्तक कहिये । ऐसा व्याख्यान है । वहुरि आगमविषैं सप्रतिपात अप्रतिपात तथा देशावधि परमावधि सर्वावधि ए सर्व अनुगामी आदि छह भेद कहे तिनमैं अंतर्भूत जानने ॥ तहां देशावधि तौ अनुगामी भी वहुरि अननुगामी भी है । वहुरि परमावधि सर्वावधि केवलज्ञान उपजै तहातांई अनुगामीही है । वहुरि देशावधि तौ वर्धमान भी है हीयमान भी है । वहुरि परमावधि वर्धमानही है । वहुरि देशावधि तौ अनवस्थितही है । या प्रकार अवधिज्ञान तौ कह्या ॥

वहुरि ताके लगताही मनःपर्ययज्ञान कहनेयोग्य है, ताके भेदसहित लक्षणका कहनेका इच्छक आचार्य सूत्र कहै हैं--

॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— ऋजुमति तथा विपुलमति ऐसै दोय भेदरूप मनःपर्ययज्ञान है ॥ ऋज्वी कहिये सरल तथा वचन काय मनकरि कीया अरु परके मनविषैं प्राप्त भया ऐसा जो पदार्थ ताके जाननेतैं निपजाई जो मति कहिये ज्ञान जाकै होय, ताकूं ऋजुमति कहिये । वहुरि विपुला कहिये वक्र तथा वचन काय मनकरि कीया अरु परके मनविषैं प्राप्त भया जो पदार्थ ताकरि नाही निपजाई स्वयमेवही भई ऐसी जो मति कहिये ज्ञान जाकै होय, ताकूं विपुलमति कहिये । याका समासकरि ऋजुविपुलमती ऐसा द्विवचन किया है ॥ तहां मतिशब्द एकहीकरि अर्थ आय गया । तातैं दूसरा मतिशब्द न कह्या । अथवा ऐसा भी समास होय है ऋजु वहुरि विपुल ए दोऊही मति है । तातैं दोऊही जहां होय ते दोऊही ऋजुविपुलमती है । ऐसैं कहनेतैं यहु मनःपर्ययज्ञान दोय प्रकार भया ऋजुमति

विपुलमति ऐसैं । अब याका लक्षण कहै हैं ॥

वीर्यांतराय मनःपर्ययज्ञानावरणकर्मका तौ क्षयोपशम बहुरि अंगोपांगनामा नामकर्मका उदयका लाभके अवलंबनतैं आत्माकै परके मनके संबंधकी पाई है प्रवृत्ति जानैं ऐसा जो ज्ञानोपयोग ताकूं मनःपर्ययज्ञान कहिये । इहां कोई कहै, मनके संबंधकरि भया तातैं यामैं मतिज्ञानका प्रसंग आवै है । तहां कहिये, याका उत्तर तौ पूर्वैं सामान्यज्ञानके सूत्रके व्याख्यानमैं कह्या था, इहां मनकी अपेक्षामात्र है उत्पत्तिकारण नाही । परके मनविषैं तिष्ठता पदार्थकूं यहू जानै है एतावन्मात्र अपेक्षा है । तहां ऋजुमतिज्ञान है सो कालतैं जघन्य तौ आपके तथा अन्यके दोय तथा तीन भवका ग्रहणकूं कहै । बहुरि उत्कृष्ट सात आठ भव कहै पहले भी अरु अगले भी । बहुरि क्षेत्रतैं जघन्य तौ च्यारितैं ले आठ कोशतांईकी कहै । उत्कृष्ट च्यारि योजनतैं ले आठ योजनतांईकी कहै । बाह्यकी नाही कहै । बहुरि विपुलमतिज्ञान है सो कालतैं जघन्य तौ सात आठ भव अगिले पिछलेका ग्रहण कहै । उत्कृष्ट असंख्यात भव अगिले पिछलेका ग्रहण कहै । बहुरि क्षेत्रतैं जघन्य तौ च्यारितैं ले आठ योजनतांईकी कहै । उत्कृष्ट मानुपोत्तरपर्वतकै माहिली कहै वारली न कहै ॥

ऐसैं कहे जे मनःपर्ययज्ञानके दोय भेद तिनिविषैं विशेषकी प्राप्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं —

॥ विशुध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥ २४ ॥

याका अर्थ— दोऊ मनःपर्ययज्ञानके विषैं विशुद्धि अरु अप्रतिपात इनि दोय विशेषनिकरि विशेष है । अपने आवरण जो कर्म ताके क्षयोपशम होतैं आत्माकै विशुद्धता उज्वलता होय ताकूं विशुद्धि कहिये । संयमतैं छूटनेकूं प्रतिपात कहिये, जो प्रतिपात नाही ताकूं अप्रतिपात कहिये । उपशांतमोहवाले जीवकै चारित्रमोहका उदय होतैं संयमरूप शिखरतैं प्रतिपात हो है उलटा आय पडै है । बहुरि क्षीणकपायवालेकै पडनेका कारण नांही । तातैं उलटा न आवै है अप्रतिपात हो है । इनि दोऊनिकरि ऋजुमति विपुलमति मनःपर्ययज्ञानमैं भेद है । तहां विशुद्धिकरि तौ ऋजुमतितैं विपुलमतिज्ञान द्रव्यक्षेत्र काल भावके विशेष जाननेकरि अतिशयकरि विशुद्ध है जो कार्माणद्रव्यकै अनंतवै भाग अंतका भाग सर्वावधिज्ञान जानै है । ताकूं अनंतका भाग देतैं अंतका भाग ऋजुमति मनःपर्ययज्ञानका विषय है । ताकूं अनंतभागरूप किये अनंतका भागकूं विपुलमतिज्ञान जानै है । इहां अनंतकी गणतिका अनंतभेद है । तातैं फेरि फेरि अनंतका भाग कह्या है । ऐसैं द्रव्यकी अपेक्षा विशुद्धि कही । क्षेत्रकालकी पूर्वैं कहीही थी । बहुरि भावकी अपेक्षा विशुद्धि अतिसूक्ष्म द्रव्यके जाननेहीतैं जाननी । प्रकृष्ट क्षयोपशमके योगतैं विशुद्धि घणी होय है । बहुरि अप्रतिपात करिकै भी

विपुलमति विशिष्ट जाननां । जातैं जाकै विपुलमति होय ताकै चारित्र वर्धमानही होय है । तातैं उलटा न आवै । बहुरि ऋजुमति ज्ञानवाला कषायका उदयतैं हीयमानचारित्र भी होय है तातैं उलट भी आवै, तातैं प्रतिपाती भी होय है ॥

आगैं, इस मनःपर्ययज्ञानका विशेष कह्या अवधि मनःपर्ययमैं काहेतैं विशेष है सो कहौ ? ऐसैं प्रश्न होतैं सूत्र कहै है —

॥ विशुद्धि क्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— अवधिज्ञान बहुरि मनःपर्ययज्ञान इनि दोऊनिमैं विशुद्धि कहिये उज्वलता, बहुरि क्षेत्र जहां तिष्ठते भावनिकूं जानैं, बहुरि स्वामी जाकै यहू ज्ञान होय सो आत्मा, बहुरि विषय ज्ञेय वस्तु इनि च्यारिके भेदतैं भेदविशेष है । सोही कहिये हैं । मनःपर्ययज्ञानका विषय सूक्ष्म है, तातैं तौ अवधितैं अतिशयकरि विशुद्ध है उज्वल है । बहुरि क्षेत्र पहली कह्याही था । सो अवधिका क्षेत्र तौ घणां है याका थोरा है । बहुरि स्वामी मनःपर्ययज्ञानका तौ प्रमत्तगुणस्थानतैं ले क्षीणकषायगुणस्थानतांई संयमीही होय है । तामैं भी उत्तमचारित्रवालाही होय । तामैं भी वर्धमानचारित्रवालाही होय है । तामैं भी सप्तविध ऋद्धिमैंसूं कोई ऋद्धिधारी होय ताहीकै होय है । अन्यकै नाही होय । बहुरि तिनिमैं भी कोईकै होय है सर्वही ऋद्धिधारीनिकै न होय है । बहुरि अवधि है सो च्यारीही गतिके जीवनिकै होय है । ऐसैं स्वामीके भेदतैं इनिमैं भेद है । बहुरि विषयकी अपेक्षा भेद है सो आगैं कहसी ॥

आगैं केवलज्ञानका लक्षण कहनेका अवसर है । ताकूं छोडि ज्ञाननिका विषयका नियम विचारिये है। काहेतै ? जातैं केवलज्ञानका स्वरूप दशम अध्यायमैं " मोहक्षयात् " इत्यादि सूत्र कहसी । जो ऐसैं है तौ आधके मति श्रुत दोय ज्ञान तिनिका विषयनियम कहा ? ऐसैं प्रश्न होतैं सूत्र कहै है—

॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥ २६ ॥

याका अर्थ— मति श्रुत इनि दोऊ ज्ञाननिका विषयका नियम द्रव्यनिकैविषैं केईक पर्यायविषैं है, सर्वपर्यायविषै नाही है ॥ तहां निबंध कहिये विषयका नियम । इहां कोई कहै विषयका कैसैं जान्या ? विषयशब्द तौ सूत्रमैं नाही ॥ ताकूं कहिये— विषयशब्द पहले सूत्रमैं कह्या है सो लेना, ताकै विभक्ति भी लगाय लेणी । बहुरि द्रव्येषु ऐसा बहुवचनतैं सर्वद्रव्य जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल ग्रहण करने । तिनके असर्वपर्याय कहिये केईक पर्याय लेने । ऐसैं

केईक पर्यायनिसहित सर्वद्रव्य मतिश्रुतज्ञानके विषयभावकूं प्राप्त हो हैं। सर्वपर्यायनिसहित इनिका विषय नाही है जातैं ते पर्याय अनंत हैं। इहां कोई कहै, धर्मास्तिकायादिक जे अतींद्रिय हैं ते इंद्रियज्ञान जो मतिज्ञान ताके विषय कैसैं होय? यातैं सर्वद्रव्यनिविषैं मतिज्ञान प्रवर्तै यह कहना अयुक्त है। ताकूं कहिये— ए दोष इहां नाही आवै। जातैं अनिंद्रिय कहिये मन नामा अंतरंग कारण है, तातैं नोइंद्रियज्ञानावरणकर्मके क्षयोपशमकी लब्धिपूर्वक उपयोग अवग्रहादि-रूप पहली प्रवर्तै है। तातैं तत्पूर्वक श्रुतज्ञान सर्वद्रव्यनिविषैं स्वयोग्यविषैं प्रवर्तै है ऐसैं जाननां॥ इहां कोई अन्य-वादी कहै, जो मतिज्ञान श्रुतज्ञान तौ स्वप्नवत् है। बाह्यपदार्थकूं अवलंबीकारि नाही उपजै है। जैसैं स्वप्नका कोई बाह्यपदार्थ सत्यार्थ नाही तैसैं यह भी है। ताकूं कहिये, यह कहनां अयुक्त है। जातैं ऐसैं कहतैं सर्वशून्यता ठहरै है प्रथम तौ आपकै पहला दूसरा आत्मा बाह्यार्थ है सो मतिश्रुतज्ञान ताकूं ग्रहण करै है। जो ताका अभाव मानिये तौ पहलाकै आप बाह्यार्थ है सो आपका भी अभाव भया। ऐसै दोऊके भावतैं सर्वशून्यता आई। बहुरि जो पहला आत्मा सत्यार्थ है तौ घटादिक पदार्थ भी सत्यार्थ कैसै न होय? इहां फेरि कोई वादी कहै, इंद्रियज्ञान तौ बाह्यपदा-र्थकूं अवलंबै है बहुरि स्मरणादिक तौ निरालंबन है। ताकूं कहिये— अनुभवपूर्वक स्मरणादि प्रवर्तैं है, तातैं निरालंबन नांही। बहुरि श्रुतज्ञान है सो भी अर्थालंबनस्वरूप है। जातैं श्रुतज्ञानतैं वस्तुकूं जाणि जो तिस वस्तुविषैं प्रवर्तै है तहां बाधा नांही है। जो श्रुतज्ञानगोचर वस्तुविषैं बाधा नांही सो तौ श्रुतज्ञान वस्तुके आलंबनस्वरूप सत्यार्थ है। बहुरि जहां बाधा होय, सो वह श्रुतज्ञान नांही श्रुताभास है॥

आगैं मतिश्रुतकै लगताही कहनेयोग्य जो अवधिज्ञान ताका विषयका नियम कहा है? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं—

॥ रूपिष्ववधेः ॥ २७ ॥

याका अर्थ— अवधिज्ञानका विषयका नियम रूपीपदार्थनिविषैं है॥ इहां सूत्रविषैं विषयनिबंधशब्दकी अनुवृत्ति पहले सूत्रनितैं लेणी। बहुरि रूपी कहनेतैं पुद्गलद्रव्य ग्रहण करनां तथा पुद्गलद्रव्यके संबंधसहित जीवद्रव्य लेने। बहुरि रूपीविषैंही विषयनिबंध है ऐसा नियम करनेतैं अरूपीद्रव्य न लेणै याके विषय नांही। बहुरि रूपीद्रव्यविषैं भी केईक पर्याय अपनेयोग्य हैं तेही विषय हैं। सर्वपर्याय याका विषय नांही॥

आगैं याकै लगताही कहनेयोग्य जो मनःपर्ययज्ञान ताका कहा विषयनियम है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥ २८ ॥

याका अर्थ— सर्वावधिका विषयकूं अनंतका भाग देतैं पाया जो सूक्ष्मपुद्गलस्कंध ताविषैं या मनःपर्ययज्ञानका विषयका नियम है ॥ जो रूपी द्रव्य सर्वावधिज्ञानका विषय कह्या ताकूं अनंतभागरूप किया तिस एक भागविषैं या मनःपर्ययज्ञान प्रवर्तै है। इहां ऐसा जाननां, जो, परमावधिका विषयभूत पुद्गलस्कंधकूं अनंतका भाग दीये तो एक परमाणुमात्र सर्वावधिका विषय होय है। बहुरि ताकूं अनंतका भाग दीये ऋजुमति मनःपर्ययका विषय है। बहुरि ताकूं भी अनंतभाग दीये विपुलमति मनःपर्ययका विषय है। इहां कोई पूछै सर्वावधिका विषय तौ एक परमाणुमात्र कह्या ताकूं अनंतका भाग देना कह्या सो एकपरमाणूकूं कैसैं भाग देना? तहा ऐसा उत्तर—जो, एकपरमाणूमैं स्पर्श रस गंध वर्णके अनंतानंत अविभागप्रतिच्छेद हैं, तिनिके घटने वधनेकी अपेक्षा अनंतका भाग संभवै है। जैसा परमाणु अवधिज्ञान जान्या तिसके अनंतवै भागकूं मनःपर्ययज्ञान जानै है तथा एकपरमाणुमात्रस्कंध भी होय है। ताविषैं सूक्ष्मभाव परिणये अनंतपरमाणु होय हैं। तिस अपेक्षा भी अनंतका भाग संभवै है। तहा स्वयोग्य केईक पर्यायरूप पुद्गलस्कंध लेना सर्वद्रव्यपर्यायका भी विषय नांही॥

आगैं, अंतविषैं कह्या जो केवलज्ञान ताका कहा विषयनियम है? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै है—

॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥

याका अर्थ— केवलज्ञानका विषयका नियम सर्व द्रव्य सर्वपर्यायनिविषैं है ॥ इहां द्रव्य तथा पर्याय ऐसैं इतरेतरयोग नामा द्वंद्वसमासतैं वृत्ति करणी। तहां सर्वपद दोऊकै लगावणां। तव सर्व द्रव्य तथा सर्वपर्यायनिविषैं विषय नियम है ऐसा अर्थ भया ॥ तहां जीवद्रव्य तौ अनंतानंत है। बहुरि पुद्गलद्रव्य अणुस्कंधका भेदकरी जीवद्रव्यतैं अनंतानंतगुणे है। धर्म अधर्म आकाश ए तीन एक एक द्रव्य है। तातैं तीनही है। बहुरि कालद्रव्यके कालाणु असंख्यातद्रव्य हैं। तिनि सर्व द्रव्यनिके पर्याय अतीत अनागत वर्तमानरूप जुदे जुदे अनंतानंत है। तिनि सर्वद्रव्य सर्वपर्यायनिके समूहविषैं ऐसा कछु भी नाही है, जो, केवलज्ञानके विषयपणाकूं उलंघै। जातैं यहु ज्ञान अपरिमित माहात्म्यरूप है। ऐसा जनावनेकूं सर्वद्रव्यपर्यायविषयस्वरूप केवलज्ञान है ऐसा कह्या है। इहां यहु विशेष अर्थ जाननां, जो कोई अन्यवादी कहै है सर्वज्ञ पुरुष आत्माहीकूं जानै है इस सिवाय पदार्थ कोई नांही। ऐसैं कहनेवालेका निषेधकै अर्थि सर्वकूं जानै है ऐसा कह्या है।

बहुरि द्रव्यके बहुवचन कहनेतैं बहुतद्रव्यनिकी सिद्धि भई। बहुरि पर्यायशब्दकै बहुवचन कहनेतैं केई वादी वर्तमान पर्यायके ज्ञानीहीकूं सर्वज्ञ कहै है। ताका निषेध है। बहुरि जो सर्वद्रव्यका ज्ञाता न होय तौ सर्वके उपकाररूप उपदेश कैसैं प्रवर्तै? जातैं धर्मअधर्मका स्वरूप अतिसूक्ष्म है। सो सर्वका ज्ञाताविना यथार्थ धर्मअधर्मका स्वरूप कैसैं जानै। बहुरि ज्ञान जीवनिविषैं हीनाधिक दीखै है। सो याहीतैं जानिये है कोई जीवविषै उत्कृष्ट अधिकतारूप भी है ऐसैं अनुमानमैं केवलज्ञानका अस्तित्व सिद्ध होय है। ऐसा ज्ञान इंद्रियादिकके सहायविना सर्वद्रव्यपर्यायनिकूं एककाल जानैं है। ऐसा निर्बाध सिद्ध होय है। ताहीकैं वीतरागपणां निर्दोषपणां संभवै है। बहुरि तिसहीतैं हेय उपादेय पदार्थका यथार्थ उपदेश प्रवर्तै है ऐसा निश्चय करनां॥

आगैं पूछै है, मत्यादिज्ञानका विषयनियम तौ वर्णन किया परंतु यह न जान्यां, जो एक आत्मविषैं एककाल अपने अपने निमित्तके निकट होतैं प्रवर्तते जे ज्ञान ते केते होय हैं? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै है—

॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥ ३० ॥

याका अर्थ—एक आत्माविषैं एककाल एक तथा दोय तथा तीन तथा च्यारि ऐसैं भाज्य रूप च्यारितांई होय है॥ इहां एकशब्द संख्यावाची है। बहुरि आदिशब्द है सो अवयववाची है एक है आदि जिनकै ते एकादीनि ऐसा समास है। भाज्यानि कहिये भेदरूप करने। युगपत् कहिये एककालविषैं। एकस्मिन् कहिये एक आत्माविषैं। आ चतुर्भ्यः कहिये च्यारितांई होय है। तहां एक होय तौ केवलज्ञानही होय, याकी साथ अन्य क्षायोपशमिक ज्ञान होय नांही। दोय होय तौ मतिश्रुतज्ञान होय। तीन होय तौ मतिश्रुतअवधि होय अथवा मतिश्रुतमनःपर्ययज्ञान होय। च्यारि होय तौ मति श्रुत अवधि मनःपर्यय च्यार्योंही होय। पांच एककाल न होय। जातैं केवलज्ञान क्षायिक असहायरूप है॥ इहां प्रश्न, जो क्षायोपशमिकज्ञान तौ एककाल एकही प्रवर्तता कह्या है। इहां च्यारी कैसैं कहे? ताका उत्तर; जो, ज्ञानावरणकर्मका क्षयोपशम होतैं च्यारी ज्ञानकी जाननशक्तिरूप लब्धि एककाल होय है। बहुरि उपयोग इनिका एककाल एकही होय है। ताकी एक ज्ञेयतैं उपयुक्त होनेकी अपेक्षा स्थिति भी अंतर्मुहूर्तकी कही है। पीछै ज्ञेयांतर उपयुक्त होय जाय है क्षयोपशम जिनिका होय है ते लब्धिरूप एककालही है। इहां कोई कहै उपयोगकी अपेक्षा भी सांकलीके भक्षण करतैं रूपादिक पांचका ज्ञान एककालही दीखै है वर्ण सांकलीका दीखै है, स्वादु लेही है। गंध वाका आवैही है स्पर्श भी सचीकणा आदि जानैही है। भक्षण करतैं शब्द होय है। सो सुणैंही है। ऐसैं पांचका ज्ञान एककाल

भी देखिये है । ताकूं कहिये, जो, इहां उपयोगका फिरणकी शीघ्रता होतैं कालभेद न जान्या जाय है । जैसैं कमलका पत्र दोय च्यारिमैं सूईका प्रवेश होतैं कालभेद जान्या न जाय अरु कालभेद हैही । तैसैं इहां भी जाननां ॥

आगैं, कहे जे ज्ञान ते ज्ञानही नाम पावै हैं कि अन्यथा भी हैं? ऐसैं प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं-

॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥ ३१ ॥

याका अर्थ- मति श्रुत अवधि ए तीन ज्ञान हैं ते विपर्ययस्वरूप भी हो हैं । चकारतैं सम्यक् भी हैं ॥ विपर्यय कहिये मिथ्या, जातैं इहां सम्यक्का अधिकार है । वहुरि चशब्द समुच्चयार्थ है विपर्यय भी है, सम्यक् भी है ऐसैं भेले कहे है । इहां कोई पूछै है, इनिकै विपर्यय काहेतैं होय है? ताकूं कहै हैं- मिथ्यादर्शनके उदयकरि सहित एक आत्माविषैं समवायरूप एकता होय है, तातैं विपर्यय कहिये । जैसैं कडा तूंवा गिरिसहित होय तामैं दूध क्षेपिये तौ वह दूध भी कडा हो जाय । तैसैं मिथ्यादर्शनके उदयकरि सहित ज्ञान भी मिथ्या होय है । इहां विशेष जाननां- जो विपर्यय कहनेतैं मिथ्याज्ञान कह्या है सो संशय विपर्यय अनध्यवसाय भी लेना । तथा चशब्दतैं भी इनिका समुच्चय हो है । तहां मतिश्रुतज्ञानकै तौ तीनूंही होय है । जातैं संशय इंद्रियमनतैंही उपजै है । यह स्थाणु है कि पुरुष है ऐसा याका स्वरूप है । सो यहु सामान्य देखै ताका विशेष न देखै तातैं तथा दोय विषयके स्मरणतैं हो है वहुरि अवधिकी उत्पत्तिविषैं इंद्रियमनका व्यापार है नाही, तातैं सो संशयस्वरूप नाही है । वहुरि दृढ उपयोगकी अवस्थाविषैं याकै विपर्यय कहिये है । सो मिथ्यात्वश्रद्धानका सहभावपनातैं है । तथा शीघ्र उपयोग संकोचनतैं कदाकाल अनध्यवसायस्वरूप भी हो है । ऐसैं याकै दोयही होय है संशय नाही । इहां कोई प्रश्न करै है, जो कटुक तूंवाविषैं तौ आधारके दोषतैं दूध कटुक हो है ज्ञानविषैं तौ विषयका ग्रहण सम्यङ्मिथ्याविषैं समान हो है । जैसैं मिथ्यादृष्टि नेत्रादि मतिज्ञानकरि रूपादिककूं देखै है तैसैंही सम्यग्दृष्टि भी देखै है वहुरि जैसैं सम्यग्दृष्टि श्रुतज्ञानकरि रूपादिककूं जानै है पैलेनकूं कहै है तैसैही मिथ्यादृष्टि भी कुश्रुतज्ञानकरि जानै है । तथा अन्यकूं कहै है । वहुरि अवधिज्ञानकरि सम्यग्दृष्टि जैसैं रूपीपदार्थनिकूं जानै है तैसैही मिथ्यादृष्टि विभंगज्ञानकरि भी जानै है । याका उत्तरके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— मिथ्यादृष्टिकै विपर्यय होय है सो सत्का तथा असत्का विशेष न जाननेतैं अपनी इच्छातैं जैसैं

तैसैं ग्रहण करनेतैं होय है । जैसैं मदिरादिकतैं उन्मत्त भया पुरुष अपनी इच्छातैं जैसैं तैसैं वस्तुकों ग्रहण करै तैसैं मिथ्यादृष्टि भी छती अणछती भली बुरीका विशेष जान्यां विना अपनी इच्छातैं ग्रहण करै है ॥ इहां सत् ऐसा तौ विद्यामानवस्तुकूं कहिये असत् अविद्यामानकूं कहिये । इनि दोऊनिका अविशेषेण कहिये विशेष न करै, कदा विद्यमानकूं अविद्यामान कहै, कदा विद्यमानकूं विद्यमान भी कहै, कदा अविद्यमानकूं विद्यमान कहै, कदा अविद्यमानकूं अविद्यमान भी कहै, ऐसैं अपनी इच्छातैं जैसैं तैसैं ग्रहणकरि कहै । तहां विपर्यय कहिये जैसैं रूपादिक वस्तु छती होय तौ भी कहै नाहीं है कदा अणछतीकूं भी कहै है, छती है । कदा छतीकूं छती भी कहै । कदा अणछतीकूं अणछती भी कहै । ऐसैं मिथ्यादर्शनके उदयतैं अन्यथा निश्चय करै है । जैसैं पित्तज्वरकारि आकुलित चित्तभ्रमवाला कदाकाल तौ माताकूं भार्या कहै, कदा भार्याकूं माता कहै, कदा माताकूं माता भी कहै, कदा भार्याकूं भार्या भी कहै ऐसैं अपनी इच्छातैं मानै । तातैं जैसाकूं तैसा भी कहै है, तो ताकै सम्यग्ज्ञान नांही है ॥

ऐसैं मत्यादिज्ञानविषैं जो घटपटादिकका जैसाका तैसा ज्ञान है तौ भी विपर्ययही जानना सोही कहिये हैं, कोई आत्माकैविषैं मिथ्यादर्शनका उदयतै परिणाम होय है । सो रूपादिकका ज्ञान नेत्रादिककरि जैसाका तैसा भी होय तौ भी तिसविषै कारणविपर्यास भेदाभेदविपर्यास स्वरूपविपर्यास ए तीन विपर्यास उपजावै है। तहां प्रथमही कारणविपर्यासकूं कहै है । तहां रूपादिक नेत्रादिककरि दीखै तौ जैसेके तैसे दीखै, परंतु मिथ्यादृष्टि ताका कारण अन्यथा कल्पै है। जैसै ब्रह्माद्वैतवादी कहै है, रूपादिकनिका कारण एक अमूर्तिक नित्य ब्रह्मही है ब्रह्महीतै भये है । सांख्यमती कहै है रूपादिकनिका कारण अमूर्तिक नित्य है, प्रकृतितै ए उपजै है ॥ बहुरि नैयायिक वैशेषिकमती कहै है, पृथ्वी आदि जातिभेदरूप परमाणु हैं, तिनिमैं पृथ्वीविषैं तौ स्पर्शादि च्यारि गुण है। बहुरि अप्‌विषै गंधवर्जित तीन गुण है । बहुरि अग्निविषै स्पर्श वर्ण ए दोय गुण हैं । बहुरि वायुविषै एक स्पर्शगुणही है । ऐसै च्यारिही अपनी अपनी जातिके स्कंधरूप कार्य निपजावै है ॥ बहुरि बौद्धमती कहै है, पृथ्वी आदि च्यारि भूत है । इनिकै स्पर्श रस गंध वर्ण ए च्यारि भौतिकधर्म है । इनि आठनिका समुदायरूप परमाणु होय है । ताकूं अष्टक नाम कहिये है ॥ बहुरि चार्वाकमती कहै हैं, पृथ्वी अप् तेज वायु ए च्यारि काठिण्यादि गुण, तथा द्रव्यत्वादि उष्णत्वादि, ईरणत्वादि, गुणरूप जातिभेदनै लिया परमाणु है, ते पृथ्वी आदि स्कंध निपजावे हैं । ऐसै तौ कारणविपै विपर्यय होय है ॥ बहुरि भेदाभेदविपर्यास ऐसै है– जो, कारणतै कार्य सर्वथा भिन्नही है । जैसैं पृथ्वी आदि परमाणु नित्य है तिनितैं स्कंधकार्य निपजे ते सर्वथा भिन्नही है ऐसै कहै हैं । तथा गुणतै गुणी भिन्नही है ऐसे कहै ॥ बहुरि कारणतै कार्य सर्वथा अभिन्नही है । जैसै घटपटादि

ग्रामपर्वतादि ब्रह्मतैं निपजै हैं ते ब्रम्हही हैं जुदे नांही । इत्यादि भेदाभेदविपर्यास है । जहां भेद होय तहां अभेदही कल्पना, जहां अभेद होय तहां भेदही कल्पना, ऐसें विपर्यय है ॥

बहुरि स्वरूपविपर्यास जैसें रूपादिक है ते निर्विकल्प निरंश हैं, इनिमैं अंशभेद नांही । तथा रूपादिक बाह्यवस्तु हैही नांही, तदाकार परिणया ज्ञानही है । ताके आलंबनरूप बाह्यवस्तु नांही है इत्यादि अन्य भी बहुत हैं । ते प्रत्यक्ष अनुमान प्रमाणतैं विरुद्ध मिथ्यादर्शनके उदयतैं कल्पना होय है ॥ बहुरि तहां श्रद्धान प्रतीति रुचि उपजावै हैं । तातैं ते मत्यज्ञान श्रुताज्ञान विभंगज्ञान होय हैं। बहुरि सम्यग्दर्शन है सो यथार्थ वस्तुविषैं श्रद्धान रुचि प्रतीति उपजावै है । तातैं तेही मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान हो है । इहां विशेष कहे हैं— विपर्यय दोय प्रकार है । एक आहार्यविपर्यय दूसरा सहजविपर्यय । तहां मतिअज्ञान तथा श्रोत्र इंद्रिय विनां अन्य इंद्रियपूर्वकै श्रुतअज्ञान अर विभंगज्ञान ए तौ सहजविपर्यय हैं । जातैं ए परके उपदेशविनां स्वयमेव प्रवर्तें है । बहुरि श्रोत्र मतिपूर्वक श्रुतज्ञान है सो आहार्यविपर्यय है । जातैं यहु परके उपदेशतैं प्रवर्तें है । तहां सत्के विषैं असत्का ज्ञान परोपदेशतैं प्रवर्तें है । सोही कहिये- स्वरूपतैं सर्ववस्तु सत्स्वरूप है । तो भी शून्यवादी असत्स्वरूपही कहै है । बहुरि ग्रहण करणेयोग्य वस्तु तथा ग्रहण करणेवाला ज्ञान दोऊ स्वरूपतैं सद्रूप है । तौ भी संवेदनाद्वैतवादी एक संवेदनहीकूं सत् कहै है । दूसराकूं असत् ही कहै है । तथा चित्राद्वैत कहै है । तथा पुरुषाद्वैत कहै है । तथा शब्दाद्वैत कहै है । तथा बाह्यपदार्थ भिन्न है तिनिकूं एक विज्ञानांडकी कल्पना करै है । बहुरि बाह्यतरंग पदार्थ सादृश्य भी है तिनिकूं सर्वथाविसदृशही कहै है । बहुरि विसदृशकूं सर्वथा सदृशही कहै है । बहुरि द्रव्य होतैं भी पर्यायमात्र कहै है । पर्याय होतैं द्रव्यमात्रही कहै है । बहुरि द्रव्यपर्याय अभेद होतै भी भेदरूपही कहै है । तथा अवक्तव्यही कहै है । बहुरि ध्रौव्यरूप होतैंही उत्पादव्ययरूपही कहै है । तैसैंही विशेषकारि जीव होतैं भी जीवका नास्ति कहनां बहुरि अजीव होतैं भी तिसका असत्त्व कहनां । बहुरि कर्मका आस्रव होतैं भी ताका अभाव कहनां तैसैंही संवर, निर्जरा, मोक्ष होतैं भी तिनिका अभाव कहना । ऐसैंही जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल, द्रव्यनिके होतैं भी तिनिका अभाव कहनां । इत्यादि अनेक प्रकार छती वस्तूकूं अण-छती कहना अनेकप्रकार जाननां । बहुरि अणछतीकूं छती कहनां । जैसैं पररूपादिककारि वस्तु असत्वरूप है तौ भी तिसकौ सर्वथा सत्स्वरूप कहनां । इत्यादिक पहलै कहे तिसका उलटा जाननां ॥

बहुरि देशकालस्वभावकारि अदृष्ट जे पदार्थ तिनिविषैं बौद्धमतीनिकै संशय है । केई शून्य वादीनिकै पृथ्वी आदिक तत्त्वनिविषैं संशय है । बहुरि केईकनिकै सर्वज्ञके अस्तित्वविषैं संशय है । बहुरि केईकनिकै प्रलापमात्रकै आश्रयतैं

सर्वही तत्त्वविषैं अनध्यवसाय है । ते कहै है काहेतैं निर्णय कीजिये ? हेतुवादरूप तर्कशास्त्र है ते तौ कही ठहरै नांही । बहुरि आगम है ते जुदे जुदे है । कोई कछु कहै कोई कछु कहै तिनिका ठिकानां नांही । बहुरि सर्वका ज्ञाता कोई मुनि प्रत्यक्ष नांही ताके वचन प्रमाण कीजिये । बहुरि धर्मका स्वरूप यथार्थ सूक्ष्म है सो कैसैं निर्णय होय ? तातैं जो बडा जिस मार्ग चले आये तैसैं चलनां प्रवर्तनां, निर्णय होता नांही, ऐसैं अनध्यवसाय है ॥

ऐसैंही मतिज्ञानरूप विना उपदेश सहजविपर्यय होय है । ताके भेद अवग्रहादि तथा स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क । स्वार्थानुमानकरि पदार्थकूं अन्यथा ग्रहण करनेतैं विपर्यय होय है। तहां स्वार्थनुमान विपर्ययरूप हेत्वाभास च्यारि प्रकार है असिद्ध विरुद्ध अनेकांतिक आकिंचित्कर । सो इनिका स्वरूप परीक्षामुख न्यायदीपिकादि शास्त्रनितैं जाननां । बहुरि शास्त्रके वाक्यके अर्थ करनेविषैं विपर्यय होय है । जैसै केई नियोगकूं वाक्यार्थ कहै है । केई भावनाकूं वाक्यार्थ कहै है । केई धात्वर्थकूं वाक्यार्थ कहै है । केई विधिकूं वाक्यार्थ कहै है । केई यंत्रारूढकूं वाक्यार्थ कहै है । केई अन्यापोह कहिये निषेधकूं वाक्यार्थ कहै हैं । इत्यादि वाक्यार्थविषैं विपर्यय है । तिनिकी चरचा श्लोकवार्तिक तथा देवागमस्तोत्रकी टीका अष्टसहस्रीविषैं है तहांतै समझणी ॥ बहुरि अवधिज्ञानविषैं विपर्यय देशावधिही होय है । परमावधि सर्वावधि मनःपर्यय है ते केवलज्ञानकी ज्यौं विपर्ययरूप नांही होय है । जातैं सम्यग्दर्शन विना होते नाही । ऐसै प्रमाण अप्रमाणका भेद दिखावनेकै अर्थि विपर्ययज्ञानका स्वरूप कह्या ॥

आगैं, प्रमाण तौ परोक्ष प्रत्यक्षरूप दोय प्रकार ज्ञानहीकूं कह्या । बहुरि प्रमाणके एकदेश जे नय ते " प्रमाणनयैरधिगमः । " ऐसा सूत्रविषैं प्रमाणकै अनंतर नय नाममात्र कहै तिनिका निर्देश करनां । ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै है—

॥ नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवम्भूता नयाः ॥ ३३ ॥

याका अर्थ-- नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, एवंभूत ऐसै ये सात नय हैं ॥ इनिका सामान्यलक्षण बहुरि विशेषलक्षण कहनेयोग्य है । तहां अनेकधर्मस्वरूप जो वस्तु ताविषैं अविरोधकारि हेतुरूप अर्पण करनेतैं साध्यके विशेपका यथार्थ स्वरूप प्राप्त करनेकूं व्यापाररूप जो प्रयोग करना सो नयका सामान्यलक्षण है । इहां कोई कहै नयका सामान्यलक्षण किया सो हेतुरूपही भया, जातैं साध्यकूं प्राप्त करै सोही हेतु । ताकूं कहिये, हेतु तौ जिस साध्यकूं साधै तहांही रहै । बहुरि लक्षण है सो सर्वनयनिमैं व्यापै, तातै सामान्यलक्षण हेतु नांही है । बहुरि कोई कहै, एकधर्मकै दूसरा धर्मतैं विरोध है । सो धर्मके ग्राहक नयनिकै भी विरोध है । तहां अविरोध कैसैं होय ? ताकूं कहिये,

जो प्रत्यक्ष अनुमान करि बाधित ऐसा सर्वथा एकांतरूपकरि ग्रहण करनां सो तौ विरुद्धरूप है— नयाभास है । बहुरि जो वस्तुका धर्म कथंचित्प्रकार अनेकांतस्वरूप ग्रहण करै, सो सर्वनय समानधर्मरूप भये । तिनिमैं विरोध काहेका ? जैसैं साध्यवस्तुका समानधर्मरूप दृष्टांत कहिये, तामैं विरोध नांही तैसैं इहां भी अविरोध है । याका उदाहरण, जैसैं सर्ववस्तु सद्रूप है । जातैं अपने द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं लिये है ॥

सो यह नय संक्षेपतैं दोय प्रकार है, द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक ऐसैं । तहां द्रव्य तथा सामान्य तथा उत्सर्ग तथा अनुवृत्ति ए सर्व एकार्थ है । ऐसा द्रव्य जाका विषय सो द्रव्यार्थिक है । बहुरि पर्याय तथा विशेष तथा अपवाद तथा व्यावृत्ति ए सर्व एकार्थ है । ऐसा पर्याय जाका विषय सो पर्यायार्थिक है । इनि दोऊनिके भेद नैगमादि है । तहां नैगम, संग्रह, व्यवहार ए तीन तौ द्रव्यार्थिक है । बहुरि ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, एवम्भूत ए च्यारि पर्यायार्थिक है । तामैं भी नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र ए च्यारि तौ अर्थकूं प्रधानकरि प्रवर्तै है तातैं अर्थनय कहिये । बहुरि शब्द, समभिरूढ, एवंभूत ए तीन शब्दकूं प्रधानकरि प्रवर्तै है तातैं शब्दनय कहिये । इहां कोई पूछै, पर्यायार्थिक तौ नय कह्या अरु गुणार्थिक न कह्या सो कारण कहां ? ताका उत्तर सिद्धांतमैं पर्याय सहभावी क्रमभावी ऐसैं दोय प्रकार कहे है । तहां सहभावीपर्यायकूं गुण संज्ञा कही है । क्रमभावीकूं पर्यायसंज्ञा कही है । तातैं पर्याय कहनेतैं यामैं गुण भी जानि लेना ऐसैं जाननां । विस्तारकरि ए सात नय कहे । बहुरि अतिविस्तारकरि नय संख्यात है । जातैं जेते शब्दके भेद है तेतेही नय कहे हैं ॥

अन्यमती बौद्ध तौ विज्ञान, वेदना, संज्ञा, संस्कार, रूप ए पाच स्कंध कहै हैं । बहुरि नैयायिक प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टांत, सिद्धांत, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रहस्थान ऐसै सोलह पदार्थ कहे हैं । बहुरि वैशेषिक द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव ऐसै सात पदार्थ कहै हैं । बहुरि सांख्य एक तौ प्रकृति, बहुरि प्रकृतिके विकार प्रधान १ । अहंकार २ । कर्मेंद्रिय ५ । ज्ञानेंद्रिय ५ । मन १ । स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द ए ५ । तन्मात्रा; बहुरि पृथ्वी अप् तेज वायु आकाश ए पंचभूत ऐसै तेईस प्रकृतिके विकार बहुरि एक पुरुष निर्विकार ऐसै पचीस तत्त्व कहै है । ते सर्वही द्रव्यपर्यायसामान्यविषैं अंतर्भूत है । कथंचित् वस्तुधर्म हैं । तातैं सुनयके विषय हैं । बहुरि अन्यवादी इनिकूं सर्वथाएकांत अभिप्रायकरि कल्पे हैं । सो तिनिका अभिप्राय मिथ्या है ऐसैं जाननां ॥

आगैं नयनिका विशेपलक्षण कहै हैं । तहां प्रथमही नैगमका कहे हैं । अपने सन्मुख वर्तमानकालविषैं पूर्ण रच्या

हुवा वस्तु नांही, ताका अपने ज्ञानविषैं संकल्प करनां जो, 'यहु वस्तु इस वर्तमानकालमैं है–' ऐसै संकल्पका ग्रहण करनेवाला अभिप्राय सो नैगमनय है। इहां उदाहरण, जैसैं काहू पुरुषकूं कोई पुरुष कूंहाडी लिये चालताकूं पूछी "तूं कौण अर्थ जाय है?" तब वह कहै, मैं प्रस्थ लेनेकूं जाऊं हूं। तहां वाकैं प्रस्थ अवस्था निकट बण्या विद्यमान नांही। जायकरि लकडी काटि प्रस्थ बणावेगा, तब होगा। परंतु वाके मनविषैं ज्ञानमैं प्रस्थका संकल्प विद्यमान है, सोही इस नैगमनयका विषय है। इहां प्रस्थ ऐसा परिमाणविशेषका नाम है। लकडीके पाई, माणी इत्यादि धान्य तोलणेकै बणै हैं, ताका नाम है। तथा कोई याका अर्थ लकडीका भारा भी कहै हैं। तथा कोई पुरुष ईंधन जल आदि सामग्री भेली करै था, ताकूं कोई पूछी, तूं कहा करै है? तब वह कहै, मै भात पचाऊं हूं, तब तहां भात अवस्था तिसकै निकट वर्तमान नांही, भात पचैगा तब होयगा। तथापि तिस भातकै अर्थि व्यापार करतैं आगामी भात पचैगा ताका संकल्प याके ज्ञानमैं विद्यमान अनुभवगोचर है। सो यहु संकल्प नैगमनयका विषय है। ऐसीही विना रची दूर क्षेत्र कालमैं वर्तती जो वस्तु ताका संकल्पकूं यहु नैगमनय अपना विषय करै है॥ इहां कोई पूछै– आगामी होणी विषैं वर्तमान संज्ञा करी। तातैं यहु तौ उपचारमात्र भया॥ ताकूं कहिये– बाह्य वस्तुकी याकै मुख्यता नांही, अपने ज्ञानका संवेदनरूप संकल्प विद्यमान है। सो याका विषय है। तातैं उपचारमात्र नांहि। बहुरि याका विषय एकही धर्म नांही, अनेक धर्मनिका संकल्प है, तातैं भी याकूं नैगम कह्या है। दोय धर्म तथा दोय धर्मी, तथा एक धर्मी एक धर्म ऐसैं याके अनेकप्रकार संकल्पतैं अनेकभेद हैं। कोई कहै, ऐसैं तौ दोऊनिका ग्रहण करनेतैं यह प्रमाणही भया। ताकूं कहिये, प्रमाण तौ दोऊनिकूं प्रधानकरि जानै है। यहु नैगम दोऊमैं एककूं प्रधान करै है, एककूं गौण करै है, ऐसा विशेष जाननां॥

या नैगमके भेद तीन हैं। द्रव्यनैगम, पर्यायनैगम, द्रव्यपर्यायनैगम। तहां द्रव्यनैगमके दोय भेद हैं; शुद्धद्रव्यनैगम अशुद्धद्रव्यनैगम। बहुरि पर्यायनैगमके तीन भेद, अर्थपर्यायनैगम व्यंजनपर्यायनैगम, अर्थव्यंजनपर्यायनैगम। बहुरि द्रव्यपर्यायनैगमके च्यारि भेद शुद्धद्रव्यार्थपर्यायनैगम, अशुद्धद्रव्यार्थपर्यायनैगम, शुद्धद्रव्यव्यंजनपर्यायनैगम अशुद्धद्रव्यव्यंजनपर्यायनैगम। ऐसैं नैगमनयके नव भेद भये। तहां उदाहरण– जो, संग्रहनयका विषय सन्मात्र शुद्धद्रव्य है ताका यहु नैगमनय संकल्प करै है जो सन्मात्र द्रव्य समस्तवस्तु है, ऐसैं कहै तहां सत् तौ विशेषण भया तातैं गौण है। बहुरि द्रव्य विशेष्य भया तातैं मुख्य है। यहु शुद्धद्रव्यनैगम है। बहुरि जो पर्यायवान् है सो द्रव्य है, तथा गुणवान् है सो द्रव्य है ऐसा व्यवहारनय भेदकरि कहै है। ताका यहु नैगमनय संकल्प कहै है। तहां पर्यायवान् तथा गुणवान् यहु

तौ विशेषण भया, तातैं गौण है। बहुरि द्रव्य विशेष्य भया तातैं मुख्य है। ऐसैं अशुद्धद्रव्यनैगमनय भया ॥ बहुरि प्राणीके सुखसंवेदन है सो क्षणध्वंसी है ऐसैं क्षणध्वंसी ऐसा तौ सत्ताका अर्थपर्याय है सो विशेषण है। बहुरि सुख है सो संवेदनका अर्थपर्याय है सो विशेष्य भया तातैं मुख्य है। तातैं यहु अर्थपर्यायनैगम भया ॥ बहुरि पुरुषविषैं चैतन्य है सो सत् है इहां सत् नामा व्यंजनपर्याय है सो विशेषण है। बहुरि चैतन्यनामा व्यंजनपर्याय है सो विशेष्य है तातैं मुख्य है। यहु व्यंजनपर्यायनैगम है। बहुरि धर्मात्माविषैं सुखजीवीपणां है। इहां सुख तौ अर्थपर्याय है सो विशेषण है। बहुरि जीवित व्यंजनपर्याय है सो विशेष्य है, तातैं मुख्य है। यहु अर्थव्यंजनपर्यायनैगम है। बहुरि संसारविषैं सत् विद्यमान सुख है सो क्षणमात्र है। इहां सत् शुद्धद्रव्य है सो विशेषण है। सुख है सो अर्थपर्याय है, तातैं मुख्य है। यह शुद्धद्रव्य अर्थपर्यायनैगम भया ॥ बहुरि विषयी जीव है सो एक क्षण सुखी है इहां जीव है सो अशुद्धद्रव्य है सो विशेष्य है। सुख है सो अर्थपर्याय है सो विशेषण है तातैं गौण है। यहु अशुद्धद्रव्य अर्थ-पर्यायनैगम भया ॥ बहुरि चित्सामान्य है सो सत् है इहां सत् ऐसा शुद्धद्रव्य है सो तौ विशेषण है तातैं गौण है। चित् है सो व्यंजनपर्याय है सो विशेष्य है तातैं मुख्य है। ताका यहु शुद्धद्रव्यव्यंजनपर्यायनैगम भया ॥ बहुरि जीव है सो गुणी है इहां जीव है सो अशुद्धद्रव्य है, सो विशेष्य है सो मुख्य है। बहुरि गुण है सो व्यंजनपर्याय है, सो विशेषण है तातैं गौण है। यह अशुद्धद्रव्यव्यंजनपर्यायनैगम भया। ऐसैं नैगमनयके नव भेद है ते संग्रहादि छह मिलै पंधरा होय है ॥

आगैं संग्रहनयका लक्षण कहै हैं। अपनी एक जातिके वस्तुनिकूं अविरोध करिये एकप्रकारपणाकूं प्राप्तिकरि जिनमैं भेद पाईये ऐसैं विशेषनिकूं अविशेषकरि समस्तकूं ग्रहण करै ताकूं संग्रहनय कहिये। इहां उदाहरण। जैसैं सत् ऐसा वचनकरि तथा ज्ञानकरि अन्वयरूप जो चिन्ह ताकरि अनुमानरूप किया जो सत्ता ताके आधारभूत जे सर्व वस्तु तिनिका अविशेषकरि संग्रह करै जो सर्वही सत्तारूप है ऐसैं संग्रहनय होय है। तथा द्रव्य ऐसा कहते जो गुणपर्याय-निकरि सहित जीव अजीवादिक भेद तथा तिनिके भेद तिनिका सर्वनिका संग्रह होय है। तथा घट ऐसा कहतैं घटका नाम तथा ज्ञानके अन्वयरूप चिन्हकरि अनुमानरूप किये जे समस्त घट तिनिका संग्रह होय है। ऐसैं अन्य भी एकजातिके वस्तुनिकूं भेला एककरि कहै तहां संग्रह जानना। तहां सत् कहनेतैं सर्ववस्तूका संग्रह भया। सो यहु तौ शुद्धद्रव्य कहिये। ताका सर्वथा एकांत सो संग्रहाभास कुनय है। सो सांख्य तौ प्रधानकूं ऐसा कहै हैं। बहुरि व्याकरणवाले शब्दाद्वैतकूं कहै हैं। वेदांती पुरुषाद्वैत कहै हैं। बौद्धमती संवेदनाद्वैत कहै हैं। सो ये सब नय एकांत

पर्यायमैं सर्वपर्यायनिका संग्रह करै सो है । बहुरि या नयकूं परसंग्रह कहिये । बहुरि द्रव्यमैं सर्वद्रव्यनिका संग्रह करै । घटमैं सर्व घटनिका संग्रह अपरसंग्रह है । ऐसैही जीवमैं सर्वजीवनिका संग्रह करै । पुद्गलमैं सर्वपुद्गलनिका संग्रह करै । इत्यादि जाननां ॥

आगे व्यवहारनयका लक्षण कहै हैं । संग्रह नयकरि ग्रहण किये जे वस्तु तिनिका विधिपूर्वक व्यवहरण कहिये भेदरूप-करणां सो व्यवहारनय है । कोई पूछै विधि कहां ? ताकूं कहिये जो संग्रहकरि ग्रह्या पदार्थ है ताहीकूं पहलीले अरु भेद करै सो विधि कहिये, जैसैं संग्रहकरि सत् ग्रहण किया सो जो विशेषकी अपेक्षा रहित होय तौ तासूं व्यवहार प्रवर्तै नांही । तातैं व्यवहार नयका आश्रय करिये तब ऐसैं कहिये, जो सत् कह्या सो द्रव्यरूप है, तथा गुणरूप है ऐसैं सतविषैं भेदकरै तब व्यवहार प्रवर्तै । तथा द्रव्य ऐसा संग्रह ग्रहण किया सो भी विशेषनिकी अपेक्षा रहित होय तौ व्यवहार प्रवर्तै नांही । तातैं व्यवहारका आश्रय लीजिये तब द्रव्य है सो जीवद्रव्य है तथा अजीवद्रव्य है; ऐसैं भेदकरि व्यवहार प्रवर्तै । ऐसैही जीवद्रव्यका संग्रह होय तामैं देव नारकादि भेद होय अजीवका संग्रह करै तब घटा-दिकका भेद होय । ऐसैं यहु नय तहांताई चल्या जाय जहां फेरि भेद न होय । सो जहां ऋजुसूत्रका विषय है ताकै पहलैताांई संग्रह व्यवहार दोऊ नय चले जाय है ।

आगैं ऋजुसूत्र नयका लक्षण कहै है । ऋजु कहिये सरल सूधा सूत्रयति कहिये करै है ताकूं ऋजुसूत्र कहिये । तहां पूर्व कहिये पहलै, अतीत गये, तथा अपर कहिये पीछै होयगा ऐसै तीन कालके गोचर जे भाव तिनिकूं उल्लंघि-करि वर्तमानकाल पर्यायमात्रका ग्रहण करनेवाला यहू ऋजुसूत्रनय है । जातैं अतीत तौ विनशि गये । बहुरि अनागत उपजेही नांही । तिनिकरि तौ व्यवहारका अभावही है । तातैं वर्तमानहीतैं व्यवहार प्रवर्तै है । इहां कोई कहै है अतीत अनागतका भी लोकविषैं व्यवहार है सो कैसै चलै ? ताकूं कहिये या नयका तौ यहुही विषय है सो दिखाया । बहुरि लोकव्यवहार तौ सर्वनयके समूहकरि साधने योग्य है । जहां जैसा नयका कार्य होय तहां तैसा नय ग्रहण करनां । या नयका सर्वथा एकांत अभिप्राय बौद्धमती करै है । द्रव्यका तौ लोप करै है । क्षणस्थायी वस्तु कहै है । तिनिकै सर्वव्यवहारका लोप आवै है

आगैं शब्दनयका लक्षण कहै हैं । लिंग, संख्या, साधन इत्यादिकके व्यभिचारकूं दूरि करनेविषैं तत्पर सो शब्दनय है । तहां प्रथमही लिंगव्यभिचार स्त्रीलिंगविषैं पुरुषलिंग कहना, जैसैं, तारका यह स्त्रीलिंग है ताकूं स्वाति ऐसा पुरुष-लिंग कहना । बहुरि पुरुषलिंगविषैं स्त्रीलिंग कहना, जैसैं अवगमः ऐसा पुरुषलिंग है ताकूं विद्या ऐसा स्त्रीलिंग कहनां ।

वहुरि स्त्रीलिंगविषैं नपुंसकलिंग कहनां, जैसैं, वीणा ऐसा स्त्रीलिंग है ताकूं आतोद्य ऐसा नपुंसकलिंग कहनां। वहुरि नपुंसकलिंगविषैं स्त्रीलिंग कहनां, जैसैं, आयुध ऐसा नपुंसकलिंग है, ताकूं शक्ति ऐसा स्त्रीलिंग कहनां। वहुरि पुरुषलिंगविषैं नपुंसकलिंग कहना, जैसैं पट ऐसा पुरुषलिंग है, ताकूं वस्त्र ऐसा नपुंसकलिंग कहनां। वहुरि नपुंसकलिंगविषै पुरुषलिंग कहनां, जैसैं, द्रव्य ऐसा नपुंसकलिंग है, ताकूं परशु ऐसा पुरुषलिंग कहनां। वहुरि एकही वस्तूकै तीनूं लिंग कहनां, जैसैं, तारका यहु स्त्रीलिंग है, ताहीकूं पुष्यः ऐसा पुरुषलिंग तथा नक्षत्र ऐसा नपुंसकलिंग कहनां। इत्यादि लिंगव्यभिचार है। वहुरि संख्याव्यभिचार एकवचनविषैं द्विवचन, जैसैं नक्षत्र ऐसा एकवचन है, तहां पुनर्वसू ऐसा द्विवचन कहना। वहुरि एकवचनविषैं वहुवचन, जैसैं नक्षत्र ऐसा एकवचन है, तहा शतभिषजा ऐसा वहुवचन कहनां। वहुरि द्विवचनविषैं एकवचन, जैसैं 'गौदौ' ऐसा द्विवचन है, तहां ग्रामः ऐसा एकवचन कहनां वहुरि द्विवचनविषैं वहुवचन, जैसैं, पुनर्वसू ऐसा द्विवचन है, तहा पंचतारका ऐसा वहुवचन कहनां। वहुरि वहुवचनविषैं एकवचन, जैसैं, आम्रा ऐसा वहुवचन है, तहां वन ऐसा एकवचन कहनां। वहुरि वहुवचनविषैं द्विवचन, जैसैं, देवमनुष्याः ऐसा वहुवचन है, तहा उभौ राशी ऐसा द्विवचन कहनां। ऐसैं संख्याव्यभिचार है ॥

वहुरि साधनव्यभिचार, ताकूं पुरुषव्यभिचार भी कहिये " एहि मन्ये रथेन यास्यसि। नहि यास्यसि। न यातस्ते पिता " याका अर्थ– एहि ऐसा मध्यमपुरुषका एकवचन है, तथापि याका ' एमि ' ऐसा अर्थ करनां, जो, मैं जाऊं हूं सो। ' मन्ये ' ऐसा उत्तमपुरुषका एकवचन है, तहां मध्यमपुरुषका ' मन्यसे ' ऐसा कहना, जो, तूं ऐसै मानै है। जामैं ' रथेन ' कहिये रथ चढि। यास्यसि याका ' यास्यामि ' ऐसा कहना, जो, जाऊंगा सो। ' नहि यास्यसि ' कहिये नाही जायगा, तेरा पिता भी ऐसैं गया नाही। भावार्थ–हास्यका प्रसंगविषैं ऐसा कहना होय है। जो तूं मानै है मै रथ चढिकरि जाऊं, सो ऐसैं तेरा पिता भी न गया, तूं कैसा जायगा? तहां तूं कहनेकी जगह तौ हूं कहनेका शब्द कह्या। वहुरि हूं कहनेकी जायगा तूं कहनेका शब्द कह्या। तव पुरुष व्यभिचार भया ॥

वहुरि कालव्यभिचार, जैसैं " विश्वदृश्वाऽस्य पुत्रो जनिता " याका अर्थ– जिहि विश्व कहिये लोककूं देख्या सो पुत्र याकै होसी। विश्वकूं देख्या यहु तौ अतीत कालवाचक शब्द है। वहुरि जनिता यहु आगामी कालवाचक शब्द है। सो इहां कालव्यभिचार भया। वहुरि ' भाविकृत्यमासीत् ' ऐसैं कहै, तैं भावि कहिये होणहार कार्य ' आसीत् ' कहिये हुवा, सो इहा भी अतीत अनागतकालका व्यभिचार भया ॥

वहुरि उपग्रहव्यभिचार, जो ' तिष्ठति ' ऐसा परस्मैपद धातु है ताका ' संतिष्ठते ' ' प्रतिष्ठते ' ऐसा भया।

बहुरि 'रमते' ऐसा आत्मनेपदी धातु है ताका 'विरमति उपरमति' ऐसा भया। ऐसैं उपसर्गके बलतैं आत्मनेपदी धातूका परस्मैपदवचन भया। बहुरि परस्मैपदीका आत्मनेपदी भया। ऐसैं उपग्रहव्यभिचार है ॥

बहुरि कारकव्यभिचार 'सेना पर्वतमधिवसति' इहां सेना पर्वतके समीप वसै है ऐसा आधार है, सो सप्तमी विभक्ति चाहिये, तहां द्वितीया कही। तातैं कारकव्यभिचार भया। या प्रकार व्यवहार नय है ताहि अन्याय मानै है। जातैं अन्य अर्थका अन्य अर्थकरि संबंध होय नांही। जो अन्य अर्थका अन्यतैं संबंध होय, तो घटका पट होय जाय, पटका महल हो जाय। तातैं जैसा लिंग आदि होय तैसाही न्याय है। इहां कोई कहै, लोकविषैं तथा शास्त्रविषैं विरोध आवेगा। ताकूं कहिये, विरोध आवै तौ आवो, इहां तौ यथार्थस्वरूप विचारिये है। औषधी रोगीकी इच्छाके अनुसार तौ है नांही ॥

आगैं, समभिरूढनयका लक्षण कहै हैं। नाना अर्थनिविषैं समभिरोहणात् कहिये प्राप्त होनेतैं समभिरूढ है। जातैं एकशब्दके अनेक अर्थ हैं, तिनिमैंसूं कोई एक अर्थकूं ग्रहणकरि तिसहीकूं कह्या करै, जैसैं, गौ ऐसा शब्द वचनादि अनेक अर्थविषैं वर्तै है। तौ भी गऊ नाम पशुका ग्रहणकरि तिसहीकूं गऊ कहै। अथवा शब्दका कहना है, सो अर्थगतिकै अर्थि है। तहां एक अर्थका एकही शब्दकरि गतार्थपणा है, तातैं वाका दुसरा पर्यायशब्द कहिये नाम कहनां सो निष्प्रयोजन है। इहां कोई कहै, शब्दका तौ भेद है। ताकूं कहिये अर्थभेद भी अवश्य चाहिये। ऐसैं यहु समभिरूढनय नाना अर्थविषैं प्राप्त होय है, तातैं समभिरूढ है। जैसैं इंदनात् कहिये परमैश्वर्यरूप क्रिया करै तब इंद्र है। शकनात् कहिये समर्थरूप वर्तै तब शक्र कहिये। पूर्दारणात् कहिये पुरके विदारणक्रियारूप वर्तै तब पुरंदर है। ऐसैं यहु समभिरूढनय एकही अर्थकूं ग्रहणकरि प्रवर्तै है। अथवा जो जहां प्राप्त है तहांही प्राप्त होय करि वर्तै है, तातैं समभिरूढ है। जैसैं काहूकूं कोई पूछै तूं कहां तिष्ठै है? वह कहै, मैं मेरे आत्माविषैं तिष्ठूं हूं ऐसैं भी समभिरूढ है। जातैं अन्यका अन्यविषैं प्रवर्तना न हो है। जो अन्यका अन्यविषैं प्रवृत्ति होय, तौ ज्ञानादिककी तथा रूप आदिककी आकाशविषैं भी वृत्ति होय। सो है नांही ॥

आगैं एवंभूतनयका लक्षण कहै हैं। जिस स्वरूपकरि जो वस्तु होय तिसही स्वरूपकरि ताकूं कहै, निश्चय करावै सो एवंभूत है। जो वस्तु जिस नामकरि कहिये तिसही अर्थकी क्रियारूप परिणमता होय तिसही काल वा वस्तूकूं तिस नामकरि कहै अन्यकाल अन्यपरिणतिरूप परिणमताकूं तिस नामकरि न कहै। जैसैं इंद्र ऐसा नाम है, सो परमैश्वर्यरूप किया करता होय तबही इंद्र कहै, अभिषेक करतैं तथा पूजा करतैं ताकूं इंद्र न कहै। तथा जिस काल

गमन करै तिस कालही गऊ कहै वैठीकूं गऊ न कहै सूतीकूं गऊ न कहै । अथवा जिस स्वरूपकरि जिसका ज्ञान तदाकार भया होय तिसही स्वरूपकरि निश्चय करावै । जैसैं इंद्रका आकाररूप ज्ञान परिणया होय तथा अग्निका आकाररूप ज्ञान भया होय तिस ज्ञानसहित आत्माकूं इंद्र तथा अग्नि कहै । इहां कोई कहै नामक्रियारूप परिणयाकूंही कहै तौ नामके कारण तो जाति, गुण, द्रव्य भी है तिनकूं कैसैं कहै ? ताकूं कहिये, जेते जाति आदिकतैं भये नाम हैं ते सर्वही क्रियाविषैं अंतर्भूत है विनाक्रिया निष्पत्ति नांही । जैसैं जातिवाची अश्वशब्द है, सो भी शीघ्रगमन क्रिया करै ताकूं अश्व कहिये, ऐसैं क्रियावाची होय है । तथा शुक्ल ऐसा गुणवाची शब्द है, सो शुचिक्रियारूप परणवै, ताकूं शुक्ल कहिये, ऐसैं क्रियावाची होय है । तथा दंडी ऐसा संयोगी द्रव्यवाची है, सो भी दंड जाकै होय ताकूं दंडी कहिये, ऐसैं क्रियावाची होय है । तथा विपाणी ऐसा समवायद्रव्यवाची शब्द है, सो भी विपाण कहिये, सींग जाकै होय, ताकूं विपाणी कहिये । ऐसैंही वक्ताकी इच्छातै भया नाम, जैसैं देवदत्त ऐसा काहूका नाम वक्ता कह्या ताका भी जब स्वार्थ करिये, तब जो देव दिया होय, तथा देवनिमित्त दे, ताकूं देवदत्त कहिये, ऐसैं क्रियावाची होय है, ऐसैं जाननां ॥

ऐसै ए नैगमादिक नय कहे ते आगै अल्पविपय हैं । तिस कारणतै इनिका पाठका अनुक्रम है । पहलै नैगम कह्या ताका तौ वस्तु सद्रूप तथा असद्रूप इत्यादि अनेकधर्मरूप है । ताका संकल्प विपय है । सो यहू नय तौ सर्वतैं महाविपय है । याकै पीछै संग्रह कह्या सो याका विपय सत् द्रव्यत्व आदिही है । इनिकै परस्पर निपेधरूप जो असत् आदि सो विपय नांही है । तातैं तिसतैं अल्पविपय है । वहुरि याकै पीछै व्यवहार कह्या सो याका विषय संग्रहके विपयका भेद है। तहां अभेद विपय रहि गया । तातैं तिसतैं अल्पविपय है। वहुरि याकै पीछै ऋजुसूत्र कह्या सो याका विपय वर्तमानमात्र वस्तुका पर्याय है सो अतीत अनागत रहि गया । तातैं तिसतै अल्पविपय है । याके पीछै शब्दनय कह्या सो याका विपय वस्तुकी संज्ञा है । एक वस्तूके अनेक नाम हैं । तहां काल कारक लिंग संख्या साधन उपग्रहादिक भेदतैं अर्थकूं भेदरूप कहै । सो इनिका भेद होतैं भी वर्तमानपर्यायरूप वस्तूकूं अभिन्न मानता जो ऋजुसूत्र तातैं अल्पविपय भया । जातैं एक भेद करतैं अन्य भेद रहि गये । वहुरि याकै पीछै समभि-रूढ कह्या, सो एक वस्तुके अनेक नाम हैं तिनिकूं पर्यायशब्द कहिये तिनि पर्यायशब्दनिका एकही अर्थ मानता जो शब्दनय तातैं समभिरूढ अल्पविपय है । तातैं तिनि पर्यायशब्दनिके जुदे जुदे भी अर्थ हैं । सो यहू जिस शब्दकूं पकडै तिसही अर्थरूपकूं कहै । तव अन्य शब्द यातैं रहि गये तातैं अल्पविपय भया । वहुरि एवंभूत याके पीछै कह्या । सो याका विपय जिस शब्दकूं पकड्या तिस क्रियारूप परिणमता पदार्थ है । सो अनेकक्रिया करना ।

एकही कहता जो समभिरूढ तातैं अल्पविषय भया । ऐसैं उत्तरोत्तर अल्पविषय है ।

इहां दृष्टांत, जैसैं एक नगरविषैं एक वृक्ष उपरि पक्षी बोले था, ताकूं काहूंनैं कही, या नगरविषैं पक्षी बोलै है । काहूनैं कही, या नगरमैं एक वृक्ष है तामैं बोलै है । काहूनैं कही, या वृक्षका एक बडा डाला है तामैं बोलै है, काहूनैं कही, इस डालेमैं एक शाखा छोटी डाली है तामैं बोलै है । काहूनैं कही, इस डाहलीके एक देशविषैं बैठा बोलै है । काहूनैं कही, पक्षी अपने शरीरविषैं बोलै है । काहूनैं कही वाके शरीरमैं कंठ है तामैं बोलै है । ऐसै उत्तरोत्तर विषय छूटता गया । सो यह अनुक्रमतें इनि नयनिके वचन जानने । नैगमनयने तौ वस्तुका सत् असत् दोऊ लिये । संग्रह नयनै सत्‌ही लिया । व्यवहारनै सत्का एक भेद लिया । ऋजुसूत्रनै वर्तमानकूंही लिया । शब्दनै वर्तमान सत्मैं भी भेदकरि एक कार्य पकड्या । समभिरूढने या कार्यके अनेक नाम थे तिसमैं एक नामकूं पकड्या एवंभूतने तामैं भी जिस नामकूं पकड्या तिसही क्रियारूप परिणमताकूं पकड्या । ऐसैही जिस पदार्थकूं साधिये तापरि सर्वहीपरि ऐसै नय लगाय लेनें । बहुरि पहला पहला नय तौ कारणरूप है । अगिला अगिला कार्यरूप है । ता कार्यकी अपेक्षा स्थूल भी कहिये । ऐसैं ये नय पूर्वपूर्व तौ विरुद्धरूप महाविषय है । उत्तर उत्तर अनुकूलरूप अल्पविषय है । जातैं पहला नयका विषय अगिले नयमैं नांही तातैं विरुद्ध है । अगिलेका विषय पहलेमैं गर्भित है तातैं ताके अनुकूलपणां है ॥ ऐसैं ये नयभेद काहेतैं होय है? जातैं द्रव्य अनंत शक्तिकूं लिये है तातैं एक एक शक्ति प्रति भेदरूप भये बहुत भेद होय हैं । ऐसैं ए नय मुख्यगौणपणां करि परस्परसापेक्षरूप भये संते सम्यग्दर्शनके कारण होय हैं । जैसैं सूतके तार आदि हैं ते पुरुषके अर्थक्रियाके साधनकी सामर्थ्यतैं यथोपायं कहिये जैसैं वस्त्रादिक बणि जाय तैसा उपायकरि थापे हुये वस्त्रादिक नाम पावै है । बहुरि वह तार जो परस्पर अपेक्षारहित न्यारे न्यारे होय तौ वस्त्रादिक नाम न पावै तैसैंही ये नय जानने ॥

इहां कोई कहै यह तारनिका उदाहरण तौ विषम उपन्यास है मिल्या नांही । जातैं तार आदिक तौ अपेक्षारहित न्यारेन्यारे भी अर्थमात्रा कहिये प्रयोजनकूं सिद्ध करै है । तथा अर्थक्रिया करै है । जैसैं कोई तार तो न्यारा शीकनिके बांधनेकूं शस्त्रके घाव सींननेकूं समर्थ होय है । कोई तार वेलिखीय आदिका ऐसा होय जो भारा आदि बांधनेकूं समर्थ है । बहुरि ये नय जब निरपेक्ष होय तब कछु भी सम्यग्दर्शनकी मात्राकूं नांही उपजावै है । तहां आचार्य कहै हैं, यह दोष इहां नांही है ॥ जातैं हमनैं कह्या ताका ज्ञान तुमारै हुवा नांही । कहे अर्थकूं विना समझ्या यह उराहना दिया । हमनैं तौ ऐसैं कह्या है निरपेक्ष तार आदि कहै ते वस्त्रादिकार्य नांही है । बहुरि तुमनैं कह्या सो तौ

पटादिकार्य नांही है केवल तार आदिहीका न्याराही कार्य है। सो भी कार्य जो तार आदि अपनें अवयवसहित न होय तौ तिनितैं न होय। तातैं हमारी पक्षसिद्धि है। सापेक्षही कार्य उपजावै है। वहुरि कहै तार आदिविषैं वस्त्रादि-कार्य शक्तिरूप है। तौ नयनिविषैं भी निरपेक्षनिविषैं ज्ञानरूप तथा शब्दरूपनिविषैं कारणके वसतैं सम्यग्दर्शनके कारण-पणाका विशेषरूप परिणवनके सद्भावतैं शक्तिरूप सम्यग्दर्शनके कारणका अस्तित्व है। तातैं हमारा दृष्टांत विषम नांही है, समही है, मिलता है ॥

आगैं इनि नियमकै परस्पर मुख्यगौणपणांकी सापेक्षाकरि विधिनिषेधतैं सप्तभंग उपजै हैं सो कहिये हैं। तहां नैगमकै तौ संग्रहादि छह नयनिकरि न्यारे न्यारे छह सप्तभंग होय हैं। वहुरि संग्रहकै व्यवहारादिककरि पांच होय हैं। वहुरि व्यवहारकै ऋजुसूत्रादिककरि च्यारि होय हैं। वहुरि ऋजुसूत्रके शब्दादिककरि तीन होय हैं। वहुरि शब्दके समभिरूढादिककरि दोय होय हैं॥ वहुरि समभिरूढकै एवंभूत नयकरि एकही होय है। ऐसै मूलनयनिकै तौ विधि-निषेधकरि इकइस सप्तभंगी भई। वहुरि नैगमनयके नव भेद हैं अर संग्रहके पर अपर करि दोय भेद हैं तातैं तिनिके विधिनिषेधतैं अठारह सप्तभंगी होय है। ऐसैही पर अपर व्यवहारकै अठारह होय है। वहुरि ऋजुसूत्रकरि नव सप्त-भंगी हो है। वहुरि शब्दके काल आदि छह भेदनिकरि चौवन सप्तभंगी होय है। वहुरि समभिरूढकरि नव एवंभूतनय-करि नव। ऐसै ये एकसौ सतरा सप्तभंगी भई। ऐसै संग्रहके दोय भेदनितैं व्यवहारादिके भेदनिकरि वाईस, वहुरि व्यवहारकै दोय भेदनितैं ऋजुसूत्रादिकके अठारह, वहुरि ऋजुसूत्रके शब्दभेदकरि छह, वहुरि शब्दके भेदनिके समभिरूढ एवंभूतकरि वारह, ऐसै अठ्ठावन होय सव मिलि एकसौ पचहत्तरि भेदनिकी अपेक्षा भये, दोऊ मिलि एकसौ छिनवै भये। वहुरि उलटे करिये तव तेही भंग होय है। ऐसैही उत्तरोत्तर भेदनिकरि शब्द थकी संख्यातसप्तभंगी होय है। तहां पूर्वै प्रमाणसप्तभंगीविषैं भंगनिका विचार कह्या। तैसै इहां भी जाननां ॥

विशेष इतना— जो, तहां जिस पदार्थकूं साधना ताका काल आदि आठ भेदनिकरि सकलादेश करनां। इहां तिनिका विकलादेश करना। जिस धर्मके नामकरि पदार्थकूं कह्या तिसही धर्मविषैं सर्वधर्मनिका काल आदिकरि अभेद-वृत्ति करनां सो तौ सकलादेश है। वहुरि जिस धर्महीका काल आदि कहना दुसरे धर्मतैं भेदवृत्ती कहनां तहां विकलादेश हो है। सो पूर्वैं उदाहरणकरि कह्याही है। जैसैं नैगमनयनें प्रस्थका संकल्प किया तहां संग्रहनय कहै यहु प्रस्थ संकलपमात्र नांही सद्रूप है। तहां विधिनिषेध भया। तव कथंचित् प्रस्थ, कथंचित् अप्रस्थ, कथंचित् प्रस्थाप्रस्थ, कथंचित् अवक्तव्य कथंचित् प्रस्थ अवक्तव्य, कथंचित् अप्रस्थ अवक्तव्य, कथंचित् प्रस्थाप्रस्थ अवक्तव्य ऐसैं सात भये।

तैसैंही सर्वनयके विषयविषैं विधिनिषेध लगाय साधने । इहां कोई पूछै; जो, द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयके भेदरूप नैगमादिक सात भेद कहे ते तो जाणे। परंतु शास्त्रनिमैं निश्चय व्यवहार नयकी कथनी बहुत है। सो यहु न जाणी, जो ये निश्चयव्यवहारनय कहां कहै है ? इनिका विषय कहा है ?। ताका उत्तर— जो, नयचक्र ग्रंथ गाथाबंध है। तहां ऐसैं कह्या है– जो निश्चयनय व्यवहारनय हैं ते सर्व नयनिका मूलभेद हैं। इनि दोय भेदनितैं सर्वनयभेद प्रवर्तें हैं। तहां निश्चयके साधनेकूं कारण द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक दोऊ नय हैं। वस्तुका स्वरूप द्रव्यपर्यायस्वरूपही है। तातैं इनि दोऊ नयनितैं साधिये है। तातैं ये दोऊही तत्त्वस्वरूप हैं। सत्यार्थ हैं ॥

बहुरि व्यवहार है सो उपनय है। ताके तीन भेद है सद्भूत व्यवहार, असद्भूतव्यवहार, उपचरितव्यवहार। तिनिके उत्तर भेद आठ है। तहां सद्भूतके दोय भेद। तहां गुणगुणी तथा पर्यायपर्यायी द्रव्यनिविषैं कर्ताकर्म आदि कारककी प्रवृत्तिके सद्भावतैं संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजनादिकके भेदतैं शुद्धद्रव्यविषैं भेद कहै। सो तौ शुद्धसद्भूतव्यवहार है। तैसैंही एकद्रव्यकै एकही प्रदेश है, भिन्नक्षेत्र नाही, तौ संख्यात असंख्यात अनंतप्रदेशादिक कहै। सोऊ शुद्धसद्भूतव्यवहार है। बहुरि एकही द्रव्य परके निमित्ततैं विकार उसही सतमैं भया था ताकी अपेक्षा लेकरि संज्ञादिककरि भेद कहै है। तहां अशुद्धसद्भूतव्यवहार है। ऐसैं दोय भेद सद्भूतव्यवहारके भये ॥

बहुरि अन्यवस्तूका गुण अन्यके कहै सो असद्भूतव्यवहार है। ताके तीन भेद। तहां जैसै बहुत पुद्गलके परमाणुद्रव्य मिलि एक स्कंध नाम पर्याय बण्या ताकूं कहे ' ए पुद्गलद्रव्य है, तहां समानजातीय असद्भूतव्यवहार भया। बहुरि जहां एकेंद्रियादिक देह ते पुद्गलस्कंध हैं तिनिकूं जीव कहै। तहां असमानजातीय असद्भूतव्यवहार भया। बहुरि जहां मतिज्ञानकूं मूर्तिक कहनां जातैं मूर्तिकतैं उपजै है तथा रुकै है। तहां मतिज्ञान तौ अमूर्तिक जीवका धर्म है। बहुरि मूर्तिकपणां पुद्गलका धर्म है। तहां मिश्र असद्भूतव्यवहार भया। तथा ज्ञेयविषैं ज्ञान है ऐसैं कहनां तहां ज्ञेय जीव अजीव दोऊ है। तातैं भी मिश्र भया। ऐसैं तीन भेद असद्भूतव्यवहारके भये ॥

बहुरि उपचारव्यवहारके भी तीन भेद हैं। तहां द्रव्य गुण पर्यायके परस्पर उपचार करिये तब भेद होय है। तहां एकप्रदेशी परमाणूकूं बहुप्रदेशी पुद्गलद्रव्य कहनां तहां द्रव्यविषैं पर्यायका उपचार भया। बहुरि महलकूं श्वेत कहनां तहां द्रव्यविषैं गुणका उपचार भया। बहुरि मतिज्ञान ज्ञानकूं कहनां तहां गुणके विषैं पर्यायका उपचार भया। बहुरि स्कंधपर्यायकूं पुद्गलद्रव्य कहनां तहां पर्यायके विषैं द्रव्यका उपचार भया। बहुरि देहकूं सुंदर देखि ताकूं उत्तम रूप कहनां तहां पर्यायविषैं गुणका उपचार भया। इत्यादिक उपचार जानने। बहुरि उपचारका उपचारकरि तीनूं भेद

लगावणे । तहां पुत्रादिक मेरे है, मै इनिका हूं ऐसैं कहनां सो समानजातीय उपचारका उपचार हैं । बहुरि वस्त्र आभरणादिक मेरे है ऐसैं कहनां सो विजातीय उपचारका उपचार है । बहुरि देश गढ राज्य पुर मेरे हैं ऐसैं कहनां मिश्रउपचारका उपचार है । ऐसैं व्यवहारनय अनेकरूप प्रवर्तै है ॥

बहुरि श्लोकवार्तिकमैं ऐसैं कह्या है– जो एवंभूतनय तौ निश्चय है । जातैं जिसकी जो संज्ञा होय तिसही क्रियारूप परिणमता पदार्थ होय सो याका विषय है । जैसैं चैतन्य अपनां चैतन्यभावरूप परिणमै ताकूं चैतन्यही कहै । क्रोधीकूं क्रोधीही कहै इत्यादि । बहुरि व्यवहार अशुद्धद्रव्यार्थिककूं कह्या है । जातैं दोय भाव तथा द्रव्य मिलेविना व्यवहार चलै नांही । दोय मिलै तब अशुद्धता भई । सो यह निर्देशादिक अधिकारमैं लिखीही है । इहां प्रश्न, जो, अध्यात्मग्रन्थनिमैं कह्या है, जो, निश्चयनय तौ सत्यार्थ हैं व्यवहार असत्यार्थ है– त्यजनेयोग्य है, सो यहु उपदेश कैसे है ? ताका उत्तर– जो, उपदेश दोय प्रकार प्रवर्तै है । तहां एक तौ आगम । तामैं तौ निश्चय द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक दोऊही नय परमार्थरूप सत्यार्थ कहे हैं । अर प्रयोजन अर निमित्तके वशतैं अन्यद्रव्यगुणपर्यायनिका अन्यद्रव्यगुणपर्यायनिविषैं आरोपण करनां, सो उपचार है । याकूं व्यवहार कहिये । असत्यार्थ भी कहिये गौण भी कहिये । बहुरि दूसरा अध्यात्म उपदेश । तामैं अध्यात्मग्रंथका आशय यह है, जो, आतमा अपना एक अभेद नित्य शुद्ध असाधारण चैतन्यमात्र शुद्धद्रव्यार्थिक-नयका विषयभूत है । सो तौ उपादेय है ॥

बहुरि अवशेष भेद पर्याय अनित्य अशुद्ध तथा साधारण गुण तथा अन्यद्रव्य ए सर्व पर्यायनयके विषय ते सर्व होय हैं । काहेतैं ? जातैं यह आत्मा अनादितैं कर्मबंधपर्यायमैं मग्न है । क्रमरूप ज्ञानतैं पर्यायनिकूंही जाणै है । अनादि अनंत अपना द्रव्यत्वभावका याकै अनुभव नाही । तातैं पर्यायमात्रमैं आपा जानै है । तातैं ताकूं द्रव्यदृष्टि करावनेके अर्थि पर्यायदृष्टीकूं गौणकरि असत्यार्थ कहिकरि एकांतपक्ष छुडावनेके अर्थि झूठा कह्या है । ऐसा तौ नाही, जो, ए पर्याय सर्वथाही झूठे हैं कछु वस्तु नाही आकाशकेफूलवत् हैं । जो अध्यात्मशास्त्रके वचनकूं सर्वथा एकांत पकडि पर्यायनिकूं सर्वथा झूठा मानै तौ वेदांती तथा सांख्यमतीकी ज्यौं मिथ्यादृष्टि ठहरै है । पहलै तौ पर्यायबुद्धिका एकांत मिथ्यात्व था । अब ताकूं सर्वथा छोडि द्रव्यनयका एकांत मिथ्यादृष्टि होगा, तब गृहीतमिथ्यात्वका सद्भाव आवैगा । बहुरि उपनयके भेदनिविषैं सद्भूत असद्भूत उपचार कहे हैं । ते कथंचित् असत्य भी मानने । जातैं ऐसा कह्या है, जो, प्रयोजन तथा निमित्तके वशतैं प्रवर्तै अन्यकूं अन्य कहनां तहां उपचार है सो परस्पर द्रव्यनिकै निमित्तनैमित्तिक भाव है । सो तो सत्यार्थ हैही । तातैं संसार मोक्ष आदि तत्त्वनिकी प्रवृत्ति है । जो निमित्त नैमित्तिकभाव झूठा होय तौ

संसार मोक्ष आकाशके फूल ज्यौं ठहरै । बहुरि तैसैंही जहां पुरुषका प्रयोजन है ताकै आर्थि जो प्रवृत्ति है सो भी कथंचित् सत्यार्थ है । जो प्रयोजन तथा प्रयोजनका विषय पदार्थ सर्वथा असत्यार्थ होय तो आकाशके फूलकी ज्यौं झूठा ठहरै । तथा एकेंद्रियादिक जीवकूं व्यवहारकरि जीव कह्या है । सो व्यवहार सर्वथा झूठाही होय तौ जीवहिंसादिकका कहना झूठा ठहरै । परमार्थतैं जीव तौ नित्य है अमर है । एकेंद्रियादिक जीव कहनां झूठ है झूठाके घातविषैं काहेकी हिंसा ? तथा याका विस्तार कहांताईं कहिए ? जे व्यवहारकूं सर्वथा असत्यार्थ कहै हैं ते तौ सर्व व्यवहारके लोप करनेवाले तीव्रमिथ्यात्वके उदयतैं गाढे मिथ्यादृष्टि हैं-जिनमततैं प्रतिकूल हैं, तिनिकी संगतिही स्वपरकी घातक है ऐसा जाननां ॥

बहुरि नयचक्रमैं नयनिके भेद ऐसे कहे हैं । द्रव्यार्थिकके भेद १० । तहां कर्मोपाधिनिरपेक्ष, जैसैं संसारी जीव सिद्धसमान हैं । उत्पाद व्यय गौणकरि केवल ध्रौव्यरूप सत्ताकूं ग्रहै, जैसें सद्रूप नित्यद्रव्य है । भेदनिरपेक्ष जैसैं, गुणपर्यायतैं द्रव्य अभिन्न हैं । कर्मोपाधि सापेक्ष जैसे, जीव रागादिस्वरूप है । उत्पादव्ययमुख्यकरि जैसैं, सत् है सो उत्पादव्ययध्रौव्यरूप द्रव्य है । भेदसापेक्ष जैसैं द्रव्य है सो गुणपर्यायवान् है । अन्वयद्रव्यार्थिक जैसैं, द्रव्यगुणस्वरूप है । स्वद्रव्यादिग्राहक जैसैं, अपने द्रव्य क्षेत्र काल भावकरिं द्रव्य सद्रूप है । परद्रव्यादिग्राहक जैसैं परद्रव्य क्षेत्र काल भावकरि द्रव्य असद्रूप है । परमभावग्राहक जैसैं, जीवद्रव्यकूं शुद्ध अशुद्ध उपचारादिकरि रहित चैतन्यामात्र कहै । ऐसैं दश भेद भये ॥

बहुरि पर्यायार्थिकके छह भेद हैं । अनादिनित्यपर्यायग्राही जैसैं, चंद्रमा सूर्यादिकके विमान मेरुपर्वतादिक नित्य हैं । सादिनित्यपर्यायार्थिक जैसैं, कर्म नाशिकरि सिद्ध भये ते सादिनित्यपर्याय हैं । सत्तागौणकरि उत्पादव्ययरूप पर्यायार्थिक जैसैं, पर्याय समयस्थायी हैं । उत्पादव्ययध्रुवरूप सत्ताग्राही पर्यायार्थिक जैसैं, समय समय पर्याय उत्पादव्ययध्रौव्यरूप हैं । कर्मोपाधिनिरपेक्ष स्वभाव नित्य शुद्ध पर्यायार्थिक जैसैं, संसारी जीवके पर्याय सिद्धके पर्यायसमान शुद्ध हैं । कर्मोपाधिसापेक्ष अशुद्ध अनित्य पर्यायार्थिक जैसैं, संसारी जीव उपजै विनसै हैं । ऐसैं पर्यायार्थिकके छह भेद कहै । ऐसैं प्रत्यक्षपरोक्षप्रमाण द्रव्यार्थिकपर्यायार्थिकनयनिकरि तथा निर्देशादिक वा सत् आदिक अनुयोगनिकरि तत्त्वार्थनिका अधिगम होय है । सो तत्त्वार्थ, नाम स्थापना द्रव्य भाव इनि च्यारि निक्षेपनिकरि स्थापि तिनिका अधिगम करनां । यहू अधिगमज सम्यग्दर्शनकी उत्पत्तिकूं कारण है । निसर्गज सम्यग्दर्शन तौ मति अवधि ज्ञानकरि होय है । बहुरि अधिगमज है । सो गुरूपदेशके आधीन है । तातैं श्रुतज्ञानरूप जो प्रमाणनयादिकका ज्ञान सो गुरूकेमुख श्रवण कियेतैं

होय है सो शास्त्रका श्रवण पठन पाठन निरंतर करनां योग्य है । यहही भव्यजीवनिकूं स्वर्गमोक्षका साधन है ॥

अब प्रमाणनयनिकरि तत्त्वार्थनिका अधिगम कहिये ज्ञान हो है ताका स्वरूप कहिये हैं । तहां तत्त्वार्थाधिगम दोय प्रकार है, स्वार्थ परार्थ ऐसैं । तहां स्वार्थ तौ ज्ञानस्वरूप है । बहुरि परार्थ वचनात्मक है । सो भी दोय प्रकार है । एक तौ वीतरागीकै होय है । ताकूं वीतरागकथा कहिये । दूसरा वादी प्रतिवादी जिनिकै हार जीतकी इच्छा होय तिनिकै होय है । ताकूं विजिगीपुकथा कहिये । तहां वीतरागकै तौ गुरुशिष्य होय तथा विशेपज्ञानी दोनूंही होय तिनिकै होय । तहा वीतरागीनिकी चरचाकी हद तौ तत्त्वनिर्णय हो चुकै तवतांई है । बहुरि वादीप्रतिवादीनिकै हारजिती होय चुकै तबतांई कहै । तहा इसके च्यारि अंग हैं । वादी प्रतिवादी सभाकेलोक सभापति ऐसैं । वादी प्रतिवादीविना तौ वाद प्रवर्तैही नाही । सभाकेलोकविना साख कौन भरै । सभापतिविना हारे जीते निग्रह अनुग्रह कौन करै । तातैं च्यार्योंही चाहिये ॥

इहा नैयायिक कहै हैं- जो, वाद है सो तत्त्वनिर्णयका कारण है । यातैं तत्त्वनिर्णय दृढ होय है । जगमैं सत्यार्थ-तत्त्वकी प्रभावना होय तव लोकमैं प्रतिष्ठा होय तातैं यहही वीतरागकथा है । ताकूं कहिये, जो, वीतरागकथाविषैं तौ सभाका तथा सभापतिका नियम नाही । बहुरि विजिगीपुकथाविषैं नियमही है । बहुरि कही जो वादविषैं सर्वलोककै तत्त्वकी दृढता होय है प्रभावना होय है, सो यह तौ सत्य है । परंतु जहां आपकी हार होय तहां स्वमतका विध्वंस भी होय है । सो वाद तौ हारीजीतिहीका कारण हैं, तातैं वीतरागीनिकै यह संभवै नाही । बहुरि जहा अपनी ऐसी सामर्थ्य होय, जो, मै वादमैं हारूंगा नाही जीतूंगाही, तौ याकूं सामग्री बहुत चाहिये । प्रथम तौ यथार्थहेतुवाद अहेतु-वादकरि आपकै तत्त्वका निर्णय चाहिये । दूसरा तपश्चरणादिकरि अपनी प्रतिष्ठा जगतमैं भई होय ऐसा चाहिये । बहुरि कछु देवता इष्टका अतिशय चमत्कारकी आपकै सिद्धि भई चाहिये । बहुरि राजा आदिकी पक्ष अपनी चाहिये । पक्षविना आप सांचा भी होय तौ निष्पक्षीकौ पैला पक्ष प्रबलवाला झूठा करि डारै इत्यादि सामग्री होय, अवश्य जीत-नेका आपका निश्चय होय तव वाद जीति मतकी प्रभावना करै तौ उचितही है । विनासामग्री वाद करै अरु हारै तौ स्वमतका विध्वंसही होय है। तातैं यह निश्चय जानूं, जो, वाद एकांततैं तौ तत्त्वनिर्णयकूं कारण नांही, हारजीतिही मुख्यता है । बहुरि वीतरागकथा है सोही तत्त्वनिर्णयकूं कारण है ॥

ऐसैं इस प्रथम अध्यायविषैं ज्ञानका बहुरि दर्शनका तौ स्वरूप वर्णन किया । बहुरि नयनिका लक्षण कह्या । बहुरि ज्ञानका प्रमाणपणां कह्या ॥

दोहा— दर्शनबोध यथार्थता। नयलक्षण बणवाय ॥
ज्ञान पंचकै मानता। कही आदि अध्याय ॥ १ ॥

सवईया तेईसा— जे पढि हैं अधिकार यहै नर ते चढि हैं निजरूप रमंता।
जे कढि हैं मुख यामय वाक्य सु चढि हैं सब ऊपरि संता ॥
जे करि हैं निति पूजन भव्य सुपुण्य लहै परलोक गमंता।
जे परि हैं थुति गाय सुपार्य निबोध फुरैं तिनिकूं जु अनंता ॥ १ ॥

ऐसैं तत्वारथका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं प्रथम अध्याय संपूर्ण भया ॥

इति श्री परमपूज्य धर्मसाम्राज्यनायक योगींद्रचूडामणि, सिद्धांतपारंगत, चारित्रचक्रवर्ति श्री १०८ आचार्य श्रीशांतिसागरजी महाराजके आदेशसे ज्ञानदानके लिए श्री. प. पू. चा. च. आ. श्री १०८ शांतिसागर दिगंबर जैन जीर्णोद्धारक संस्थाकी ओरसे छपी हुआी श्री तत्वार्थसूत्रकी श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचित सर्वार्थसिद्धीकी पंडित जयचंदजीकृता टीका-वचनिकाविषै प्रथम अध्याय संपूर्ण भया ॥ १ ॥

ग्रंथ प्रकाशन समिति फलटण; वीर सं. २४८१

———***———

—— श्रीवीतरागाय नमः ——

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

[ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण

वीर सवत् २४८१]

अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता

दोहा— उदयज उपशम मिश्र तजि, क्षायिक भाव उघारि ॥
जीवभाव उज्जल कियो, नमू ताहि मद छारि ॥ १ ॥

ऐसैं मंगलकारि सर्वार्थसिद्धिटीकाकारका वचन लिखिये हैं । तहां शिष्य पूछै है, हे भगवन् ! सम्यग्दर्शनका विषय भावकारि कहै जे जीवादितत्त्वनिमैं आदिविषैं कह्या जो जीव, ताका स्वतत्त्व कहिये निज यथार्थ असाधारणस्वरूप कहा है? सो कहिये । ऐसैं पूछतैं आचार्य सूत्र कहै है—

॥ औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥

याका अर्थ— औपशमिक क्षायिक मिश्र औदयिक पारिणामिक ए पाच भाव हैं ते जीवके निजतत्त्व है ॥ तहां आत्माविषैं कर्मकी निजशक्तिका कारणके वशतैं अनुद्भूति कहिये उदय न होना सो उपशम है । जैसैं कतकादि कहिये निर्मली आदि वस्तुके संबंधतैं जलविषैं कर्दमका उपशम होय जलकै पींदै बैठी जाय ऊपरितै जल उज्जल होय जाय, तैसैं उपशम जाननां । वहुरि कर्मकी अत्यंतनिर्वृत्ति होय तत्त्वमैंसूं उठि जाय सो क्षय है । जैसैं उसही जलकों निर्मल पात्रमैं लीजिये तव कर्दमका अत्यंत अभाव है । तैसैं क्षय जाननां । वहुरि उपशम भी क्षय भी दोऊ स्वरूप होय तहां मिश्र है । जैसैं तिसही जलविषैं कतकादि द्रव्य डारै कर्दमका क्षीणाक्षीणवृत्ति कहिये कछु तौ पींदै बैठ्या कछू

गलदाई रही कछु वाहारि निकस्या, तैसैं क्षयोपशम जाननां । बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावके निमित्ततैं कर्मके फलकी
प्राप्ति कहिये उदय आवनां प्रकट होनां सो उदय है । बहुरि द्रव्यका आतमलाभ कहिये निजस्वरूपका पावनां जातैं होय
सो परिणाम है । जैसैं सुवर्णके पीततादि गुण, कंकण कुंडल आदि पर्याय, तैसै परिणाम जाननां । इहां कर्म आदिकका
निमित्त नाही लेना । तहां उपशम है प्रयोजन जाका ताकूं औपशमिक कहिये । यहां प्रयोजनार्थमैं इक प्रत्ययतैं सिद्धि
किया है । ऐसैंही क्षायिक क्षायोपशमिक औदयिक पारिणामिक जाननां । ते पांच भाव असाधारण जीवके स्वतत्त्व कहिये॥

अब इनिका अनुक्रमका प्रयोजन कहै हैं । इहां सम्यग्दर्शनका प्रकरण है । तहां तीन प्रकार सम्यग्दर्शनविषैं औप-
शमिक पहलै होय है । अनादिमिथ्यादृष्टीकै प्रथमही औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्ति होय है । तातैं सूत्रविषैं याकूं आदिविषैं
कह्या है । ताकै पीछै क्षायिक ग्रहण किया है । जातैं यहू निर्मलताईमैं याकी स्पर्धा बरोबरी करै है, प्रतियोगी है ।
तथा संसारी जीवनिकी अपेक्षा द्रव्यनिकी गणती कीजिये तब औपशमिकवाले जीवनितैं असंख्यातगुणे क्षायिकवाले जीव
है । काहेतैं ? जातैं औपशमिककाल अंतर्मुहूर्त मात्र है । तामैं भेले होय तब अल्पही होय । यातैं क्षायिकका काल
संसारीकी अपेक्षा तेतीस सागर कछू अधिक है । सो तातैं तहां जीवनिकी संख्या भी असंख्यातगुणी भई । ताकै पीछैं
मिश्र कहिये क्षायोपशमिकका ग्रहण है । जातैं इहां दोऊ स्वरूप है । तथा जीव भी इहां असंख्यातगुणे होय हैं । याका
काल छ्यासटी सागरका है । बहुरि ताकै पीछै औदयिक पारिणामिकका ग्रहण अंतमैं किया । जातैं इहां भी जीवनिकी
संख्या तिनितैं अनंतगुणी है । इहां कोई कहै है, जो, या सूत्रमैं भावनिकैं जुदी जुदी विभक्तिकरि वाक्य किया सो
कौन कारण ? द्वंद्वसमासतैं निर्देश करना था । कैसैं ? " औपशमिकक्षायिकमिश्रौदयिकपारिणामिकाः " ऐसैं । इस भांति
किये दोय चकार न आवते तब सूत्रमैं अक्षर थोरे होते । ताकूं कहिये, ऐसी आशंका न करणी । जातैं इहां मिश्र
ऐसा कह्या हैं सो दोय अन्य गुणकी अपेक्षा है । तातैं वाक्यविषैं चकार शब्दतैं पहले कहे जे औपशमिक क्षायिक
ए दोय तेही मिश्रमैं ग्रहण करने अन्य न लेणे । बहुरि कहै, जो, क्षायोपशमिक ऐसा शब्द क्यौं न कह्या मिश्र काहेकूं
कह्या ? तहां कहिये, क्षायोपशमिक कहनेमैं गौरव होय है– अक्षर सूत्रमैं वधि जाय । तातैं वाक्यकरि मिश्र ग्रहण
किया है । बहुरि मिश्रका ग्रहण बीचि किया, ताका यहू प्रयोजन है, जो, पहले पिछले दोनूंकी अपेक्षा लेणी है । औप-
शमिक क्षायिक तौ भव्यहीकै होय है । बहुरि मिश्र हैं सो भव्यकै भी होय अभव्यकै भी होय । बहुरि औदयिक
पारिणामिक ए दोऊ भी भव्य तथा अभव्य दोऊहीकै होय । तातैं मिश्रका बीचि ग्रहण है ॥

बहुरि कोई पूछै है, भावशब्दकी अपेक्षा स्वतत्त्व शब्दकै ताके लिंग तथा संख्याका प्रसंग आवै है । जातैं भावशब्द

पुरुषलिंगी है । तातैं स्वतत्त्वकै भी पुरुषलिंग चाहिये । तथा भावनिकी संख्या बहुत है, तातैं स्वतत्त्वकै बहुवचन चाहिये । ताकूं कहिये स्वतत्त्वशब्द है सो उपात्तलिंग संख्यारूप है याका लिंग पलटै नाहीं । तथा तत्त्वशब्द भाववाची है । तातैं भावके एकही वचन होय है । जातैं तस्य भावस्तत्त्वं ऐसा है, तातैं संख्या भी पलटै नांही तातैं दोष नांही । बहुरि इहां ऐसा विशेष जाननां, जो, जीवके पांच भाव कहे तातैं चैतन्यमात्रही नांही है । सांख्यमती पुरुषका स्वचैतन्यमात्र माने है । बहुरि बुध्यादिक विशेषगुणका भी वैशेषिक मतवाला पुरुषकै अभाव माने है । बहुरि वेदांतमती आनंदमात्र ब्रह्मस्वरूप मानै है । बौद्धमती चितकूं प्रभाकर मात्र मानै है । सो सर्वथा एकांततैं यहु बणै नांही । पंचभावरूपही जीवका स्वरूप प्रमाणसिद्ध है ऐसा जाननां ॥

आगैं शिष्य पूछै है, तिस आत्माके पांच औपशमिकादिक भाव कहे ते कहा उत्तरभेदसहित है कि अभेदरूप है ? ऐसै पूछै उत्तर कह्या, जो, भेदसहित है । फेरि पूछै, जो, ऐसै है तौ तिनिके भेद कहो । ऐसैं पूछै आचार्य सूत्र कहै हैं—

॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदाः यथाक्रमम् ॥ २ ॥

याका अर्थ— पहलै सूत्रमैं पांच भाव कहै हैं । तिनके अनुक्रमतैं दोय नव अठारह इकईस तीन ए भेद हैं ॥ तहा दोय आदिक सख्याशब्दनिका द्वंद्वसमासकरि अरु भेदशब्दकै स्वपदार्थवृत्ति तथा अन्यपदार्थवृत्ति जाननी । कैसै सोही कहिये है । दोय बहुरि नव बहुरि अठारह बहुरि इकईस बहुरि तीन ऐसै तौ द्वंद्ववृत्ति भई । बहुरि तेही भेद ऐसैं स्वपदार्थवृत्ति भई । ए कहे तेही भेद हैं । ऐसैं भेदशब्द संख्याहीका संबंधी भया । तब ऐसै संबंध होय पांचौं भावनिका बहुवचन षष्ठीविभक्ति करि कहनां, जो, ये भेद पांच भावनिके हैं । बहुरि ते हैं भेद जिनके इहां अन्यपदार्थवृत्ति भई । जातैं ए भेद पूर्वोक्त भावनिके हैं । तहा विभक्ति भावनिके सूत्रमैं कही सोही रही । बहुरि यहां यथाक्रम ऐसा वचन है सो यथासंख्यके जानने अर्थि है । बहुरि भेदका न्यारा न्यारा संबंध करणा । तातैं औपशमिक दोय भेदरूप है । क्षायिक नव भेदरूप है । मिश्र अठारह भेदरूप है । औदयिक इकईस भेदरूप है । पारिणामिक तीन भेदरूप है । ऐसैं जानिये है ॥

आगे शिष्य पूछै है, जो, ऐसै है तो औपशमिकके दोय भेद कौनसे हैं ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै है—

॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥

याका अर्थ-- औपशमिकभावके भेद औपशमिकसम्यक्त्व औपशमिकचारित्र ए दोय हैं ॥ सम्यक्त्वचारित्र तौ पूर्वैं जिनका लक्षण कह्या तेही जानने । बहुरि पूछै है, तिनिके औपशमिकपणा कैसैं है ? तहां कहिये है, चारित्रमोह दोय प्रकार है । एक कषायवेदनीय एक नोकषायवेदनीय । तहां कषायवेदनीयका भेदनिमैंसूं अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि लेने । बहुरि दर्शनमोहके तीन भेद हैं मिथ्यात्व सम्यक्त्वप्रकृति सम्यङ्मिथ्यात्व ऐसैं । इनि सात प्रकृतिनिके उपशमतैं औपशमिकसम्यत्व होय है । इहां कोई पूछै है, अनादिमिथ्यादृष्टि भव्यकै कर्मका उदयकरि कलुषपणां है, ताकै उपशम काहेतैं होय ? ताका समाधान- काललब्धि आदिके निमित्ततैं होय है । तहां प्रथम तौ कर्मसहित आत्मा भव्यजीवकै संसार अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन नामा कालमात्र अवशेष रहै, तब प्रथमोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेयोग्य होय है । जो संसार अधिक बाकी होय तौ सम्यक्त्वग्रहण न होय । ऐसैं एक तौ काललब्धि यहू है । बहुरि दूसरी काललब्धि यहू है, जो, कर्मकी स्थिति उत्कृष्ट जाकै बंधती न होय तथा सत्ताका कर्मकी होय तथा जघन्यस्थितिबंधकी तथा सत्ताकी होय तौ तिस अवसरमैं सम्यक्त्वका लाभ न होय । तौ कहां होय ? जब अंतःकोटाकोटी कहिये एक कोडाकोडी सागरमैं नीचै स्थिति लिये कर्मबंध भावकूं प्राप्त होय, तथाविशुद्धपरिणामके वशतैं सत्ताका कर्मबंधकी स्थितितैं संख्यात हजार सागर घाटि रह जाय, तब प्रथमसम्यक्त्वग्रहणयोग्य होय है ॥ बहुरि तीसरी काललब्धि भवकी अपेक्षा है । जो भव्यजीव पंचेंद्रिय होय संज्ञी होय पर्याप्त अवस्थासहित होय सर्वतैं विशुद्धपरिणाम होय सो प्रथमोपशमसम्यक्त्वकूं उपजावै है । बहुरि आदिशब्दकरि जातिस्मरण आदिक लेणे । बहुरि समस्त मोहनीयकर्मके उपशमतैं उपशमचारित्र होय है । तहां सूत्रमैं सम्यक्त्वका आदि वचन है सो चारित्र सम्यक्त्वपूर्वकही होय है । आत्मा पहली सम्यक्त्व अवस्थारूप होय है । अब आत्माकै चारित्र अवस्था प्रकट हो है ॥

इहां सम्यक्त्वकी उत्पत्तिका विशेष लिखिये हैं । तहां प्रथमोपशमसम्यक्त्व उपजे पीछे अंतर्मुहूर्तकाल रहै है । तहां मिथ्यात्वकर्मकूं तीन प्रकार विभाग करै मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्प्रकृतिमिथ्यात्व ऐसैं । बहुरि यह कहां उपजै है ? तहां नारकी तौ तहां उपजे पीछै अंतर्मुहूर्त पीछै उपजावै है । पहली दूसरी तीसरी पृथ्वीवाला तौ केई जातिस्मरणतैं केई धर्मश्रवणतैं केई वेदनाकरि पीड्या हूवा उपजावै है । बहुरि नीचली च्यार पृथ्वीवाला धर्मश्रवणविना दोयही कारणतैं उपजावै है । बहुरि तिर्यंच उपजै पीछै च्यारितैं ले आठ दिनके उपरि उपजावै है । तहां जातिस्मरण धर्मश्रवण जिनबिंब-

दर्शन ए तीन कारण हैं। बहुरि मनुष्य नवमां वर्षतैं उपजावै है। आठवर्षतांई नांही उपजै है। तहां भी जातिस्मरण धर्मश्रवण जिनबिंबदर्शन ए तीन कारण है। बहुरि देवगतिविषैं उपजे पीछै अंतर्मुहूर्त पीछै उपजावै है। तहां भवनवासीनितैं ले सहस्रारस्वर्गतांईका तौ जातिस्मरण धर्मश्रवण जिनमहिमाका दर्शन देवनिकी ऋद्धिका देखना इनि च्यारि कारणतैं उपजावै है। बहुरि आनतादि च्यारि स्वर्गनिके देवनिकै ऋद्धिदर्शनविना तीन कारणतैं उपजावै है। बहुरि नव ग्रैवेयकका जातिस्मरण धर्मश्रवण ए दोयही कारणतैं उपजावै है ऐसैं जाननां ॥

आगैं, जो क्षायिकभाव नवप्रकार कह्या ताके भेदस्वरूपके प्रतिपादनके आर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥ ४ ॥

याका अर्थ— केवलज्ञान केवलदर्शन क्षायिकदान लाभ भोग उपभोग वीर्य बहुरि चकारतैं क्षायिकसम्यक्त्व क्षायिकचारित्र ऐसैं नव प्रकार क्षायिकभाव हैं। इहां चशब्द है सो सम्यक्त्वचारित्र पूर्वसूत्रमैं कहे तिनिका ग्रहणकै आर्थि है। बहुरि ज्ञानावरण नामा कर्मके अत्यंतक्षयतैं तौ केवलज्ञान क्षायिक हो है। बहुरि तैसैंही दर्शनावरण नामा कर्मके अत्यंतक्षयतैं केवलदर्शन क्षायिक हो है। बहुरि दानांतराय नामा कर्मके अत्यंत क्षयतैं अनंतप्राणीनिके उपकार करनेवाला क्षायिक अभयदान होय है। बहुरि लाभांतराय नामा कर्मके अत्यंत अभावतैं नाही है कवलाहारकी क्रिया जिनिकै ऐसे जे केवली भगवान् 'जिनिके शरीरके बलाधानके कारण अन्यमनुष्यनिके ऐसैं नाही' परमसुन्दर सूक्ष्म समय समय प्रति अनंते पुद्गलके परमाणू संबंधकूं प्राप्त होय है, नोकर्मका समयप्रबद्ध ऐसा आवै है सो क्षायिकलाभ है। बहुरि भोगांतराय नामा कर्मके समस्तके अभावतैं अतिशयवान् पुष्पवृष्टि आदिक अनेकविशेष लिये अनंते क्षायिक भोग हैं। बहुरि उपभोगांतरायनामा कर्मके निरवशेष प्रलय होनेतैं सिंहासन चामर छत्रत्रयादिक विभूति प्रगट भये, ते क्षायिक अनंत उपभोग हैं। बहुरि वीर्यांतराय कर्मके अत्यंत क्षयतैं क्षायिक अनंतवीर्य प्रगट भया है। बहुरि पूर्व कहि जे मोहकी सात प्रकृति तिनिका अत्यंत नाश होनेतैं क्षायिकसम्यक्त्व हो है। बहुरि चारित्रमोहके अत्यंत अभावतैं क्षायिकचारित्र प्रकट हो हैं। ऐसैं क्षायिकके नव भाव है। इहां प्रश्न, जो, क्षायिकका दानादिक भावकरि क्रिया अभयदानादिक है, तौ सिद्धनिकै भी अभयदानादिकका प्रसंग आवै है। ताका उत्तर आचार्य कहै है, यह दोष इहां नाही आवै है। अरहतनिकै शरीरनामा नामकर्म तथा तीर्थंकरनामा नामकर्मका उदय पाइये है ताकी अपेक्षातैं कहै हैं। बहुरि तिनि कर्मनिका अभावतैं सिद्धनिकै इनिका प्रसंग नाही है। फेरी पूछै, जो, ऐसैं है तौ सिद्धनिकै इनि भावनिकी कैसैं प्रवृत्ति है? ताका उत्तर–

परम उत्कृष्ट अनंतवीर्य अव्याबाधस्वरूपकरिही तिनिकी तहां प्रवृत्ति है । जैसैं केवलज्ञानरूपकरि अनंतवीर्यकी प्रवृत्ति हो है, तैसैं यहु भी जाननां ॥

आगैं, जो क्षायोपशमिक भाव अठरा भेदरूप कह्या ताका भेदनिका निरूपणकै अर्थि सूत्र कहै हैं ॥

॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥

याका अर्थ-- ज्ञान चारी भेद, अज्ञान तीन भेद, दर्शन तीन भेद, अंतरायका क्षयोपशमरूप लब्धि पांच भेद, ऐसैं पंधरा तौ ये, बहुरि क्षायोपशमिकसम्यक्त्व क्षायोपशमिकचारित्र संयमासंयम ऐसैं तीन ये सब मिलि अठारह क्षायोपशमिकभाव हैं ॥ च्यारि बहुरि तीन बहुरि तीन बहुरि पंच ऐसैं द्वंद्ववृत्तिकरि बहुरि ए हैं भेद जिनिकै ऐसैं भेद-शब्दतैं वृत्ति करनी । यथाक्रमकी पूर्वसूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी । च्यारि आदि संख्या ज्ञानादिककै लगावणी । ऐसैं च्यारि ज्ञान मति श्रुत अवधि मनःपर्यय । तीन अज्ञान कुमति कुश्रुत विभंग । तीन दर्शन चक्षु अचक्षु अवधि । पांच लब्धि दान लाभ भोग उपभोग वीर्य । ऐसैं पंधरै भये । तहां सर्वघातिस्पर्द्धकनिका तौ उदयक्षयतैं बहुरि तिनिहीका सत्तारूप उपशमतैं बहुरि देशघातिस्पर्द्धक उदय होतैं क्षायोपशमिक भाव होय है । तहां ज्ञानादिककी प्रवृत्ति अपने आवरण तथा अंतरायके क्षयोपशमतैं होय है । बहुरि सम्यक्त्व इहां वेदकसम्यक्त्व लेणा । यहु अनंतानुबंधी कषाय चतुष्कका तथा मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व इनि दोऊनिके उदयक्षयतैं तथा सत्तारूप उपशमतैं बहुरि सम्यक्त्वप्रकृतिके देशघातिस्पर्द्धकका उदय होतैं जो तत्त्वार्थश्रद्धान हो है सो क्षायोपशमिकसम्यक्त्व है । बहुरि अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान इनि बारह कषायनिके उदयक्षयतैं बहुरि सत्तारूप उपशमतैं बहुरि संज्वलनकषायके चतुष्कमैं किसी एक कषायके देशघाति-स्पर्द्धकनिका उदय होतैं बहुरि हास्यादि नोकषायका यथासंभव उदय होतैं जो त्यागरूप आतमाका परिणाम होय सो क्षायोपशमिकचारित्र है । बहुरि अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान कषाय अष्टकका उदयक्षयतैं बहुरि सत्तारूप उपशमतैं बहुरि प्रत्याख्यानकषायका उदय होतैं बहुरि संज्वलन कषायके देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय होतैं बहुरि नोकषाके नवकका यथा-संभव उदय होतैं आत्माकै विरताविरत परिणाम हो है सो क्षायोपशमिक संयमासंयम है। याकूं देशविरति भी कहिये ॥

इहां कोई पूछै, स्पर्धक कहा? ताका समाधान-- जो, कर्मके परमाणूंनिविषैं फल देनेकी शक्तिरूप रस है तिनिके अवि-भागप्रतिच्छेदके समूहकी पंक्ति क्रमरूप वृद्धि तथा हानि ते स्पर्द्धक कहिये हैं । तहां उदयमैं आया जो कर्मपरमाणूंनिका एकसमयविषैं एकसमयप्रबद्ध, तामैं सिद्ध राशिके अनंतवै भाग अभव्यराशितैं अनंतगुणे परमाणू होय हैं, तिनिविषैं सर्व

जघन्यगुण जामैं होय ऐसा एक परमाणू लेणा। ताका अनुभागकूं बुद्धिकरि छेदनतैं जहां ऐसा छेद होय ताका फेरि दुसरा छेद न होय ऐसैं अविभाग परिच्छेद सर्वजीवनितैं अनंतगुणां है, ताकी एक राशि कीजिये ताका नाम वर्ग है। वहुरि समान अविभागपरिच्छेदके समूहरूप परमाणूनिके समूहका नाम वर्गणा है। तहां थोरेसूं थोरे अविभागपरिच्छेदके परमाणूनिका नाम जघन्य वर्ग है। तिसके समान परमाणूरूप वर्गके समूहका नाम जघन्यवर्गणा है। वहुरि जघन्यवर्गतैं एक अविभाग परिच्छेद वधता तामैं पाईये ऐसी परमाणूनिके समूहका नाम द्वितीय वर्गणा है। ऐसैं जहांताई एक एक अविभागप्रतिच्छेदनिका क्रम लिये जेती वर्गणा होय तितनी वर्गणानिके समूहका नाम जघन्यस्पर्द्धक है। वहुरि यातैं उपरि जघन्यवर्गणाके वर्गनिविषैं जे अविभागप्रतिच्छद थे तिनितैं दूणे जिस वर्गणाके वर्गविषैं अविभागप्रतिच्छेद होय तहांतैं द्वितीयस्पर्द्धकका प्रारंभ होय तहां भी एक एक अविभागप्रतिच्छेद वधनेका क्रमरूप वर्गनिका समूहरूप जेती वर्गणा होय तिनिके समूहका नाम द्वितीय स्पर्द्धक है। वहुरि ऐसैंही प्रथमस्पर्द्धककी प्रथमवर्गणाके वर्गनिविषैं जेते अविभागप्रतिच्छेद थे तिसतैं तिगुणे जिस वर्गणाके वर्गनिविषैं अविभागप्रतिच्छेद पाईये तहांतैं तीसरे स्पर्द्धकका प्रारंभ होय, ऐसैंही वर्गणाके समूहका नाम स्पर्द्धक है। सो ऐसैं स्पर्द्धक अभव्यराशितैं अनंतगुणा अरु सिद्धराशिकै अनंतवै भाग एक उदयस्थानविषैं हो है ऐसैं जाननां॥

आगै जो इकईस भेदरूप औदयिक भाव कह्या ताके भेदनिके नाम कहनेके अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिध्दलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥ ६ ॥

याका अर्थ-- गति च्यारि भेद, कषाय च्यारि भेद, लिंग कहिये वेद तीन भेद, मिथ्यादर्शन एक, अज्ञान एक, असंयम एक, असिद्ध एक, लेश्या छह, ऐसै इकईस भेदरूप औदयिक भाव है॥ तहां यथाक्रम ऐसी तौ पूर्वसूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी। तिसके संबंधतैं गति तौ च्यारि भेद, नरकगति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति। तहां अपने अपने नामकर्मकी प्रकृतिके उदयतैं होय है तातैं औदयिक है। वहुरि कषाय च्यारि भेद क्रोध, मान, माया, लोभ। ते भी अपनी अपनी मोहनीयप्रकृतिके उदयतैं होय हैं तातैं औदयिक हैं। लिंग तीन भेद स्त्रीवेद, पुंवेद, नपुंसकवेद। ते भी अपनी अपनी प्रकृतिकै उदयतैं होय हैं तातैं औदयिक हैं। मिथ्यादर्शन मिथ्यात्वनाम मोहनीयकी प्रकृतिके उदयतैं होय है। याकरि परिणाम तत्त्वार्थका अश्रद्धानरूप है। वहुरि ज्ञानावरण नामा कर्मके उदयतैं पदार्थनिका ज्ञान न होय सो अज्ञान। वहुरि चारित्रमोहके सर्ववातिस्पर्द्धकनिके उदयतैं असंयम होय सो औदयिक असंयत है। वहुरि सामान्यकर्म-

निके उदयकी अपेक्षारूप असिद्धपणां औदयिक है । बहुरि लेश्या द्रव्यभावरूप दोय है । सो इहां जीवके भावका अधि-
कार है तातैं द्रव्यलेश्या न लेणी । भावलेश्या लेणी । कषायनिके उदयकरि रंजित जो योगनिकी प्रवृत्ति सो लेश्या है ।
सो छह प्रकार है । कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल ऐसैं । इहां प्रश्न– जो, उपशांतकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवली
इनिविषैं शुक्ललेश्या आगममैं कही है । तहां कषायके उदयका तौ अभाव है । औदयिकपणा नाही बनेगा । ताका
उत्तर आचार्य कहै हैं– जो, यहु दोष इहां नाही है । इहां पूर्वभाग जनावनेकी नयकी अपेक्षा है । जो योगनिकी प्रवृत्ति
कषायनिकरि अनुरंजित पहलै थी, सोही उपचारतैं इहां जाननी । तातैं औदयिकही कहिये । बहुरि योगके अभावतैं
अयोगकेवली लेश्यारहित है ऐसा निश्चय कीजिये है इहां कोई पूछै अन्यप्रकृतिनिके उदयतैं भये भाव औदयिकभावनिमैं
क्यौं न कहे ? ताका समाधान— जो, इनिही भावनिमैं गर्भित जानने । शरीरादिक पुद्गलविपाकीनिका तौ इहां जीवभाव
कहनेतैं अधिकारही नाही । बहुरि जाति आदि जीवविपाकीगतिमैं गर्भित जानने । बहुरि दर्शनावरणीयका उदय मिथ्या-
दर्शन कहनेतैं गर्भित किया है । जातैं अतत्त्वार्थश्रद्धानका भी नाम मिथ्यादर्शन है । बहुरि अन्यथा देखनेका भी नाम
मिथ्यादर्शन है । बहुरि हास्यादिक वेदनिके सहचारी हैं । तातैं वेदनिमैं गर्भित भये । बहुरि वेदनीय आयु गोत्रका
उदय भी अघातिया है सो गतिमैं गर्भित जानने ॥

आगैं, पारिणामिक भाव तीन भेदरूप कह्या ताके भेदनिके प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥ ७ ॥

याका अर्थ— जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व ए तीन पारिणामिक भावके भेद हैं ॥ ए तीन भाव पारिणामिक अन्यद्रव्य-
नितैं असाधारण आत्माके जानने । जातैं कर्मका उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशमकी अपेक्षा इनिमैं नांही है । द्रव्यके
परिणामकीही अपेक्षारूप है । तहां जीवत्व तौ चैतन्यकूं कहिये । बहुरि सम्यग्दर्शनादि भावकरि परिणमैगा ताकूं भव्य
कहिये । बहुरि सम्यग्दर्शनादिक जाकै न होयगे सो अभव्य कहिये । ए तीन भाव जीवकै पारिणामिक हैं । इहां प्रश्न–
जो अस्तित्व, नित्यत्व, प्रदेशवत्त्व इत्यादिकभाव हैं ते भी पारिणामिक हैं, तिनिका भी इस सूत्रमैं ग्रहण करना चाहिये ।
ताका उत्तर– जो, इनिका ग्रहण नहि करना चाहिये । अथवा चशब्दकरि किया भी है । फेरि पूछै है, जो, ग्रहण किया
है तौ तीनकी संख्या विरोधी जाय है । तहां कहिये, जो, ए असाधारण जीवके भाव पारिणामिक तीनही हैं । बहुरि
अस्तित्व आदि हैं ते जीवकै भी हैं अजीवकै भी हैं तातैं साधारण हैं । यातैं चशब्दकरि न्यारे ग्रहण कीजिये ।

इहा तर्क— औपशमिकादिभाव जीवकै नाही वणै हैं। जातैं आत्मा अमूर्तिक है। तातैं ते भाव कर्मबंधकी अपेक्षारूप हैं। अमूर्तिककै कर्मबंध युक्त नाही। तहा उत्तर— जो, आत्मा अमूर्तिकही है ऐसा एकांत नाही है। इहां अनेकांत है। आत्मा कर्मबंधपर्यायकी अपेक्षा तिस कर्मके बंधनतैं कथंचित् मूर्तिक है। शुद्धस्वरूपकी अपेक्षा कथंचित् अमूर्तिक है। तहां फेरि तर्क करै है; जो, ऐसैं है तौ कर्मबंधका बंधनतैं आत्माका एकत्वपणां ठहऱ्या, तब अभेद ठहऱ्या, तब भेद कैसै वणैगा? ताकूं कहिये; यहु दोष नाही आवै है। जातैं बंधपर्यायकी अपेक्षा एकत्वपणांकूं होतैं भी लक्षण-भेदतैं या आत्माकै अर कर्मकै नानापणा अनेकपणां है ऐसा निश्चय कीजिये। सोही इहां सिद्धांतकी गाथा है ताका अर्थ— बंधप्रति तौ जीवकै अर कर्मकै एकत्वपणा है बहुरि लक्षणभेदतैं नानापणा है। तातैं जीवकै अमूर्तिकभाव है, सो अनेकांततैं सधै है॥ ऐसैं जीवके पाचभाव कहनेतैं सांख्यमती आदिक आत्माकूं शुद्धही एकांतकरि मानै हैं, तिनिका निराकरण भया। जातैं सर्वथा शुद्धही होय, तौ संसार बंध मोक्ष तथा मोक्षका उपाय आदिकी कथनी सर्व मिथ्या ठहरै। बहुरि पंचभावरूप आत्मा कहनेतैं स्याद्वादनयकरि बंधमोक्षादि सर्वही कथंचित्प्रकार सिद्ध होय है। ऐसैं सात सूत्रनिकरि जीवके पाचभावनिका वर्णन किया॥

आगै, जो बंधप्रति एकत्व है सो लक्षणभेदतैं बंध अरु आत्मा जुदे जाने जाय हैं। सो जीवका कहा लक्षण है? जातैं जुदा जानिये सो कहौ ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ उपयोगो लक्षणम् ॥ ८ ॥

याका अर्थ— उपयोग है सो जीवका लक्षण है॥ उभयनिमित्त कहिये बाह्य अभ्यंतर कारणनिके वशतैं उपज्या जो चैतन्यकै अनुविधायी कहिये जुड्या हुवा चैतन्यहीका परिणाम सो उपयोग है। तिसकरि आत्माकै बंधप्रति एकपणाकूं होतैं भी आत्मा जुदा लखिये है। जैसैं सोना रूपाका एकपिंड होतैं भी पीत श्वेतवर्ण आदिकरि भेद जान्या जाय है तैसैं भेद जानिये है॥

इहां तत्त्वार्थवार्तिक टीकाके अनुसार कछु लिखिये है। तहां बाह्य अभ्यंतर दोय कारण कहे तहां बाह्यके भी दोय भेद कहै है एक आत्मभूत एक अनात्मभूत। तहां आत्मभूत तौ शरीरके संबंधरूप इंद्रियनकूं कहे। बहुरि दीपक प्रकाशादिक अनात्मभूत कहे। बहुरि अभ्यंतर कारण के भी आत्मभूत अनात्मभूतकरि दोय भेद कहे। तहा द्रव्यमन वचन कायके योग पुद्गलरूप हैं तिनिकूं अनात्मभूत कह्या। बहुरि आत्माके चैतन्यभावतैं तन्मय जे प्रदेश तिनिमैं वीर्यांतराय

ज्ञानदर्शन आवरणके क्षयोपशम तथा क्षयके अनुसार उज्वलता होय ऐसा भावयोग ताकूं आत्मभूत कह्या । तहां इनिका यथासंभव सन्निधान होतैं आत्माका चैतन्य स्वभाव है । सो अनुविधान कहिये अन्वय परिणामरूप प्रवर्तै वा परिणामकूं उपयोग कहिये । इहां कोई कहै- चैतन्यके परिणाम सुख दुःख मोहरूप भी हैं ते परिणाम भी ग्रहण करना चाहिये । अगले सूत्रमैं उपयोगके भेद ज्ञानदर्शनही कहे, सो पूर्वापरविरोध आवै है । ताका समाधान- इहां चैतन्यसामान्यके ग्रहणतैं सर्वहीका ग्रहण होय है । परंतु अगिले सूत्रमैं भेद किये जे दर्शनज्ञान तेही इहां ग्रहण करने । जातैं सामान्यका जो विशेष सर्वही अवस्थामैं व्यापक होय सोही लक्षणप्रकरणमै लेणा, तातैं विरोध नांही । अब इहां पूछै है, जो लक्षण कहा ? तहां कहिये हैं, जहां बहुत वस्तु मिली होय, तिनिमैं जिस चिन्हकरि वस्तुकी जुदायगी जाणी जाय तिस चिन्हकूं लक्षण कहिये । सो यहू आत्मभूत अनात्मभूत भेदकरि दोय प्रकार है । जैसैं अग्निकै उष्णपणां सो तौ आत्मभूत है । दंडी पुरुषकै दंड सो अनात्मभूत है । सो इहां आत्माका उपयोग लक्षण आत्मभूत जाननां ॥

इहां कोई कहै, जो, उपयोग तौ असाधारणधर्म है, तातैं लक्षण नांही, गुणकै अरु गुणीकै अन्यपणां है । जातैं लक्ष्यलक्षणकै भेद है । ताकूं कहिये, सर्वथा भेद होतैं अनवस्था हो है। तातैं कथंचिद्भेदाभेदात्मक होतैं लक्ष्य-लक्षणभावकी सिद्धि हो है। जाके मतमैं आत्मा एकांतकरि नित्य अभेद ज्ञानस्वरूप है, ताके मतमैं ज्ञानके परिणाम जे अनेक ज्ञेयाकार होना ऐसा उपयोग नांही सिद्ध हो है तहां सर्वव्यवहारका लोप हो है। तातैं चैतन्यके परिणामकूं उपयोग मानै सर्वसिद्धि है । सोही उपयोग लक्षण है आत्मा लक्ष्य है । इहां कोई कहै, आत्मा लक्ष्यही नांही तब लक्षण काहेका ? विना लक्ष्य लक्षण कहना ससाके सींगवत मींडकके चोटीवत् वांझके पुत्रवत् आकाशके फूलवत् अभावरूप है ॥ बहुरि जो आत्मा भी मानिये, तो ज्ञानदर्शन तौ अनवस्थित है । सो लक्षण बणै नांही । अनवस्थितकूं भी लक्षण मानिये तौ जब लक्षणका अभाव होय तब लक्ष्यका भी अभावही आवै है । ताकूं कहिये, आत्माका अभाव कहनां युक्त नांही । जातैं जो आत्माका अभाव कारणपणांके अभावतैं मानिये तौ आत्माके नारकादि पर्याय तौ मिथ्यादर्शना-दिक कारणतैं होयही है । बहुरि नारकादिपर्याय हैं ते द्रव्यविना निराश्रय होय नांही । तातैं इनिका आश्रय आत्मा द्रव्य हैही । तब कारणपणाका अभाव कैसैं ? बहुरि सत् है सो विनाकारण भी कहिये । सत्‌ही भया तब कारण काहेकूं चाहिये ? बहुरि मींडककै चोटिके अभावका दृष्टांत है सो मींडक आदि तथा चोटी आदिका सत्त्व मानिकरि मींडक आदिकै संबंधका अभाव मानिये है । तहां सत्त्व असत्त्व दोऊ पक्षका ग्रहण है । तातैं यहु दृष्टांत भी मिलै नांही । जातैं यहु जीव कर्मके वशतैं अनेक जातीके संबंधकूं पावै है । जब मींडक भया तब तौ चोटीका संबंध न

भया । बहुरि जब स्त्रीपर्याय पाई तब चोटी पाई । तब मीडक भी वही जीव था स्त्रीपर्यायमैं आया तब पूर्वपर्यायकी अपेक्षा स्त्रीकूं मंडूक कहै याकै चोटी कहिये तौ दोष नांही । तैसैंही आकाशके फूलके दृष्टांतके भी बणै है । जातैं कर्मके उदयतैं जीव वृक्ष भया । तब जीवपुद्गलके समुदायकूं फूल ऐसा नाम कहिये । ऐसैं पुद्गलद्रव्यतैं फूल व्याप्त है तैसैंही आकाशतैं भी व्याप्त कहिये ॥

इहां कहै, जो, वृक्षरूप पुद्गलकृत उपकारकरि वृक्षका फूल कहिये है तहां कहिये आकाशका किया अवगाहन उपकारकी अपेक्षा आकाशका फूल कहिये तौ कहां दोष ? वृक्षतैं तौ छूटै भी है । आकाशमैं तौ सदा रहै तातैं नित्य-संबंध है । बहुरि कहै, फूल आकाशतैं जुदी वस्तु है, तातैं आकाशका न कहिये । ऐसैं तौ वृक्षतैं भी जुदा पदार्थ है, तातैं वृक्षका भी न कहिये इत्यादि युक्तितैं दृष्टात भी वणता नाही । तातैं कारणके अभावतैं आत्माका अभाव मानिये तब यह तौ वणै नाही । बहुरि अनवस्थित उपयोगकै लक्षणपणाका अभाव कहै, सो चैतन्यका परिणाम ज्ञेयाकार परिणमैंही है । सामान्य उपयोग तौ नित्यही रहै है । याहीतैं भेदाभेदात्मक वस्तुका स्वरूप निर्बाध सिद्ध है । बहुरि कहै, जो, आत्मा प्रत्यक्ष नाही, तातैं अभाव मानिये । तहां कहिये, शुद्ध आत्मा तौ सकलप्रत्यक्ष केवलज्ञानगोचर है । बहुरि कर्मनोकर्मबंधसहित आत्मा अवधि मनःपर्यय ज्ञानकै भी गम्य है । बहुरि कहै, इंद्रियप्रत्यक्ष नाही, तातैं अप्रत्यक्ष है । इंद्रियज्ञान तौ परोक्ष है । बहुरि मानसप्रत्यक्षगम्य कहिये है, सो यह भी व्यवहारनयतैं सिद्ध हो है । परमार्थतैं मानसप्रत्यक्ष परोक्षही है । ऐसैंही अन्यवादीनिकरि कल्पित आत्माका अभाव साधनेके हेतु ते बाधासहित जानने जातैं आत्मा प्रतीतिसिद्ध है । बहुरि याका लक्षण उपयोग है सो प्रतीतिसिद्ध है । याकी विशेष चरचा श्लोक-वार्तिक तथा तत्त्वार्थवार्तिकतैं जाननी ॥

इहां कोई पूछै, पूर्वै जीवका स्वतत्त्व भाव कह्या बहुरि लक्षण कह्या, सो स्वतत्त्व अरु लक्षणमैं कहा विशेष है ? ताका समाधान, जो, स्वतत्त्व तौ लक्ष्य आत्माही है। बहुरि लक्षण है सो लक्षणही है । जो लक्षण है सो लक्ष्य नाही है । जातैं लक्ष्यलक्षणविषैं कथंचित् भेदाभेदकी सिद्धि पूर्वै कही है । तहां क्षायिक तथा क्षायोपशमिक भावविषैं ज्ञान-दर्शन भेदरूप कहे हैं । तिनि दोऊनिमैं सामान्यव्यापी उपयोगकूं इहां लक्षण कह्या है । चैतन्यशक्तिकी लब्धि है सो तौ नित्य है । ताकी व्यक्ति पंचभावरूप अनेक हैं । तिनिमैं उपयोग भी है सो छद्मस्थकै अनित्य है । ताकी स्थिति एक ज्ञेयकेविषैं रहना उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्तमात्र कह्या है । बहुरि अनुभवगोचर है, तातैं प्रसिद्ध है । लक्षण प्रसिद्धहीकूं कहिये है ।

आतमा लक्ष्य है सो शक्तिव्यक्तिमय है अरु लक्षण व्यक्तिही है । तातैं आत्माकी सिद्धि वादिप्रतिवादिप्रसिद्ध उपयोगहीतैं होय है । तातैं उपयोगकूं लक्षण कह्या है ॥

आगैं, कह्या जो उपयोग, ताके भेद दिखावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— पूर्वसूत्रमैं उपयोग कह्या, सो ज्ञानदर्शन भेदकरि दोय प्रकार है । तहां आठ भेदरूप ज्ञान है । च्यारि भेदरूप दर्शन है ॥ उपयोग दोय प्रकार है ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोग ऐसैं । तहां ज्ञानोपयोग आठ भेदरूप है मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, मत्यज्ञान, श्रुताज्ञान, विभंगज्ञान ऐसैं आठ भेद । बहुरि दर्शनोपयोग च्यारि प्रकार है चक्षुर्दर्शन, अचक्षुर्दर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन ऐसैं च्यारि भेद ॥ इहां पूछै, जो, दर्शनज्ञानविषैं भेद कहा ? तहां कहै हैं, साकार अनाकारके भेदतैं भेद है । साकार तौ ज्ञान है, जातैं ज्ञेयके आकार होहै । अनाकार दर्शन है, जातैं सत्तामात्र आकारकरि रहित ग्रहण करै है । सो ए दोऊ छद्मस्थ जीवकै तौ अनुक्रमतैं वर्तै है । पहले दर्शन हो है, पीछै ज्ञान हो है । बहुरि निरावरण जे केवली तिनिकै दोऊ युगपत् एककाल प्रवर्तै है । इहां सूत्रविषैं दर्शनतैं पहले ज्ञान कह्या है सो ज्ञान पूज्य प्रधान है । तथा इहां सम्यग्ज्ञानका प्रकरण है तातैं कह्या है । बहुरि पूर्वैं ज्ञान पांच प्रकार कह्या है । इहां उपयोग कहनेतैं विपर्ययज्ञानका भी ग्रहण किया है । तातैं आठ प्रकार कह्या है । ऐसैं दोय सूत्रकरि कह्या जो उपयोग लक्षण सो जीवकै शरीरतैं भेदकूं साधै है । जैसैं उष्णजलकी अवस्थामैं द्रवपणा अरु उष्णपणा जल अग्निके भेदकूं साधै है । जैसैं जहां दोय वस्तुका एक पिंड होय तहां लक्षण भेदतैंही भिन्नता दीखै है ऐसा जाननां ॥

आगैं, ऐसे उपयोगकरि सहित जे जीव उपयोगी ते दोय प्रकारके हैं, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥

याका अर्थ— उपयोगवाले जीव संसारी बहुरि मुक्त कहिये सिद्ध ऐसैं दोय प्रकार हैं ॥ 'संसरणं' कहिये परिभ्रमण परिवर्तन सो संसार है । तहां लक्षण ऐसा, जो, अपने भावकरि बांधे जे कर्म तिनिके वशतैं भवतैं भवांतरकी प्राप्ति ताकूं संसार कहिये । ऐसा संसार जिनिकै होय ते संसारी जीव कहिये । सो यहु परिवर्तन पंचप्रकार है द्रव्य–

परिवर्तन, क्षेत्रपारवर्तन, कालपरिवर्तन, भवपरिवर्तन, भावपरिवर्तन ऐसैं पाच प्रकार । तहां द्रव्यपरिवर्तन दोय प्रकार, एक नोकर्मपरिवर्तन दूसरा कर्मपरिवर्तन । तहां नोकर्मपरिवर्तन कहिये है । तीन शरीर छह पर्याप्तिके योग्य जे पुद्गलपरमाणूके स्कंध एक जीवने एकसमयविषैं ग्रहण किये ते स्निग्ध रूक्ष वर्ण गंध आदि तीव्र मंद मध्यमभावकारि जैसैं तिष्ठते द्वितीयादिक समयविषैं खिरै बहुरि द्वितीयादिक समयविषैं विना ग्रहे परमाणू अनंतवार ग्रहण करै तिनिकूं उलंघिकारि बहुरि पहलै ग्रहे थे तिनिमैंके गृहीत भी बहुरि नवे ग्रहण करै ते भी दोऊ मिले ग्रहण करै तिनिकूं मिश्र कहिये । ते भी अनंतवार अनंतवार ग्रहण करै तिनिकूं उलंघिकारि बहुरि वीचिमैं गृहीत ग्रहे थे ते गृहीतग्रहण होते जाय ते अनंतवार ग्रहणमैं आवै तिनिकूं उलंघिकारि जामैं जे पहले समय परमाणू ग्रहे थे तेही तैसैही स्पर्शादिके अविभागपरिच्छेदनिकी संख्या लिये तथा तितनेही परमाणूकूं लिये समयप्रबद्ध ग्रहण करै ऐसैं होतैं जो काल भया तब एक नोकर्मद्रव्यपरिवर्तन हो है ॥

बहुरि कर्मद्रव्यपरिवर्तन कहिये है। तहां एकसमयविषैं एक जीव अष्टविध कर्मभावकारि जे पुद्गल ग्रहण किये ते समय अधिक आवलीमात्र काल पीछै द्वितीयादिक समयविषैं निर्जरारूप भये फेरि पहलै कह्या तिसही विधानकारि अगृहीत गृहीत मिश्र अनंतवार ग्रहण करतैं जब कोई समय ऐसा होय तामैं पहले समय तिसही जीव जैसै स्पर्शादिकके अविभागपरिच्छेदकी संख्याकूं लिये तितनेही समयप्रबद्धमैं आय जाय तब तितनाही काल एककर्मद्रव्यपरिवर्तनका होय है । ऐसैं द्रव्यपरिवर्तन कहिये । इहा गाथा उक्तंच है ताका अर्थ— इस पुद्गलपरिवर्तनरूप संसारविषैं इस जीवनें सर्वही पुद्गल निश्चयकरि अनंतवार अनुक्रमतैं ग्रहण करि करि छोडै है ॥

आगैं क्षेत्रपरिवर्तन कहिये है । कोई जीव सूक्ष्म निगोदिया अपर्याप्तक सर्व जघन्य अवगाहनारूप प्रदेश शरीरकूं पाइ इस लोकविषैं मध्यके आठ प्रदेशनिकूं अपने शरीरकै मध्यदेशकरि उपज्या । पीछै क्षुद्रभवकी आयु स्वासकै अठारहवै भाग मऱ्या । बहुरि सोही जीव तिसही अवगाहनाकरि फेरि उपजिकारि मूवा । ऐसैंही तीसरी बार चौथी वार इत्यादि अपने शरीरके घन अंगुलकै असंख्यातवै भाग असंख्यात प्रदेश है तेतीही वार उपजवो किया । वीचिमैं अन्य अवगाहना तथा अन्य क्षेत्रमैं अनंतवार उपजवो किया ते गिणिये नाही । बहुरि ऐसैं एक एक प्रदेश वधता सर्वलोकके क्षेत्रकूं परसिकरि अनुक्रमतैं उपजैं अनुक्रमविना उपजै सो न गिणिये । ऐसैं सर्व लोक अपना जन्मक्षेत्र करै ताकूं जेता कछु अनंतकाल वीतै ताकूं एक क्षेत्रपरिवर्तन कहिये । इहा उक्तंच गाथा है । ताका अर्थ— इस क्षेत्रसंसारविषैं भ्रमता यहु जीव सो अनंत अवगाहनारूप शरीरकूं पाय इस सर्वलोकके क्षेत्रविषैं अनुक्रमतैं उपज्या तहां ऐसा क्षेत्र न रह्या जहां न उपज्या ॥

आगैं कालपरिवर्तन कहिये हैं। कोई जीव उत्सर्पिणी कालकै पहले समय उपज्या अपनी आयु पूरी भये मूवा। बहुरि सोही जीव दूसरे उत्सर्पिणी कालकै दूसरे समय उपज्या फेरि आयु पूर्णकरि मूवा। बहुरि सोही जीव तीसरे उत्सर्पिणी कालकै तीसरे समय उपज्या। ऐसैंही सोही जीव चौथे उत्सर्पिणी कालकै चौथे समय जन्म्यां। ऐसैंही अनुक्रमतैं दशकोडाकोडीसागरके उत्सर्पिणीकालके समयनिविषैं निरंतर जन्म लेवो किया बीचिबीचिमैं विना अनुक्रमतैं और और समयनिमैं जन्म लिया सो न गिणिये। बहुरि ऐसैही अवसर्पिणी कालकै समयनिविषैं जन्म लिया। ताके भी ऐसैही दशकोडाकोडिसागरके समय बीतै। बहुरि जैसै जन्म लिया तैसैही मरण तिनि समयनिविषैं अनुक्रमतैं करै तहां जेता कछु अनंतानंतकाल बीतैं ताकूं एक कालपरिवर्तन कहिये। इहां उक्तंच गाथा है ताका अर्थ— यहु जीव कालपरिवर्तननामा संसारविषैं भ्रमता उत्सर्पिणी अवसर्पिणीके समयनिकी पंक्तिविषैं अनेकवार जन्म लिया तथा मरण किया तामैं कोई समय अवशेष न रह्या ऐसैं भ्रम्या॥

आगैं भवपरिवर्तन कहिये है। नरकगतिविषैं सर्व जघन्य आयु दशहजार वर्षकी है। तिस आयुकूं पाय तहां प्रथम नरककै पहलै पाथडै उपज्या। पीछै अन्यगत्यादिविषैं भ्रमण करते फेरि कोई कालविषैं तिसही आयुकूं पाय तिसही पाथडै उपज्या। ऐसैंही दशहजार वर्षके समय होय तेती बार तौ तिसही आयुसहित तहांही उपजवो किया। बीचिमैं अन्य जायगा उपज्या सो न गिणिये। पीछै एकसमयाधिक दशहजार वर्षकी आयु पाय उपज्या। पीछै दशहजार वर्ष दोय समयाधिककी आयु पाय उपज्या। इसही अनुक्रमकरि तेतीस सागरकै समय जन्मतै तथा मरणतै पूर्ण करै। अनुक्रमरहित बीचिबीचि अन्यगति तथा आयुकरि उपजै तौ ते न गिणिये ऐसैं भ्रमतैं बहुरि तैसैंही तिर्यंचके गतिविषैं जघन्य आयु अंतर्मुहूर्तकी पाय उपज्या। पहले अनुक्रमकी ज्यौं इहां भी तीन पल्य प्रमाण आयुके समयनिविषैं अनुक्रमतैं उपजै मरै। बहुरि तैसैंही मनुष्यगतिकी तीन पल्यकी आयुके समयनिविषैं अनुक्रमतैं उपजै मरै। तैसैंही देवगतिकी आयु ग्रैवेयकनिकी इकतीस सागरतांईकी आयुके समय तिनिविषैं तहां उपजै मरै जेता अनंतानंतकाल बीतैं ताकूं एक भवपरिवर्तन कहिये। इहां उक्तंच गाथा है ताका अर्थ— यहु जीव भवपरिवर्तन नाम संसारविषैं मिथ्यात्वकरि सहित हुवा संता नरककी जघन्य आयुतैं लगाय ग्रैवेयकनिकी उत्कृष्ट आयुपर्यंत अनेकवार भवनिकी स्थिति आयु पाय पाय भ्रम्या है॥

आगैं भावपरिवर्तन कहिये हैं। तहां जीवके परिणामकूं भाव कहिये। सो कोई जीव संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्तक मिथ्यादृष्टि ज्ञानावरणकर्मकी प्रकृतिकी अपने योग्य जघन्यस्थिति अंतःकोटाकोटी कहिये कोडाकोडीसागरकै नीचै कोडीकै

कषायाध्यवसायस्थान असंख्यात लोकपरिमाण है। तिनि एक एक स्थानविषैं अनंतानंत अवि-
ऊपरिकीकूं प्राप्त होय। ताकूं कारण कपायाध्यवसायस्थान असंख्यात लोकपरिमाण है। तिनि एक एक स्थानविपैं अनंतानंत अवि-
भागपरिच्छेद हैं। जिनिमैं अनंतभागवृद्धि असंख्यातभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि संख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणवृद्धि अनंतगुणवृद्धि
तथा तैसैंही हानि भी । ऐसैं पट्स्थानप्रति हानिवृद्धि संभवै ऐसै है । ते इस अंतःकोटाकोटीसागरकी स्थिति बंधनेकूं
कारण जीवके कषायभावके स्थान असंख्यात लोककै जेते प्रदेश होय तेते हैं । तहां इनि कपायस्थाननिविपैं एकएकविपैं
अनुभागबंधाध्यवसायस्थान जे अनुभागबंधकूं कारण जे परिणाम ते असंख्यात लोकपरिमाण हैं । तहां कोई जीव जघन्य-
स्थितिकूं बांधै तहा वाकूं कारण जे कपायस्थान तिनिमैंसूं जघन्यस्थान लीजिये । वहुरि तिसि कपायस्थानविपैं अनु-
भागकूं कारण जे स्थान तिनिमैंसूं भी सर्वजघन्य लीजिये । तहां जो तिस प्रकृतिबंधकूं कारण जे योगस्थान ते श्रेणीके
असंख्यातवें भागपरिमाण असंख्यात हैं । ते अविभागप्रतिच्छेदनकरि अनंतभागवृद्धि रहित अनंतगुणवृद्धिरहित चतुः-
स्थानरूपही है । तिनिमैंसूं एक तिस प्रकृतिके योग्य योगस्थान लीजिये । तहां योगस्थान पलटै तब द्वितीय तृतीय ऐसैं
जगत् श्रेणीकै असंख्यातभागमात्र जे योगस्थान ते अनुक्रमतैं होय । वीचिवीचि अन्यकषायस्थान अन्य अनुभागस्थान
अन्य योगस्थान होय ते न गिणिये । ऐसैं जब श्रेणीकै असंख्यातवै भाग योगस्थान होय चुकै तब एक अनुभाग-
स्थान पलटै । ऐसैं असंख्यात लोकप्रमाण अनुभागस्थानविपैं एकएकविपैं योगस्थानश्रेणीकै असंख्यातवै भागपरिमाण होते
जाय तब अनुभागस्थान असंख्यात लोकपरिमाण अनुक्रमतैं होय चुकै तब एक कषायस्थान पलटै । तब दूसरा कषाय-
स्थान पलटै । तब दूसरा कषायस्थानविपैं भी तैसैंही अनुभागस्थान तथा योगस्थान होय । बहुरि तीसरे कषायस्थान--
विपैं अनुभागस्थान योगस्थान होय । ऐसैंही असंख्यातलोकपरिमाण कषायस्थान होय चुकै तब एक स्थितिस्थान पलटै।
दूसरा स्थितिस्थान पलटै । दूसरा स्थितिस्थान समयाधिक अंतःकोटाकोटी प्रमाण लीजिये । बहुरि तैसैंही असंख्यात-
लोकप्रमाण कषायस्थान तिनि एकएकविपैं असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागस्थान होय । बहुरि तिनि एकएक अनुभागस्थान-
विपैं असंख्यात योगस्थान होय तब तीसरा स्थितिस्थान समयाधिक लीजिये । ऐसैंही ज्ञानवरणीयकर्मकी उत्कृष्टस्थिति
तीस कोडाकोडी सागरकी है । तिनिकै समयाधिकक्रमकरि पूर्वैं कहे तैसे कषायस्थान होय वीचिवीचिमैं और और भाव
जीवके होय ते न गिणिये । ऐसैं सर्वकर्मकी स्थिति मूलप्रकृति तिनिकी तथा उत्तरप्रकृतिनिकूं कारण कषायस्थान अनु-
भागस्थान योगस्थानकी पलटनी अनुक्रमरूप होय चुकै । ताकूं जो अनंतानंतकाल वीतै तब एक भावपरिवर्तन कहिये ।
इनिका काल उत्तरोत्तर अनंतानंतगुणां जाननां । द्रव्यपरिवर्तनका अनंतकाल, तातैं अनंतगुणां क्षेत्रपरिवर्तनका काल, तातैं
अनंतगुणा कालपरिवर्तनका काल, तातैं अनंतगुणा भवपरिवर्तनका काल, तातैं अनंतगुणां भावपरिवर्तनका काल ऐसैं

जाननां । इहां उक्तं च गाथा है ताका अर्थ— मिथ्यात्वकरि जीव या भावसंसारविषैं भ्रमता सर्व प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशबंधके जेते स्थान हैं ते सर्वही पाये । ऐसैं पंचप्रकार संसारतैं जे जीव रहित भये सिद्ध भये ते मुक्तजीव कहिये । इहां संसारीनिका पहलै ग्रहण किया है । जातैं मुक्तका नाम संसारपूर्वक है । तथा संसारीनिके भेद बहुत हैं । तथा संसारी जीव अनुभवगोचर हैं । मुक्त अत्यंतपरोक्ष है । ऐसा भी हेतुतैं संसारीनिका पहलै ग्रहण किया है ॥

आगैं कहै हैं, जो, ए संसारी जीव हैं ते दोय प्रकार हैं ताका सूत्र–

॥ समनस्कामनस्काः ॥ ११ ॥

याका अर्थ– संसारी जीव हैं ते समनस्क कहिये मनसहित अमनस्क कहिये मनरहित ऐसैं दोय प्रकार हैं ॥ तहां मन दोय प्रकार है; द्रव्यमन, भावमन । तहां पुद्गलविपाकी कर्मप्रकृतिके उदयकी है अपेक्षा जाकूं ऐसा हृदयस्थानविषैं फूले कमलके आकार सूक्ष्म पुद्गलका प्रचयरूप तिष्ठै है सो तौ द्रव्यमन है । बहुरि वीर्यांतराय तथा नोइंद्रियावरणनामा ज्ञानावरणीय कर्मके क्षयोपशमकी है अपेक्षा जाकै ऐसै आत्माकै विशुद्धि सो भावमन है । तिस मनकरि सहित होय ते तौ समनस्क हैं । बहुरि जिनिकै मन विद्यमान नांही है ते अमनस्क हैं । ऐसैं मनके सद्भाव अभावकरि संसारीनिके दोय भेद हो हैं । इहां समासविषैं समनस्कका पूर्वनिपात है, सो पूज्य प्रधानपणांतैं है । जातैं समनस्ककै गुणदोषका विचारसहितपणां है, तातैं प्रधान है ॥

आगैं फेरि संसारी जीवनिके भेदकी प्राप्तिके अर्थि सूत्र कहै हैं–

॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥ १२ ॥

याका अर्थ– संसारी जीव हैं ते त्रस हैं तथा स्थावर हैं ऐसैं दोय प्रकार हैं ॥ इहां कोई कहै सूत्रविषैं संसारिका ग्रहण निरर्थक है । जातैं पहलै सूत्रमैं संसारिका नाम कह्या है, तातैं प्रकरणतैंही जानिये है । ताका समाधान, जो, निरर्थक नाही । जातैं पहलै याकै अनंतर सूत्र है, तामैं समनस्क अमनस्क कहे, ते संसारी ऐसैं जाननेके अर्थि हैं । जो पूर्वसूत्रका विशेषण न करिये तौ ताकै पूर्वं सूत्र " संसारिणो मुक्ताश्च „ ऐसा है, सो इस सूत्रका यथासंख्य संबंध होय तब समनस्क तौ संसारी अमनस्क मुक्त ऐसा अनिष्ट अर्थ होय । तातैं इस सूत्रमैं संसारीका आदिविषैं ग्रहण युक्त है ॥ बहुरि यहु पूर्वकी अपेक्षा भी है, तैसैंही अगलीकी भी अपेक्षा है । जातैं संसारी दोय प्रकारके त्रस और स्थावर है ।

तहां त्रस नामा नामकर्मकी प्रकृतिके उदयके वशतैं भये ते त्रस हैं। बहुरि स्थावरनामा नामकर्मकी प्रकृतिके उदयके वशतैं भये ते स्थावर है। इहां कोई कहैं; इनि शब्दनिका अर्थ तौ ऐसा है, पीडित होय भयसहित होय भागै चालै ते त्रस, बहुरि तिष्ठनेहीका स्वभाव जिनिका होय ते स्थावर सो ऐसा अर्थही क्यौं न कहौ? ताका समाधान ऐसा कहै आगमतैं विरोध आवै है। आगमविषैं ऐसा कह्या हैं, कायानुवादविषैं जो त्रस नाम द्वींद्रियतैं लगाय सयोगकेवलीपर्यंत है। तातैं चलने न चलनेकी अपेक्षातैं त्रस स्थावरपणां नाहीं है। कर्मोदयकी अपेक्षाहीतैं है। बहुरि इस सूत्रमैं त्रसका ग्रहण आदिविषै किया है सो याकै अक्षर अल्प है तथा पूज्य प्रधान है तातैं पूज्यपणा सर्व उपयोग याकै संभवै है ताकी अपेक्षा है ॥

इहां विशेष; जो, चलनेहीकी अपेक्षा त्रस कहिये तौ पवनादिक त्रस ठहरै, गर्भादिकविषै स्थावरही ठहरै। बहुरि तिष्ठनेहीकी अपेक्षा स्थावर कहिये तौ पवनादिक स्थावर न ठहरै, तातैं कर्मोदयकी अपेक्षाही युक्त है। बहुरि सर्वजीवनिकूं स्थावरही कहिये त्रस न कहिये। जातैं जीव क्रियातैं रहित सर्वगति है तौ जीवनतत्त्वके नाना भेद न ठहरै। तातैं क्रियासहित कथंचित् असर्वगतिहि माननां। बहुरि सर्वजीवनिकूं त्रसहि मानिये स्थावर न मानिये तौ वनस्पतिकायिकादिक जीव न ठहरै। जातैं चलतेकूंही जीव कहै तव सूता मूर्च्छित अंडेमैं तिष्ठता भी जीव न ठहरै। जो कहै तिनिका आकारविशेष है तातैं जीव है तौ ऐसैं वनस्पतिके भी जलादि आहार पावने न पावनेतैं हरित होना सूकी जाना ऐसैं लक्षणतैं जानिये ए जीव हैं। तातैं स्थावर त्रस दोऊही भेद माननां युक्त है ॥

आगैं, त्रसका भेद पहली कहना अनुक्रम है, ताकूं उलंघिकरि एकेंद्रियस्थावरके भेद प्रतिपत्तिके अर्थि सूत्र कहै है। जातैं एकेंद्रियके भेद बहुत नाही कहने है। तातैं तिनिकूं पहली कहि जाय है—

॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥ १३ ॥

याका अर्थ— पृथिवी अप् तेज वायु वनस्पति ए पांच स्थावर जीव हैं ॥ स्थावर नामा नामकर्मकी प्रकृतिके भेद पृथिवीकायिकादि कहे है। ताके उदयके निमित्ततैं जीवनिकै पृथिवीकायिकादिक संज्ञा जाननी। इनिके शब्द पृथनादिक धातुनितैं निपजै हैं। तौ भी रूढिके वशतैं पृथनादिक कहिये विस्तारादिक अर्थकी इहा अपेक्षा न करणी। इनि पृथिवी आदिके आर्ष कहिये ऋषिनिके आगमविषैं च्यारि च्यारि भेद कहे हैं। सोही कहिये पृथिवी, पृथिवीकाय, पृथिवीकायिक, पृथिवीजीव। अप्, अप्काय, अप्कायिक, अप्जीव। तेज, तेजकाय, तेजकायिक, तेजजीव। वायु, वायुकाय, वायुकायिक,

वायुजीव । वनस्पति, वनस्पतिकाय, वनस्पतिकायिक, वनस्पतिजीव ऐसैं । तहां अचेतनपुद्गल अपने स्वभावहीतैं कठिणता आदि गुणसहित है ताकूं तौ पृथिवी कहिये । जातैं अचेतनपणांतैं पृथिवीकाय नामकर्म प्रकृतिके उदयविना भी पृथनक्रिया जो फैलाना आदि क्रिया ताकरि सहित पृथिवी हैही । अथवा दूसरा अर्थ यहु, जो, जामैं अगिले तीनूं भेद पाइये ऐसा सामान्यकूं भी पृथिवी कहिये । बहुरि पृथिवीकायिक जीव जामैं था सो मूवा ताका शरीर रह्या ताकूं पृथिवीकाय कहिये । जैसैं मूवा मनुष्यका काय होय तैसैं । बहुरि पृथिवीकाय जाकै होय ऐसा जीव ताकूं पृथिवीकायिक कहिये । सो यहु, पृथिवी शरीरके संबंधसहित है । बहुरि पृथिवीकायनामा नामकर्मकी प्रकृतिका जाकै उदय आया अन्यकायके शरीरतैं छूट्या जातैं पृथिवीकाय शरीर नांही ग्रहण किया जातैं अंतरालमैं कार्मणयोगमैं तिष्टै तातैं ताकूं पृथिवीजीव कहिये । ऐसैंही अप्कायादिकविषैं अर्थ लगा लेणां ॥ ए पांच स्थावरजीव हैं । तिनिकै प्राण च्यारि । स्पर्शनेंद्रियप्राण, कायबलप्राण, उच्छ्वासनिश्वासप्राण, आयुप्राण ऐसैं ॥ इहां विशेष जो, केवलज्ञानतैं लगाय अनादिकर्मसंयोगतैं घटतैं घटतैं ज्ञानका अपकर्ष करिये तब सूक्ष्मज्ञान एकेंद्रियनिकै रहै है । इहां प्रश्न, जो, घटतैं घटतैं जडही क्यों न रह्या ? ताकूं कहिये घटना तौ आपहीविषैं कहिये । जड तौ अन्य द्रव्य है । जातैं प्रध्वंसाभाव सत्त्वहीकै कहिये । बहुरि सत्त्वका अत्यंत अभाव भी युक्त नांही । कोई कहै, कर्मका अत्यंत अभाव कैसैं है ? ताकूं कहिये कर्मरूप पुद्गल भये थे तिनिका कर्मभावका नाश होय पुद्गलपरमाणूंनिका तौ अभाव न भया । ऐसैं एकेंद्रियनिविषैं ज्ञानका परम अपकर्ष निश्चय कीजिये । तातैं स्थावरजीवनिका सद्भाव युक्त है ॥

आगैं, कहै हैं, जो, त्रसजीव कोन हैं ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥ १४ ॥

याका अर्थ- द्वींद्रियजीवने आदि देकरि तेइंद्रिय चौइंद्रिय पंचेंद्रिय ऐसैं त्रसजीव है ॥ दोय हैं इंद्रिय जाकै ताकूं द्वींद्रिय कहिये । बहुरि द्वींद्रिय हैं आदि जिनिकै ते द्वींद्रियादिक कहिये । इहां आदिशब्द है सो आगमविषैं इनिकी व्यवस्था है, ताका वाचक कहिये हैं । द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय ऐसैं । इहां तद्गुणसंविज्ञान समासका ग्रहण है । तातैं द्वींद्रियका भी ग्रहण करनां । जातैं या समासमैं आदिका भी पदार्थ ग्रहण हो है । बहुरि पूछै हैं, इनिके प्राण केते केते हैं ? तहां कहिये है । द्वींद्रियके छह प्राण हैं । च्यारि तौ एकेंद्रियकै पहलै कहे तेही लेणे । बहुरि रसना इंद्रिय बहुरि वचनबल ये दोय अधिक किये छह भये । बहुरि त्रींद्रियकै घ्राण इंद्रियकरि अधिक सात प्राण है । बहुरि

चतुरिंद्रियके चक्षुइंद्रियकारि अधिक आठ प्राण हैं । बहुरि पंचेंद्रियके तिर्यंचनिविषैं असंज्ञीकै तौ कर्ण इंद्रियकारि अधिक नव हैं । बहुरि संज्ञीके मनबलकारि अधिक दश प्राण हैं । ऐसै पांच सूत्रनिकारि सर्व संसारी जीव कहे । इहां कोई पूछै, विग्रहगति अंतरालमैं इंद्रिय नाही तिनिका ग्रहण कैसै भया ? तहां कहिये, जो, त्रसस्थावर नामकर्मका उदय विग्रह-गतिमैं भी है । तिस विना होय तौ मुक्तजीव ठहरै, तातैं ते भी आय गये ॥

आगैं, द्वींद्रिय आदि ऐसा कह्या तहां आदिशब्दमैं कहांताई गिणनां ? ताकी संख्याकी मर्यादा जनावनेकूं नियमका सूत्र कहै हैं—

॥ पंचेंद्रियाणि ॥ १५ ॥

याका अर्थ— इंद्रिय पांच है ॥ इंद्रियशब्दका अर्थ तौ पहलै कह्याही था, जो इंद्र कहिये आत्मा संसारी जीव ताका लिंग कहिये जनावनेका चिन्ह । तथा इंद्र जो नामकर्म ताकारि रचे जे आकार ते इंद्रिय हैं । बहुरि पंच शब्दकारि नियम किया, जो इंद्रिय पांचही है, हीनाधिक नाही । इहां अन्यमती कहै, जो, कर्मइंद्रिय कहिये वचन, हाथ, पाद, पायु, उपस्थ इनिका भी ग्रहण करना चाहिये । ताकूं कहिये, इहां न चाहिये । जातैं इहां आत्माके उपयोगका प्रकरण है । तातैं उपयोगके कारणही ग्रहण करना चाहिये । क्रियाके साधन नाही कहे । जो क्रियासाधन भी कहिये तौ अनवस्था आवै । अंगोपांग नामा नामकर्मतैं रचे जे क्रियाके साधन ते सर्वही ग्रहण करने चाहिये । वचनादिक पांचही ग्रहण कैसै होय ? ॥

आगैं, तिनि इंद्रियनिके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ द्विविधानि ॥ १६ ॥

याका अर्थ— जे इंद्रिय कहे ते द्रव्येंद्रिय भावेंद्रियकारि दोय प्रकार हैं ॥ इहां विधशब्द है सो प्रकारवाची है । ताका समास ऐसा होय है, दोय प्रकार जाके ताकूं द्विविध कहिये दोय प्रकार हैं । ऐसा अर्थ भया । ते कौन ? द्रव्येंद्रिय भावेंद्रिय ऐसैं ॥

तहां द्रव्येंद्रियके स्वरूपका निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥ १७ ॥

याका अर्थ-- निर्वृति उपकरण ऐसै दोय प्रकार द्रव्येंद्रिय है ॥ तहां जो कर्मकरि रची होय ताकूं निर्वृति कहिये। सो दोय प्रकार है। बाह्य निर्वृति अभ्यंतर निर्वृति। तहां जो उत्सेध अंगुलकै असंख्यातवै भाग परिमाण शुद्ध जे आत्माके प्रदेश, ते न्यारे न्यारे नेत्र आदि इंद्रियनिके आकारकरि अवस्थित होय तिनिकी वृत्ति सो तौ अभ्यंतरनिर्वृति है। बहुरि तिनि आत्माके प्रदेशनिविषैं इंद्रिय है नाम जिनिके ऐसै जे न्यारे न्यारे आकार नामकर्मके उदयकरि निपजाये है अवस्थाविशेष जिनिकै ऐसे ते पुद्गलके संचय समूह सो बाह्य निर्वृति है। बहुरि जो निर्वृतीका उपकार करै सो उपकरण भी दोय प्रकार है। अभ्यंतर उपकरण बाह्य उपकरण। तहां काला धौला जो नेत्रनिविषैं मंडल गोलाकार आदि है सो तौ अभ्यंतर है। बहुरि वांफणी तथा नेत्र जाकै ढकै ऐसे डोला इत्यादि बाह्य उपकरण है। तैसेही अन्य इंद्रियके जानने ॥

आगैं भावेंद्रियकूं कहिये हैं। ताका सूत्र —

॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥ १८ ॥

याका अर्थ-- लब्धि उपयोग ए दोऊ भाव इंद्रिय हैं ॥ तहां ज्ञानावरणके क्षयोपशमके विशेषकी प्राप्ति सो लब्धि हैं। बहुरि जाके निकट होतैं आत्मा द्रव्य इंद्रियरूप निर्वृतिव्यापार करै प्रवर्तै ऐसा जो, लब्धि जाकूं निमित्त होय ऐसा जो आत्माका परिणाम सो उपयोग है। भावार्थ जो ज्ञेयके आकार परिणमनरूप ज्ञान होय सो उपयोग कहिये ऐसे ए दोऊ भावेंद्रिय हैं। इहां कोई पूछै है, जो, उपयोग तौ इंद्रियका फल है ताकूं इंद्रिय कैसै कहिये? ताका समाधान, जो कारणका धर्म होय ताकूं कार्यविषैं भी देखिये है। ऐसै घटकै आकार परिणम्या ज्ञानकूं घट ऐसा कहिये ऐसै है। बहुरि इंद्रियशब्दका स्वार्थ है सो भी उपयोगविषैं मुख्य है तातैं भी इंद्रिय कहिये। जैसैं इंद्र कहिये आत्मा ताका लिंग होय ताकूं इंद्रिय कहिये, सो यहू भी अर्थ उपयोगविषैं मुख्यपणैं हैं। जातैं ऐसा कह्या है, जो, उपयोगलक्षण जीव है। सो यातैं उपयोगकूं इंद्रिय कहना न्याय्य है ॥

आगैं कहे जे इंद्रिय तिनिकी संज्ञा तथा अनुक्रम प्रतिपादनेके अर्थि सूत्र कहै हैं-

॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥ १९ ॥

याका अर्थ— स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु श्रोत्र ए पांच इंद्रियनिके नाम हैं ॥ इनिके नामनिका निरुक्ति अर्थ कहिये है । लोकविषैं इंद्रियनिकै पराधीन विवक्षा देखिये है । जैसैं लोक कहै है मैं इनि नेत्रनिकरि नीकै देखूं हूं । तथा मैं इनि काननिकरि भलै सुणूं हूं । तातैं परतंत्रपणातैं स्पर्शनादिककै करण अर्थपणां है सोही कहिये है। वीर्यांतराय मतिज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम वहुरि अंगोपांगनामा नामकर्मके उदयके लाभके आलंबनतैं आत्मा जाकरि विषयकूं स्पर्शै ताकूं स्पर्शन कहिये । ऐसैंही जाकरि अपने विषयकूं आस्वादै ताकूं रसन कहिये । ऐसैंही जाकरि सूंघै ताकूं घ्राण कहिये । ऐसैंही जाकरि देखै ताकूं चक्षु कहिये । ऐसैंही जाकरि सुणै ताकूं श्रोत्र कहिये । वहुरि लोकविषैं स्वतंत्र कहिये स्वाधीन विवक्षा भी है । जैसै लोक कहै है ए मेरे नेत्र नीकै देखै हैं । ए मेरे कान नीकै सुणै हैं इत्यादि । तातैं स्वतंत्र अर्थ कीजिये तब कर्ता अर्थ भी होय है । जैसैं जो विषयकूं स्पर्शै सो स्पर्शन कहिये । ऐसैंही जो आस्वादै ताकूं रसन कहिये । सूंघै ताकूं घ्राण कहिये । देखै ताकूं चक्षु कहिये । सुणै ताकूं श्रोत्र कहिये । इनिका सूत्रमैं संज्ञाका अनुक्रम है । सो एकेंद्रियादि जीवनिकै एक एक वधै ताका अनुक्रम जनावनेकै अर्थि है सो आगै कहसी ॥ इहां विशेष, जो, स्पर्शनका आदिविषैं ग्रहण किया है । जातैं यह शरीरव्यापी है । रसन घ्राण चक्षु अल्पव्यापी है । वहुरि श्रोत्र अंतमैं कह्या, जातैं यहु वहु उपकारी है । धर्मश्रवणादि उपकार यातैं प्रधानताकरि है । वहुरि इनि इंद्रियनिकेविषैं परस्पर भेद भी है । जातैं अपने अपने विषयकूं ग्रहण करै हैं । वहुरि अभेद भी है । जातैं भाव इंद्रिय तौ एक आत्माहीका परिणाम है । द्रव्यइंद्रिय एक पुद्गलका परिणाम है ॥

आगैं इनि इंद्रियनिके विषय दिखावनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं–

॥ स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥ २० ॥

याका अर्थ— स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द ये पंचेंद्रियनिके पांच विषय हैं ॥ इहां स्पर्शादिशब्दनिकै द्रव्यपर्यायकी प्रधानविवक्षाविषैं कर्मसाधन तथा भावसाधन जानना । तहां द्रव्यप्रधान विवक्षाविषैं तौ कर्मसाधन है । जो स्पर्शिये ताकूं स्पर्श कहिये । आस्वादिये ताकूं रस कहिये । सूंघिये ताकूं गंध कहिये । वर्णिये ताकूं वर्ण कहिये । जो शब्दरूप होय ताकूं शब्द कहिये । वहुरि पर्यायकी प्रधानविवक्षाविषैं भावसाधन है । स्पर्शना सो स्पर्श है । रसना सो रस है ।

सूंघना सो गंध है। वर्णना सो वर्ण है। शब्द होना सो शब्द है। बहुरि इनिका अनुक्रम इंद्रियनिकै अनुक्रमतैं कह्या है॥

आगैं कहै हैं, जो मन अनवस्थित है तातैं यहु इंद्रिय नाही। ऐसैं याकै इंद्रियपणां निषेध्या है। सो कहा यहु मन उपयोगका उपकारी है की नांही है ? तहां कह्या जो उपकारी है मनविनां इंद्रियनिकै विषयनिविषैं विशिष्ट अपने प्रयोजनरूप प्रवृत्ति नाही होय है। तब पूछै है, मनकै अर इंद्रियनिकै सहकारी मात्रही प्रयोजन है कि कछू और भी प्रयोजन है ? ऐसैं पूछै मनका प्रयोजन दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २१ ॥

याका अर्थ— अनिंद्रिय कहिये मन ताका श्रुत कहिये श्रुतज्ञानगोचर पदार्थ है सो विषय है प्रयोजन है॥ श्रुतज्ञानका विषय जो अर्थ ताकूं श्रुत कहिये। सो अनिंद्रिय कहिये मन ताका विषय है। जातैं पाया है श्रुतज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम जानैं ऐसा जो आत्मा ताकै सुणे पदार्थविषैं मनका अवलंबन स्वरूप ज्ञानकी प्रवृत्ति है। अथवा श्रुतज्ञानकूं भी श्रुत कहिये है। सो यह ज्ञान अनिंद्रियका अर्थ कहिये प्रयोजन है। यहु प्रयोजन मनकै स्वाधीनही साध्यरूप है। इंद्रियनिका आधीनपणां यामैं नाही है। इहां कोई कहै सुननां तौ श्रोत्र इंद्रियका विषय है। ताका समाधान, जो सुननां तौ श्रोत्र इंद्रियका विषय है सो तो मतिज्ञान है तिस पिछै जीवादि पदार्थ विचारिये सो श्रुतज्ञान है। सो मनहीका विषय है॥

आगैं, न्यारे न्यारे विषय जिनके ऐसे कहे जे इंद्रिय, तिनिके स्वामीपणांका निर्देश किया चाहिये। तहां पहली कह्या जो स्पर्शन इंद्रिय ताका स्वामीपणांके नियमकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥ २२ ॥

याका अर्थ— वनस्पति है अंत जिनिकै ऐसे जे पूर्वोक्त पृथिवी अप् तेज वायु वनस्पति तिनिकै एक कहिये एक स्पर्शन इंद्रिय है॥ एक कहिये पहला स्पर्शन इंद्रिय सो पृथिवीतैं लगाय वनस्पतिपर्यंत जीवनिकै जाननां। तिस स्पर्शन इंद्रियका उत्पत्तिकारण कहिये है। वीर्यांतराय स्पर्शन इंद्रियावरणनामा ज्ञानावरण कर्मके क्षयोपशम होतैं बहुरि अवशेष इंद्रियज्ञानावरणकर्मका सर्वघातिस्पर्द्धकनिका उदय होतैं बहुरि शरीरनामा नामकर्मके उदयके लाभका अवलंबन होतैं एकेंद्रियजाति नामकर्मके उदयके वशवर्तिपणां होतैं जीवकै एक स्पर्शन इंद्रिय प्रकट होय है। तातैं स्पर्शन इंद्रियके स्वामी पांच स्थावरकायके जीव है। ऐसैं जाननां॥

आगैं, अन्य इंद्रियनिके स्वामी दिखावनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥ २३ ॥

याका अर्थ— कृमि कहिये लट आदिक, पिपीलिका कहिये कीडी आदिक, भ्रमर कहिये भौंरा आदिक, मनुष्य आदिक इनिकै स्पर्शन, पीछै एक एक इंद्रिय बधती है ॥ एक एक ऐसा वीप्सा कहिये वारवार कहनेके अर्थमें दोय बार एकशब्द कह्या है। तहां कृमिकूं आदिकारि अरु इंद्रियविषैं स्पर्शनकूं आदिकारि एक एक बधता जोडनां। बहुरि आदिशब्द सर्वकै जुदा जुदा कहनां। इहां कृमि कहिये लटकूं आदिकारि जीवनिकै रसनकारि अधिक स्पर्शन है। स्पर्शन रसन ए दोय इंद्रिय हैं। बहुरि पिपीलिका कहिये कीडी आदिक जीवनिकै स्पर्शन रसन घ्राण ऐसे तीन इंद्रिय हैं। बहुरि भ्रमर आदिक जीवनिकै स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु ऐसे च्यारि इंद्रिय है। बहुरि मनुष्य आदि जीवनिकै स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु श्रोत्र ऐसे पांच इंद्रिय हैं। ऐसे एकएक बधता यथासंख्य जाननां। इनकी उत्पत्ति स्पर्शनकी उत्पत्तिकी ज्यों कर्मनिके निमित्ततैं हो है। तहा आगै आगै जे इंद्रिय जिनिकै नाही, तिनिकै तिनि इंद्रियावरण कर्मका सर्वघातिस्पर्द्धकनिका उदय जानि लेना ॥

आगैं ए कहे जे दोय भेदरूप तथा इंद्रियभेदकारि पंचप्रकार संसारी जीव तिनिविषैं पंचेंद्रियके भेद न कहे, तिनिकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ सञ्ज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥

याका अर्थ— पंचेंद्रिय जीवनिविषैं जे मनसहित हैं ते संज्ञी हैं ॥ मन तौ पूर्वै कह्या, सो जाननां। तिस मनकारि सहित होय जे समनस्क ते संज्ञी हैं। संज्ञीके कहनेकी सामर्थ्यहीतैं अवशेष संसारी जीव रहे ते असंज्ञी हैं ऐसा सिद्ध भया। तातैं याका न्यारा सूत्र न कह्या। इहा कोई तर्क करै है, जो, संज्ञी ऐसा कहनेतैंही अर्थ तौ आय गया। ताका समनस्क ऐसा विशेषण तौ अनर्थक है। जातैं मनका व्यापार हितकी प्राप्ति अहितका परिहारकी परीक्षा करना है, सो संज्ञा भी सोही है। ताका समाधान, जो, ऐसा कहनां युक्त नांही। जातैं संज्ञा ऐसा शब्दके अनेक अर्थ हैं तहां व्यभिचार आवै है। तहा प्रथम तौ संज्ञा नामकूं कहिये है सो नामरूप संज्ञा जाकै होय सो संज्ञी ऐसा कहनेतैं सर्वही प्राणी नामसहित हैं तहां अतिप्रसंग भया। बहुरि कहै संज्ञा संज्ञानं कहिये भले ज्ञानकूं कहिये है। तौ तहां भी

अतिप्रसंग है । जातैं संज्ञान सर्वही प्राणिनिकै है बहुरि आहार आदिके अभिलाषकूं भी संज्ञा कहिये है तहां भी अतिप्रसंगही होय है । जातैं यह भी सर्वही प्राणीनिकै पाईये है । तातैं समनस्क विशेषण सफल है । बहुरि ऐसैं कहे गर्भके विषैं तिष्ठता जीव तथा अंडेविषैं तिष्ठना तथा मूर्छित भया तथा सूता इत्यादि अवस्थारूप प्राणीनिकै हित अहितकी परीक्षाका अभाव होतैं भी मनके सद्भावतैं संज्ञीपणा बणै है ॥ इहां विशेष, जो, शिक्षा क्रिया आलापका ग्रहणरूप संज्ञा जाकै होय सोही संज्ञी है । बहुरि केई कहे हैं, जाकै स्मरण होय सो संज्ञी है, तहां ऐसा जाननां, जो, स्मरणसामान्य तौ सर्वही प्राणीनिकै है । तत्कालका हूवा बच्चा माताके स्तनकूं लगि जाय है, सो पूर्व आहार करही आया है । तातैं आहारकी अभिलाषारूप संस्कारका स्मरण वाकै है । इत्यादि उदाहरण सर्वजीवकै अनेक जन्ममैं अनुभवता आया है । सो अभिलाषारूप संज्ञा तौ सर्वहीकै स्मरणसामान्य है । बहुरि स्मरणविशेष सो शिक्षा क्रिया आलापविषैं है, सो तौ हैही । ऐसैं जीवका स्वरूप तत्त्व स्वलक्षण भेद इंद्रिय मन अर इंद्रिय मनके विषय स्वामी कहे, ते सामान्य तौ संग्रहनय-कारि विशेष व्यवहारनयकारि दोऊ प्रमाणकारि जानने ॥

आगै पूछै है, हिताहितका विचार प्राणीनिकै मनके विचारपूर्वक है, तौ नवा शरीरप्रति ग्रहणकूं उद्यमी भया अगिला शरीर छूटि गया तब मन तौ है नांही, तौ याकै कर्मका आस्रव होय है । सो काहेतैं हो है ? ऐसैं पूछैं उत्तर कहै हैं—

विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— विग्रहगति कहिये अंतरालविषैं अनाहारक अवस्थामैं कार्मणयोग है ॥ विग्रहनाम देहका है । ताकै अर्थि जो गति कहिये गमन करै, ताकूं विग्रहगति कहिये । अथवा विग्रह कहिये व्याघात कर्मका आस्रव होतैं भी नोकर्मपुद्गलका निरोध कहिये रुकना । ऐसैं विग्रहकरि गमन करै सो विग्रहगति है । बहुरि सर्व शरीरनिका बीजभूत उत्पत्ति करणहारा शरीर सो कार्मण शरीर है । ताकूं कर्म कहिये । बहुरि योग वचन मनकायकी पुद्गलवर्गणा है निमित्त जाकूं ऐसा आत्माके प्रदेशनिका चलाचलपणां है । तिस कार्मणशरीरकरि क्रिया जो योग, सो विग्रहगतिविषैं है । ऐसा विग्रहगतिविषैं कर्मका ग्रहण भी होय है । बहुरि देशांतरका संक्रमण भी होय है ॥ इहां विशेष, जो कोई कहै है, आत्मा तौ सर्वगति है ताकै गमनक्रिया नाही । बहुरि पूर्वशरीर छूट्या तब उत्तरशरीर धार्‍या तब अंतराल भी नाही । ताका समाधान, जो, आत्मा गमनक्रियासहित प्रत्यक्ष दीखै है । जातैं आत्मा शरीरप्रमाण है सो तौ अनु-भवगोचर है । बहुरि शरीरके साथि याका गमन है । बहुरि अन्यशरीरग्रहण करै तब अंतरालमैं कार्मणशरीर न होय तौ

तौ तहां मुक्तजीववत् कर्मका ग्रहण भी न होय, तब नवीन शरीर काहेकूं धारै ? तातैं गमन भी करै है अरु अंतरालमैं कार्मणयोग भी है । यह निश्चय है ॥

आगैं, देशांतरमैं गमन करता जे जीवपुद्गल तिनिकै गमन श्रेणीबंध सीधा होय है कि जैसैं तैसैं? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ अनुश्रेणि गतिः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— जीवनिका तथा पुद्गलनिका गमन आकाशके श्रेणीबंध प्रदेशनिविषैंही होय है, विदिशारूप न होय है॥ लोकके मध्यतैं लगाय ऊर्ध्व अधः तिर्यक् आकाशके प्रदेशनिका अनुक्रमतैं पंक्तिरूप अवस्थान ताकूं श्रेणी कहिये । इहां अनुशब्द श्रेणीके अनुक्रमकूं कहै हैं । जीवकी तथा पुद्गलनिकी गति सीधी होय है ऐसा अर्थ है । इहां कोई पूछै है, जीवका तौ अधिकार है, इहां पुद्गलका ग्रहण कैसैं किया ? ताका उत्तर, जो, इहां गमनका ग्रहण है सो गमन जीवकै भी है पुद्गलकै भी है । तातैं दोऊका ग्रहण करना । जो जीवनिहीकै गति मानिये तौ गतिग्रहण अनर्थक होय जातैं गतिका अधिकार हैही । वहुरि उत्तरसूत्रविषैं जीवका ग्रहण है तातैं इहा पुद्गलकी भी प्रतीति होय है । वहुरि कोई पूछै है, चंद्रमा आदि ज्योतिषी देवनिकै मेरुकी प्रदक्षिणाके कालविषैं तथा विद्याधरादिककै विनाश्रेणी भी गमन है । ऐसैं कैसैं कह्या ? जो, श्रेणीबंधही गमन है । ताका उत्तर— इहां कालका तथा क्षेत्रका नियमकरि कह्या है । तहा जीवनिकै मरणका कालमैं अन्यभवकूं गमन हो है । तथा मुक्तजीवनिकै ऊर्ध्व गमन हो है तिस कालमैं श्रेणीरूपही गमन हो है । तहां तौ कालनियम है । वहुरि ऊर्ध्वलोकतैं अधोलोक अधोलोकतैं ऊर्ध्वलोक तिर्यक् लोकतैं नीचै उपरि गमन करै सो श्रेणीरूपही करै । तथा पुद्गलका परमाणू एक समयमैं चौदा राजू गमन करै सो सीधाही गमन करै है । ऐसैं देशका नियम है । वहुरि औरप्रकार गमन है सो नियम नाहीं सीधा भी होय वक्र भी होय ॥

आगैं तिसहीका विशेष जाननेकै आर्थि सूत्र कहै हैं ॥

॥ अविग्रहा जीवस्य ॥ २७ ॥

याका अर्थ— मुक्तजीवकी गति अविग्रहा कहिये वक्रताकरि रहित है । श्रेणीबंध गति करि एक समयविषैं सिद्धक्षेत्रविषैं जाय तिष्ठै है ॥ विग्रहनाम व्याघातका है । ताकूं कौटिल्य कहिये वक्रता भी कहिये । ऐसा विग्रह जहां नाहीं सो

अविग्रह कहिये । ऐसी अविग्रह गति है, सो मुक्तजीवकै है । इहां मुक्तजीवका नाम कैसैं जानिये ? जो अगले सूत्रमैं संसारीका नाम है, तातैं जानिये यहां मुक्तजीव है । बहुरि इहां कोई तर्क करै है, अनुश्रेणि गति है, इस सूत्रकरिही अन्य गतिका निषेध भया, फेरि इस सूत्रकरि कहा प्रयोजन रह्या ? ताका समाधान, पूर्वसूत्रविषैं अनुश्रेणि गति तौ कही । तहां इस सूत्रकरि ऐसा जानिये, जो, कहूं श्रेणीविना भी गमन है, ताकै अर्थि यह सूत्र है । इहां फेरि कहै, देश-कालका नियम तहांही कह्या है । ताकूं कहिये, सूत्रविषैं देशकालका नियम कह्या नाही, तातैं इस सूत्रतैं जान्या जाय है॥

आगैं, जो कर्मके संगतै रहित असंग जो आत्मा ताकै तौ प्रतिबंधरहित लोकके अंततांई गमनकालके नियमरूप जानिये है । बहुरि देहसहित जो संसारी जीव है ताकी गति प्रतिबंधसहित है कि मुक्त आत्माकी ज्यौं सीधी है ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥

याका अर्थ— संसारी जीवकी गति विग्रहसहित हैं मोडा खाय है । तहां च्यारि समयकै पहली पहली तीन मोडारूप है ॥ इहां प्राक् चतुर्भ्यः ऐसा शब्द तौ काल जो समय ताका नियमकै अर्थि है । प्राक् शब्दका मर्यादा अर्थ है । तहां चौथा समय पहली विग्रहवान् गति हो है । चौथाविषैं विग्रह कहिये मोडा नाही है । इहां पूछै है, जो, चौथे समय विग्रहगति काहेतैं नांही ? ताका उत्तर, जो, प्राणी, सर्वोत्कृष्ट विग्रह है निमित्त जाकूं ऐसा क्षेत्रकूं निष्कुट ऐसी संज्ञा है, तहां उपजना होय तहां अनुश्रेणिका अभावतैं इषुगतिका अभाव होतैं निष्कुटक्षेत्र पहुंचनेकूं तीन जामैं मोडा ऐसा त्रिविग्रहगति आरंभै है । तिस सिवाय ऐसा क्षेत्र नाही जामैं मोडा खाय पहूंचै । तातैं तीनही समय विग्रह है । चौथे समयमैं नांही । इहां सूत्रमैं चशब्द है सो संसारीकी गति विग्रहसहित भी है विग्रहरहित भी है ऐसा समुच्चयकै अर्थि है ॥ इहां विशेष, जो, गति कही तिनकी संज्ञा आगमविषैं ऐसी है इषुगति, पाणिमुक्ता, लांगलिका, गोमुत्रिका । तहां इषुगति तौ विग्रहरहित है । ताका दृष्टांत जैसैं इषु कहिये तीर चालै सो सीधा ठिकाणैं पहुचै तैसैं इषुगति है । याका काल एकसमयही है । सो संसारीनिकै भी हो है । बहुरि मुक्तजीवकै भी हो है । बहुरि पाणिमुक्ता विषैं एक मोडा हो है । याका काल दोय समय है । तहां जैसैं पाणि कहिये हाथ ताविषैं जलादिक द्रव्य होय ताकूं क्षेपिये तब एक मोडा ले, सो यहु संसारीकैही होय है । बहुरि लांगलिका गति है ताविषैं दोय मोडा ले हैं । याका काल तीन समय है । जैसै लांगल नाम हलका है ताकै दोय मोडा होय है यहु भी संसारीकैही है । बहुरि गोमूत्रिका गतिका

काल च्यारि समय हैं ताविषैं तीन मोडा ले है। चौथे समय निष्कुटक्षेत्रविषैं पहुंचे है। जैसै गऊ मूतता चल्या जाय तव मूतविषैं केई मोडा होय हैं सो इहां उपमामात्र है। तिनकूं बहुही कहिये तातैं तीनही मोडा हैं। यह भी संसारीकैही होय है ॥

आगै पूछै है, विग्रहवती गतिका तौ कालका नियम कह्या बहुरि अविग्रहवतीका कालनियम केता है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥ २९ ॥

याका अर्थ— अविग्रहगति है सो एक है समय काल जाका ऐसी है ॥ एक है समय जाकै ताकूं एकसमया कहिये। नाही विद्यमान है विग्रह जाकै ताकूं अविग्रहा कहिये। ऐसैं गतिसहित जे जीवपुद्गल तिनिकी गति अव्याघात कहिये रुकनां मोडा लेना तिनिविना एकसमयकालमात्र है। याहीकूं ऋजुगति कहिये है सो क्षेत्रकी अपेक्षा लोकके अंततांई है। अधोलोकतैं लगाय ऊर्ध्वलोकपर्यंत लोकका अंत चौदह राजू है। सो जीव पुद्गल सीधा गमन करै तौ एक समयमैं चौदह राजू पहुंचै ऐसा भावार्थ जानना ॥

आगैं, अनादिकर्मबंधका संतानविषैं मिथ्यादर्शन आदि कारणके वशतैं कर्मनिकूं ग्रहण करता जो यहु जीव सो विग्रहगतिविषैं भी आहारकहीका प्रसंग आवै है। तातैं तिसका नियमकै आर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ एकं द्वौ त्रीन् वाऽनाहारकः ॥ ३० ॥

याका अर्थ— विग्रहगतिविषैं यहु जीव एकसमय अथवा दोय समय तथा तीन समय अनाहारक है, नोकर्मवर्गणाका आहार नांही है ॥ इहां समयका तौ अधिकारतैं संबंध कर लेना। बहुरि सूत्रमैं वा शब्द विकल्पकै आर्थि है। जैसी इच्छा होय तहांही रह जानां सो विकल्प है। जैसे पाणिमुक्तागति करै सो एकसमयही अनाहारक रहै। लांगलिकागति करै सो दोय समयही अनाहारक रहै। गोमूत्रिकागति करै सो तीन समय अनाहारक रहै आगै चौथा समय आहारकहीका है। जातैं ऐसा क्षेत्र नांही जो फेरि मोडा खाय। तहां औदारिक वैक्रियिक आहारक ए तीन शरीर तथा आहार आदि छह पर्याप्तिकै योग्य पुद्गलवर्गणाका ग्रहण सो आहार कहिये। जातैं यहु आहार नांही सो अनाहारक है। बहुरि कर्मवर्गणाका ग्रहण जेतैं कार्मण शरीर है तेतैं निरंतर है। तहां उपजनेके क्षेत्रप्रति जो ऋजुगतिही

करै तौ आहारकही है । बहुरि विग्रहगतिविषैं तीन समय अनाहारक रहै है । ऐसैं गमनविशेपका निरूपण छह सूत्रनिकारि किया ॥

आगैं, ऐसैं भवांतरने गमन करता जो जीव ताकै नवीन शरीरकी उत्पत्तिका प्रकार प्रतिपादनकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ सम्मूर्छनगर्भोपपादा जन्म ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— जीव नवीन शरीर धरै है ताके जन्म तीन प्रकार हैं । संमूर्छन गर्भ उपपाद ऐसैं ॥ तहां ऊर्ध्व अधो तिर्यक् ऐसै तीन जे लोक तिनिविषैं जहां तहां अवयवसहित देह बनि जाय ताकूं संमूर्छन कहिये । संमूर्छन शब्दका अर्थ अवयवका कल्पन है ॥ बहुरि स्त्रीके उदरविषैं वीर्यलोहीका गरण कहिये मिश्रित होनां मिलनां सो गर्भ है । अथवा माताकारि उपयुक्त किया जो आहार ताका जाविषैं गरणा कहिये निगलना होय सो गर्भ कहिये ॥ बहुरि जाविषैं प्राप्त होयकरिही उपजै उठै चलै ऐसा देवनारकीनिका उपजनेका स्थान ताकूं उपपाद कहिये ॥ ए तीन संसारी जीवनिकै जन्मके प्रकार हैं । सो शुभ अशुभ परिणामकै निमित्ततैं बंध्या जो कर्म ताके भेदनिके उदयकारि किये होय हैं । इहां विशेप, जो, एकजन्मके भेद सामान्यपणैं किये हैं इनिहीकै विशेषकारि भेद कीजिये तौ अनेक हैं । बहुरि गर्भजन्म तथा उपपादजन्मके कारण तौ प्रगट हैं । बहुरि संमूर्छन जन्मके बाह्य कारण प्रत्यक्षगोचर नांही भी हैं । जहां तहां उत्पत्ति होय जाय है ऐसैं जाननां ॥

आगैं, अधिकाररूप किया जो संसारके भोगनेकी प्राप्तिका आश्रयभूत जन्म, ताकी योनिके भेद कह्या चाहिये । ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ सचित्तशीतसँवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— सचित्त शीत संवृत इनितैं इतर अचित्त उष्ण विवृत बहुरि तीनूंहीकै मिश्रतैं ऐसैं नव भेद योनिके हैं । आत्माका चैतन्यका विशेपरूप परिणाम सो तौ चित्त है । तिस चित्तकारि सहित होय सो सचित्त कहिये । बहुरि शीत है सो स्पर्शका विशेप है । जैसैं वर्णका भेद शुक्ल । तहां शीत ऐसा द्रव्यवचन भी है । गुणवचन भी है । तातैं शीत कहनेतैं शीतल द्रव्य भी लेना । बहुरि संवृत नाम आच्छादित ढकेका है । जाका प्रदेश लखनेमैं न आवै । बहुरि इतरकारि सहित होय ताकूं सेतर कहिये । प्रतिपक्षी सहित होय ते अचित्त उष्ण विवृत बहुरि दोऊ मिलै तहां मिश्र कहिये । सचित्ताचित्त शीतोष्ण संवृतविवृत ऐसैं नव भये । इहां सूत्रमैं चशब्द है सो मिश्रकूं भी योनिही कहै है ।

जो चशब्द न होय तौ सचित्तादिक कहे तिनिकाही विशेषण मिश्र शब्द ठहरै तातैं मिश्र भी योनि है ऐसा समुच्चय चशब्द करै है । वहुरि एकश ऐसा शब्द है सो वीप्सा कहिये फेरि फेरि ग्रहणके अर्थमैं है । सो मिश्रका ग्रहण तीनूं जायगा अनुक्रमरूप लेनां जनावै है । तातैं ऐसा जान्या जाय है जो सचित्त, अचित्त, मिश्र, शीत, उष्ण, मिश्र, संवृत, विवृत, मिश्र ॥ वहुरि ऐसे मति जानू, जो, सचित्त शीत याका मिश्र इत्यादि । वहुरि सूत्रमैं तत् शब्द है सो ये योनि-जन्मके प्रकार है ऐसा जनावनेकूं है । ए नव योनि तीन प्रकार जन्म कहे तिनिहीके प्रकार है ऐसैं जाननां ।

इहां कोई कहै है, योनि अरु जन्मविषैं भेद नाही– अविशेष है । ताका समाधान– आधार आधेयके भेदतैं भेद है । इहां योनि तौ आधार है जन्मके प्रकार हैं ते आधेय हैं । जातैं सचित्त आदि योनिकै आधार आत्मा संमूर्छनादि जन्मकरि शरीर आहार इंद्रियादिककै योग्य पुद्गलनिकूं ग्रहण करै है । तहा देवनारकीनिकी तौ अचित्तयोनि है । जातैं इनिके उपजनेके ठिकाणे हैं ते पुद्गलके स्कंध अचित्त हैं । वहुरि गर्भज प्राणी है तिनिकी मिश्र योनि है । जातैं इनिकै उपजनेके ठिकाणे माताके उदरविषैं वीर्यलोही तौ पुद्गल है, सो अचित्त कहिये । वहुरि माताका आत्मा चित्तवान् है । तातैं तिसकरि मिश्र कहिये । वहुरि संमूर्छन प्राणी हैं ते तीनूंही प्रकारके योनिमैं उपजे हैं। केई तौ सचित्तयोनिविषैं उपजै हैं । जैसै असाधारण शरीरवाले जीवनिकै एकही शरीरमैं वहुत जीव हैं। तातैं परस्पर आश्रयतैं सचित्त हैं। केई अचित्त-योनिविषैं उपजै हैं । तिनिके उपजनेके ठिकाणे पुद्गलस्कंधही हैं । केई मिश्रयोनि है ॥

वहुरि देवनारकीनिकै तौ शीतोष्णयोनि है । तिनिके उपजनेके ठिकाणे केई तौ शीत हैं केई उष्ण हैं । वहुरि तैज-सकायके जीवनिकी योनि उष्णही है । अन्यप्राणी केई शीतयोनिमैं उपजै हैं केई उष्णमैं उपजै हैं केई मिश्रमैं उपजै हैं । वहुरि देव नारकी एकेंद्रिय जीव इनिकी योनि तौ संवृत है । देवनारकी तौ संपुटमैं उपजै हैं । एकेंद्रिय जीव भी ढकी योनिमैंही उपजै हैं । वहुरि विकलत्रय विवृतयोनिविषैं उपजै हैं ॥ वहुरि गर्भज मिश्रयोनिविषैं उपजै हैं । केई प्रदेश गूढ हैं केई प्रदेश उघडता हैं । इनिके भेद चवराशी लाख हैं सो आगमविषैं कह्या है । ताकी एक गाथा है ताका अर्थ– नित्य निगोद इतर निगोद वहुरि धातु कहिये पृथिवी आप तेज वायु ऐसै छह तौ सात सात लाख हैं । ताके बियालीस लाख भये । वहुरि तरु कहिये वनस्पति सो दस लाख हैं । ऐसैं एकेंद्रियकै तो वावन लाख भये। वहुरि विकलत्रय वेंद्रिय दोय लाख, तेंद्रिय दोय लाख, चौइंद्रिय दोय लाख ऐसै छह लाख । वहुरि देव च्यारि लाख, नारकी च्यारि लाख, पंचेंद्रियतिर्यंच च्यारि लाख, मनुष्य चौदह लाख ऐसैं पंचेंद्रियके छवीस लाख । सव मिली चवराशी लाख भये। इनिका विशेपस्वरूप प्रत्यक्षज्ञानीनिकै गम्य है ॥

आगै, इस नव योनिसंकटविषैं तीन प्रकार जन्म लेते जे सर्व संसारी प्राणी, तिनिके जन्मका नियमकै अर्थि सूत्र कहे हैं–

॥ जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— जरायुज अंडज पोत ए तीन प्रकारके प्राणीनिकै जन्म गर्भही है ॥ तहां जो जालवत् परिवरण कहिये जारितैं वेष्टया होय बहुरि जाविषैं मांस लोही फिरि रह्या होय सो तौ जरायु कहिये । तिसिविषैं जो उपजै सो जरायुज कहिये । बहुरि नख ऊपरिकी त्वचा सारिखा होय ऊपरि कठिण करडा होय त्वचामांही लोहीकरि वेष्टित होय गोलाकारसा होय सो अंड है । ताविषैं उपजै ताकूं अंडज कहिये । बहुरि जो ऊपरि वेढ्याविनांही होय सो योनितैं निसरताई संपूर्ण अवयव शरीरसहित चलनादिककी सामर्थ्यसहित होय सो पोत कहिये । ए तीनूंही गर्भयोनि कहिये ॥

आगै पूछै है, जो जरायुज अंडज पोत जीवनिकै तौ गर्भतैं उपजनेका नियम कह्या । अब उपपाद जन्म कौनके होय है ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ देवनारकाणामुपपादः ॥ ३४ ॥

याका अर्थ— देवनारकी जीवनिकै उपपाद जन्म है ॥ देवनिकै बहुरि नारकीनिकै उपपादजन्म जाननां । औरजन्म नांही है ऐसा नियम जाननां ॥

आगै पूछै है, इनि सिवाय अन्य जीवनिकै कौनसा जन्म है ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ शेषाणां सम्मूर्च्छनम् ॥ ३५ ॥

याका अर्थ-- गर्भजन्म अरु देव नारकीसिवाय अन्य जीव रहे तिनिकै सम्मूर्च्छन जन्म है ॥ गर्भज बहुरि औपपादिक जीवनिविनां अवशेष अन्य जीव रहे तिनिकै सम्मूर्च्छन जन्म है । ऐसैं ए तीनूंही सूत्र नियमकै अर्थि हैं । दोनू तरफा नियम इनिकै जाननां । कैसैं ? जरायुज अंडज पोतानिकैही गर्भजन्म है । अथवा इनिकै गर्भही जन्म है । अन्य नांही । बहुरि देव नारकीनिकैही उपपाद जन्म है । अथवा इनिकै उपपाद जन्मही है । अन्य नांही । बहुरि अवशेष जीवनिकैही सम्मूर्च्छन जन्म है । अथवा इनिकै संमूर्च्छन जन्मही है अन्य नांही । ऐसैं दोऊ तरह नियम जाननां ॥ ऐसैं पांच सूत्रनिकरि जन्म अरु तिनि जन्मसहित जीवनिका निरूपण किया ॥

आगैं पूछै है, तिनि संसारी जीवनिकै तीन जन्म कहे तथा अनेक भेदनिसहित नवयोनि कहे। तिनिकै शुभ अशुभ कर्मका उदयकरि निपजाये बहुरि बंधके फलके भोगनेके आधार शरीर कौन कौन है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै है–

॥ औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥

याका अर्थ— औदारिक वैक्रियिक आहारक तैजस कार्मण ए पांच शरीर कर्मफल भोगनेकै आधार हैं॥ विशिष्टनामकर्म कहिये शरीरनामा नामकर्म ताकै उदयतैं भये ऐसे, शीर्यंते कहिये गलै शिडै झडै ते शरीर हैं। शरीर नामा नामकर्मकी प्रकृति औदारिकादिक हैं तिनिके उदयतैं औदारिकादिककी प्रवृत्ति पाईये है। तातैं ते पांच नाम हैं। तहां उदार नाम स्थूलका है। बडा दीखै ताकूं उदार कहिये सो उदारविषैं भया होय सो अथवा उदार है प्रयोजन जाका ताकूं औदारिक कहिये। बहुरि अणिमादिक आठ गुण तिनिका ईश्वरपणाका योगतैं एक अनेक छोटा बडा शरीर अनेकप्रकार करणां सो विक्रिया कहिये। सोही है प्रयोजन जाका ताकूं वैक्रियिक कहिये। बहुरि सूक्ष्म पदार्थका निर्णयके अर्थि तथा असंयमके दूरि करनेकी इच्छा करि प्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनिकरि रचिये सो आहारक है। बहुरि तेजका कारण अन्य देहकूं दीप्तिरूप करनेको निमित्त तथा तेजके विषैं भया सो तैजस है। बहुरि कर्मनिका कार्य सो कार्मण है। कर्मके कार्य सर्वही शरीर है परंतु रूढीके वशतैं विशेषपणांकरि कार्मणहीकूं कर्मका कार्यरूप निरुक्ति करी है। इहां कोई पूछै, अन्य शरीरकूं कार्मण निमित्त है बहुरि कार्मणकूं कहा निमित्त है? ताका समाधान, जो, कार्मणकूं कार्मणही निमित्त है। अथवा जीवके परिणाम मिथ्यादर्शनादिक निमित्त हैं॥

आगै जैसैं औदारिककी इंद्रियनिकरि उपलब्धि है यहु इंद्रियनिकरि ग्रहण होय है तैसैं अन्यशरीरका ग्रहण काहेतैं न होय है? ऐसैं पूछै सूत्र कहैं हैं—

॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— औदारिकतैं अगिले अगिले शरीर सूक्ष्म हैं॥ इहां परशब्दका अनेक अर्थ है। तौ भी विवक्षातैं व्यवस्थार्थके विषैं गति है। बहुरि वीप्सा कहिये दोयवार परशब्द कह्या सो औदारिक तौ स्थूल है, यातैं सूक्ष्म वैक्रियिक है, यातैं सूक्ष्म आहारक है, यातैं सूक्ष्म कार्मण है, ऐसैं जाननेके अर्थि है॥

आगै कहै हैं, की, कोई जानैगा, जो, ये शरीर परै परै सूक्ष्म है, तौ प्रदेश कहिये परमाणू भी इनिविषैं थोरे थोरे होइंगे। ऐसी आशंकाकूं दूरि करनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ प्रदेशतोऽसङ्ख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥ ३८ ॥

याका अर्थ— तैजसतैं पहले पहले शरीर औदारिकतैं लगाय आहारकतांईविषैं परमाणु असंख्यात असंख्यात गुणे हैं ॥ प्रदेश नाम परमाणूका है। बहुरि संख्यासूं अतीत होय ते असंख्यात हैं। सो जहां असंख्यातका गुणाकार होय ताकूं असंख्येयगुणां कहिये। सो इहां परमाणूनितैं असंख्यातगुणां कहना, अवगाहना न लेनी। बहुरि परं परं इस शब्दकी पहले सूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी। बहुरि कार्मणतांईके निषेधकै अर्थि प्राक् तैजसात् ऐसा कह्या। तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, औदारिकके परमाणूनितैं तौ असंख्यातगुणे परमाणू वैक्रियिकविषैं बहुरि वैक्रियिकतैं असंख्यातगुणे आहारकविषैं है। इहां कोई पूछै, असंख्यातके भेद असंख्यात हैं तहां गुणाकार कैसा असंख्यातका लेनां? ताका समाधान, इहां पल्योपमका असंख्यातवा भागका गुणाकार लेना ॥ फेरि कोई पूछै है, जो, परै परै सूक्ष्म कहे अर परमाणू बहुत बहुत कहे सो ऐसैं तौ परै परै बडे चाहिये। ताका उत्तर, जो बंधनिका विशेष ऐसाही है, जो खैंचि गाढा बांधै तौ छोटा होय जाय, ढीला बांधै तौ बडा दीखै जैसैं रूईका पिंड तौ बडा दीखै बोझ थोडा। बहुरि लोहका पिंड छोटा दीखै बोझ बहुत ऐसैं जाननां ॥

आगै, अगिले दोय शरीर तैजस कार्मण तिनिमैं परमाणु इनिसमान हैं, कि कछु विशेष है? ऐसैं पूछै उत्तर कहै हैं—

॥ अनन्तगुणे परे ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— अगिले दोऊ तैजस कार्मण शरीरविषैं परमाणु पहलेतैं अनंतानंतगुणे हैं ॥ इहां प्रदेशतः ऐसी तौ पहले सूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी। तातैं आहारकतैं तैजसविषैं परमाणु अनंतगुणे हैं। बहुरि तैजसतैं अनंतगुणे कार्मणविषैं हैं। इहां गुणाकार अभव्यराशितैं अनंतगुणां सिद्धराशिके अनंतवै भाग ऐसा अनंतका है ॥

आगै, आशंका करै है, जो, मूर्तिकद्रव्यका संचय होतैं जैसैं भालि भीतिमैं प्रवेश करता रुकि जाय है, तैसैं शरीर-सहित संसारी जीव गमन करै तब मूर्तिक पुद्गलके स्कंधनितैं रुकि जाता होयगा। ताकूं कहिये, जो, नांही रुकै है। ए दोऊ शरीर ऐसे हैं। ताका सूत्र कहै हैं—

॥ अप्रतिघाते ॥ ४० ॥

याका अर्थ--- तैजस कार्मण ए दोऊ शरीर अप्रतिघाते कहिये रुकनेतैं रहित हैं ॥ मूर्तिक कारि रुकना ताकूं प्रतिघात कहिये । सो जहां नांही सो अप्रतिघात है । सो तैजस कार्मण ए दोऊ अप्रतिघात हैं । जातैं ए सूक्ष्म परिणमनरूप हैं । जैसैं लोहका पिंडमैं अग्नि प्रवेश करै तैसैं ए वज्रपटलविषैं भी प्रवेश कारि जाय रुकै नांही । इहां कोई कहै, वैक्रियिक आहारक भी काहूकारि रुकै नांही ते भी ऐसैं क्यों न कहै ? ताका समाधान, जो, इहां सर्वक्षेत्रविषैं नांही रुकनेकी विवक्षा है । जैसैं तैजस कार्मणका सर्वलोकविषैं अप्रतिघात है, तैसैं वैक्रियिक आहारकका नांही है । इनिका गमन त्रसनाडीमांही है। सिवाय प्रतिघातही है ॥

आगैं पूछै है, कि, इनि दोऊ शरीरनिका एताही विशेष है कि कछु और भी है ? ऐसैं पूछै विशेष है, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ अनादिसम्बन्धे च ॥ ४१ ॥

याका अर्थ— ए दोऊ शरीर अनादितैं संबंधरूप हैं । और शरीर छूटि नवीन बणै है तैसैं ये नांही हैं ॥ इहां च शब्द है सो विकल्प अर्थविषै है जातैं ऐसा अर्थ भया, अनादिसंबंध भी है सादि संबंध भी है । तहा कार्य-कारणका अनादिसंतानकी अपेक्षा तौ अनादिसंबंधरूप है । बहुरि विशेषकी अपेक्षा सादिसंबंध है । सो बीजवृक्षकी ज्यौं जानने । जैसैं औदारिक वैक्रियिक आहारक जीवकै कदाचित् होय है, तैसैं तैजसकार्मण नाही है । ये नित्यसंबंध-रूप है । संसारके क्षयपर्यंत संबंध रहै है । जिनिके मतमैं शरीर अनादिसंबंधही है तथा सादिसंबंधही है ऐसा पक्ष-पात है तिनिकै अनादिसंबंध है । तहां अंत नाही । तब मुक्त आत्माका अभावका प्रसंग भया । बहुरि सादिसंबंध होतैं शरीर नवीन भये । पहली आत्मा शुद्ध ठहऱ्या; तब नवीन शरीरका धारण काहेतैं भया ? ऐसै दोष आवै है ॥

आगैं पूछै है, ए तैजस कार्मण शरीर कोईक प्राणीकै होय है कि अविशेष है ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ सर्वस्य ॥ ४२ ॥

याका अर्थ— ए दोऊ शरीर सर्व संसारी जीवनिकै हो हैं ॥ इहां सर्व शब्द निरवशेषवाची है । समस्त संसारी [illegible] शरीर हैं ॥

आगैं, ते औदारिकादि ५ शरीर सर्वसंसारी जीवनिकै अविशेषकरि होय है, तहां सर्व एकही काल होय है ऐसा प्रसंग होतैं जे शरीर एकजीवकै एककाल संभवै तिनिके दिखावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४३ ॥

याका अर्थ– तिनि तैजस कार्मण दोऊनिकूं आदिकरि एक जीवकै एककालविषैं दोय भी होय, तीन भी होय, च्यारितांई होय ऐसैं भाज्यरूप करनां । पांच न होय । यह तत् शब्द है सो प्रकरण जिनका है ऐसैं तैजस कार्मणके ग्रहणके अर्थि है । ते है आदि जिनिके ते तदादि कहिये । बहुरि भाज्य कहिये विकलपरूप विभागरूप करने । ते कहां तांई ? च्यारीतांई करने । तातैं ऐसा अर्थ भया, जो एककाल एकजीवकै कोईकै तौ तैजस कार्मण दोयही होय, ते तौ अंतरालमैं विग्रहगतिमैं जानने । बहुरि कोई जीवकै औदारिक तैजस कार्मण ए तीन होय, ते मनुष्यतिर्यंचकै जानने । बहुरि कोई जीवकै वैक्रियिक तैजस कार्मण ए तीन होय, ते देवनारकीनिकै जानने । बहुरि कोई जीवकै औदारिक आहारक तैजस कार्मण ए च्यारि होय, ते प्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनिकै जानने । ऐसै भाज्यरूप जानने ॥

आगैं, फेरि तिनहीविषैं विशेषकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं–

॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥ ४४ ॥

याका अर्थ––अंतका कार्मण शरीर उपभोगरहित है ॥ अंतविषैं होय ताकूं अंत्य कहिये । सो इहां सूत्रपाठमैं अंतविषैं कार्मण कह्या है सो अंत्य है । बहुरि इंद्रिय द्वारिकरि शब्दादिकका ग्रहण सो उपभोग है । तिसका जाकै अभाव सो निरुपभोग है । सो ऐसा कार्मणशरीर है । जातैं विग्रहगति अंतरालविषैं इंद्रियनिकी क्षयोपशमरूप लब्धि होतैं भी द्रव्येंद्रियकी निर्वृत्तिका अभाव है । तातैं शब्दादिका उपभोगका तहां अभाव है । इहां कोई तर्क करै है, जो, तैजस भी निरुपभोग है, कार्मणही निरुपभोग कैसैं कह्या ? ताका समाधान, तैजसशरीरका इहां उपभोगके विचारविषैं अधिकार नांही । जातैं याकूं योगनिमित्त भी नांही कह्या है, ऐसैं जाननां ॥

आगैं पूछै है, जो, तीन प्रकार जन्म कहै तिनिविषैं ए शरीर उपजै है, सो तीनूंही जन्मविषैं अविशेषकरि उपजे है, कि कछु विशेष है ? तहां कहे हैं, विशेष है, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ गर्भसम्मूर्च्छनजमाद्यम् ॥ ४५ ॥

याका अर्थ— आदिका शरीर औदारिक सो गर्भतैं तथा संमूर्छनतैं उपजै है ॥ सूत्रपाठकी अपेक्षा आदिविषैं होय सो आद्य कहिये, सो औदारिक लेना । जो गर्भतैं उपजै बहुरि संमूर्च्छनतैं उपजै सो सर्व औदारिक जाननां ॥

आगैं, इसकै लगता कह्या जो वैक्रियिक, सो कैसै जन्मविषैं उपजै है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥ ४६ ॥

याका अर्थ— वैक्रियिक शरीर है सो उपपादजन्मविषैं उपजै है । उपपादविषैं होय सो औपपादिक कहिये । सो सर्व वैक्रियिक जाननां ॥

आगैं पूछै है, जो, वैक्रियिक औपपादिक है तौ उपपादविषैं न उपजै ताकै वैक्रियिकपणाका अभाव आया । ऐसैं कहतैं उत्तरका सूत्र कहै हैं—

॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥ ४७ ॥

याका अर्थ— लब्धितैं भया भी वैक्रियिक कहिये है ॥ इहां च शब्दकरि वैक्रियिकसंबंध करनां । तपके विशेषतैं ऋद्धिकी प्राप्ति होय, ताकूं लब्धि कहिये । ऐसी लब्धि जाकूं कारण होय सो लब्धिप्रत्यय कहिये । सो वैक्रियिक लब्धि-प्रत्यय भी होय है ऐसा जाननां ॥

आगै पूछै है, कि लब्धिप्रत्यय वैक्रियिकही है कि और भी है? ऐसा पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ तैजसमपि ॥ ४८ ॥

याका अर्थ— तैजसशरीर भी लब्धिप्रत्यय होय है ॥ इहां अपि शब्दकरि लब्धिप्रत्ययका संबंध करना सो तैजस भी लब्धिप्रत्यय होय है ऐसा जाननां । इहां विशेष जो, तैजसके दोय भेद कहे एक निःसरणस्वरूप दूसरा अनिःसरणस्वरूप । तहां निःसरणस्वरूप दोय प्रकार, शुभतैजस अशुभतैजस । सो यहु तौ लब्धिप्रत्यय कहिये । बहुरि अनिःसरणस्वरूप है सो सर्वसंसारी जीवनिकै पाईये । सो लब्धिप्रत्ययतैं भिन्न जाननां ॥

आगैं, वैक्रियिक पीछै कह्या जो आहारक शरीर, ताका स्वरूपका निर्धार करनेकै अर्थि तथा स्वामी कहनेकै अर्थि सूत्र कहै है—

॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसँयतस्यैव ॥ ४९ ॥

याका अर्थ— शुभ है विशुद्ध है व्याघातरहित है ऐसा आहारक शरीर प्रमत्तसंयमी मुनिकैही होय है ॥ इहां शुभ ऐसा नाम तौ आहारककाययोग शुभकर्महीका कारण है तातैं है, । याकै होतैं शुभ प्रकृतिही बंध होय है । इहां कारणविर्पै कार्यका उपचार है । जैसैं अन्नकूं प्राण कहिये है । बहुरि विशुद्ध ऐसा नाम है सो पुण्यकर्म उदयहीतैं यह होय है, तातैं विशुद्ध कहिये निर्मल बहुरि पापकर्मकारि मिल्या नांही ऐसा निर्दोषकर्म ताका अर्थ है, तातैं विशुद्ध ऐसा कहिये है । इहां कारणविर्पै कार्यका उपचार है । जैसैं कपासके तारनिकूं कपासही कहिये । बहुरि दोऊ रीतिकरि इसकै व्याघात कहिये रुकनां सो नांही तातैं अव्याघाति कहिये । इस आहारकशरीरकरि अन्य रुकै नांही तथा अन्यकरि यहु भी रुकै नांही । बहुरि च शब्द है सो समुच्चयकै अर्थि है । कदाकाल तौ लब्धिविशेषका सद्भाव जनावनेकै अर्थि हो है । कदाकाल सूक्ष्म पदार्थका निर्णय करावनेकूं होय है । तहां संयमके रक्षाकै अर्थि है ऐसा प्रयोजन पहले कह्या । ताका समुच्चय च शब्द करै है । बहुरि जिस काल आहारकशरीर प्रवर्तनेका मुनिकै अवसर है तिस काल मुनि प्रमादसहित होय है । तातैं प्रमत्तसंयतहीकै यह होय है ऐसा कह्या है । इहां क्रियारूप प्रवर्तै ताकूं प्रमाद कहै है । ऐसा मति जानूं, जो, अविरतकी ज्यौं प्रमाद होय है । एवकारतैं यह नियम किया है, जो, प्रमत्तसंयमी मुनिकै होय है, अन्यकै नांही होय है । ऐसैं मति जानूं, जो प्रमत्तसंयमी मुनिकै आहारकही होय है औदारिक नांही होय है । औदारिक तौ हैही ॥ ऐसैं चौदह सूत्रनिकरि पांच शरीरनिका निरूपण किया ॥

इहां विशेष— केई अन्यवादी तौ कार्मण शरीर नांही मानै हैं । कहै हैं, कर्म आत्माहीका अदृष्ट नामा गुण है, ताका शुभाशुभ फल है । सो यहु माननां अयुक्त है । द्रव्यादृष्ट तौ पौद्गलिक कार्मण है । ताकै निमित्ततैं भावादृष्ट जीवका गुण है । बहुरि केई अन्यमती कहै हैं भावकर्मही क्रोधादिक आत्माका भाव है, द्रव्यकर्म नांही, सो भी अयुक्त है । जीवकूं बंदीखाने ज्यौं पराधीन करनेवाला पुद्गलपर्यायरूप द्रव्यकर्म भी है । बहुरि केई अन्यमती स्वप्नमात्र शरीरकूं कहे हैं । सो भी अयुक्त है । जो स्वप्नमात्रही होय तौ जैसैं स्वप्नविर्पै केई वस्तु देखै, जागै तब कछू दीखै नांही, तैसैं यहू शरीर भी न दीख्या चाहिये । सो ऐसैं है नांही । बहुरि कोई अन्यमती आत्माकै ज्ञानमात्र शरीर मानै है, सो भी अयुक्त है । पुद्गलमय शरीर विना शरीरकै अर आत्माकै भेद कैसैं जान्या जाय ? । ज्ञान तौ आत्माका धर्म है,

तिस स्वरूपतैं तौ जुदा है नांही। ऐसैंही कोई शरीरकूं और प्रकार भी कहै है। ते इनि पांच शरीरनिमैं सर्व अंतर्भूत होय हैं। अन्य कछु है नांही॥

आगैं पूछै है, जो ऐसै शरीरनिकौं धारते संसारी जीव, तिनिकै गतिप्रति तीनूं वेदही होय हैं, कि कछु वेदनिका नियम है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ नारकसम्मूर्च्छिनो नपुँसकानि ॥ ५० ॥

याका अर्थ— नारकी जीव तथा संमूर्छन जीव ये नपुंसकलिंगीही होय हैं॥ नारकी तौ आगै कहसी। जे नरकनिविषैं उपजै ते नारक हैं। बहुरि संमूर्छन कहिये अवयवनिसाहित शरीर जहा तहां उपजनां सो जिनके होय ते संमूर्छन कहिये। बहुरि चारित्रमोहनामा कर्मकी प्रकृति नोकषाय ताका भेद जे नपुंसकवेद ताका उदय बहुरि अशुभनामा कर्मके उदयतैं स्त्री भी नांही पुरुष भी नांही ऐसै नपुंसक होय हैं ते नारक। बहुरि संमूर्छन नपुंसकही होय हैं। ऐसा नियम जाननां। तहां स्त्रीपुरुषसंबंधी मनोज्ञ शब्द गंध रूप रस स्पर्शके संबंधके निमित्ततैं होय। ऐसै तिनिके क्यौं भी सुखकी मात्रा नांही है॥

आगैं पूछै है, जो ऐसा नियम है तौ अर्थतैं ऐसा आया जो, कहे जे नारक संमूर्छन तिनितैं अवशेष रहै, ते तीनूं वेदसहित हैं, यातैं जहां नपुंसकलिंगका अत्यंतनिषेध है ताके प्रतिपत्तिकैं अर्थि सूत्र कहै हैं॥

॥ न देवाः ॥ ५१ ॥

याका अर्थ— देव हैं ते नपुंसकलिंगी नांही है॥ स्त्रीसंबंधी तथा पुरुषसंबंधी जो उत्कृष्ट सुख है, शुभगति नामा कर्मके उदयतैं भया ऐसा, सो देव अनुभवै हैं भोगवै हैं। यातैं तिनिविषैं नपुँसक नांही हैं॥

आगैं पूछै है, अन्य जीव रहे तिनिके केते वेद हैं? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥ ५२ ॥

याका अर्थ— नारक संमूर्छन देव इनि सिवाय अवशेष रहे जे गर्भज तिर्यंच तथा मनुष्य, ते तीनूं वेदसहित हैं॥ तीन हैं वेद जिनिकै ते त्रिवेद कहिये। ते वेद कैसै? स्त्री पुरुष नपुंसक। इहां पूछै है, तिनि वेदनिका अर्थ कहा? तहा कहै हैं, जो वेदिये ताकूं वेद कहिये। ताका लिंग ऐसा अर्थ है। सो दोय प्रकार है द्रव्यलिंग भावलिंग। तहां

द्रव्यलिंग तौ नामकर्मके उदयतैं भये ऐसै योनि तथा मेहन आदि आकारसहित होय है । बहुरि भाववेद नोकषाय नामा जो वेदकर्म ताके उदयतैं आत्माका परिणाम है । तहां जाविषैं गर्भधारण होय सो तौ स्त्री है । बहुरि जो अपत्य कहिये पुत्रादिककूं उपजावै सो पुरुष है । बहुरि इनि दोऊ शक्तिनितैं रहित होय सो नपुंसक है । बहुरि इनिकी संज्ञा है सो रूढिशब्दरूप है । रूढिशब्दकी व्युत्पत्ति कीजिये है सो तिस व्युत्पत्तिमात्र प्रयोजनकै अर्थिही है । जैसैं गऊ शब्दकी निरुक्ति करिये, जो चालै ताकूं गऊ कहिये । सो इहां निरुक्ति रूढिहीतैं जाननी । जातैं बैठा सोवता गऊकूं भी गऊही कहिये । ऐसै रूढि जाननी । जो ऐसै न मानिये तौ गर्भधारणक्रियाहीकूं प्रधान मानिये तौ बालस्त्री तथा वृद्धस्त्री तीर्यंचणी मनुष्यणी तथा देवांगना तथा कार्मणकाययोगविषैं अंतरालमैं तिष्ठती स्त्रीनिकै गर्भधारण नांही, तब स्त्रीपणाका नाम न ठहरै। तथा पुत्रादिक उपजाये विनां इनिका पुरुषपणाका नाम न ठहरै । तातैं इहां नामविषैं रूढीही प्रधान है । ऐसै ये तीन वेद शेष जे गर्भज तिनिकै होय हैं । इनिकी भाव अनुभवकी अपेक्षा ऐसैं कहै है । स्त्रीका तौ अंगारेकी अग्नि चिमक्याही करै तैसै है । बहुरि पुरुषका तृणकी अग्नि जैसैं चिमकै तौ बहुत परंतु अलपकालमैं बुझि जाय तैसैं है । बहुरि नपुंसककै ईटनिका कजावाकी अग्नि जैसैं प्रजल्याही करै, बुझै नांही, तैसैं है ॥

आगैं, जो ए जन्म योनि शरीर लिंगके संबंधकरि सहित जे देवादिक प्राणी ते विचित्र पुण्यपापके वशीभूत च्यारी गतिविषैं शरीरनिकूं धारते संते यथाकाल आयूकूं पूर्णकरि अन्यशरीरकूं धारै हैं कि विना आयु पूर्ण किया भी अन्यशरीरकूं धारे हैं? ऐसैं पूछै उत्तर कहै हैं-

॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

याका अर्थ- औपपादिक कहिये देव नारकी बहुरि चरमोत्तमदेह कहिये चरम शरीर जिनकै उत्तम देह बहुरि असंख्यातवर्षका जिनिका आयु ऐसै भोगभूमियां ए सर्व अनपवर्त्यायु कहिये पूर्ण आयुकरि मरै हैं । इनिका आयु छिदै नांही ॥ औपपादिक तौ देवनारक पूर्वैं कहे तेही । बहुरि चरम शब्द है सो अंतका वाची है । याका विशेषण उत्तम कहिये उत्कृष्ट है। ऐसा चरम उत्तम देह जिनिकै होय ते चरमोत्तमदेह कहिये । ऐसैं कहतैं जिनकै तिसही जन्मतैं निर्वाण होना है ऐसे चरमशरीरी संसारका जिनिकै अंत भया ऐसे तद्भवमोक्षगामी हैं ऐसा अर्थ भया ॥ बहुरि असंख्येय कहिये संख्यातैं रहित उपमाप्रमाण जे पल्यादिक तिनिकरि जान्या जाय ऐसै असंख्यात वर्षका जिनिका आयु ऐसै उत्तरकुरु आदि भोगभूमिविषैं उपजै मनुष्यतिर्यंच ऐसैं ए सर्व अनपवर्त्यायुष्क हैं । विष शस्त्र आदिक बाह्यकारण तिनिके

वशतैं घटिजाय ताकौं अपवर्त्य कहिये । इनिका आयु बाह्यकारणतैं घटै नांही ऐसा नियम है । अन्यका नियम नांही । इहां चरमदेहका उत्तम विशेषण है सो उत्कृष्टपणाके अर्थि है, अन्य अर्थ नांही है। केई चरमदेहा ऐसाही पाठ पढै हैं ॥

इहां विशेष जो, चरमशब्दका उत्तमविशेषण है सो उत्कृष्टवाची है । तहां तत्त्वार्थवार्तिकमैं ऐसैं कह्या है, जो चक्रवर्त्यादिका ग्रहण है । इहां कोई कहै, अंतका चक्रवर्ती ब्रम्हदत्त तथा अंतका वासुदेव श्रीकृष्ण इत्यादिकका आयु अपवर्तन हुवा सो इहां अव्याप्ति भई । ताका समाधान, जो, चरमशब्दका उत्तम विशेषण है । तातैं चरमशरीरी तद्भवमोक्षगामी होय तिनिका शरीरका उत्तम विशेषण है । तातैं दोष नांही । इहां तर्क, जो, काल आये विनां तौ मरण होय नांही । ताका समाधान, जैसैं आमका फल पालमैं दीये शीघ्र पकै है, तैसैं कारणके वशतैं आयु बांध्या था ताकी उदीरणा होय पहलैंही मरण होय जाय है, ऐसैं जाननां । बहुरि जैसैं चतुर वैद्य वायु आदि रोगका काल आये विनांही– वमन विरेचनादिके प्रयोगकरि श्लेष्मादिकका निराकरण करै है, तैसैं इहां भी जाननां । ऐसैं न होय तौ वैद्यकशास्त्र मिथ्या ठहरै ॥ इहां फेरि कहै, जो, रोगतैं दुःख होय ताका दूरि करनेके अर्थि वैद्यकका प्रयोग है । ताकूं कहिये दुःख होय ताका भी इलाज करै है बहुरि दुःख नांही होय तहां अकालमरण न होने निमित्त भी प्रयोग करै है ॥

इहां कोई कहै, जो आयुका उदीरणा रूप क्षय है निमित्त जाकूं ऐसा अकालमरणका इलाज कैसैं होय? ताकूं कहिये असातावेदनियका उदयकरि आया दुःखका इलाज कैसैं होय? जैसैं असातावेदनीयका उदय तौ अंतरंग कारण बहुरि बाह्य वातादि विकार होतैं ताका प्रतिपक्षी औषधादिकका प्रयोग कीजिये तब दुःख मिटि जाय है । तैसैंही आयुकर्मका उदय अंतरंग कारण होतैं बाह्य जीवितव्यके कारण पथ्य आहारादिकका विच्छेद होतैं आयुकी उदीरणा होय मरण होय जाय अरु पथ्य आहारादिककी प्राप्ति होतैं उदीरणा न होय जीवितव्य रहै है तब अकालमरण न होय है ऐसैं जाननां । बहुरि कोई कहै आयु होतैं भी मरण होय तो तहां कर्मका फल दिया विनां नाश ठहरै है । ताकूं कहिये, असातावेदनियका उदय होतैं भी इलाजतैं मिटै तब कर्म फलरहित कैसै न भया? । फेरि कहै, कडी औषधिके ग्रहणकी पीडामात्र दुःख असातावेदनीय फल दे है तातैं विनां फल नाही । ताकूं कहिये, ऐसैंही आयुकर्म भी जीवनमात्र तौ फल दियाही अफल कैसै ठहऱ्या? विशिष्ट फलका देनां दोऊही कर्मनिकै समान भया तातैं यह सिद्धि भई, जो, कोईकै अपमृत्यु भी होय है, जेती पूर्वभवविषैं आयुकर्मकी स्थिति बांधी थी ताकी बाह्य विष शस्त्रादिककै निमित्ततैं स्थिति घटिजाय उदीरणा होय तब मरण होय जाय । इहां ऐसा भी दृष्टांत है, जैसैं जल आदिकतैं ओला वस्त्र चौडाकरि तापमैं सुकावै तब शीघ्र सूकै तैसैं भी जाननां ॥ ऐसैं दूसरा अध्याय समाप्त किया ॥

दोहा— इस दूजे अध्यायमैं । जीवतत्त्वका रूप ॥
वर्णन है बहुभेदतैं । जानूं भव्य अनूप ॥ १ ॥

सवैया— जीवके स्वतत्त्व भाव लक्षण दृग्बोध धाव भवी सिद्ध आदि भेद कहे विस्तारसूं ।
इंद्रियनिका दोय रूप विषयका अपार रूप गतिभेद भिन्न भिन्न गहो इतवारसूं ॥
जन्मयोनि नानाभांति भवमैं अनेकजाति देहके विधान जीव लहै जु विकारसूं ।
वेदका नियम आयु घटै बधै ताकी रीति दूजे अधिकार भाषी मुनीशा विचारसूं ॥ २ ॥

ऐसैं तत्त्वार्थका है अधिगम जामैं ऐसा जो दशाध्यायरूप मोक्षशास्त्र ताकै विषैं द्वितीय अध्याय संपूर्ण भया ।

इति श्री परमपूज्य धर्मसाम्राज्यनायक योगींद्रचूडामणि, सिद्धातपारंगत, चारित्रचक्रवति श्री १०८ आचार्य श्रीशांतिसागरजी महाराजके आदेशसे ज्ञानदानके लिए श्री. प. पू. चा. च. आ. श्री १०८ शांतिसागर दिगंबर जैन जीर्णोद्धारक संस्थाकी ओरसे छपी हुई श्री तत्वार्थसूत्रकी श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचित सर्वार्थसिद्धीकी पंडित जयचंदजीकृता टीका-वचनिकाविषैं द्वितीय अध्याय संपूर्ण भया ॥ २ ॥

ग्रंथ प्रकाशन समिति; फलटण वीर सं. २४८१

***

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यवर्य श्री १०८ शांतिसागर महाराजके आदेशसे श्री दिगंबर जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक सस्थाकी तरफसे ज्ञानदानके लिये छपी हुई

—— श्रीवीतरागाय नमः ——

वीर संवत् २४८१] ॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥ [ग्रथ प्रकाशन समिति, फलटण

अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिध्दिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता

दोहा — अधो मध्य ऊरध सकल । जीवनिवास निवारि ॥
कहे भव्य उपकारकूं । नमू ताहि तन टारि ॥ १ ॥

ऐसैं मंगल अर्थि नमस्कार करि तीसरे अध्यायकी वचनिका लिखिये हैं। तहा सर्वार्थसिद्धि नामा टीकाविषैं प्रारंभ है जो 'भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणां' इत्यादि सूत्रविषैं नारकजीव कहे। तहां शिष्य पूछै है, ते नारकी कौन हैं? तिनिके प्रतिपादनके अर्थि प्रथम तौ तिनिका आधारका निर्देश करै हैं। ते कहां वसैं हैं, तिनि पृथ्वीनिका नाम कहै हैं, ताका सूत्र—

॥ रत्नशर्करावालुकापङ्कधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥ १ ॥

याका अर्थ— रत्नप्रभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा पंकप्रभा धूमप्रभा तमःप्रभा महातमःप्रभा ए सात अधोलोकविषैं नीचैनीचै तीन वातवलय और आकाशकै आधार पृथ्वी है ॥ इहां रत्नादिशब्दनिका द्वंद्वसमासकरि वृत्ति है तिनिकै प्रभाशब्द न्यारा जोडनां। बहुरि साहचर्यतैं तैसाही नाम है। तातैं रत्नप्रभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा पंकप्रभा धूमप्रभा तमःप्रभा महातमःप्रभा ऐसैं नाम सिद्ध भये हैं। तहां भूमिका ग्रहण तौ आधारके जनावनेके अर्थि है। स्वर्गके पटलनिके जुदे जुदे विमान हैं तहां भूमिका आश्रय नांहीं, तैसैं इहां नांही है। नारकीनिकै आवास भूमिके आश्रय हैं।

बहुरि तिनि भूमिनिके आलंबनके निर्णयकै अर्थि घनांबुवातादि शब्दका ग्रहण है। घन अंबु वात आकाश ए हैं प्रतिष्ठा कहिये आधार जिनिका ते ऐसै हैं। ए भूमि तौ घनोदधि वातवलयकै आधार है। बहुरि घनोदधि वातवलय घनवातलयकै आधार हैं। बहुरि घनवातवलय तनुवातवलयकै आधार है। तनुवातवलयकै आकशका आधार है बहुरि आकाश आपहीकै आधार है। आकाश सर्वतैं बडा है, सो अन्य आधारकी कल्पना नांही। ए तीनूंही वातवलय वीस वीस हजार योजन न्यारे न्यारे मोटे हैं। सप्त शब्दका ग्रहण अन्यसंख्याके निराकरणकै अर्थि है, सातही हैं, आठ नांही नव नांही। बहुरि अधोऽधो शब्द है सो तिर्यक् फैली वात तथा ऊर्ध्वकै निषेधकै अर्थि है॥

इहां विशेष जो, रत्नप्रभाभूमि है सो चित्र वज्र वैडूर्य लोहित होत हेमसार गलव गोमेध प्रवाल ज्योति रसांजन मूल काकस्फटिक चंदनवर्वक वकुल शिलामय ए सोलह प्रकारके रत्ननिकी प्रभा सहचरित है। तातैं याका रत्नप्रभा नाम कहै है। सो एक लाख अस्सी हजार योजनकी मोटी हैं। तामैं तीन भाग है। उपरि तौ खरभाग है, सो तौ सोला हजार योजनका है। सो तौ चित्र आदि रत्न कहे तिनिकारि रचित है। ताकै नीचै पंकभाग है सो चौरासी हजार योजनका मोटा है ताकै नीचै अब्बहुल भाग है सो अस्सी हजार योजनका मोटा है। तहां पहले खरभागविषैं हजार योजन उपरिके तथा हजार योजन नीचैके छोडि बीचके चौदह हजार योजनविषैं किन्नर किंपुरुष महोरग गंधर्व यक्ष भूत पिशाच ए सात जातिके तौ व्यंतर बहुरि नाग विद्युत सुपर्ण अग्नि वात स्तनित उदधि द्वीप दिक्कुमार ए नव जातिके भवनवासीनिके आवास हैं। पंकभागविषैं राक्षस व्यंतर अरु असुरकुमार भवनवासीनिके निवास है। बहुरि अब्बहुल भागविषैं नरक हैं। बहुरि दूसरी शर्कराप्रभा भूमिकी मोटाई बत्तीस हजार योजनकी है। तीसरी वालुकाप्रभा भूमिकी मोटाई अठ्ठाईस हजार योजनकी है। बहुरि चौथी पंकप्रभा भूमिकी मोटाई चोईस हजार योजनकी है। बहुरि पांचवीं धूमप्रभा भूमिकी मोटाई वीस हजार योजनकी है। बहुरि छठी तमःप्रभा भूमिकी मोटाई सोला हजार योजनकी है बहुरि सातई महातमःप्रभा भूमिकी मोटाई आठ हजार योजनकी है। बहुरि तिनि भूमिनिका अंतर असंख्यात कोडि योजनका जुदा जुदा है। तथा तिर्यक भी एताही है॥

भावार्थ— एक एक राजूका अंतराल हैं। अरु सप्तमी पृथ्वीकै नीचै तौ सात राजू तिर्यक् है। पहली पृथिवी मध्यलोक ऊपरि एक राजू तिर्यक् है॥ इहां अन्यमती कहै हैं, पृथ्वी काछिवाकै आधार है, तथा वराहकै दंतानिपरि है, सो यह कहनां प्रमाणसिद्ध नांही। जातैं काछिवा वराहका भी अन्य आधार कल्पनेका प्रसंग है। तथा केई कहै हैं, पृथ्वीका गोल तौ भ्रमता रहै है। अरु ज्योतिश्चक्र स्थिर है। सो यह भी कहना सबाध है। बहुरि केई कहै हैं,

पृथिवी नीचैं चलीही जाय है, अवस्थित नांही। सो भी कहना बनै नाही। इत्यादि अनेक कल्पना करै हैं, सो असत्य हैं। इहा कोई पूछै, तुमने कह्या ताकी प्रमाणता काहेतैं करै? ताकूं कहिये, हमारा कहनां सर्वज्ञके आगमकी परंपरातैं निर्बाध है, तहां स्याद्वादन्यायकरि युक्तितैं भी सिद्ध है। याकी चरचा श्लोकवार्तिकमैं विशेष करी है। तहांतैं जाननी ॥

आगै पूछै है, कि ए भूमि हैं तिनिमैं नारकीनिके सर्वत्र आवास हैं, कि कहूं कहूं हैं? ऐसैं पूछै ताके निर्धारकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ तासु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्चदशदशत्रिपञ्चोनैकनरकशतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥२॥

याका अर्थ— तिनि भूमिनिविषै अनुक्रमतैं तीस लाख पचीस लाख पंद्रा लाख दश लाख तीन लाख पांच घाटि एक लाख अरु पाच एते नरक कहिये बिला हैं। ते रत्नप्रभादिक भूमि तिनिविषैं इस संख्याकरि नरक कहिये बिला गिणिये। तहां रत्नप्रभाविषैं तीस लाख हैं। शर्कराप्रभाविषैं पचीस लाख हैं। वालुकाप्रभाविषैं पंदरा लाख हैं। पंकप्रभाविषैं दस लाख हैं। धूमप्रभाविषैं तीन लाख है। तमःप्रभाविषैं पांच घाटि एक लाख हैं। महातमःप्रभाविषैं पांचही हैं ॥ बहुरि रत्नप्रभाविषैं तेरह प्रस्तार हैं तिनिकूं पाथडा कहिये हैं। बहुरि आगैं दोय दोय घाटि हैं। तहा दूसरैं ग्यारा, तीसरैं नव, चौथैं सात, पांचवैं पांच, छठै तीन, सातवैं एक ऐसैं प्रस्तार जानने। बहुरि इनि भूमिनिका अन्य विशेष लोकनियोगशास्त्रतैं जानना ॥

इहा कछु विशेष लिखिये हैं। तहां रत्नप्रभाविषैं अब्बहुलभागविषैं ऊपरि नीचैं हजार हजार योजन छोडि वीचिमैं बिला हैं। ते इंद्रक, श्रेणीबंध, प्रकीर्णक ऐसैं तीन प्रकार हैं। तहां तेरह प्रस्तार हैं। तहा तेरहही वीचि वीचि इंद्रक हैं। तिनिके नाम सीमंतक, रौर, रौरुक, भ्रात, उद्भ्रांत, संभ्रांत, असंभ्रांत, विभ्रात, तप्त, त्रस्त, व्युत्क्रांत, अवक्रांत, विक्रांत ऐसै नाम हैं। बहुरि शर्कराप्रभाविषैं ग्यारह प्रस्तार हैं। तिनिमैं ग्यारहही वीचिवीचि इंद्रक है। तिनिके नाम स्तनक, संस्तनक, वनक, घाट, संघाट, जिह्व, उज्जिह्विक, आलोल, लोलुक, स्तन, आलोलुक ऐसैं। बहुरि वालुकाप्रभाविषैं नव प्रस्तार हैं। तिनिमैं नव इंद्रक तिनिके नाम तप्त, त्रस्त; तपन, आतापन, आदिदाघ, प्रज्वलित, संज्वलित, उज्वलित, संप्रज्वलित ऐसैं। बहुरि पंकप्रभाविषैं सात प्रस्तार हैं। तिनिमैं सात इंद्रक तिनिके नाम आर, मार, तार, वर्चस, वैमनस्क, खाट, आखाट ऐसैं। बहुरि धूमप्रभाविषैं पांच प्रस्तार हैं तहां पाच इंद्रक हैं। तिनिके नाम तम, अभ्र, झष, अंत, तामिस्र ऐसैं। बहुरि तमःप्रभाविषैं तीन प्रस्तार हैं। ताविषैं तीन इंद्रक हैं। तिनिके नाम हिम, वर्दल, लल्लक ऐसै। बहुरि महातमःप्रभा—

विषैं एक प्रस्तार है। तामैं अप्रतिष्ठान नामा एक इंद्रक है। तहां इंद्रकनिकै चार्यों दिशामैं च्यारि श्रेणी हैं। बहुरि विदिशासंबंधी अठतालीस अठतालीस हैं। पीछै चार्यों दिशासंबंधी श्रेणीबंध बिला तौ गुणचास गुणचास हैं। बहुरि विदिशासंबंधी अठतालीस अठतालीस हैं। पीछै सातईं पृथिवीका प्रस्तारतांईं एक एक घटता गया सो श्रेणीबंध तौ एक एक रह गया। विदिशामैं रहाही नांही। ऐसैं इनिकी संख्या पूर्वैं कही सो न्यारी न्यारी पृथ्वीसंबंधी जानि लेनी। तहां सप्तम पृथिवीके श्रेणीबंध च्यारि रहे। तिनिका नाम पूर्वदिशाविषै काल, दक्षिणदिशाविषैं महाकाल, पश्चिमदिशाविषैं रौरव, उत्तरदिशाविषैं महारौरव ऐसैं हैं। बहुरि सर्व बिला चौरासी लाख हैं। तहां इंद्रक तौ गुणचास हैं। श्रेणीबंध नव हजार छहसै च्यारि हैं। बहुरि प्रकीर्णक तियासी लाख निवै हजार तीनसौ सैंतालीस हैं। तिनिमैं सर्वही भूमीमैं पांचवै भाग बिला तौ संख्यात हजार संख्यात हजार योजननिकै विस्तार हैं। बहुरि अवशेष च्यारि भाग बिला असंख्यात लाख असंख्यात लाख योजनकै विस्तार हैं। इन सर्वही बिलानिके नाम अशुभही अशुभ जाननें ॥

आगैं, तिनि भूमिनिविषैं नारक जीवनिकै अन्यविशेष कहा है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ नारका नित्याशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥

याका अर्थ— इनि भूमिनिविषैं नारकजीव हैं ते सदा अशुभतर हैं लेश्या परिणाम देह वेदना विक्रिया जिनिकै ऐसे हैं ॥ लेश्यादिकका अर्थ तौ पहलै कह्या, सोही जाननां। अशुभतर ऐसा विशेषण तिनिका अधिकपणांके अर्थि है। सो तिर्यचनिकै जैसैं अशुभलेश्यादिक हैं तिनितैं अधिके नारकीनिकै जानने। अथवा उपरिके नारकीनिकै जैसै हैं, तिनितैं अधिके अधिके नीचै नीचै जानने। बहुरि नित्य शब्द है सो दुःखमैं दुःख चल्याही जाय ऐसै अर्थमैं है। तहां पहली दूसरी पृथिवीके जीवनिकै तौ कापोतलेश्या है। बहुरि तीसरी पृथिवीवालेनिकै उपरिकै तौ कापोत है नीचलेकै नील-लेश्या है। चतुर्थीवालेकै नीलही है। पंचमीवालेकै उपरिकै तौ नील है। नीचलेकै कृष्ण है। छठीवालेकै कृष्ण है। सातमीवालेकै परमकृष्ण है ऐसैं द्रव्यलेश्या तौ आयुपर्यंत एकसी है। बहुरि भावलेश्या अंतर्मुहूर्तमैं पलटवो करै है। बहुरि परिणाम स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द हैं। ते क्षेत्रका विशेषके निमित्तके वशतैं अतिदुःखके कारण अशुभतर है। बहुरि जिनिका देह अशुभनामकर्मके उदयतैं अत्यंत अशुभतर है, बहुरि आकृति हुंडकसंस्थानरूप है तिनिकी उंचाई प्रथम-पृथिवीविषैं तौ सात धनुष तीन हात छह अंगुलप्रमाण है। बहुरि नीचै नीचै दूणा दूणा जाननां। बहुरि नारकीजीवनिकै अभ्यंतर तौ असातावेदनीयका उदय होतैं बहुरि बाह्य अनादिका शीतोष्णरूप पृथिवीका स्वभावकरि उपजी तीव्रवेदना है।

तहां पहली दूसरी तीसरी चौथी पृथिवीविषैं तौ बिला उष्णही है । बहुरि पंचमीविषैं ऊपरि तौ उष्णवेदनारूप दोय लाखें बिला हैं । नीचै एक लाख बिला शीतवेदनारूप हैं । बहुरि छठी सातमीविषैं शीतवेदनाही है । बहुरि ते नारकी विक्रिया करै, ते आप तौ जाणैं मैं शुभही करूंगा परंतु अशुभविक्रियारूपही परिणमै । बहुरि आप तौ जाणैं मै सुखका कारण उपजाऊं हूं । परंतु तहां दुःखके कारणही उपजै । ऐसैं ए भाव नीचै नीचै अशुभतैं अशुभ अधिके अधिके जानने ॥

आगैं पूछै है, इनि नारकी जीवनिकै दुःख है, सो शीतउष्णजनितही है, कि अन्य अन्य प्रकार भी है ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— नारकजीव परस्पर आपसमैं उपजाया है दुःख ज्यौं ऐसे हैं ॥ इहां पूछै है, कि परस्पर उपजाया दुःख कैसे है ? तहां कहिये है, नारकीनिकै भवप्रत्ययनामा अवधि हो हैं ताकूं मिथ्यात्वके उदयतैं विभंग भी कहिये । इसतैं दुःखके कारणनिकूं दूरिहीतैं जाणैं हैं । बहुरि निकटतैं परस्पर देखनेतैं कोप प्रज्वलै है । बहुरि पूर्वभवका जातिस्मरण होय, तातैं तीव्रवैर यादि आवै है । जैसैं श्वानके अरु स्यालकै परस्पर वैरका संबंध है, तैसैं अपने परके परस्पर घातविषैं प्रवर्तैं हैं । बहुरि आपही विक्रियाकरि तरवारि कुहाडी करसी भिंड माल शक्ति तोमर सेल लोहके घन इत्यादिक शस्त्रनिकरि बहुरि अपने हाथ पग दांतानिकरि छेदनां भेदनां छोलनां काटनां इत्यादिक क्रियाकरि परस्पर अतितीव्र दुःख उपजावे हैं ॥

आगैं, कहा एतावत् ही दुःखकी उत्पत्तीके कारण तथा प्रकार हैं कि और भी कछु है ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ सङ्क्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च प्राक्चतुर्थ्याः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— क्लेशपरिणामसहित जे असुरकुमारके देव ते उपजावै है दुःख जिनिकूं ऐसे नारकी जीव तीसरे नरकपर्यंत हैं ॥ देवगति नामकर्मका भेद जो असुरत्वसंवर्तन ताकै उदयतैं परकूं दुःख देवै ते असुर कहिये । पूर्वजन्मविषैं इनि देवनिनैं ऐसाही अतितीव्र संक्लेश परिणामकरि पापकर्म उपार्ज्या है । ताके उदयतैं निरंतर संक्लेशसहित असुर हो हैं । तिनिमैं केई अंब अंबरीप आदि जातिके असुर है, ते नारकीनिकूं दुःख उपजावै हैं । सर्वही असुर दुःख नांही उपजावै हैं । बहुरि इनि असुरनिका गमनकी मर्यादा दिखावनेकूं " प्राक् चतुर्थ्याः " ऐसा वचन है । ऊपरकी

तीन पृथिवीविषैं असुर बाधा करै हैं । आगै चौथी पांचई छठी सातईविषैं इनिका गमन नांही । इहां कोई पूछै, ए देव इनि नारकीनिकूं दुःख दे हैं, सो इनिका कहा प्रयोजन है ? । तहां कहिये, जो, ए देव ऐसैही पापकर्ममैं लीन हैं । जैसैं इहां कोई मींडे भैंसे कूकडे तीतर मल्ल इनिकूं लडाय कलह देखि हर्ष मानै हैं; तैसैं नारकीनिकी कलह दुःख देखि अति हर्ष मानै हैं । ए यद्यपि देव भये हैं तथापि निदानादिकरि अज्ञानतपके फलतैं इनिकूं परका दुःख आदि अशुभही हर्षका कारण हो है । बहुरि च शब्द है सो पहले सूत्रमैं कह्या जो दुःख, ताकै समुच्चयकै अर्थि है । तीव्र तपाया गाल्या जो लोह ताम्र ताकौ पायवाकरि, बहुरि तपाया लोहका स्तंभतैं चेपनां, बहुरि कूटशाल्मली कहिये सूली तापरि चढाय उतारणा, बहुरि लोहके घनका घात करनां, कुहाडी छुराव सोलातैं काटणां छोलणां, बहुरि क्षारा पाणी तथा तपे तेलतैं सींचनां, बहुरि लोहके कडाहमैं पचावनां, भांडमैं भूंदनां, बहुरि भोभलीमैं भुलसनां, बहुरि वैतरणी नदीमैं डुबोवनां, घाणीमैं पीलना इत्यादिकनिकरि नारकीनिकूं दुःख उपजावै हैं । ऐसैं छेदनभेदनादिकरि शरीर खंड खंड होय जाय है । तौ भी आयु पूर्ण हूवा विना मरण नांही होय है । जातैं नारकीनिका आयु अनपवर्त्य कह्या है, सो छिदै नांही ॥

आगैं पूछै है, "जो इनि नारकीनिकी आयु छिदै नांही सो आयुका परिमाण केता है सो कहो" ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— नरकके जीवनिकी आयू उत्कृष्ट पहली पृथिवीमैं तौ एक सागरकी, दूसरीमैं तीन सागर, तीसरीमैं सात सागर, चौथीमैं दश सागर, पांचमीमैं सतरा सागर' छठीमैं बाईस सागर, सातमीमैं तेतीस सागर ऐसैं हैं ॥ इहां यथाक्रम शब्दकी तौ ऊपरीतैं अनुवृत्ति है । तिनि भूमिनिविषैं अनुक्रमकरि यथासंख्य स्थिति लगावणी । तहां रत्नप्रभाविषैं तौ उत्कृष्ट स्थिति एक सागरकी है । शर्कराप्रभाविषैं तीन सागरकी है । वालुकाप्रभाविषैं सात सागरकी हैं । पंकप्रभाविषैं दश सागरकी है । धूमप्रभाविषैं सतरा सागरकी है । तमःप्रभाविषैं बाईस सागरकी है । महातमःप्रभाविषैं तेतीस सागरकी है । ऐसी उत्कृष्ट स्थिति है ॥ तिनि भूमिनिविषैं नारकी जीवनिकी आयु है, भूमीकी स्थिति यहु नांही है ॥

आगैं कहै हैं, सातभूमिरूप विस्तारकूं धरै अधोलोक तौ कह्या । अब तिर्यक् लोक कह्या चाहिये । सो तिर्यक् लोक ऐसा नाम कैसै हैं ? जातैं स्वयंभूरमण समुद्रपर्यंत असंख्यात तिर्यक्प्रचयरूप अवस्थित द्वीप समुद्र हैं । तातैं तिर्यक् लोक नाम है । इहां पूछै है, ते द्वीप समुद्र तिर्यक् अवस्थित कौन कौन हैं ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— जम्बूद्वीप लवणसमुद्र इनिकूं आदि देकरि भले भले जिनके नाम ऐसे द्वीप समुद्र हैं ॥ जम्बूद्वीपादिक तौ द्वीप बहुरि लवणोदादिक समुद्र ऐसे जे लोकमैं भले भले नाम हैं ते इनि द्वीपसमुद्रनिके हैं। तहां जंबूद्वीप तौ द्वीप बहुरि लवणोदधिसमुद्र, धातकीखंडद्वीप कालोदधिसमुद्र, पुष्करवरद्वीप पुष्करवरसमुद्र, वारुणीवरद्वीप वारुणीवरसमुद्र, क्षीरवरद्वीप क्षीरवरसमुद्र, घृतवरद्वीप घृतवरसमुद्र, इक्षुवरद्वीप इक्षुवरसमुद्र, नंदीश्वरवरद्वीप नंदीश्वरवरसमुद्र, अरुणवरद्वीप अरुणवरसमुद्र, ऐसैं असंख्यात द्वीप समुद्र स्वयंभूरमणपर्यंत जानने ॥

इहां विशेष जो, जंबूद्वीपका नाम जंबूवृक्ष यामैं है तातैं याकी अनादितैं यह संज्ञा है। सो यह जंबूवृक्ष कहा है सो कहिये हैं। उत्तरकुरु भोगभूमिविषैं पांचसै योजनकी चौडी एक जगती कहिये पृथिवी है। ताकूं स्थानी भी कहिये। ताकी क्यूं अधिक तिगुणी परिधि है। सो बाह्यतैं केते एक प्रदेश क्रमहानिरूप छोडि बीचिमैं बारा योजन ऊंची है। फेरि क्यौं प्रदेश क्रमहानिरूप छोडि अंतमैं दोय कोस ऊंची है। ताकै चौगिरिद सुवर्णमयी पद्मवर वेदिका कहिये भीति है। ताकै बीचिही बीचि नानारत्नमय पीठ है। आठ योजनका लंबा है। च्यारी योजनका चौडा है। च्यारीही योजनका ऊंचा है। ताकै चौगिरिदा बारह वेदिनिकरि वेड्या है। तिनि वेदिनिके चाऱ्यौं तरफ च्यारी तोरण हैं। ते श्वेत हैं। सुवर्णके तूयनिकरि सहित हैं। ता पीठके ऊपरि फेरि उपपीठ है सो एक योजनका लंबा चौडा है, दोय कोस ऊंचा है। ताकै बीचि जंबूवृक्ष है। सुदर्शन है नाम जाका स्कंध दोय योजन ऊंचा है। छह छह योजन ऊंचा डाहला है। बीचि छह योजन चौडा मंडल है। आठ योजन लंबा है। ताकै चौगिरिद इस वृक्षतैं आधे प्रमाण लिये एकसो आठ छोटे जंबूवृक्ष हैं। तिनिकरि वेड्या है। देवदेवांगनाकरि सेवनीक है। यह वर्णन तत्त्वार्थवार्तिकतैं लिख्या हैं। अर त्रिलोकसारविषैं याका वर्णन विशेषकरि है। तथा कछु विवक्षाका भी विशेष है। सो तहांतैं जानना। ऐसैं वृक्षके योगतैं जंबूद्वीप नाम है। यह वृक्ष पृथिवीकाय है, वनस्पतिकाय नांहीं है। बहुरि लवणरससारिखा जलके योगतैं लवणोद जाननां ॥

आगैं इनि द्वीप समुद्रनिका विष्कंभ कहिये चौडाई तथा सन्निवेश कहिये अवस्थानविशेष संस्थान कहिये आकार इनिके विशेषनिकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै है—

॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥ ८ ॥

याका अर्थ— जंबूद्वीपतैं लगाय सर्वद्वीप समुद्र दूणे दूणे विस्तार हैं। वहुरि यह पहले पहले ऊपरि परिक्षेपी कहिये वेढे हैं। वलय कहिये गोल कडाकी आकृति हैं। द्विर्द्वि ऐसा वीप्सा कहिये वारंवार वृत्तिके कहनेविषैं वचन है। सो चौडाईके दूणापणां कहनेके अर्थि है। आदि जो जंवूद्वीपका विस्तार है तातैं दूणा लवणसमुद्रका है। तातैं दूणा दूसरा धातकीखंडद्वीप है। तातैं दूणा दूसरा कालोदधिसमुद्र है। ऐसैं जाननां। वहुरि पहले पहले ऊपरि परिक्षेपि कहिये वेड्या है, ग्राम नगरादिकी ज्यों अवस्थान मति जाणुं। वहुरि वलयाकृति कहिये गोल कडाकी ज्यों आकार हैं, चौकूंणां आदि आकार नांही है॥

आगैं पूछै है, जंवूद्वीपका ठिकाणा आकार चौडाईका प्रमाण कह्या चाहिये। जातैं अगिले द्वीप समुद्रनिका विस्तारादिकका ज्ञान जाकरि होय। ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— तिनि द्वीप समुद्रनिकै वीचि जंवूद्वीप है सो गोल है। ताकै वीचि मेरुपर्वत नाभिकी ज्यों है। वहुरि लाख योजनका चौडा है॥ तिनिपूर्वक द्वीप समुद्रनिकै मध्य जंवूवृक्षकरि लक्षित जंवूनामा द्वीप है। सो कैसा है। मेरु तौ जाकै नाभिकी ज्यौं है। वहुरि सूर्यके विमानकी ज्यौं गोलाकार है। वहुरि शतसहस्र कहिये एक लाख योजनका विष्कंभ कहिये चौडा है। वहुरि उत्तरकुरु भोगभूमिविषैं अनादिनिधन पृथ्वीकायरूप अकृत्रिम परिवारवृक्षनिसहित जंवू नामा वृक्ष है। ताके नामतैं या द्वीपका भी नाम जंवूद्वीप है॥

आगै, तहां जंवूद्वीपविषैं छह कुलाचलनिकरि भेदरूप किया ऐसै सात क्षेत्र हैं, ते कौन है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १० ॥

याका अर्थ— तिस जंवूद्वीपविषैं भरत हैमवत हरि विदेह रम्यक हैरण्यवत ऐरावत ए साते क्षेत्र हैं॥ इहां भरतादिक संज्ञा अनादिकालतैं प्रवर्तैं है। इनिकूं काहूका निमित्त नांही। तहां जंवूद्वीपकी दक्षिणदिशाका विभागविषैं हिमवान् कुलाचल अरु तीन तरफ लवणसमुद्रकै वीचि तौ भरतक्षेत्र है, सो चढाया धनुष्यकै आकार है। वहुरि याके विजयार्द्ध—

पर्वततैं तथा गंगा सिंधू नदीतैं भेद होय छह खंड भये हैं। बहुरि छोटा हिमवान् कुलाचलकी उत्तरदिशातैं अरु महाहिमवान् कुलाचलकी दक्षिणदिशातैं पूर्वपश्चिमके लवण समुद्रकै वीचि हैमवतक्षेत्र है। बहुरि निषध कुलाचलकी दक्षिणदिशानैं अर महाहिमवान् कुलाचलकी उत्तरदिशानैं बहुरि पूर्वपश्चिमके लवण समुद्रकै अंतरालमैं हरिक्षेत्र है। बहुरि निपधकुलाचलकी उत्तरदिशानैं अरु नीलकुलाचलकी दक्षिणदिशानैं पूर्वपश्चिमके लवणसमुद्रकै वीचि विदेहक्षेत्र है। बहुरि नीलकुलाचलके उत्तरदिशानैं अरु रुक्मिकुलाचलके दक्षिणदिशानैं पूर्वपश्चिमके समुद्रके वीचि रम्यक क्षेत्र है। बहुरि रुक्मिकुलाचलतैं उत्तरदिशानैं अरु शिखरि-कुलाचलतैं दक्षिणदिशानैं अरु पूर्वपश्चिमके लवणसमुद्रके अंतरालमैं हैरण्यवतक्षेत्र है। बहुरि शिखरिकुलाचलतैं उत्तरदिशानैं अरु तीनूंही तरफा लवणसमुद्रकै वीचि ऐरावतक्षेत्र है। सो याके विजयार्धपर्वत तथा रक्ता रक्तोदा नदीकरि भेदे छह खंड भये हैं॥

आगैं पूछै हैं, कि छह कुलाचल हैं ऐसैं कह्या, ते कौन हैं तथा कैसैं व्यवस्थित है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥ ११ ॥

याका अर्थ— तिनिक्षेत्रनिके विभाग करनेवाले पूर्वपश्चिम लंवे ऐसे हिमवान् महाहिमवान् निपध नील रुक्मी शिखरी ए छह कुलाचल हैं। इनि क्षेत्रनिका विभाग करै तिनिकूं तद्विभाजन कहिये। बहुरि पूर्वपश्चिम दोऊ दिशाकी तरफ लंवे पूर्वपश्चिम दिशाकी कोटीतैं लवणसमुद्रकूं स्पर्शनेवाले हिमवत् आदि अनादिकालतैं प्रवर्ती है संज्ञा जिनिकी क्षेत्रनिके विभागके कारण हैं, तातैं वर्षधर कहिये। ऐसे कुलाचल पर्वत छह हैं। तहां हिमवान् तौ भरतक्षेत्रकी अरु हैमवतक्षेत्रकी सीमाविषैं तिष्ठै है। ताकूं क्षुद्रहिमवान् भी कहिये। सो, सौ योजनका ऊंचा है। बहुरि हैमवतक्षेत्र अरु हरिक्षेत्रका विभाग करनेवाला महाहिमवान् दोयसौ योजनका ऊंचा है। बहुरि महाविदेहक्षेत्रकी तौ दक्षिणदिशानैं अरु हरिक्षेत्रतैं उत्तरदिशानैं निपधनामा कुलाचल है। सो च्यारिसै योजन ऊंचा है। बहुरि उत्तरदिशाविषैं भी पर्वत अपने अपने क्षेत्रके विभाग करनेवाले नील रुक्मी शिखरी ए तीन हैं सो पूर्वोक्त च्यारीसै दोयसै एकसो योजन ऊंचा है सो जाननां॥ बहुरि इनिका मूल अवगाह पृथिवीविषैं ऊंचाईतैं चौथै भाग जाननां॥

आगैं तिनि कुलाचलनिका वर्णका विशेषकी प्रतिपत्तीके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥ १२ ॥

याका अर्थ— ये कुलाचल हेम कहिये पीतवर्ण, अर्जुन कहिये श्वेतवर्ण, तपनीय कहिये तापासोना सारिखा रक्तवर्ण

वैडूर्य कहिये नीलवर्ण, रजत कहिये श्वेत, हेम कहिये पीत ऐसे वर्णमय हैं ॥ जे ए कहे हिमवत् आदि कुलाचल ते अनुक्रमतैं हेमादिकमयी जानने । तहां हेममय तौ हिमवान् है, सो पीला पाटसारिखा वर्ण है । बहुरि अर्जुनमय महाहिमवान् है, सो शुक्ल है । बहुरि तपनीयमय निषध है सो दुपहरीके सूर्यके वर्णसारिखा है । बहुरि वैडूर्यमय नील है, सो मोरके कंठसारिखा है ॥ बहुरि रजतमय रुक्मी है, सो शुक्ल है । बहुरि हेममय शिखरी है, सो पीले पाटसारिखा वर्ण है ॥

आगैं इनिका फेरि भी विशेषके अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥

याका अर्थ— इनि कुलाचलनिके पसवाडे तौ मणिनिकरि चित्रित हैं । बहुरि मूलतैं ले ऊपरितांई समान चौडे हैं । अनेकवर्ण अरु प्रभाव कहिये महिमा इत्यादि गुणनिकरि सहित जे मणि तिनिकरि विचित्रित हैं पार्श्व कहिये पसवाडे जिनिके ऐसे हैं । बहुरि आकार जिनिका मूलतैं लगाय मध्य तथा ऊपरितांई समान है, चौरस भीतिकी ज्यों बराबर है ॥

आगै तिनि कुलाचलनिके ऊपरि न्हद हैं ते कहिये हैं—

॥ पद्ममहापद्मतिगिंछकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि ॥ १४ ॥

याका अर्थ-- तिनि हिमवत् आदि कुलाचलनि ऊपरि अनुक्रमतैं पद्म महापद्म तिगिंछ केसरी महापुण्डरीक पुण्डरीक ए ह्रद जानने ॥

आगैं आदिका जो पद्महद ताका आकारविशेषकी प्रतिपत्तीकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो ह्रदः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— पद्मह्रद है सो पूर्वपश्चिम दिशातैं तौ हजार योजन लंबा है । बहुरि उत्तर दक्षिण दिशानैं पांचसै योजनका विस्तार है । बहुरि वज्रमय याका तल है । बहुरि अनेक प्रकारके मणि तथा सुवर्ण तथा रजत तिनिकरि विचित्रित जाका तट है ॥

आगैं याका अवगाह कहिये ऊंडाई जाननेंकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ दशयोजनावगाहः ॥ १६ ॥

याका अर्थ— पद्महृदकी उंडाई दश योजन है ॥

आगै, तिस हृदविर्षे कमल है, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥ १७ ॥

याका अर्थ— या हृदमैं एक योजन प्रमाण कमल है। तामैं कोश कोशके लंबे तौ पत्र हैं। बहुरि दोय कोशके चौडी वीचिकी कर्णिका है। बहुरि जलके तलतैं दोय कोश उंचा नाल है। बहुरि एताही पत्रनिकी मोटाई है ॥

आगैं अन्य हृदनिकी लंवाई चौडाई तथा कमलकी लंवाई चौडाई जनावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं-

॥ तद्द्विगुणद्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥ १८ ॥

याका अर्थ— पहले हृदतैं तथा कमलतैं दूणे दूणे लंवाई चौडाई रूप आगिले आगिले हृद तथा कमल जाननां ॥ तहां पद्महृदतैं दूणा दोयहजार योजन लंवा हजार योजन चौडा वीस योजन ऊंडा महापद्महृद जाननां। बहुरि यातैं दूणा च्यारिहजार योजन लंवा दोयहजार योजन चौडा चालिस योजन ऊंडा तिगिंछहृद जाननां। याही भांति कमल च्यारि योजन लंवा दोय योजनका चौडा आदि जाननां ॥

आगैं तिनि कमलनिविर्षे निवास करनेवाली देवीनिके नाम आयु परिवार प्रतिपादनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः
पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥ १९ ॥

याका अर्थ— तिनि कमलनिकी कर्णिकाके मध्यदेशके विर्षे शरदके निर्मल पूर्ण चंद्रमाकी द्युतिके जीतनहारे कोश लंवे अर्ध कोश चौडे कछु घाटि कोशके ऊंचे महल हैं। तिनिविर्षे निवास करनेवाली देवी हैं श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी ए हैं नाम जिनिके ते वसै हैं। तिनिकी एक एक पल्यकी आयु है। बहुरि सामानिक जातिके देव बहुरि पारिषद

जातिके देव तिनिकरि सहित वर्तें हैं। तिस कमलके परिवारकमल हैं। तिनिकै ऊपरि महल हैं। तिनिविषैं सामानिक देव वसै हैं। तथा पारिषद देव वसै हैं ॥

आगैं जिनि नदीनिकरि ते क्षेत्र भेदे ते नदी कहिये हैं—

॥ गङ्गासिन्धूरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्य-
कूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥

याका अर्थ– तिनि क्षेत्रनिके मध्य गमन करै ऐसी चौदह नदी हैं। तिनिके नाम गंगा सिंधू रोहित् रोहितास्या हरित् हरिकांता सीता सीतोदा नारी नरकांता सुवर्णकूला रूप्यकूला रक्ता रक्तोदा ऐसैं। सरित् कहनेतैं तौ वापी नांही है। बहुरि तन्मध्य कहनेतैं इत उत नांही गई हैं ॥

आगैं, सर्वनदीनिका एक जायगा प्रसंगके निषेधकूं दिशाका विशेषकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २१ ॥

याका अर्थ— दोय दोय नदी एक एक क्षेत्रविषैं हैं। ऐसैं वाक्यविशेष जोडनेतैं सर्वका एक जायगा प्रसंगका निषेध है। बहुरि पूर्वाः पूर्वगाः ऐसैं वचनतैं दिशाका विशेषकी प्राप्ति है। तहां जे पाठमैं दोय दोयमैं पहली कही जो नदी, ते पूर्वदिशाके समुद्रकूं गई हैं। इहां पहली कही सात नदीतैं पूर्वदिशाकूं गई होयगी ऐसा नांही है। जातैं दोय दोयमैंसूं पहली पहली लेणी ऐसैं जाननां ॥

आगैं, पहली पहली तौ पूर्वदिशाकूं गई बहुरि अन्य किस दिशाकूं गई? तिनिकी दिशाका विभागकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥

याका अर्थ— दोय दोयमैं जो अवशेष रही ते नदी पश्चिमके समुद्रकूं गमन करै हैं, ऐसी प्रतीति करनी ॥ तहां पद्महदके पूर्वद्वारतैं निकसी जो गंगानदी सो तौ भरतक्षेत्रमैं होय पूर्वसमुद्रकूं गई। बहुरि पश्चिमद्वारतैं निकसी सिंधू सो

भरतक्षेत्रमैं होय पश्चिमदिशाके समुद्रकूं गई । बहुरि उत्तरद्वारतैं निकसी रोहितास्या सो हैमवतक्षेत्रमैं होय पश्चिमकै समुद्रमैं गई । वहुरि महापद्मह्रदके दक्षिणद्वारतैं निकसी रोहित् नाम नदी सो हैमवतक्षेत्रमैं होय पूर्वदिशाके समुद्रमैं गई । वहुरि महापद्मह्रदके उत्तरद्वारतैं निकसी हरिकांता नाम नदी सो हरिक्षेत्रमैं होय पश्चिमके समुद्रकूं गई । वहुरि तिगिंछ ह्रदके दक्षिणद्वारतैं निकसी हरित्नदी सो हरिक्षेत्रमैं होय पूर्वदिशाके समुद्रकूं गई । वहुरि तिगिंछ ह्रदके उत्तरद्वारतैं निकसी सीतोदा नदी सो विदेहक्षेत्रमैं होय पश्चिमसमुद्रकूं गई । वहुरि केसरी ह्रदके दक्षिणद्वारतैं निकसी सीता नदी सो विदेहक्षेत्रमैं होय पूर्वके समुद्रकूं गई । वहुरि केसरीह्रदके उत्तर द्वारतैं निकसी नरकांता नदी सो रम्यकक्षेत्रमैं होय पश्चिमकै समुद्रमैं गई । वहुरि महापुंडरीकह्रदके दक्षिणके द्वारतैं निकसी नारी नामा नदी सो रम्यकक्षेत्रमैं होय पूर्वके समुद्रमैं गई । वहुरि महापुंडरीकह्रदके उत्तर द्वारतैं निकसी रूप्यकूला नामा नदी सो हैरण्यवतक्षेत्रमैं होय पश्चिमके समुद्रकूं गई । वहुरि पुंडरीकह्रदके दक्षिणद्वारतैं निकसी जो सुवर्णकूला नामा नदी सो हैरण्यवत क्षेत्रमैं होय पूर्वके समुद्रकूं गई । वहुरि पुंडरीकह्रदके पूर्वतोरणद्वारतैं निकसी जो रक्ता नामा नदी सो ऐरावतक्षेत्रमैं होय पूर्वसमुद्रमैं गई । वहुरि महापुंडरीकह्रदके पश्चिम तोरणद्वारतैं निकसी रक्तोदा नामा नदी सो ऐरावत क्षेत्रमैं होय पाश्चिम समुद्रमैं गई ॥

आगैं, इनि नदीनिकी परिवारनदीनिके प्रतिपादनकै आर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृता गङ्गासिन्ध्वादयो नद्यः ॥ २३ ॥

याका अर्थ-- इहां गंगा सिंधू आदिका ग्रहण कोन प्रयोजन है ? तहां कहै हैं, पूर्वोक्त नदीनिके ग्रहणकै अर्थि है। इहां ऐसी आशंका न करनी; जो, अनंतर सूत्रमैं नदीनिका नाम हैही इहां फेरि न चाहिये । जातैं व्याकरणमैं ऐसी परिभाषा है, जो अनंतरका विधि होय कै प्रतिषेध होय । तहां कहिये अनंतर सूत्रतैं पश्चिमकूं गई नदीनिकाही ग्रहण होय है । तातैं गंगासिंध्वादिका ग्रहण युक्त है । इहां पूछै है कि, गंगादिकांही ग्रहण होऊ । ताकूं कहिये, ऐसैं कहै पूर्वकूं गई तिनिहीका ग्रहण आवै है । तातैं सर्वही ग्रहणकै आर्थि गंगासिंध्वादिका ग्रहण किया है । वहुरि नदीका ग्रहण है सो दूणा दूणाका संबंधके आर्थि है । गंगा चौदाहजार नदीनिकरि परिवारित है । तैसैही सिंधू भी चौदाहजार नदीनिकरि परिवारित है । ऐसैं अगली अगली नदी क्षेत्र क्षेत्र प्रति विदेहतांई दूणी दूणी जाननी । तातैं परै आधि आधि घटती जाननी ॥

आगैं, जे क्षेत्र कह्या तिनिकी चौडाई जाननेकै आर्थि सूत्र कहै है—

सुषमसुषमा । सुषमा । सुषमदुःषमा । दुःषमसुषमा । दुःषमा । अतिदुःषमा ऐसैं । बहुरि उत्सर्पिणी भी छह प्रकार है । सो पूर्वोक्ततैं उलटा गिणनां । तहां अतिदुःषमा । दुःषमा । दुःषमसुषमा । सुषमदुःषमा । सुषमा । सुषमसुषमा ऐसैं । इनिका कालका प्रमाण दश दश कोडाकोडि सागर जाननां । इनि दोऊनिकौं भेले किये कल्पकाल कहिये । तहां सुषमसुषमा च्यारि कोडाकोडि सागरका । तिस कालकी आदिविषैं मनुष्य उत्तरकुरु भोगभूमिके मनुष्यनितुल्य होय है । तहांतैं अनुक्रमतैं घटतैं घटतैं सुषमाकाल तीन कोडाकोडि सागरका होय है । तिसकी आदिविषैं मनुष्य हरिक्षेत्रके मनुष्यनिसारिखे होय है । तहांतैं अनुक्रमतैं घटतैं घटतैं सुषमदुःषमाकाल दोय कोडाकोडि सागरका होय है । तिसकी आदिविषैं मनुष्य हैमवत-क्षेत्रके मनुष्यनिकै समान होय है । तहांतैं अनुक्रमतैं घटतैं घटतैं दुःषमसुषमाकाल बियालीस हजार वरस घाटि एक कोडाकोडि सागरका होय है । तिसकी आदिविषैं मनुष्य विदेहक्षेत्रके मनुष्यनिकै तुल्य होय हैं । तहांतैं अनुक्रमतैं घटतैं-घटतैं दुःषमाकाल इकईस हजार वर्षका होय है । तहांतैं अनुक्रमतैं घटतैं घटतैं अतिदुःषमाकाल इकईस हजार वर्षका होय है । ऐसैंही उत्सर्पिणी भी उलटा अनुक्रमरूप जाननां ॥

आगैं पूछै है कि, अन्यभूमिनिकी कहा अवस्था है ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै है—

॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥ २८ ॥

याका अर्थ—तिनि भरत ऐरावत क्षेत्र सिवाय रहे जे क्षेत्र ते ' अवस्थिताः ' कहिये जैसे हैं तैसेही रहै है ॥ तहां उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल नांही पलटै है ॥

आगैं पूछै है, तहांके मनुष्यनिकी आयु समानही है कि कछु विशेष है ? ऐसैं पूछै सूत्र कहैं हैं-

॥ एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरवकाः ॥ २९ ॥

याका अर्थ— हैमवतक कहिये हैमवतक्षेत्रके मनुष्य तिनिकी आयु एक पल्यकी है । इसकूं जघन्यभोगभूमिका क्षेत्र कहिये । बहुरि हरिवर्षके मनुष्यनिकी आयु दोय पल्यकी है । इसकूं मध्यमभोगभूमिका क्षेत्र कहिये । बहुरि देव-कुरुभोगभूमिका मनुष्यनिकी आयु तीन पल्यकी है । इसकूं उत्तमभोगभूमि कहिये । तहां पांच मेरुसंबंधी पांच हैमवत-क्षेत्रनिविषैं सुषमदुःषमा सदा अवस्थित है । तहांके मनुष्यनिका आयु एक पल्यका अरु काय दोय हजार धनुष्यनिका है । बहुरि एकदिनके अंतरतैं आहार करै हैं । बहुरि नीलकमलसारिखा शरीरका वर्ण है । बहुरि पांच हरिक्षेत्रनिविषैं

सुषमा सदा अवस्थित है । तहाके मनुष्यनिकी आयु दोय पल्यकी है । च्यारि हजार धनुष्यका काय है । दोय दिनकै अंतरतें आहार करै है । वहुरि शंखवर्णधवल शरीर है । वहुरि पांच देवकुरुक्षेत्रनिविषैं सुषमासुषमा सदा अवस्थित है । तहांके मनुष्यनिकी आयु तीनपल्यकी है । छह हजार धनुषकी काय है । तीन दिनके अंतरतैं आहार करै है । सुवर्णवर्ण शरीर है ॥

आगैं उत्तरदिशानिकेविषैं कहा अवस्था है ? ऐसें पूछै सूत्र कहै है ।

॥ तथोत्तराः ॥ ३० ॥

याका अर्थ— जैसे दक्षिणदिशाकेनिविषैं कहे तैसेही उत्तरदिशाके जानने । हैरण्यवतका तौ हैमवतकेनिकै तुल्य है । रम्यकके हरिवर्षकेनिकै तुल्य है । उत्तरकुरवकका देवकुरवकानिकै समान है । ऐसैं जानना ॥

आगैं विदेहक्षेत्रनिकेविषैं कहा स्थिति है ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

विदेहेषु सङ्ख्येयकालाः ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— पंचमेरुसंबंधी पंचविदेहक्षेत्रनिविषैं मनुष्यकी आयु संख्यातवर्षकी है । तहां काल सुषमदुःषमाका अंतिसारिखा सदा अवस्थित है । काय पांचसे धनुषका है । नित्य आहार करै है । उत्कृष्ट आयु एककोडि पूर्वका है । जघन्य आयु अंतर्मुहूर्तका है । तहां पूर्वके परिमाणकी गाथाका अर्थ— सतरि लाख कोडी वर्ष वहुरि छपनहजार कोडि वर्ष एक पूर्व होय है ॥

आगैं, कह्या जो भरतक्षेत्रका विस्तार ताकूं अन्यप्रकारकरि कहै हैं —

॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— जंबूद्वीपका विस्तार लाख योजनका है । ताके एकसो निवै भाग करिये तिनिमैं एक भाग मात्र विस्तार भरतक्षेत्रका है । सो पूर्वैं कह्या पांचसैं छवीस योजन छह कला परिमाण हो है ॥

आगैं, कह्या था, जो, जंबूद्वीपकूं वेढिकरि वेदी तिष्टै है, तातैं परै लवणसमुद्र दोय लाख योजन विस्ताररूप वलयाकार तिष्टै है, तातैं परै धातकीखंड द्वीप च्यारि लाख योजन वलयविस्ताररूप है । तहां क्षेत्र आदिकको संख्याकी विधिका ज्ञानके अर्थि सूत्र कह्या है—

जम्बूद्वीपविषैं जम्बूवृक्ष है तहां पुष्कर द्वीपविषैं पुष्करवृक्ष परिवारसहित जाननां । तिसहीकै नामतैं द्वीपका नाम प्रसिद्ध है । इहां पुष्करार्द्ध कह्या सो मानुषोत्तर नाम पर्वत या द्वीपकै मध्य है, तिसकरि विभाग भया । तातैं ता पर्वतकै उरै आधा द्वीप है । तातैं पुष्करार्द्ध ऐसा नाम जाननां ॥

आगैं, पूछै है कि, जंबूद्वीपकै हिमवत् आदिकी संख्या दोय बार आवृत्तिकरि पुष्करार्द्धमैं कही ताका कहां प्रयोजन है ? समस्तही पुष्करद्वीपविषैं क्यौं न कही ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं––

॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥

याका अर्थ–– पुष्करद्वीपके वीचिही बीचि वलयवृत्तिरूप मानुषोत्तर नाम पर्वत है । तातैं पहलैं पहलैंही मनुष्य हैं । तातैं बाह्य नाहीं । तातैं बाहरिके पुष्करद्वीपमैं क्षेत्रनिका विभाग नाही है । तिस पर्वततैं परै ऋद्धिधारी तथा विद्याधर भी मनुष्य नाही गमन करै हैं । बहुरि जलचर जीव तथा विकलत्रय त्रस भी नही जाय हैं । तहां उपजै भी नाही है । उपपाद अर समुद्घाततैं तौ प्रदेश बाहरि जाय है । विना उपपादसमुद्घात नाही जाय है । तातैं याकी सार्थक संज्ञा है । ऐसैं जंबूद्वीप आदि अढाई द्वीप तथा लवणोद कालोद ए दोय समुद्रनिविषैंही मनुष्य जाननां ॥

आगैं कहै हैं, ते मनुष्य दोय प्रकार हैं, ताका सूत्र––

॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥ ३६ ॥

याका अर्थ–– गुणनिकरि अथवा गुणवान् पुरुषनिकरि सेईये ते आर्य कहिये । ते दोयप्रकार हैं । ऋद्धिप्राप्त अनृद्धि-प्राप्त । तहां अनृद्धिप्राप्त आर्य पांचप्रकारके हैं । क्षेत्र आर्य, जाति आर्य, कर्म आर्य, चारित्र आर्य, दर्शन आर्य ऐसे। बहुरि ऋद्धिप्राप्त आर्य सात प्रकारके हैं । बुद्धिऋद्धि, विक्रियाऋद्धि, तपऋद्धि, बलऋद्धि, औषधऋद्धि, रसऋद्धि, अक्षीण-ऋद्धि ऐसे । तहां अनृद्धिप्राप्तमैं काशी कोशलादि आर्यदेशनिविषैं उपजै ते क्षेत्र आर्य हैं । बहुरि इक्ष्वाकु जाति भोज-कुलादिविषैं उपजे ते जातिआर्य हैं ॥ बहुरि कर्मआर्य तीन प्रकार हैं । तहां सावद्यकर्म आर्य, अल्पसावद्यकर्म आर्य, असावद्यकर्म आर्य । तहां सावद्यकर्म आर्य छह प्रकारके हैं ॥ तहां असि धनुष्य आदि शस्त्रके प्रयोगकेविषैं प्रवीण होय, ते असिकर्म आर्य हैं । बहुरि द्रव्य आदिका आय व्यय लिखनेविषैं प्रवीण होय ते मषिकर्म आर्य हैं । बहुरि हल कुलि दांतला आदि शेतीके उपकरणके विधान जानै ते कृषिकर्म आर्य हैं । बहुरि चित्राम गणित आदि बहत्तरि कला जानै ते

शिल्पकर्म आर्य हैं । बहुरि जैसें नाई कुम्हार लुहार आदि शिल्पकर्म आर्य हैं । बहुरि चंदनादि सुगंध, घृतादि-रस, शाल्यादि धान्य, कपासादि वस्त्र, मोती आदि रत्नादि अनेकप्रकार द्रव्यका संग्रह करनेवाले अनेक प्रकार वाणिज्य-कर्म आर्य हैं । बहुरि अल्पसावद्यकर्म आर्य देशविरत श्रावक हैं । बहुरि असावद्यकर्म आर्य सकलविरत मुनि हैं । बहुरि चारित्र आर्य दोय प्रकार हैं । तहां चारित्रमोहके उपशमतैं तथा क्षयतैं बाह्यके उपदेशविनाही आत्माकी शुद्धतातैं चारित्र-परिणामकौ प्राप्त भये ते अधिगतचारित्र आर्य हैं । बहुरि चारित्रमोहके क्षयोपशम होतैं बाह्यके उपदेशतैं चारित्रपरिणाम जिनिकै होय ते अनधिगतचारित्र आर्य हैं ॥

बहुरि दर्शनआर्य दश प्रकारके हैं । ते सम्यग्दर्शनके आश्रयतैं जानने । तहां जे सर्वज्ञ अर्हन्तप्रणीत आगमकी आज्ञामात्र कारणतैं श्रद्धावान होय, ते आज्ञासम्यक्त्ववान कहिये । बहुरि निर्ग्रंथमोक्षमार्गके दर्शन श्रवणमात्रतैं श्रद्धावान होय, ते मार्ग श्रद्धावान हैं । बहुरि तीर्थंकर आदिके पुराण आदिके उपदेशके निमित्ततैं श्रद्धावान् होय. ते उपदेश रुचिवान आर्य हैं । बहुरि मुनिनिके आचार सूत्रके श्रवणमात्रतैं श्रद्धावान होय, ते सूत्रसम्यक्त्ववान् हैं । बहुरि बीजपदरूप जे सूक्ष्म अर्थ तिनके निमित्ततैं श्रद्धावान होय, ते बीजरुचिमान हैं । बहुरि जीवादिपदार्थका संक्षेप उपदेशतैं श्रद्धावान् होय, ते संक्षेपरुचि हैं । बहुरि अंगपूर्वमें जैसें कहे तैसें विस्ताररूप प्रमाणनयादिकनैं निरूपण किये जे तत्त्वार्थ, तिनिके श्रवणतैं श्रद्धावान होय, ते विस्ताररुचि हैं । बहुरि वचनके विस्तारविनां सुन्या अर्थके ग्रहणतैं श्रद्धावान् होय, ते अर्थदर्शनवान हैं । बहुरि द्वादशांगके जाननेतैं श्रद्धावान होय, ते अवगाढरुचि हैं । बहुरि परमावधि केवलज्ञानदर्शनतैं जीवादि पदार्थनिकौ जाने सो " आत्मा उज्वल श्रद्धानरूप भया " तहां परमावगाढरुचि कहिये ऐसे ये दश दर्शन आर्य हैं ॥

बहुरि ऋद्धिप्राप्त आर्य सात प्रकार कहे ते इहां आठ प्रकार भी कहे हैं । तहां बुद्धिऋद्धीके अठारह भेद हैं । तहां केवलज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तीन तौ पहलै कहे तेही जानने । बहुरि संवारे क्षेत्रविषैं जैसैं कालादिके सहायतैं बीज बोया अनेक फल दे तैसैं नोइंद्रिय श्रुतज्ञानावरण वीर्यांतरायके क्षयोपशमके प्रकर्ष होतैं एकबीजके ग्रहणतै अनेक पदार्थनिका ज्ञान होय सो बीजबुद्धि है । बहुरि जैसें कोठारीके धरे न्यारे न्यारे प्रचुर धान्य बीजतैं विनाश न भये कोठीनिमैं धरे हैं, तैसें आपकी जाणे जे अर्थके बीज प्रचुर न्यारे न्यारे बुद्धिमें वर्णे रहे जिस काल चाहै तिस काल काढै ताकै कोष्ठबुद्धि कहिये । बहुरि पदानुसारी तीन प्रकार अनुश्रोत, प्रतिश्रोत दोऊरूप । तहां एकपदका अर्थतैं सुनि आदि-विषैं तथा अंतविषैं तथा मध्यविषैं सर्वग्रंथका अवधारण करनां, सो पदानुसारी है । बहुरि चक्रवर्तीका कटक बारह

योजन लंबा नव योजन विस्तारमैं पडै है । ताविषैं गज वाजी ऊंट मनुष्यादिकका अक्षर अनक्षररूप शब्द ते एककाल प्राप्त भये तिनिकूं तपके बलतैं पाया जो श्रोत्र इंद्रियका बल, तातैं समस्तका एककाल श्रवण होय ताकूं संभिन्नश्रोत्र कहिये । बहुरि तपके विशेषकरि प्रगट भया जो असाधारण रसना इंद्रिय श्रुतज्ञानावरण वीर्यांतरायका क्षयोपशम अंगोपांगनामा नामकर्मका उदय जाकै ऐसा मुनिकै रसनाका विषय जो नव योजन तातैं बाह्यतैं आया जो बहुयोजनतैं रसका स्वाद ताकै जाननेकी सामर्थ्य सो रसनेंद्रिय ज्ञानलब्धि है । ऐसैंही स्पर्शन इंद्रिय तथा घ्राणइंद्रिय श्रोत्रेंद्रिय इनिके विषयक्षेत्रतैं बाह्यतैं आया जो गंध स्पर्श वर्ण शब्द ताके जाननेकी सामर्थ्य हो है । ते पांच ए भये ॥ बहुरि महारोहिणी आदि विद्या तीनवार आय कहै जो ह्मानैं अंगिकार करौ । कैसी है ते ? अपने अपने रूपकी सामर्थ्य प्रगट करनेका कथनविषै प्रवीण है । भावार्थ– ऐसैं कहै, जो, ते कहो सोही करां ऐसी विद्यादेवतानिकरि जिनिका चारित्र चलै नांही ऐसै दशपूर्वके धारकनिकै दशपूर्वित्व ऋद्धि हो है । बहुरि संपूर्णश्रुतकेवलीकै होय सो चतुर्दशपूर्वित्व है । बहुरि अंतरिक्ष भौम अंग स्वर व्यंजन लक्षण छिन्न स्वप्न ए आठ निमित्तज्ञान हैं । ते जिनिकै होय तिनिकूं अष्टांगमहानिमित्त कहिये । तहां चंद्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्र ज्योतिषीनिका उदय अस्त आदिकरि अतीत अनागत फलका कहनां सो अंतरिक्ष है । बहुरि पृथिवीकी कठिणता छिद्रमयता सचिक्कणता रूक्षता आदि देशनितैं दिशाविषैं सूत आदिका स्थापनकरि हानिवृद्धि जय पराजय आदिका जाननां, तथा भूमिमैं स्थापे जे सुवर्णरजतादि तिनिका बतावना सो भौमानिमित्त ज्ञान हैं । बहुरि पुरुषके अंगोपांगके देखनेतैं तथा स्पर्शन आदिकतैं त्रिकालके सुख दुःख आदिका जाननां सो अंगनिमित्तज्ञान है । बहुरि अक्षररूप तथा अनक्षररूप शुभ अशुभ शब्द सुननेतैं इष्ट अनिष्ट फल जाननां सो स्वरनिमित्तज्ञान है । बहुरि मस्तकविषैं मुखविषैं गलाविषैं तिल मुश आदि चिन्ह देखनेतैं तीन कालका हित अहित जाननां सो व्यंजननिमित्तज्ञान है । बहुरि श्रीवृक्ष स्वस्तिक भृंगार कलश आदि शरीरविषैं चिन्ह देखनेतैं तीन कालकै विषैं पुरुषके स्थान मान ऐश्वर्यादिका विशेष जाननां सो लक्षणनिमित्त ज्ञान है । बहुरि वस्त्र शस्त्र छत्र उपानत् कहिये पगाकी जोडी अर आसन शयन आदिविषैं देव मनुष्य राक्षस आदिके विभागकरि शस्त्रतैं कटै कांटातैं कटै मूसा आदि काटै तिनिका देखनेतैं तीन कालके लाभ अलाभ सुखदुःखका जाननां सो छिन्ननिमित्तज्ञान है । बहुरि वात पित्त श्लेष्मके दोषकरि रहित जो पुरुष ताकूं स्वप्न आवै सो पीछिली रातीके भागविषैं चंद्रमा सूर्यका तथा पृथ्वी समुद्रका मुखविषैं प्रवेश देखै तथा समस्त पृथ्वीमंडलका आच्छादन देखै ए तौ शुभस्वप्न अथवा घृततैलकरि अपना देह आर्द्रित देखै तथा गर्दभ ऊंटपरि आपकूं चढा देखै तथा दिशाका गमन देखै ये अशुभ स्वप्न इत्यादि स्वप्नके देखनेतैं आगामी जीवना मरनां सुख दुःख आदि जानै सो स्वप्ननिमित्तज्ञान है ।

विद्याकर्म आर्य हैं। बहुरि धोबी नाई लूहार कुह्मार सुनार आदि शिल्पकर्म आर्य हैं। बहुरि चंदनादि सुगंध, घृतादि-रस, शाल्यादि धान्य, कार्पासादि वस्त्र, मोती आदि जवाहर अनेकप्रकार द्रव्यका संग्रह करनेवाले अनेक प्रकार वाणिज्य-कर्म आर्य हैं। बहुरि अल्पसावद्यकर्म आर्य देशविरत श्रावक है। बहुरि असावद्यकर्म आर्य सकलविरत मुनि है॥ बहुरि चारित्र आर्य दोय प्रकार हैं। तहां चारित्रमोहके उपशमतैं तथा क्षयतैं बाह्यके उपदेशविनाही अपनी शुद्धतातैं चारित्र-परिणामकूं प्राप्त भये ते अभिगतचारित्र आर्य हैं। बहुरि चारित्रमोहके क्षयोपशम होतैं बाह्यके उपदेशतैं चारित्रपरिणाम जिनिकै होय ते अनभिगतचारित्र आर्य हैं॥

बहुरि दर्शनआर्य दश प्रकारके हैं। ते सम्यग्ग्रहणके कारणकी अपेक्षातैं जानने। तहां जे सर्वज्ञ अर्हत्प्रणीत आगमकी आज्ञामात्र कारणतैं श्रद्धावान् होय, ते आज्ञासम्यक्त्ववान् कहिये। बहुरि निर्ग्रंथमोक्षमार्गके दर्शन श्रवणमात्रतैं श्रद्धावान् होय, ते मार्ग श्रद्धावान् हैं। बहुरि तीर्थंकर आदिके पुराण आदिके उपदेशके निमित्ततैं श्रद्धावान् होय, ते उपदेश रुचिमान् आर्य हैं। बहुरि मुनिनिके आचार श्रुतके श्रवणमात्रतैं श्रद्धावान् होय, ते सूत्रसम्यक्त्ववान् हैं। बहुरि बीजपदरूप जे सूक्ष्म अर्थ ताके निमित्ततैं श्रद्धावान् होय, ते बीजरुचिमान् हैं। बहुरि जीवादिपदार्थका संक्षेप उपदेशतैं श्रद्धावान् होय, ते संक्षेपरुचि है। बहुरि अंगपूर्वमें जैसैं कहे तैसैं विस्ताररूप प्रमाणनयादिकतैं निरूपण किये जे तत्त्वार्थ, तिनिके श्रवणतैं श्रद्धावान् होय, ते विस्ताररुचि हैं। बहुरि वचनके विस्ताराविनां सुन्या अर्थके ग्रहणतैं श्रद्धावान् होय, ते अर्थ-दर्शनवान् है। बहुरि द्वादशांगके जाननेतैं श्रद्धावान् होय, ते अवगाढरुचि हैं। बहुरि परमावधि केवलज्ञानदर्शनतैं जीवादि पदार्थनिकूं जाने जो " आत्मा उज्वल श्रद्धानरूप भया " तहां परमावगाढरुचि कहिये ऐसे ये दश दर्शन आर्य हैं॥

बहुरि ऋद्धिप्राप्त आर्य सात प्रकार कहे ते इहां आठ प्रकार भी कहे हैं। तहां बुद्धिऋद्धीके अठारह भेद हैं। तहां केवलज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तीन तौ पहलै कहै तेही जानने। बहुरि संवारे क्षेत्रविषैं जैसै कालादिके सहायतैं बीज बोया अनेक फल दे तैसैं नोइंद्रिय श्रुतज्ञानावरण वीर्यातरायके क्षयोपशमके प्रकर्ष होतैं एकबीजके ग्रहणतैं अनेक पदार्थका ज्ञान होय सो बीजबुद्धि है। बहुरि जैसै कोठारीके धरे न्यारे न्यारे प्रचुर धान्य बीजतैं विनाश न भये कोठेहिमैं धरे है; तैसैं आपही जाणे जे अर्थके बीज प्रचुर न्यारे न्यारे बुद्धिमैं वर्णे रहे जिस काल चाहै तिस काल काढै ताकूं कोष्ठबुद्धि कहिये। बहुरि पदानुसारी तीन प्रकार अनुश्रोत, प्रतिश्रोत दोऊरूप। तहां एकपदका अर्थतैं सुनि आदि-विषैं तथा अंतविषैं तथा मध्यविषैं सर्वग्रंथका अवधारण करनां, सो पदानुसारी है। बहुरि चक्रवर्तीका कटक बारह

योजन लंबा नव योजन विस्तारमें पडै है । ताविषैं गज वाजी ऊंट मनुष्यादिकका अक्षर अनक्षररूप शब्द ते एककाल प्राप्त भये तिनिकूं तपके बलतैं पाया जो श्रोत्र इंद्रियका बल, तातैं समस्तका एककाल श्रवण होय ताकूं संभिन्नश्रोत्र कहिये । बहुरि तपके विशेषकरि प्रगट भया जो असाधारण रसना इंद्रिय श्रुतज्ञानावरण वीर्यांतरायका क्षयोपशम अंगोपांगनामा नामकर्मका उदय जाकै ऐसा मुनिकै रसनाका विषय जो नव योजन तातैं बाह्यतैं आया जो बहुयोजनतैं रसका स्वाद ताकै जाननेकी सामर्थ्य सो रसनेंद्रिय ज्ञानलब्धि है । ऐसैंही स्पर्शन इंद्रिय तथा घ्राणइंद्रिय श्रोत्रेंद्रिय इनिके विषयक्षेत्रतैं बाह्यतैं आया जो गंध स्पर्श वर्ण शब्द ताके जाननेकी सामर्थ्य हो है । ते पांच ए भये ॥ बहुरि महारोहिणी आदि विद्या तीनवार आय कहै जो ह्यानैं अंगिकार करौ । कैसी है ते ? अपने अपने रूपकी सामर्थ्य प्रगट करनेका कथनविषै प्रवीण है । भावार्थ- ऐसैं कहै, जो, ते कहो सोही करौं ऐसी विद्यादेवतानिकरि जिनिका चारित्र चलै नांही ऐसै दशपूर्वके धारकनिकै दशपूर्वित्व ऋद्धि हो है । बहुरि संपूर्णश्रुतकेवलीकै होय सो चतुर्दशपूर्वित्व है । बहुरि अंतरिक्ष भौम अंग स्वर व्यंजन लक्षण छिन्न स्वप्न ए आठ निमित्तज्ञान हैं । ते जिनिकै होय तिनिकूं अष्टांगमहानिमित्त कहिये । तहां चंद्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्र ज्योतिषीनिका उदय अस्त आदिकरि अतीत अनागत फलका कहनां सो अंतरिक्ष है । बहुरि पृथिवीकी कठिणता छिद्रमयता सचिक्कणता रूक्षता आदि देशनितैं दिशाविषैं सूत आदिका स्थापनकरि हानिवृद्धि जय पराजय आदिका जाननां, तथा भूमिमैं स्थापे जे सुवर्णरजतादि तिनिका बतावना सो भौमानिमित्त ज्ञान है । बहुरि पुरुषके अंगोपांगके देखनेतैं तथा स्पर्शन आदिकतैं त्रिकालके सुख दुःख आदिका जाननां सो अंगनिमित्तज्ञान है । बहुरि अक्षररूप तथा अनक्षररूप शुभ अशुभ शब्द सुननेतैं इष्ट अनिष्ट फल जाननां सो स्वरनिमित्तज्ञान है । बहुरि मस्तकविषैं मुखविषैं गलाविषैं तिल मुश आदि चिन्ह देखनेतैं तीन कालका हित अहित जाननां सो व्यंजननिमित्तज्ञान है । बहुरि श्रीवृक्ष स्वस्तिक भृंगार कलश आदि शरीरविषैं चिन्ह देखनेतैं तीन कालकै विषैं पुरुषके स्थान मान ऐश्वर्यादिका विशेष जाननां सो लक्षणनिमित्त ज्ञान है । बहुरि वस्त्र शस्त्र छत्र उपानत् कहिये पगाकी जोडी अर आसन शयन आदिविषैं देव मनुष्य राक्षस आदिके विभागकरि शस्त्रतैं कटै कांटातैं कटै मूसा आदि काटै तिनिका देखनेतैं तीन कालके लाभ अलाभ सुखदुःखका जाननां सो छिन्ननिमित्तज्ञान है । बहुरि वात पित्त श्लेष्मके दोषकरि रहित जो पुरुष ताकूं स्वप्न आवै सो पीछिली रातीके भागविषैं चंद्रमा सूर्यका तथा पृथ्वी समुद्रका मुखविषैं प्रवेश देखै तथा समस्त पृथ्वीमंडलका आच्छादन देखै ए तौ शुभस्वप्न अथवा घृततैलकरि अपना देह आर्द्रित देखै तथा गर्दभ ऊंटपरि आपकूं चढा देखै तथा दिशाका गमन देखै ये अशुभ स्वप्न इत्यादि स्वप्नके देखनेतैं आगामी जीवना मरनां सुख दुःख आदि जानै सो स्वप्ननिमित्तज्ञान है ।

ए आठ निमित्तज्ञान जाकै होय सो अष्टांगनिमित्तज्ञान ऋद्धि है। वहुरि द्वादशांग चौदह पूर्व तौ न पढ्या होय अरु प्रकृष्ट श्रुतज्ञानावरणके क्षयोपशमतैं ऐसी असाधारण प्रज्ञा प्रगट भई होय जो चौदहपूर्वके पढनेवालेनैं सूक्ष्म तत्त्वका विचार अवगाहनविषैं एक पद कह्या तिसतैं निःसंदेह निरूपण करै ताकै प्रज्ञा श्रवणत्वऋद्धि हो है । वहुरि परके उपदेशविनाही अपनी शक्तिके विशेषतैं ज्ञानसंयमके विधानविषैं प्रवृत्ति होना सो प्रत्येकबुद्धिऋद्धि है । वहुरि इंद्र भी आय वाद करै तौ ताकूं निरुत्तर करै तथा वादीके दोप जाकूं प्रतिभासै ताकै वादित्वऋद्धि हो है । बहुरि दूजी क्रियाऋद्धि है ताके दोय भेद चारणऋद्धि, आकाशगामिनी। तहां चारणऋद्धि अनेक प्रकार है । तहां जलके निवासविषैं जलकायके जीवनिकूं न विराधते भूमिकी ज्यों पग धरते गमन करै ते जलचारण हैं । वहुरि भूमितैं च्यारि अंगुल ऊंचै आकाशविषैं जंघा उठाय शीघ्र सैकडो कोश गमन करै ते जंघाचारण हैं । ऐसैही तंतुपरि गमन करै पुष्पपरि गमन करै सीधे गमन करै अग्निकी शिखापरि गमन करै इत्यादि गमन करै तिनिके जीवनिको वाधा न होय ते चारणऋद्धिके भेद हैं । वहुरि पद्मासनकरि तथा कायोत्सर्ग आसनकरि पगके निक्षेपविना आकाशविषैं निराधार गमन कर जाय तहां आकाशगामिनी-ऋद्धि है ॥ वहुरि तीसरी विक्रियाऋद्धि सो अनेक प्रकार है । तहां अणुमात्र शरीरकरि ले सो अणिमा है । तहां कमलके तंतूमात्र छिद्रविषैं प्रवेशकरि तहां वैठि चक्रवर्तीकी विभूति रचै ऐसी सामर्थ्य है। वहुरि मेरुपर्वततैं भी वडा शरीर रचै सो महिमा है। वहुरि भूमिमैं वैठै अंगुलीकरि मेरूका शिखर सूर्य आदिकूं स्पर्शै सो प्राप्ति है। वहुरि भूमिविषैं तौ जलकी ज्यौं अरु जलविषैं भूमिकी ज्यौं उन्मज्जन निमज्जन करै सो प्राकाम्य है । वहुरि तीन लोकका प्रभुत्वपणा रचै सो ईशित्व है । सर्वजीवनिकौ वशी करणेकी सामर्थ्य सो वशित्व है। वहुरि पर्वतकै बीचि आकाशकी ज्यौं गमनागमन करै सो अप्रतिघात है । अदृष्ट होय जाय काहूंको दीखै नांही सो अंतर्धान है। वहुरि एककालमैं अनेकरूप करनेकी शक्ति सो कामरूपित्व है । इनिकूं आदि देकरि अनेक विक्रियाऋद्धि है । वहुरि चौथी तपोतिशयऋद्धि है । सो सात प्रकार है । तहां उपवास वेला तेला चौला पचौला तथा पक्ष मास आदि अनशन तपका प्रारंभ करि मरणपर्यंत करै ऐसी सामर्थ्य होय सो उग्रतप है । वहुरि महोपवास करतैं भी काय वचन मनका वल वधताही रहै शरीरमैं दुर्गंध आदि न आवै स्वासोच्छ्वास सुगंधही आवै शरीरकी दीप्ति घटै नांही सो दीप्ततप है । वहुरि आहार करै सो तातैं कडाहमैं पडा जल जैसैं शीघ्र सूकि जाय तैसै सूकै तातैं मलरुधिरादिरूप परिणमै नांही सो तप्ततप है ॥ वहुरि सिंहनिष्क्रीडित आदि महोपवासका आचरणविषैं ततपर सो महातप है । वहुरि वात पित्त श्लेष्म सन्निपाततैं उपज्या जो ज्वर कास श्वास अक्षिसूल कोट प्रमेह आदि अनेक प्रकार रोग तिनिकरि संतापरूप भया है

देह जिनिका तौ भी अनशन कायक्लेशादि तपतैं छूटै नांही भयानक मसाण पर्वतके शिखर गुफा दरी कंदरा शून्यग्राम आदिविषैं दुष्ट यक्ष राक्षस पिशाच वेतालरूप विकार होतैं भी तथा कठोर जे स्यालनिके रुदन निरंतर सिंह व्याघ्र आदि तथा दुष्ट हाथीनिके भयानक शब्द सुननेतैं भी तथा चोरादिका जहां विचरणा ऐसे भयानक प्रदेशनिविषैं तिष्ठै सो घोरतप है । बहुरि तेही मुनि तपका योगके बधावनेकैविषैं तत्पर ते घोर पराक्रम हैं । बहुरि बहुतकालतैं ब्रह्मचर्यके धारक अतिशयरूप चारित्रमोहनीय कर्मका क्षययोपशमतैं नष्ट भये हैं खोटे विकाररूप स्वप्न जिनिकै ते घोर ब्रह्मचर्यवान् हैं । ऐसैं सात तपोऋद्धि है ॥ बहुरि पांचवा बलऋद्धि तीन प्रकार है । तहां मनःश्रुतज्ञानावरण वीर्यांतराय कर्मका क्षयोपशमका प्रकर्ष होतैं अंतर्मुहूर्तमैं समस्तश्रुतका अर्थ चिंतवनेकी सामर्थ्य जिनिकै होय ते मनोबली हैं । बहुरि मनोजिव्हा श्रुतज्ञानावरण वीर्यांतरायका क्षयोपशम अतिशयरूप होतैं अंतर्मुहूर्तमैं सकलश्रुतके उच्चारणविषैं समर्थ होय निरंतर उच्चस्वरतैं उच्चारण करतैं भी खेदरहित कंठस्वर भंग न होय ते वचनबली हैं । बहुरि वीर्यांतरायका क्षयोपशमतैं असाधारण कायका बल प्रगट होतैं मासिक चातुर्मासिक वार्षिक प्रतिमा योग धारतैं भी खेदरहित होय ते कायबली हैं । बहुरि छठी औषधऋद्धि सो आठ प्रकार है । तहां असाध्य भी रोग होय तौ तिनिके स्पर्शन आदिकरि नष्ट होय जाय तहां जिनके पादका स्पर्शनांही औषध तथा थूकही औषध तथा पसेव सहित रज सो जल्ल कहिये सोही औषधी तथा कान दांत नासिका नेत्रका मलही औषधी तथा विट्मल तथा मूत्रही औषधी तथा अंग उपांग नख दंत केश आदिक स्पर्शी पवन आदि सर्वही औषधी, तथा तीव्र जहरका मिल्या भी आहार जिनिकै मुखमैं गये विषरहित होय ते आस्याविष हैं, तथा जिनिके देखनेमात्रकरिही तीव्र जहर दूरि हो जाय सो दृष्ट्याविष हैं ऐसैं आठ औषधीऋद्धि हैं । बहुरि सातमी रसऋद्धि है । सो छह प्रकार है । तहां महातपस्वी मुनि जो कदाचित् क्रोध उपजै काहूकूं कहै तूं मरिजा तौ तिनिके वचनतैं तत्क्षण मरै ते आस्यविष हैं । बहुरि कदाचित् क्रोधकरि क्रूरदृष्टीकरि देखै तौ पैला मरि जाय सो दृष्टिविष है । बहुरि विरस भी भोजन जिनकै हस्तविषैं पड्या क्षीररसरूप हो जाय तथा जिनिका वचन दुर्वलकूं क्षीरकी ज्यों तृप्ति करै सो क्षीरस्रावी है । बहुरि जिनिके हस्तविषैं पड्या आहार नीरस भी होय सो मिष्टरसवीर्यपरिणामरूप होय जाय तथा जिनिका वचन सुननेवालेनिके मिष्टरसके गुण ज्यों पुष्ट करै सो मधुस्रावी है । बहुरि जिनिके हस्तविषैं पड्या अन्न रूक्ष भी होय सो घृतरसका वीर्यके पाककूं प्राप्त होय तथा जिनिका वचन घृतकी ज्यों प्राणीनिकूं तृप्ति करै सो सर्पिःश्रावी है । बहुरि जिनिके हस्तविषैं पड्या भोजन अमृत हो जाय तथा जिनिका वचन

प्राणीनिकूं अमृतकी ज्यों उपकार करै सो अमृतश्रावी है। ऐसैं रसऋद्धि छह प्रकार है॥ बहुरि आठमी क्षेत्रऋद्धि दोय प्रकार है। तहां लाभांतरायके क्षयोपशमका अतिशयवान् मुनि तिनिकूं जिस भोजनमैंसूं भोजन दे तिस भोजनमैं चक्रवर्तिका कटक भोजन करै तौ वै दिनि वीतै नही सो अक्षीणमहानस है। बहुरि मुनि जहां वसै तहां देव मनुष्य तिर्यंच सर्वही जो आय वसै तौ परस्पर बाधा होय नांही सकडाई न होय सो अक्षीणमहालय है । ऐसैं ए ऋद्धि जिनिकै प्राप्त होय ते ऋद्धिप्राप्त आर्य हैं॥

बहुरि म्लेंछ दोय प्रकार हैं अंतर्द्वीपज कर्मभूमिज । तहां अंतर्द्वीपज तौ लवणसमुद्रकी आठ दिशा विदिशाविषैं तथा आठही तिनिके अंतरालनिविषैं तथा हिमवान् शिखरी कुलाचल तथा दोऊ विजयार्द्धके पूर्वपश्चिम दोऊ दिशानिके अंतविषैं आठ हैं। ऐसैं चौईस अंतर्द्वीप हैं तहां वसै हैं। तहां दिशानिके द्वीप तौ जंबूद्वीपकी वेदीतैं पांचसैं योजन परै समुद्रमैं हैं तिनका सौ सौ योजनका विस्तार है। बहुरि विदिशानिकैं द्वीप वेदीनितै पांचसैं योजन परै हैं। तिनिका विस्तार पचावन पचावन योजनका है। बहुरि दिशा विदिशानिके अंतरालके द्वीप वेदीतैं पांचसैं पचास योजन परै हैं। तिनिका विस्तार पचास पचास योजनका है। बहुरि पर्वतनिके अंतके द्वीप वेदीतैं छहसै योजन परै है। तिनिका विस्तार पचीस पचीस योजनका है। तहां मनुष्य कैसे हैं? पूर्वदिशाके द्वीपके वासी तौ एकजांघवाले हैं। पश्चिमके पूंछवाले हैं। उत्तरदिशाके गूंगे हैं। दक्षिणदिशाके सींगवाले हैं। बहुरि च्यारि विदिशानिके क्रमतैं सुस्साकेसे कान, सांकलीकेसे कान, काननिको ओढि ले ऐसे वडे कान, लंबेकान ऐसै हैं। बहुरि अंतरालनिके क्रमतैं घोडामुखा, सिंहमुखा, भैंसामुखा, सूकरमुखा, वघेरामुखा, उल्लूकमुखा, काकमुखा, बंदरमुखा ऐसे है। बहुरि शिखरी कुलाचलके दोऊ अंतनिके मेघमुख विजलीमुख हैं। बहुरि हिमवान् कुलाचलके दोऊं अंतके द्वीपनिके मच्छमुख कालमुख हैं। बहुरि उत्तर विजयार्द्धके दोऊ अंतनिके हस्तिमुख आदर्शमुख हैं। बहुरि दक्षिणविजयार्द्धके दोऊ अंतनिके गोमुख मेपमुख हैं। बहुरि एकजांघवाले तौ माटीका आहार करैं हैं। गुफानिविषैं वसै हैं। बहुरि अवशेप सारेही तौ पुष्पफलनिका आहार करै हैं। अरु वृक्षनिविषैं वसै हैं। इनि सर्वहीकी एकपल्यकी आयु है। बहुरि ए चौईसही द्वीप जलके तलतैं एक एक योजन ऊंचे हैं। ऐसैही कालोदसमुद्रविषैं जानने ऐसैं ए अंतर्द्वीपके म्लेंछ कहे। बहुरि कर्मभूमिनिके म्लेंछ शक यवन शबर पुलिंद इनिकूं आदि दे अनेकजाति हैं॥

आगें पूछै हैं, कर्मभूमि कहा है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥ ३७ ॥

याका अर्थ—भरतक्षेत्र पांच ऐरावतक्षेत्र पांच विदेह पांचमेरुसंबंधी पांच ऐसैं पंद्रैं कर्मभूमि हैं । तहां विदेहके कहनेतैं देवकुरु उत्तरकुरु भी तिस क्षेत्रमैं हैं । ताका प्रसंगके निषेधकै अर्थि तिनि विनां ऐसैं कह्या है । जातैं वे दोऊ उत्तम भोगभूमि हैं । हैमवत जघन्यभोगभूमि है । हरिक्षेत्र मध्यम भोगभूमि है । रम्यक मध्यम भोगभूमि है । हैरण्यवत जघन्यभोगभूमि है । बहुरि अंतर्द्वीपकूं भी भोगभूमिही कहिये है । इहां पूछै है, कर्मभूमिपणा काहेतैं कह्या है ? ताका समाधान, कर्मभूमि है सो शुभ अशुभ कर्मके आधार क्षेत्र है । तहां फेरि पूछै है कर्मका आश्रय तौ तीनूंही लोकका क्षेत्र है । ताका समाधान, जो, याहीतैं तहां अतिशयकरि कर्मका आश्रय जानिये है । तहां सातवै नरक जाय, ताका कारण अशुभ कर्म इनि भरतादिक्षेत्रनिविषैंही उपजाईये है । तथा सर्वार्थसिद्धि आदिका गमनका कारण शुभकर्म भी इनिही क्षेत्रनिविषैं उपजाईये है । बहुरि खेती आदि छह प्रकारके कर्म भी इनिही क्षेत्रनिविषैं आरंभ है । तातैं इनिकूं कर्मभूमि कहिये है । अन्य जे भोगभूमि तिनिविषैं दशप्रकारके कल्पवृक्षनिकरि कल्पित भोगका अनुभवन है । तातैं तिनिकूं भोगभूमि कहिये है ॥

आगैं, कही जो भूमि, तिनिविषैं मनुष्यनिकी स्थितिके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥ ३८ ॥

याका अर्थ— मनुष्यनिकी उत्कृष्ट स्थिति तौ तीन पल्यकी है । बहुरि जघन्य स्थिति अंतर्मुहूर्तकी है । मध्यके अनेक भेद है । मुहूर्त नाम दोय घडीका है । ताके मध्य होय सो अंतर्मुहूर्त है । इहां कोई पूछै, जो, पल्य कहा ? तहां पल्यका जाननेकै अर्थि प्रसंग पाय प्रमाणका विधानरूप गणती लिखिये है । तहां प्रमाण दोय प्रकार है । एक लौकिक, दूसरा अलौकिक । तहां लौकिक छह प्रकार है । मान, उन्मान, अवमान, गणमान, प्रतिमान, तत्प्रतिमान । तहां पायी माणी इत्यादिक मान जानना । ताखडीका तोल उन्मान जानना । चलू इत्यादिकका परिमाण अवमान जानना । एक दोय आदि गणमान जानना । चिरम तोला मासा आदि प्रतिमान जानना । घोडाका मोल इत्यादिक तत्प्रतिमान जानना । बहुरि अलौकिक मानके च्यारि भेद है द्रव्य क्षेत्र काल भाव । तहां द्रव्यमानविषैं जघन्य एक परमाणु उत्कृष्ट सर्वपदार्थनिका परिमाण । क्षेत्रमानविषैं जघन्य एक प्रदेश, उत्कृष्ट सर्व आकाश । कालमानविषैं जघन्य एकसमय

उत्कृष्ट तीन कालका समयसमूह । भावमानविषैं जघन्य सूक्ष्मनिगोदिया लब्धिअपर्याप्तका लब्ध्यक्षरज्ञानका अविभागप्रतिच्छेद, उत्कृष्ट केवलज्ञान । बहुरि द्रव्यमानका दोय भेद एक संख्यामान एक उपमामान । तहां संख्यामानके तीन भेद संख्यात, असंख्यात, अनंत । तहां संख्यात, जघन्य मध्यम उत्कृष्टकरि तीन प्रकार है । बहुरि असंख्यात है सो परीतासंख्यात, युक्तासंख्यात असंख्यातासंख्यात इनि तीनूंहीके जघन्य मध्यम उत्कृष्टकरि नव भेद हैं । बहुरि अनंत है सो परीतानंत युक्तानंत अनंतानंत इनि तीनूंके जघन्य मध्यम उत्कृष्टकरि नव भेद हैं । ऐसैं संख्यामानके इकईस भेद भये । तिनिविषैं जघन्यसंख्यात दोय संख्यामात्र है । बहुरि तीनकूं आदि देकरि एक घाटि उत्कृष्ट संख्यातपर्यंत मध्यम संख्या है । बहुरि एक घाटि जघन्य परीतासंख्यात प्रमाण उत्कृष्टसंख्यात जाननां । सो जघन्य परीतासंख्यातके जाननेकै आर्थि उपाय कहै हैं । अनवस्था शलाका प्रतिशलाका महाशलाका नामधारक च्यारि कुंड करने । तिनिका जुदा जुदा प्रमाण जंवूद्वीप प्रमाण चौडा एक हजार योजनका ऊंडा जाननां । तिनिमैं अनवस्थाकुंडकूं गोलसरसूंकरि तिघाऊ भरणा । तामैं छियालीस अंक परिमाण सरसूं मावै, तव अन्य एक सरसूं शलाकाकुंडमैं नाखि कोई मनुष्य बुद्धिकरि तथा देव हस्तादिकरि जंवूद्वीपादिकमैं एक सरसूं द्वीपमैं एक समुद्रमैं गेरता जाय तव वे सरसूं जहां पूर्ण होय तिस द्वीप तथा समुद्रकी सूचीप्रमाण चौडा अर ऊंडा हजार योजनहीका अनवस्थाकुंड करी सरसूंसौ भरै । अरु एक सरसूं अन्य ल्याय शलाकाकुंडमें गेरै । अनवस्थाकी सरसूं तहातैं अगिलै द्वीप तथा समुद्रमैं एक एक गेरता जाय तव तेऊ सरसूं जिस द्वीप तथा समुद्रमैं वीतैं तहां तीसरा अनवस्थाकुंड तिस द्वीप तथा समुद्रकी सूचीप्रमाणकरि सरसूंसौं भरै । अर एक सरसूं अन्य शलाकाकुंडमैं गेरै । ऐसैंही अनवस्थाकी सरसूं एकएक द्वीप तथा समुद्रमैं गेरता जाय, ऐसै अनवस्था तौ वधता जाय अर एकएक सरसूं शलाकाकुंडमैं गेरता जाय तव एक शलाकाकुंड भरि जाय । ऐसैं करतैं छियालीस अंकप्रमाण अनवस्थाकुंड वणै तव एक शलाकाकुंड भऱ्या । तव एक सरसूं प्रतिशलाकाकुंडमैं गेरै वहुरि उस शलाकाकुंडकूं रीता करिये अर आगैं आगैं अनवस्थाकूं पूर्वोक्तरीतिकरि वधै एकएक सरसूं शलाका कुंडमैं गेरते गये तव दूसरा शलाकाकुंड भऱ्या । तव फेरि एक सरसूं प्रतिशलाकाकुंडमें गेरै । वहुरि तिस शलाकाकुंडकूं रीता करि तिसही विधानकरि तिसरा शलाकाकुंड भऱ्या । ऐसैं करतैं करतैं छियालीस अंकनिप्रमाण शलाकाकुंड भरि चुकै । तव एक प्रतिशलाकाकुंड भरैं । तव एक सरसूं महाशलाकाकुंडविषैं गेरै । वहुरि ऐसै द्वीपसमुद्रनिमैं सरसूं गेरता जाय अनवस्थाकुंड वधते जाय शलाकाकुंड भरि भरि रीते करते जाय, प्रतिशलाकाकुंडमैं एक एक सरसूं गेरता जाय तव प्रतिशलाकाकुंड भरते जाय । तव इसही विधानकरि एक एक सरसूं महाशलाकाकुंडमैं गेरतैं गेरतैं छियालीस अंकप्रमाण प्रतिशलाकाकुंड भरै । तव एक

एक महाशलाकाकुंड भरि जाय । तहां अनवस्थाकुंड केते भये ? छियालीस अंकनिका घनकरि एते ते अनवस्थाकुड भये । तिनिमैं जो अंतका अनवस्थाकुंड जिस द्वीप तथा समुद्रकी सूचीप्रमाण भया तामैं जेते सरसूं माये तेता परिमाण जघन्यपरीतासंख्यातका जाननां । बहुरि जघन्यपरीतासंख्यातकै ऊपरि एकएक बधता मध्यपरीतासंख्यातके भेद जाननां । बहुरि एक घाटि जघन्य युक्तासंख्यात प्रमाण उत्कृष्ट परीतासंख्यात जाननां । अब जघन्ययुक्तासंख्यातका परिमाण कहिये है । जघन्य परीतासंख्यातका विरलन करिये । बहुरि एकएक ऊपरि एकएक परीतासंख्यात मांडि परस्पर गुणिये । पहलांसूं दूसराकरि गुणिये जो परिमाण आवै ताकूं तीसरासूं गुणिये जो परिमाण आवै ताकूं चौथासूं गुणिये ऐसैं गुणतैं अंतविषैं राशी होय सो जघन्ययुक्तासंख्यात है । एते आवलीके समय हैं । बहुरि याके ऊपरि एक एक बधता एक घाटि उत्कृष्टयुक्तासंख्यातपर्यंत मध्ययुक्तासंख्यातके भेद हैं । बहुरि एक घाटि जघन्य असंख्यातासंख्यातपरिमाण उत्कृष्ट युक्तासंख्यात है । अब जघन्य असंख्यातासंख्यात कहिये है । जघन्य युक्तासंख्यातकूं जघन्ययुक्तासंख्यातकरि एकबार गुणिये जो परिमाण आवै सो जघन्य असंख्यातासंख्यात है । याकै ऊपरि एक एक बधता एक घाटि उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यातपर्यंत मध्य असंख्यातासंख्यातके भेद हैं । एक घाटि परीतानंतप्रमाण उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात है । अब जघन्यपरीतानंत कहिये है। जघन्य असंख्यातासंख्यात परिमाण तीन राशि करनै एकशलाका एक विरलन एक देय । तहां विरलनराशिकूं एकएक जुदा जुदा वखेरनां । एक एककै ऊपरि एक एक देयराशि धरनां । बहुरि तिनिकूं परस्पर गुणिये । ऐसैं करि शलाका राशिमैंसूं एक घटावना । बहुरि जो परिमाण आया ताकै परिमाण दोय राशि करनां । तहां एकराशिका विरलनकरि एक एककै परि देयराशीकी स्थापना करि परस्पर गुणिये । ऐसैं करि उस शलाकाराशिमैंसूं एक और घटाय देना । बहुरि जो परिमाण आया तितनै परिमाण दोय राशी करनां । एकका विरलनकरि देयराशीकूं एकएक परि देय परस्पर गुणतैं जो परिमाण आया तिस परिमाणनै देयराशीकरि परस्पर गुणनां । अरु शलाकाराशीमैंसूं एकएक घटाता जाना जब वह शलाकाराशी सर्व पूर्ण होय जाय । तब तहां जो कछु परिमाण हुवा सो यह असंख्यातासंख्यातका मध्यभेद है । सो तितने परिमाण तीन राशी फेरि करनां । शलाका विरलन देय । तहां विरलनराशीकौं एक एक वखेरी एक एक परि देयराशि देनैं । परस्पर गुणिये तब शलाकाराशिमैंस्यौं एक काढि लेनां । बहुरि जो परिमाण आया ताका विरलन करि एक एक परि एक एक राशी देय परस्पर गुणिये तब शलाकाराशीमैंसौं एक और काढि लेनां । ऐसैं करतैं करतैं दूसरी बार किया शलाकाराशी पूर्ण होय । तब जो परिमाण आया सो भी मध्य असंख्यातासंख्यातका भेद है । बहुरि इस परिमाण शलाका आदि तीन राशि स्थापने तहां विर–

लन राशीकूं वखेर एक एककै स्थान देय राशि देय परस्पर गुणिये । तब तीसरा शलाका राशीमैंस्यौं एक काढि लेनां । बहुरि जो परिमाण आया तिस परिमाण दोय राशीकरि विरलनकूं वखेरि देयकूं देय परस्पर गुणिये । तब शलाकामैंसूं एक और काढि लेनां । ऐसैं करतैं करतैं तीसरी शलाका भी पूर्ण होय । तब शलाकात्रय निष्ठापन हूवा कहिये । आगै भी जहां शलाकात्रय निष्ठापन कहे तहां ऐसैंही करनां । अब ऐसैं करतैं जो मध्य असंख्यातासंख्यातका भेदरूप राशि भया ताविषैं छह राशि मिलावना । धर्मद्रव्य अधर्म लोकाकाश एकजीव इनि च्यारोंके प्रत्येक लोकप्रमाण प्रदेश बहुरि लोकके प्रदेशनितैं असंख्यात लोकगुणां अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवनिका परिमाण बहुरि तातैं भी असंख्यात-लोकगुणां सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवनिका परिमाण ए छह राशि पूर्वोक्त परिमाणविषैं मिलाय शलाका विरलनदेय राशि करनी। तिनिका पूर्वोक्त प्रकार शलाकात्रय निष्ठापन करनां ऐसैं करतैं जो महाराशि मध्य असंख्यातासंख्यातका भेदरूप भया ताविषैं च्यारि राशि मिलावणे । वीस कोडाकोडि सागरप्रमाण कल्पकालके समय बहुरि असंख्यातलोकप्रमाण स्थितिबंधकूं कारण-भूत कषायनिके स्थान बहुरि तिनितैं असंख्यातलोकगुणैं अनुभागबंधकूं कारण कषायनिके स्थान बहुरि इनितैं भी असं-ख्यातलोकगुणै मनवचनकाययोगनिकै अविभागप्रतिच्छेद ऐसैं च्यारि राशिपूर्वक परिमाणविषैं मिलावने, जो परिमाण होय तिस परिमाण शलाका विरलन देय । ए तीन राशि करनी । तिनिका पूर्वोक्त प्रकार शलाकात्रय निष्ठापन करनां । ऐसैं करतैं जो परिमाण होय सो जघन्यपरीतानंत है । बहुरि याकै ऊपरि एक एक बधता एक घाटि उत्कृष्ट परीतानंतपर्यंत मध्यपरीतानंतके भेद जानने । बहुरि एक घाटि जघन्य युक्तानंत परिमाण उत्कृष्टपरीतानंत जाननां । अब जघन्ययुक्तानंत कहिये हैं । जघन्यपरीतानंतका विरलनकरि एक एक स्थानविषैं एक एक जघन्यपरीतानंत थापि परस्पर गुणे जो परि-माण होय सो जघन्ययुक्तानंत जाननां । सो यहु अभव्यराशीसमान है । बहुरि याकै ऊपरि एक एक बधता एक घाटि उत्कृष्टयुक्तानंतपर्यंत मध्ययुक्तानंतके भेद जानने । बहुरि एक घाटि जघन्य अनंतानंत परिमाण उत्कृष्ट युक्तानंत जाननां अब जघन्य अनंतानंत कहिये हैं । जघन्य युक्तानंतकूं जघन्य युक्तानंतकरि एकवार गुणे जो परिमाण होय सो जघन्य अनंतानंत है । बहुरि याकै ऊपरि एक एक बधता एक एक घाटि केवलज्ञानके अविभागप्रतिच्छेदन परिमाण उत्कृष्ट अनंतानंतपर्यंत मध्य अनंतानंत जाननां । बहुरि उत्कृष्ट अनंतानंत कहिये हैं । जघन्य अनंतानंत परिमाण शलाका विर-लन देय ए तीन राशिकरि अनुक्रमतैं पूर्वोक्तप्रकार शलकात्रय निष्ठापन करै । यों करतैं मध्यम अनंतानंतरूप परिमाण होय । ताविषैं छह राशि मिलावै जीवराशीकै अनंतवै भाग तौ सिद्धराशि । बहुरि तातैं अनंतगुणां पृथिवी अप तेज वायु प्रत्येक वनस्पति त्रसराशिरहित संसारी जीवराशि मात्र निगोदराशि । बहुरि प्रत्येक वनस्पतिसहित निगोदराशिप्रमाण

वनस्पतिराशि । बहुरि जीवराशितैं अनंतगुणां पुद्गलराशि । बहुरि यातैं अनंतानंतगुणां व्यवहारकालका समयनिका राशि । बहुरि यातैं अनंतानंतगुणां अलोकाकाशके प्रदेशनिका राशि । ऐसैं छह राशि मिलाये जो परिमाण होय तिह प्रमाण शलाका विरलन देय तीन राशिकरि अनुक्रमतैं पूर्वोक्तप्रकार शलाकात्रय निष्ठापन किये जो मध्य अनंतानंतका भेदरूप परिमाण आवै ताकेविषैं धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्यके अगुरुलघुके अविभागप्रतिच्छेदनका परिमाण अनंतानंत है सो जोडिये । यों करितैं जो महापरिमाण होय तिस परिमाण शलाका विरलन देय तीन राशिकरि अनुक्रमतैं पूर्वोक्तप्रकार शलाकात्रय निष्ठापन करनां जो कोई मध्य अनंतानंतका भेदरूप महापरिमाण होय तिस परिमाणकूं केवलज्ञानके अविभागप्रतिच्छेद-निका समूहरूप परिमाणविषैं घटाइये । पीछै ज्योंका त्यों मिलाइये तब केवलज्ञानका अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाणस्वरूप उत्कृष्ट अनंतानंत होइ । इहां केवलज्ञानके परिमाणमैंसों काढि पीछै मिलावनेका प्रयोजन यहु है जो केवलज्ञानका परिमाण पूर्वोक्त गणनादिकरि जान्यां न जाय तातैं ऐसैं जनाया है । ऐसैं संख्यामानके इकईस भेद कहे । बहुरि याके विशेष कहनेकूं सर्व समविषम आदिके चौदह धारा हैं तिनिका वर्णन त्रिलोकसार ग्रंथतैं जाननां ॥

बहुरि उपमाप्रमाण आठ प्रकार है । पल्य सागर सूच्यंगुल प्रतरांगुल घनांगुल जगच्छ्रेणी जगत्प्रतर जगद्घन । तहां प्रथम तौ योजनके प्रमाणकी उत्पत्ति कहिये है । तहां आदि मध्य अंतकरि रहित ऐसा दूसरा जाका विभाग न होय-ऐसा अविभागी पुद्गलका परमाणू है सो इंद्रियकरि ग्रह्या न जाय । जामैं एक रस, एक वर्ण, एक गंध, दोय स्पर्श ए पांच गुण हैं । ऐसैं अनंतानंत परमाणूका समूहकूं उत्संज्ञासंज्ञ कहिये । ऐसैं उत्संज्ञासंज्ञ आठ मिलै तब एक संज्ञासंज्ञ कहिये । ऐसैं आठ संज्ञासंज्ञ मिलै तब एक तुटिरेणु कहिये । आठ तुटिरेणुका एक त्रसरेणु कहिये । आठ त्रसरेणुका एक रथरेणु कहिये । आठ रथरेणुका एक उत्तमभोगभूमिके मनुष्यका बालका अग्रभाग है । आठ उत्तमभोगभूमिके मनु-ष्यका बालके अग्रभाग मिलै तब एक मध्यम भोगभूमिके मनुष्यके बालका अग्रभाग कहिये । आठ ते मिलै तब एक जघन्यभोगभूमीका मनुष्यका बालका अग्रभाग है । ते आठ मिलै तब कर्मभूमिके मनुष्यका बालका अग्रभाग होय । ते आठ मिलिये तब एक लीष कहिये । आठ लीष मिलै तब एक यूका कहिये । आठ यूका मिलै तब एक यवमध्य होय । आठ यवमध्यका एक उत्सेधांगुल कहिये । इस अंगुलकरि नारकी तिर्यंच मनुष्य देवनिका देह तथा अकृत्रिम जिनप्रतिमाका देह मापिये है । बहुरि पांचसै उत्सेधांगुलका एक प्रमाण-अंगुल हो है । सो यहु प्रमाण अंगुल अव-सर्पिणी कालका पहला चक्रवर्तिका हो है । तिस समय तिस अंगुलकरि गांव नगरादिकका प्रमाण हो है । अन्यकालमैं । मनुष्यनिका अपनां अपनां अंगुलका प्रमाण होय तिसतैं ग्रामनगरादिकका प्रमाण जाननां । बहुरि जो प्रमाणांगुल है

ताहीकरि द्वीप समुद्र तथा तिनिकी वेदी पर्वत विमान नरकके प्रस्तार आदि अकृत्रिम वस्तुका विस्तार आयाम आदि मापिये है। तहां छह अंगुलका एक पाद कहिये। बारह अंगुलका एक वितस्ति कहिये। दोय वितस्तिका एक हाथ कहिये। दोय हाथका एक किकु कहिये। दोय किकुका एक धनुष्य कहिये। दोय हजार धनुष्यका एक कोश कहिये। च्यारि कोशका एक योजन कहिये। ऐसैं जानना। आगै पल्यका प्रमाण कहिये है। तहा पल्य तीनप्रकार हैं। व्यवहार, उद्धार, अद्धा। तहां पल्य नाम खाडेका हैं। तहां आदिका व्यवहारपल्य तौ उत्तर दोय पल्यकी उत्पत्ति जाननेके अर्थि है। इसतैं कछु अन्य वस्तुका प्रमाण न करिये। वहुरि दूसरा उद्धारपल्यतैं द्वीप समुद्र गिणिये है। वहुरि तीसरा अद्धापल्यतैं आयुकर्मादिकी स्थिति गिणिये है। तहां प्रमाणांगुलप्रमाणकरि एक योजनका चोडा लांबा ऊंडा तीन खाडा कीजिये। जामैं एकतैं ले सात दिनताईका भया मीडा उत्तमभोगभूमिका ताका बालके अग्रभाग कतरणीतैं छेदिये। ऐसे खंड करिये ताका फेरि कतरणीतैं दूसरा खंड न होय। ऐसे रोमखंडनितैं व्यवहारपल्यनामा खाडा खूंदि खूंदि गाढा परिपूर्ण भरिये। तामैं पैतालीस अंकपरिमाण रोम माये। तिनि रोमनिकूं सौ वर्पमैं एक एक रोम काढिए। तव जेता कालमैं खाडा रीता होय तेता काल व्यवहारपल्यका है। वहुरि तिनि रोमनिकैं एक एकके असंख्यातकोडिवर्पके जेते समय होय तेते खंड करिये। एकएक समयमैं एक एक रोम काढिये। जेते कालमैं निकसि चुकै तेता काल एक उद्धारपल्यका है। ऐसैं दस कोडाकोडि उद्धारपल्य होय तव एक उद्धारसागरोपम कहिये। ऐसे अढाई सागरके जेते समय तेते द्वीप समुद्र हैं। वहुरि उद्धारपल्यके रोमछेद है तिनिके एक एक रोमछेदके सौ वर्पके जेते समय होय तेते खंड करिये। तिनिकूं एक एक समयमैं काढिये। यामैं जेता काल लागै तेता काल एक अद्धापल्यका है। त्रिलोकसारमैं ऐसा कह्या है, उद्धारपल्यके रोमके एक एकके असंख्यात वर्पके समयमात्र खंड करने। ऐसे दस कोडाकोडी अद्धापल्यनिका एक अद्धासागर कहिये। वहुरि दशकोडाकोडी अद्धासागरका एक अवसर्पिणी काल कहिये। तेताही उत्सर्पिणीकाल कहिये इस अद्धापल्यनिकरि नारक तिर्यंच देव मनुष्यनिकी कर्मकी स्थिति तथा भवकी स्थिति तथा कायकी स्थिति जानिये। वहुरि अद्धापल्यका जेते अर्द्धछेद होय तिनिकूं एक एक वखेरि एक एकपरि अद्धापल्य स्थापि, परस्पर गुणिये। तहा जो राशि निपजै ताकूं आकाशके प्रदेशनिकी पंक्तिरूप करिये सो सूच्यंगुल है। वहुरि सूच्यंगुलकूं सूच्यंगुलकरि गुणिये तव प्रतरांगुल कहिये। वहुरि प्रतरांगुलकूं सूच्यंगुलसूं गुणिये तव घनांगुल होय। वहुरि असंख्यात वर्पका जेता समय होय तेता खंड अद्धापल्यका करिये। तिनिमैंसूं एक खंड लेय ताकूं वखेरि एक एक स्थापि तिनि ऊपरि एक एक घनांगुल माडिये। तिनिकूं परस्पर गुणिये तव जो राशि निपजै ताकूं

जगच्छ्रेणी कहिये । भावार्थ—सात राजूका एकप्रदेश पंक्तिरूप डोराकूं जगत्श्रेणी कहिये है । बहुरि जगत् श्रेणीकूं जगत्श्रेणिकरि गुणे जगत्प्रतर होय है । बहुरि जगत्प्रतरकूं जगत्श्रेणिकरि गुणे जगद्घन हो है याकूं लोक कहिये, सात राजू लांबा सात राजू चौडा सात राजू ऊंचा क्षेत्रका प्रदेशका नाम लोक है । बहुरि क्षेत्रमान दोय प्रकार है अवगाहक्षेत्र विभागक्षेत्र । तहां अवगाहक्षेत्र तौ एक दोय तीन च्यारि संख्यात असंख्यात पुद्गलके परमाणुके स्कंधनिकरि अवगाहने योग्य जो एकतैं ले असंख्यात आकाशके प्रदेश हैं सो अनेकप्रकार हैं । बहुरि विभागक्षेत्र अनेकप्रकार है असंख्यातश्रेणीरूप तथा घनांगुलक्षेत्ररूप । ताके असंख्यातवां भाग एक तथा ताके बहुभाग इत्यादि तथा वितस्ति हाथ धनुष इत्यादि ॥ बहुरि कालमान सर्वजघन्यकाल तौ एकसमयकूं कहिये । सो एक पुद्गलका परमाणु एक आकाशके प्रदेशमैं तिष्ठता मंदगति दूसरे आकाशके प्रदेशमैं आवै तेता कालकूं समय कहिये, सो कालका निर्विभाग एक अंश है । बहुरि असंख्यातसमयनिकी एक आवली कहिये । बहुरि संख्यात आवलीका एक उछ्वास है, तेताही निःश्वास कहिये । ते दोऊ निरुपद्रव निरोगी पुरुषका एक प्राण कहिये, ऐसैं सात प्राणका एक स्तोक कहिये । ऐसे सात स्तोकका एक लव कहिये, सतहत्तरि लवका एक मुहूर्त कहिये । तीस मुहूर्तका एक रातिदिन कहिये । पंदरा दिनका एक पक्ष है । दोय पक्षका एक मास है । दोय मासका एक ऋतु है । तीनि ऋतुका एक अयन है । दोन अयनका एक संवत्सर है । चौराशी लाख वर्षका एक पूर्वांग है । चौराशी लाख पूर्वांगका एक पूर्व है । ऐसीही तरह बधता पूर्वांग, पूर्व, नयुतांग, नयुत, कुमुदांग, कुमुद, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, कमलांग, कमल, त्रुट्यंग, त्रुट्य, अटटांग, अटट, अममांग, अमम, हूहूंग, हूहू, लतांग, लता, महालता इत्यादि संज्ञा जाननी । काल है सो वर्षनिकी गणनाकरि तौ संख्यातौ जानिये । संख्याततैं परैं असंख्यात है पल्योपम सागरोपम इत्यादि । यातैं परैं अनंतकाल है । अतीत अनागत है सो सर्वज्ञके प्रत्यक्ष है । बहुरि भावमान पांचप्रकार ज्ञान सो पहलैं कहे सो जानने । इहां पल्यके कथनकी उक्तं च गाथा है ताका अर्थ—व्यवहार उद्धार अद्धा ऐसैं तीनि पल्य हैं सो जानने । तहां व्यवहार तौ संख्याकी उत्पत्तिमात्र जाननेकूं है । बहुरि उद्धारतैं द्वीप समुद्र गणिये । बहुरि अद्धातैं कर्मनिकी स्थिति वर्णन करी है ॥

आगैं कहै हैं, जो, ए उत्कृष्ट जघन्य स्थिति मनुष्यनिकी कही, तैसैंही तिर्यंचनिकी है ताका सूत्र—

॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— तिर्यंचनिकी योनि तिर्यंचगतिनामा नामकर्मके उदयकरि जन्म होय सो है, तिस योनिविषैं उपजे होय

ते तिर्यंचजीव हैं । तिनकी आयुकी स्थिति उत्कृष्ट तौ तीनि पल्यकी है । जघन्य अंतर्मुहूर्तकी है । मध्य नानाभेद है ॥

इहां विशेष जो, तिर्यंच तीनि प्रकार है। एकेंद्रिय विकलत्रय पंचेन्द्रिय । तहां एकेन्द्रियनिविषैं शुद्धपृथिवीकायिक जीवनिकी उत्कृष्ट आयु तौ बाराहजार वर्षकी है । बहुरि कगेर पृथिवीकायिककी बाईस हजार वर्षकी है । वनस्पतिकायिककी दशहजार वर्षकी है । अप्कायिककी सातहजार वर्षकी है। वायुकायिककी तीनि हजार वर्षकी है। तेजकायिककी तीनि दिनरातिकी है । बहुरि विकलत्रयमें दोय इन्द्रियनिकी बारा वरसकी है । तीनि इन्द्रियनिकी गुणचास दिनकी है । चौइंद्रियनिकी छ महीनाकी है। पंच इन्द्रियनिविषैं मत्स्यादि जलचरनिकी तौ कोडिपूर्वकी है। बहुरि परिसर्प जे गोह नवल्या आदि तिनकी नवपूर्वांगकी है । बहुरि उरगनिकी बियालीस हजार वर्षकी है । बहुरि पक्षीनिकी बहत्तरि हजार वर्षकी है । बहुरि चौपदकी तीनि पल्यकी है । ऐसैं तौ उत्कृष्ट है । बहुरि जघन्य इन सर्वहीकी अंतर्मुहूर्तकी है । इहां कोई पूछै, भवस्थिति कायस्थिति कही, तिनका अर्थ कहा? ताका समाधान- एकभवकी स्थितिकूं तौ भवस्थिति कहिये । बहुरि एककायमें अनेक भव धारै ताकूं कायस्थिति कहिये । जैसैं पृथिवी अप् तेज वायुकायिक जीवनिके कायस्थिति असंख्यातलोकप्रमाण है, तिनहीमें उपजवौ करै तौ एता कालताई उपजवौ करै । बहुरि वनस्पतिकायका अंतकाल है सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तनमात्र है । बहुरि विकलत्रयका असंख्यातहजार वर्ष है। पंचेन्द्रियनिकी तिर्यंचमनुष्यनिकी पृथक्त्वकोटिपूर्व अधिक तीनि पल्य है । बहुरि जघन्य कायस्थिति इन सर्वनिकी अंतर्मुहूर्तमात्र है । बहुरि देवनारकीनिकी भवस्थिति है सोही कायस्थिति है । देवसूं देव होय नाहीं, नारकीसूं नारकी होय नाही ॥

इहां कोई पूछै, जो, जीवतत्त्वका निरूपणका प्रकरणविषैं द्वीपसमुद्रनिका निरूपणका कहा प्रयोजन? ताका समाधान- जो, इन द्वीपसमुद्रनिकै आधार मनुष्यलोक है । तहां क्षेत्रविपाककी कर्मप्रकृतिके विशेषके उदयतैं अढाई द्वीपहीके विषैं मनुष्य उपजै हैं । तिनके निरूपणके अर्थि द्वीपसमुद्रनिका निरूपण भी प्रयोजनवान् है । जो इनका निरूपण न करिये तौ मनुष्य तिर्यंच जीव इनके आधार हैं सो जीवतत्त्वका विशेष निरूपण कैसै वनैं? बहुरि विशेषनिरूपणाविना जीवतत्त्वका श्रद्धान कैसैं होय? बहुरि श्रद्धानविना सम्यक्चारित्र कैसैं होय? ऐसैं होतैं त्रयात्मक मोक्षमार्गकी कथनी कैसैं वनैं? तातैं स्याद्वादीनिकैं सर्वनिरूपण युक्त है ॥

बहुरि इहां ईश्वरवादी कहै है, जो, ऐसा अधोलोक मध्यलोकका निरूपण किया सो ऐसी रचना तो कोई बुद्धिमानकी करी हो है । तातैं इस रचनाका कर्ता ईश्वर है । तहां प्रथम तौ शरीरसहित ईश्वर मानै है ताकूं कहिये, जो जगत्

तौ शरीरवाले ईश्वरने किया । बहुरि ईश्वरकै शरीर कौन किया ? जो अन्यशरीरके संबंधतैं शरीर भया कहै, तौ अनवस्थादूषण आवै है । बहुरि जो अदृष्टगुण कहिये पूर्वकर्मके संबंधतैं भया कहै, तौ ईश्वरकै कर्मका किया पराधीनपणा ठहरै । बहुरि कहै जो पृथिवी आदिरूप ईश्वरकी मूर्ति है, तिनकी उत्पत्तिविषैं ईश्वरही कारण है । ताकूं कहिये, जो, ऐसैं तौ सर्वही आत्मा अपनी अपनी मूर्तितैं अपने अपने शरीरकी उत्पत्तिके कारण ठहरै तौ कहा दोष ? तहां ईश्वर पृथिवीआदिरूप मूर्ति बणाई तहां अन्यमूर्तिके संबंधतैं बनाई कहिये, तहां भी अनवस्थादूषण आवै है । बहुरि अनादि मूर्तिका संबंध कहै तौ लोककी रचनाही अनादि क्यों न कहिये ? बुद्धिवानका कर्तव्य कहनेकी कल्पना क्यों करिये ?

बहुरि केई निर्देह ईश्वरवादी हैं, ते कहै है । जो, ईश्वर जगत्की रचनाकूं निमित्त कारण है सो भी कल्पनाही है । जातैं जे मुक्त आत्माकूं देहरहित माने हैं, सो जगत्का निमित्त कारण नाहीं । तैसैं ईश्वर भी देहरहित निमित्तकारण नाहीं । बहुरि कहै मुक्तात्मा तौ ज्ञानरहित है । अरु ईश्वरकै नित्यज्ञान है, तातैं कर्तापणा बणै है । ताकूं कहिये, जो नित्यज्ञानके कर्तापणा बणै नाही । अनेक नित्यानित्य व्यवस्थारूप जगतकूं करैगा ताका ज्ञान भी नित्यानित्य रूपही ठहरैगा । बहुरि कोई क्षेत्रमें कोई कालमें कार्य उपजै है कोईमें नाहीं उपजै है । अरू ईश्वर सर्वक्षेत्रकालमें व्यापकही है, सो कार्य नाहीं उपजै, तहां रोकनेवाला कौन है ? बहुरि कहै ईश्वरकी इच्छा होय जैसैं होय है । तहां पूछिये ईश्वरके इच्छा काहेतैं भई ? तहां कहै प्राणीनिके अनुसारी इच्छा होय है । तौ ऐसैं होतैं सर्व प्राणीनिकै कर्मनिके निमित्ततैं कार्य होना क्यौं न मानिये ? ईश्वरकी कल्पना कौन अर्थि करिये ? इत्यादियुक्तितैं जगत्का ईश्वरकर्ता सिद्ध नाहीं होय है । याकी चर्चा श्लोकवार्तिकतैं विशेषकरि जाननी । तातैं स्याद्वादकरि अनादिनिधन नित्यानित्यात्मक स्वयंसिद्ध अकृत्रिम जगत् षड्द्रव्यात्मक लोक है । सो सर्वज्ञके आगमकरि प्रमाणसिद्ध जाननां । अन्यवादी अनेक कल्पना करै है, सो प्रमाणभूत नाहीं ऐसैं निश्चय है ॥ ऐसैं तृतीयाध्यायका कथन है ॥

॥ छप्पय ॥

सातनरककी भूमि भूमिमें बिल बहुतेरे । पापजीव परिणाम दुष्टलेश्या दूर केरे ॥
आयुकायदुःख भूरि भजै दुःकृतफल पूरे । कहे सकल भगवान् पापहरनेकूं दूरे ॥

पुनि द्वीप उदधि गिरि खेत सर नदी मान नरभेद थिति ।
तिरियंच आयु ये विधि कथन भाषै तीजे संधि इति ॥ १ ॥

ऐसैं तत्त्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा मोक्षशास्त्र ताविषैं तीसरा अध्याय पूर्ण भया ॥

इति श्री परमपूज्य धर्मसाम्राज्यनायक योगींद्रचूडामणि, सिद्धांतपारंगत, चारित्रचक्रवर्ति श्री १०८ आचार्य श्रीशांतिसागरजी महाराजके आदेशसे ज्ञानदानके लिए श्री. प. पू. चा. च. आ. श्री १०८ शांतिसागर दिगंबर जैन जीर्णोद्धारक संस्थाकी ओरसे छपी हुई श्री तत्वार्थसूत्रकी श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचित सर्वार्थसिद्धीकी पडित जयचदजीकृता टीका-वचनिकाविषैं तृतीय अध्याय सपूर्ण भया ॥ ३ ॥

ग्रंथ प्रकाशन समिति; फलटण वीर स. २४८१

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यवर्य श्री १०८ शांतिसागर महाराजके आदेशसे श्री दिगंबर जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्थाकी तरफसे ज्ञानदानके लिये छपी हुई

श्रीवीतरागाय नमः

वीर संवत् २४८१] ॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥ [ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण

अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता

दोहा— वंदन करि जिनराजकूं, आगमश्रवण सु पाय ॥
सुरवर्णन धरनूं सुनूं, ज्यौं सरदा दिढ थाय ॥ १ ॥

आगैं टीकाकार सूचना करै हैं, जो, " भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणां " इत्यादि सूत्रनिविषैं बार बार देव शब्द कह्या तहां ऐसा न जानिये जो देव कौन है, केई प्रकारके हैं, तिनिके निर्णयके आर्थि आचार्य सूत्र कहै हैं—

॥ देवाश्चतुर्णिकायाः ॥ १ ॥

याका अर्थ— देव हैं ते च्यारि हैं निकाय कहिये समूह जिनके ऐसे हैं । देवगति नामकर्मका उदय अंतरंगकारण होतैं बाह्यनिमित्तके विशेषनिकरि द्वीपसमुद्र आदिविषैं जैसैं इच्छा होय तैसैंही क्रीडा करै ते देव कहिये । इहां कोई कहै है कि, सूत्रविषैं विभक्तिका बहुवचन है सो एकवचनही चाहिये, समानजातिके कहनेतैं बहुकी प्रतिपत्ति होय है । ताका समाधान— जो, इन च्यारिही निकायमैं अंतर्भेद इंद्र सामानिक आदि तथा आयु आदिका भेदतैं बहुत हैं, तिनके जाननेके अर्थ बहुवचन है । तहां देवगतिनामकर्मके उदयकी सामर्थ्यतैं भेदरूप समूह होई, ताकूं निकाय कहिये हैं । ऐसैं च्यारि निकाय इन देवनिके हैं । ते कौन ? भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क वैमानिक ऐसैं ॥

आगैं तिनके लेश्याका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥

याका अर्थ— आदितैं ले तीनि निकाय जे भवनवासी व्यन्तर ज्योतिष्क तिनके पीतान्त कहिये कृष्ण नील कापोत पीत ऐसैं चारि लेश्या हैं। यहां आदित ऐसा कहते तौ अन्तमध्यके मति जानूं। बहुरि दोय तथा एकके निषेधके अर्थ त्रिशब्द है। बहुरि लेश्या छह हैं तिनमैंसूं च्यारिका ग्रहण है। यातैं पीतान्त ऐसा वचन है। पीत है अन्त जिनके ऐसा कहतैं चारि लेश्याका ग्रहण भया। तव ऐसा अर्थ भया, जो, भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क इनि तीनि निकायनिके जे असुरदेव तिनके कृष्ण नील कापोत पीत ए च्यारि लेश्या हैं॥

आगैं तिन निकायनिके अन्तरभेदके प्रतिपादनके अर्थ सूत्र कहै हैं—

॥ दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥ ३ ॥

याका अर्थ— देवनिके निकायनिके दश आदि संख्याशब्दनिकरि यथासंख्य संबंध करना। ऐसैं करतैं भवनवासीनिके दश भेद हैं। व्यंतरनिके आठ भेद हैं। ज्योतिषीनिके पांच भेद हैं। वैमानिकनिके बारह भेद हैं। तहां बारह भेद कल्पवासीनिकेही हैं। अगले ग्रैवेयकादिके भेद नांही हैं। इहां पूछै हैं, जो, इनकूं कल्प ऐसी संज्ञा कैसैं है? ताका समाधान जो, इनमैं इन्द्र आदि दशप्रकार कलिपये हैं, तातैं कल्पसंज्ञा है। फेरि पूछै है, जो, यह कल्पना तौ भवनवासीआदिविषैं भी है। ताका उत्तर जो, रूढिके वशतैं वैमानिकनिविषैंही कल्पशब्द वर्तै है। तातैं जे कल्पनिविषैं उपजै ते कल्पोपपन्न कहिये॥

आगैं इनका विशेष जाननेके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशपारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्य-किल्विषिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— अन्यदेवनितैं असाधारण जे अणिमादिकऋद्धिसहित गुण तिनकरि इन्दन्ति कहिये परम ऐश्वर्यकरि वर्तै ते इन्द्र है। बहुरि आज्ञा ऐश्वर्यकरि रहित स्थान आयु वीर्य परिवार भोग उपभोग आदिकरि इन्द्रसमान होय ते सामानिक है। ते इन्द्रके पिता गुरु उपाध्यायकी ज्यों वडे होय तैसैं होय हैं। बहुरि मंत्री पुरोहितकी जगह होय ते

त्रायस्त्रिंश कहिये, तेतीस देव है, ते त्रायस्त्रिंश कहिये। बहुरि इन्द्रके वयस्य कहिये मित्र, पीठमर्द कहिये सभाविषैं पछाडी दाबि बैठै ते पारिषद कहिये। बहुरि इन्द्रके सुभट शस्त्रधारी रक्षक ज्यों होय ते आत्मरक्षक है। बहुरि जे कोटपाल हाकिम फौजदारतुल्य होय ते लोकपाल हैं। पयादा आदि सातप्रकारकी सेनाके देव ते अनीक कहिये। बहुरि जैसैं नगरमें व्योपारी आदि वसैं, तैसैं वसनेवाले प्रकीर्णक कहिये। बहुरि दाससमान वाहनादिकार्यविषैं प्रवर्तैं ते आभियोग्य है। बहुरि नगरके अंतमें वसैं चाण्डालसमान ते किल्विषिक हैं। किल्विष नाम मलिनता पापका है। सो इनके ऐसाही कर्मका उदय है, जो, देवगतिमें नीच होय हैं। इहां एकश ऐसैं कहनेसे एक एक निकायके ए भेद हैं ॥

आगे ए दश भेद चार्‍यौंही निकायके सामान्यपणैं प्रसंग आवै ताके अपवादके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— व्यंतर तथा ज्योतिषी देवनिविषैं त्रायस्त्रिंश बहुरि लोकपाल ए दोय भेद नाही है। दशभेदनिके आठही भेद हैं ॥ आगैं, तिन निकायनिविषैं इन्द्र कैसे हैं तिनिका नियमके अर्थि सूत्र कहै है—

॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— पहले दोय निकाय भवनवासी व्यंतर इनिविषैं दोय दोय इन्द्र हैं। पूर्वयोः कहिये पहले दोय निकाय भवनवासी व्यंतर तिनविषैं दोय दोय इन्द्र हैं। इहां प्रश्न, जो, दूसरेकै पूर्वपणा कैसैं? ताका उत्तर— जो, समीपतैं पूर्वपणां उपचारतैं कहा है। बहुरि द्वीन्द्राः ऐसे शब्दमें दोय दोय ऐसा अर्थ कैसा भया? ताका उत्तर– जो, इहां अंतर्नीत वीप्सा अर्थ है। तातैं दोय दोय इन्द्र होय ताकूं द्वीन्द्रा ऐसा कहिये। जैसैं सात सात पान होय ताकूं सप्तपर्ण कहिये तथा आठआठ पद होय ताकूं अष्टापद कहिये तैसैं इहां भी जाननां। सोही कहिये हैं ॥

भवनवासिनिविषैं असुरकुमारनिके चमर वैरोचन ए दोय इंद्र है। नागकुमारनिके धरण भूतानंद ए दोय इन्द्र है। विद्युत्कुमारनिके हरिसिंह हरिकान्त ये दोय इंद्र है। सुपर्ण कुमारनिके वेणुदेव वेणुताली ए दोय इन्द्र है। अग्निकुमारनिके अग्निशिख अग्निमाणव ए दोय इन्द्र है। वातकुमारनिके वैलंब प्रभंजन ए दोय इन्द्र है। स्तनितकुमारनिके सुघोष महाघोष ए दोय इन्द्र है। उदधिकुमारनिके जलकान्त जलप्रभ ए दोय इन्द्र है। द्वीपकुमारनिके पूर्ण वशिष्ट ए दोय इन्द्र है। दिक्कुमारनिके अमितगति अमितवाहन ए दोय इन्द्र है। ऐसैं इनके वीस इन्द्र है। बहुरि व्यंतरदेवनिविषैं

किंनरनिकै किन्नर किंपुरुष ए दोय इन्द्र है। किंपुरुषनिके सत्पुरुष महापुरुष ए दोय इन्द्र है। महोरगनिके अति-काय महाकाय ए दोय इन्द्र है। गंधर्वनिके गीतरति गीतयश ए दोय इन्द्र है। यक्षनिकै पूर्णभद्र माणिभद्र ए दोय इन्द्र है। राक्षसनिके भीम महाभीम ए दोय इन्द्र है। पिशाचनिके काल महाकाल ए दोय इन्द्र है। भूतनिके प्रतिरूप अप्रतिरूप ए दोय इंद्र है ॥

आगैं इन देवनिके सुख कैसा है ऐसैं पूछै तिनके सुख जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥ ७ ॥

याका अर्थ प्रवीचार कहिये कामसेवन सो भवनवासीनितैं लेइ ऐशानस्वर्गपर्यंतके देवनिके कायकारि कामसेवन है। इनके संक्लेशकर्मका उदय है। तातैं मनुष्यकी ज्यों स्त्रीका विषयसुख भोगवै हैं। इहां " आ ऐशानात् " इस शब्दविषैं आङ् उपसर्ग अभिनिजि अर्थमें हैं, तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, भवनवासीनितैं लगाय ऐशानपर्यंतके कायकारि मैथुन है। वहुरि इहां सांधि न करि सो संदेह निवारणके अर्थि न करी है। सांधि करिये तव ऐशान ऐसाही सिद्ध होय, तव संदेह रहै, जो, इहां उपसर्ग है कि नाहीं? तातैं संदेह मेटनेके अर्थि उपसर्ग जुदा राखा है ॥

आगैं ऐशानतांई मर्यादा कही तातैं अगिले स्वर्गनिविषैं सुखका विभाग जान्यां नाहीं, ताके प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनः प्रवीचाराः ॥ ८ ॥

याका अर्थ— शेष कहिये कहे तिनतैं अवशेष रहे देव तिनकै स्पर्श रूप मन इनविषैं मैथुन है। तहां कहे तिनतैं अवशेष जे कल्पवासी तिनकै आगमतैं अविरोधरूप संवंध करना। पहले सूत्रमें प्रवीचारका ग्रहण तौ थाही, यहां फेरि प्रवीचारका ग्रहण याहीके अर्थि है। सो आगमसूं अविरोध स्पर्शादिमैथुन लेना। तहां सनत्कुमार माहेन्द्रस्वर्गके देव देवांगनाके स्पर्शमात्रहीकारि परमप्रीति पावै हैं। तैसैंही देवांगना भी परमसुख पावै हैं। वहुरि ब्रह्म ब्रह्मोत्तर लांतव कापिष्ट स्वर्गके देव देवांगनाके शृंगार आकार विलास चतुर मनोज्ञ वेष रूपके देखनेहीकारि परमसुखकूं पावै है। वहुरि शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रारविषैं देव देवांगनाके मधुर संगीत गावना कोमल हँसना ललित वोलना आभूपणनिके शब्दका

सुननामात्रहीतैं परमप्रीतिकूं पावै है । बहुरि आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्गके देव अपनी देवांगनाका मनकेविषैं संकल्पमात्रहीतैं परमसुखकूं पावै हैं ॥

आगैं पूछै हैं, आगिले अहमिन्द्र देवनिकै सुख कौनप्रकार है? ऐसैं पूछैं ताके निश्चयके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ परेऽप्रवीचाराः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— यहां परशब्दका ग्रहण अवशेष रहे जे अहमिन्द्र तिनके ग्रहणके अर्थि है । अप्रवीचारशब्द परमसुख जनावनेके अर्थि है । प्रवीचार तौ मैथुनकी वेदनाका इलाज है । तिसके अभावतैं तिन अहमिन्द्रनिकै सहजही परमसुख है ॥

आगैं, आदिनिकायके देव दशप्रकारके भेदरूप कहे तिनकी सामान्यविशेष संज्ञाके नियमके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥ १० ॥

याका अर्थ— भवननिविषैं वसैं ते भवनवासी कहिये, यह तौ तिनकी सामान्यसंज्ञा है । बहुरि असुरकुमार नागकुमार विद्युत्कुमार सुपर्णकुमार अग्निकुमार वातकुमार स्तनितकुमार उदधिकुमार द्वीपकुमार दिक्कुमार ए दशजातिनिकी दश विशेषसंज्ञा हैं । सो नामकर्मके उदयके विशेषकरि इनके नामकी प्रवृत्ति है । बहुरि अवस्थित एकरूप अवस्था तथा स्वभाव सर्वही देवनिकै समान है । तथापि ये भवनवासी देव वेष आभूषण आयुध यान वाहन क्रीडन आदिकरि कुमारकी ज्यौं सोहैं हैं प्रवर्तैं हैं, तातैं इनकूं कुमार कहिये हैं । तातैं दशही जातिकैं कुमार शब्द जोडना । यहां पूछै हैं, तिनकें भवन कहां हैं? सो कहिये हैं । रत्नप्रभापृथिवीके पंकभागविषैं तौ असुरकुमारनिके भवन हैं । बहुरि पहला खरभागविषैं ऊपर नीचै हजार हजार योजन छोडकरि नवजातिके भवनवासीनिके आवास हैं । इहां कोई अन्यवादी कहै, जो, ये देव उत्तमदेवनितैं शस्त्रादिकरि युद्ध करैं हैं, तातैं इनका नाम असुर है । ताकूं कहिये, जो, ऐसा कहना तौ तिनका अवर्णवाद करना है । ते उत्तमदेव जे सौधर्मादिकके कल्पवासी हैं, ते महाप्रभावसहित हैं, तिनउपरि हीन देवनिका बल चलै नाहीं । मनकरि भी तिनितैं प्रतिकूल न होय, तथा कल्पवासी उत्तम परिणामनितैं उपजैं सो तिनकैं वैरका कारण भी नाहीं । भगवानकी पूजा तथा स्वर्गनिके भोगनिहीविषैं तिनकूं आनंद वर्तैं है । तिनके असुरनसहित युद्ध कहना मिथ्यात्वके निमित्ततैं अवर्णवाद है ॥

आगैं द्वितीय निकायकी सामान्यविशेषसंज्ञाका नियमके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ व्यंतराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥ ११ ॥

याका अर्थ— विविध देशान्तरनिविषैं जिनिके वास ते व्यंतर हैं, ऐसी इनकी सार्थिक सामान्यसंज्ञा है। वहुरि तिनके भेदनिकी विशेषसंज्ञा किंनर किंपुरुष महोरग गंधर्व यक्ष राक्षस भूत पिशाच ऐसी है। यहु विशेषसंज्ञा नामकर्मके विशेषके उदयतैं भई है। वहुरि इनिका आवास कहां है सो कहिये है। इस रत्नप्रभापृथिवीके पहले खरभागविषैं अर जंबूद्वीपतैं असंख्यात द्वीपसमुद्र परें जाय सातप्रकारके व्यंतरनिके आवास हैं। वहुरि राक्षसजातिके निकायके दूसरे पंकवहुल भागविषैं हैं। यहां अन्यवादी केई कहै हैं। किंनर किंपुरुष मनुष्यनकूं खाय हैं। तथा पिशाच मांसका आहार करैं हैं। राक्षस मांस आहारी हैं। सो यह कहना अयुक्त है। मिथ्याज्ञानतैं तिनका अवर्णवाद करैं हैं। जातैं ए देव पवित्र वैक्रियकदेहके धारक हैं। सो अपवित्र मनुष्यनिके शरीरकूं कैसैं इच्छैं? तथा मांस कैसैं भखैं?

इहां कहैं, जो, लोकविषैं व्यंतर आवै तव कहैं हैं मांस दारू ल्यावो, सो यह कहना ऐसा है, प्रथम तो लोकमें अज्ञानी जीव वात आदि रोगविषैं व्यंतरकी कल्पना करैं हैं, वातविकारतैं यथा तथा वचन कहैं अवष्टा करै ताकूं व्यंतर ठहराय लें। वहुरि कदाचित् कोई व्यंतर भी चेष्टा आय करै दारू आदि अशुचिका नाम भी लेय तौ तिनकी क्रीडामात्र चेष्टा है। ते मानसीक आहारी हैं। तातैं तिनकैं कुछ भक्षण नाहीं। तिनकैं मांस दारू आदि अपवित्रका भक्षण कहना तिनका अवर्णवाद है। यातैं मिथ्यात्वका आश्रवका अनुभाग तीव्र आवै है। वहुरि तिनकैं आवास तो खरभागविषैं कहे हैं। वहुरि पृथिवीऊपरि भी तिनके द्वीप समुद्र पर्वत देश ग्राम नगर गृहनिके आंगण गली जलके निवास उद्यान देवमंदिर आदिविषैं असंख्यात हैं॥

आगैं तीसरा निकायकी सामान्य विशेष संज्ञाके नेम कहनेके अर्थि सूत्र कहैं हैं॥

॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥ १२ ॥

याका अर्थ— इन पांचूंहीकी ज्योतिष्क ऐसी सामान्यसंज्ञा ज्योतिःस्वभावतैं है, सो सार्थिक है। वहुरि सूर्य चंद्रमा ग्रह नक्षत्र प्रकीर्णक तारका ऐसी पांच विशेषसंज्ञा है। सो यहु नामकर्मके उदयके विशेषतैं भई है। वहुरि सूर्याचंद्रमसौ ऐसी इन दोयकैं न्यारी विभक्ति करी सो इनका प्रधानपणां जनावनेके अर्थि है। इनके प्रधानपणां इनके प्रभाव आदिकरि किया है। वहुरि इनके आवास कहां हैं, सो कहिये है। इस मध्यलोककी समानभूमिके भागतैं सातसैं नवै

योजन ऊपरि जाय तारानिके विमान विचरै हैं । ते सर्व ज्योतिषिनिके नीचे जाननां । इनतैं दश योजन ऊपरि जाय सूर्यनिके विमान विचरे हैं । तातैं अशी योजन ऊपरि जाय चंद्रमानिके विमान हैं । तातैं तीनि योजन ऊपर जाय नक्षत्रनिके विमान हैं । तातैं तीनि योजन ऊपर जाय बुधनिके विमान हैं । तातैं तीनि योजन ऊपर जाय शुक्रनिके विमान हैं । तातैं तीनि योजन ऊपरि जाय बृहस्पतीके विमान हैं । तातैं चारि योजन ऊपर जाय मंगलके विमान हैं। तातैं चारि योजन ऊपर जाय शनैश्चरके विमान हैं। यहु ज्योतिष्कमंडलका आकाशमें तलैं ऊपरि एकसौ दश योजनमांहीं जाननां, वहुरि तिर्यग्विस्तार असंख्यात द्वीपसमुद्रनिप्रमाण घनोदधिवातवलयपर्यंत जाननां । इहां उक्तंच गाथा है ताका अर्थ– सातसैं नवै, दश, अशी, च्यारि, त्रिक, दोय, चतुष्क ऐसैं एते योजन अनुक्रमतैं । तारा । ७९० । सूर्य । १० चंद्रमा । ८० । नक्षत्र । ३ । बुध । ३ । शुक्र । ३ । बृहस्पति । ३ । मंगल । ४ । शनैश्चर । ४ । इनका विचरना जानना ॥

आगैं ज्योतिषीनिका गमनका विशेष जाननेके अर्थ सूत्र कहैं हैं—

॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥

याका अर्थ— मेरुप्रदक्षिणा ऐसा वचन है, सो गमनका विशेष जाननेकूं है । अन्यप्रकार गति मति जानूं । बहुरि नित्यगतयः ऐसा वचन है, सो निरंतर गमन जनावनेके अर्थि है । बहुरि नृलोकका ग्रहण है, सो अढाई द्वीप दोय समुद्रमें नित्यगमन हैं । अन्य द्वीपसमुद्रनिमें गमन नाहीं । इहां कोई तर्क करै है, ज्योतिषी देवनिका विमाननिके गमनका कारण नाहीं । तातैं गमन नाहीं । ताकूं कहिये, यह कहना अयुक्त है । जातैं तिनके गमनविषैं लीन ऐसैं आभियोग्यजातिके देव तिनका किया गतिपरिणाम है । इन देवनिके ऐसाही कर्मका विचित्र उदय है, जो गतिप्रधानरूप कर्मका उदय दे है । बहुरि मेरूतैं ग्यारहसैं इकईस योजन छोड ऊपरैं गमन करै हैं । सो प्रदक्षिणारूप गमन करैं हैं । इन ज्योतिषीनिका अन्यमति कहै है, जो, भूगोल अलपसा क्षेत्र है । ताके ऊपरि नीचैं होय गमन है । तथा कोई ऐसैं कहै है, जो ए ज्योतिषी तौ स्थिर हैं । अरु भूगोल भ्रमे है । तातैं लोककूं उदय अस्त दीखै है । बहुरि कहैं हैं, जो, हमारे कहनेतैं ग्रहण आदि मिलै है । सो यह सर्व कहना प्रमाणबाधित है । जैनशास्त्रमें इनका गमनादिकका प्ररूपण निर्बाध है । उदयअस्तका विधान सर्वतैं मिलै है । याकी विधिनिषेधकी चर्चा श्लोकवार्तिकमें है । तथा गमनादिकका निर्णय त्रैलोक्यसार आदि ग्रंथनिमैं है, तहांतैं जानना ॥

आगैं इन ज्योतिषीनिके संबंधकरि व्यवहारकालका जानना है तिसके अर्थि सूत्र कहे हैं–

॥ तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥

याका अर्थ—– इन ज्योतिषी देवनिकरि किया कालका विभाग है । इहां तत्का ग्रहण गतिसहित ज्योतिष्क देवनिके कहनेके अर्थि है । सो यहू व्यवहारकाल केवल गतिहीकरि तथा केवल ज्योतिषीनिकरि नाहीं जाना जाय है । गतिसहित ज्योतिषीनिकरि जाना जाय है । तातैं गमन तो इनका काहूकूं दीखै नाहीं । वहुरि गमन न होय तो ये थिरही रहैं । तातैं दोऊ संबंध लेना । तहां काल है सो दोयप्रकार है । व्यवहारकाल निश्चयकाल । तिनमें व्यवहारकालका विभाग इन ज्योतिषीनिकरि किया हुवा जानिये है । सो समय आवली आदि क्रियाविशेषकरि जाना हुवा व्यवहारकाल है । सो नाही जाननेमें आवै ऐसा जो निश्चयकाल ताके जाननेकूं कारण है सो निश्चयकालका लक्षण आगै कहसी, सो जानना ॥

आगैं मनुष्यलोकतैं वाहिर ज्योतिष्क अवस्थित हैं । ऐसा कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥

याका अर्थ—– वहिः कहिये मनुष्यलोकतैं वाहिर ते ज्योतिष्क अवस्थित कहिये गमनरहित हैं । इहां कोई कहै है, पहले सूत्रमैं कह्या है जो, मनुष्यलोकतैं ज्योतिष्कदेवनिके नित्य गमन है । सो ऐसा कहनेहीतैं यह जाना जाय है, जो, यातैं वाहिरकेके गमन नाही । फेरि यह सूत्र कहना निष्प्रयोजन है । ताका समाधान, जो, इस सूत्रतैं मनुष्यलोकतै वाहिर अस्तित्व भी जाना जाय है । अवस्थान भी जान्या जाय हैं, यातैं दोऊ प्रयोजनकी सिद्धिके अर्थि यह सूत्र है अथवा अन्यप्रकारकरि गमनका अभाव हैके अर्थि तथा कदाकाल गमनका अभावके अर्थि भी यहू सूत्र जानना ॥

आगैं चौथे निकायकी सामान्यसंज्ञा कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ वैमानिकाः ॥ १६ ॥

याका अर्थ– वैमानिक ऐसा तौ अधिकारकै अर्थि ग्रहण है । याके आगैं कहसी तिनकूं वैमानिक जानिये ऐसा अधिकार है । वहुरि पुण्यवाननिकूं विशेषकरि मानैं ते विमान हैं । तिनमें जे उपजै ते वैमानिक हैं । वहुरि ते विमान

तीनि प्रकार हैं । इन्द्रक, श्रेणीबद्ध, पुष्पप्रकीर्णक । तहां इंद्रकविमान तौ इन्द्रकी ज्यौं बीच तिष्ठैं हैं । तिनकी च्यार्यौं दिशामें आकाशप्रदेशकी श्रेणीकी ज्यौं तिष्ठैं हैं ते श्रेणीबद्ध हैं । बहुरि विदिशानिविषैं विखरे फूलनिकी ज्यों तिष्ठैं हैं, तातैं ते पुष्पप्रकीर्णक हैं ॥

आगैं तिन वैमानिक देवनिके भेदके ज्ञानके अर्थि सूत्र कहैं हैं —

॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥ १७ ॥

याका अर्थ— ते वैमानिक दोय प्रकार हैं । तहां कल्प जे स्वर्ग तिनकेविषैं उपजैं ते तौ कल्पोपपन्न हैं । बहुरि ग्रैवेयक आदिविषैं उपजैं ते कल्पातीत कहिये ॥

आगैं तिनके अवस्थानविशेष जाननेके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

उपर्युपरि ॥ १८ ॥

याका अर्थ— यहु सूत्र तिन वैमानिकदेवनिका तिर्यगवस्थानके निषेधके अर्थि है । ते ज्योतिषीनिकी ज्यों तिर्यक् अवस्थित नाहीं हैं । बहुरि व्यंतरनिकी ज्यौं विषम जहांतहां अवस्थित नाहीं हैं । ते कल्प उपरि उपरि हैं ॥

आगैं पूछैं हैं, जो, ऐसैं हैं ए उपरि हैं, तौ केते कल्पविमानविषैं देव हैं ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ सौधर्मैशानसानत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक्रमहाशुक्रशतारसहस्रारे-ष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ १९ ॥

याका अर्थ— इन सौधर्मादिक शब्दनिका कल्प नाम कैसैं भया सो कहैं हैं । व्याकरण विषैं अण् ऐसा प्रत्यय है, सो च्यारि अर्थमें होय है। ताकरि कल्प नाम होय। तथा स्वभावहीतैं ऐसा नाम है । बहुरि इन्द्रका भी नाम यहही, सो भी स्वभावतैं तथा कल्पके साहचर्यतैं होय हैं । सो कैसैं ? पहले स्वर्गविषैं सुधर्मा नाम सभा है सो यहु सभा जामैं होय ताका नाम सौधर्मकल्प कहिये । इहां अस्ति अर्थमें अण् प्रत्यय जानना । बहुरि इस कल्पके साहचर्यतैं

इन्द्रका भी नाम सौधर्म जानना । बहुरि ईशान ऐसा नाम इन्द्रका स्वभावहीतैं है । सो ईशान इन्द्रनिका निवास सो ऐशानकल्प है । इहां निवास अर्थविषैं अण् प्रत्यय जानना । ताके साहचर्यतैं इन्द्रका भी नाम ऐशान है । बहुरि सनत्कुमार इन्द्रका नाम स्वभावहीतैं है । ताका निवास जो कल्प ताका नाम सानत्कुमार है। इहां भी निवास अर्थविषैं अण् प्रत्यय है । ताके साहचर्यतैं सानत्कुमार नाम इन्द्रका होय है । बहुरि महेन्द्र ऐसा नाम इन्द्रका स्वभावहीतैं है। ताका निवास जो कल्प ताका नाम माहेन्द्र है । यहां भी निवास अर्थविषैं अण् प्रत्यय है। ताके साहचर्यतैं भी इन्द्रका नाम माहेन्द्र है । ऐसैंही ब्रह्म ब्रह्मोत्तर आदि कल्पका तथा इन्द्रका नाम जानना। बहुरि उपरि उपरि दोय दोयका संबंध आगमकी अपेक्षातैं जानना । तहां पैला तो सौधर्म ऐशान ए दोय कल्प हैं । इनके उपरि सानत्कुमार माहेन्द्र ए दोय हैं । इनके उपरि ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर ए दोय हैं। इनके उपरि लांतव कापिष्ट ए दोय हैं । इनके उपरि शुक्र महाशुक्र ए दोय हैं । इनके उपरि शतार सहस्रार ए दोय हैं। इनके उपरि आनत प्राणत ए दोय हैं । इनके उपरि आरण अच्युत ए दोय हैं । इहां कल्पका युगलका उपरि उपरि दोय दोय कहना अंतके दोय युगलनिके जुदी विभक्ती करी, समास न किया, तातैं जाना जाय है । बहुरि नीचले च्यारि कल्पविषैं बहुरि उपरिके च्यारि कल्पविषैं तौ च्यारि च्यारि इन्द्र जानने । बहुरि बीचके आठ कल्पनिविषैं च्यारिही इन्द्र जानने । सो ऐसैं हैं- सौधर्म ऐशान सानत्कुमार माहेन्द्र इन च्यारिविषैं च्यारि इन्द्र । ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर इन दोयमें एक ब्रह्म नाम इन्द्र है । लांतव कापिष्ट इन दोयमें एक लांतव नाम इन्द्र । शुक्र महाशुक्र इन दोयमें एक शुक्र नाम इन्द्र । शतार सहस्रार इन दोयमें एक शतार नाम इन्द्र । आनत प्राणत आरण अच्युत इन च्यारिमें च्यारि इन्द्र हैं। ऐसैं कल्पवासीनिके बारह इन्द्र हैं ॥

बहुरि लोकनियोगके उपदेशतैं तत्त्वार्थवार्तिकविषैं इन्द्र चौदह भी लिखे हैं । तहां बारह स्वर्गमें तौ बारह अर ऊपरके च्यारि स्वर्गनिमें दोय ऐसें । अब इहां उपरि उपरि कह्या, सो कहांतैं गिनिये सो कहै है । जम्बूद्वीपविषैं मेरूपर्वत हजार योजन तौ पृथ्वीमें अरु निन्यानवै हजार योजन ऊंचो ताके नीचै तौ अधोलोक कहिये । बहुरि मेरुबराबर मोटाई बहुरि तिर्यक् फैलवा तिर्यग्लोक है । बहुरि मेरुकै ऊपरि ऊर्ध्व लोक है । मेरुकी चूलिका चालीस योजनकी ऊंची है । ताके उपरि बालका अन्तरमात्र तिष्ठ्या सौधर्मस्वर्गका ऋजु नामा इन्द्रकविमान है । अन्य सर्व याका वर्णन लोक-नियोग ग्रंथतैं जाननां । बहुरि नवसु ग्रैवेयकेपु ऐसा वचन है, तहां नवशब्दकैं जुदी विभक्ति करनेका यहु प्रयोजन है । जो ग्रैवेयकतैं जुदा नव विमान अनुदिश नामधारक हैं ऐसा जनाया है । तातैं अनुदिशका ग्रहण करना । इनके सौधर्म-कल्पतैं लगाय अनुत्तरपर्यंत उपरि उपरि तिरेसठि पटल हैं । तहां प्रथमयुगलमें तो इकतीस पटल हैं । द्वितीय युगलमें

सात पटल हैं । तीसरे युगलमें च्यारि पटल हैं । चौथे युगलमें दोय पटल हैं । पांचवां युगलका एकही पटल है । छठा युगलका एक पटल है । सातमा आठमा युगलके छह पटल हैं ऐसें बावन पटल तौ स्वर्गनिके हैं । बहुरि नवग्रैवेयकके नव पटल हैं । बहुरि एक अनुदिशका, एक पंचअनुत्तरका ऐसें तिरेसठि पटल जानने ॥

आगैं इन वैमानिक देवनिके परस्पर विशेष है, ताके जनावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः ॥ २० ॥

याका अर्थ— वैमानिक देव हैं ते स्थिति प्रभाव सुख द्युति लेश्याकी विशुद्धि इन्द्रियनिका विषय अवधिका विषय इनकरि उपरिउपरि स्वर्गस्वर्गप्रति तथा पटलपटलप्रति अधिकअधिक हैं । तहां अपनी आयुके उदयतैं तिस भवविषैं शरीर-सहित तिष्ठना, सो स्थिति कहिये, बहुरि परके उपकार तथा अपकार करनेकी शक्तिकूं प्रभाव कहिये; बहुरि इन्द्रिय-विषयका भोगवना, सो सुख कहिये; बहुरि शरीर तथा वस्त्रआभरणादीकी दीप्ति, सो द्युति कहिये; बहुरि कषायकरि योगनिकी प्रवृत्तिरूप लेश्या ताकी विशुद्धि कहिये उज्वलता; बहुरि इन्द्रियनिकरि विषयनिका जानना; बहुरि अवधिकरि द्रव्य क्षेत्र काल भावरूप विषयका जाननां इनकरि अधिक अधिक हैं ॥

आगें स्थिति आदिकरि जैसैं अधिक हैं, तैसैं गति आदिकरि हीन हैं ऐसैं कहै हैं–

॥ गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥ २१ ॥

याका अर्थ— ए वैमानिक देव हैं ते गति शरीर परिग्रह अभिमान इनकरि उपरिउपरि हीन कहिये घटतेघटते हैं । तहां क्षेत्रसे अन्यक्षेत्र जाना सो गति कहिये । शरीर तिनके वैक्रियक कह्या सोही । बहुरि लोभकषायके उदयतैं विषय-निविषैं संगति करना सो परिग्रह कहिये । बहुरि मानकषायके उदयतैं उपजा जो अहंकार गर्व सो अभिमान कहिये । इनकरि उपरि उपरि हीन हैं । जातैं अन्यदेशविषैं क्रीडा रतिका अभिलाष तीव्र नाहीं । अपने योग्य क्षेत्रविषैंही तृप्ति है । तातैं तौ गमन थोडा करै है । बहुरि शरीर सौधर्म ऐशानके देवनिका तौ सात हस्तका है । बहुरि सनत्कुमार माहेन्द्रका छह हाथका है । ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर लांतव कापिष्टविषैं पांच हाथका है । शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रारविषैं च्यारि हाथका है । आनत प्राणतविषैं साढा तीनि हाथका है । बहुरि आरण अच्युतविषैं तीनि हाथका है । अधो-ग्रैवेयकविषैं अढाई हाथका है । मध्यग्रैवेयकविषैं दोय हाथका है । उपरिग्रैवेयकविषैं बहुरि अनुदिशविषैं डेढ हाथ है ।

बहुरि अनुत्तरविषैं एक हाथ है । बहुरि परिग्रह विमान देवांगना आदि परिवार इत्यादिका उपरि उपरि घटता घटता है । बहुरि उपरि कषाय थोरे हैं । तातैं अभिमान घटता घटता है । इहांतैं स्वर्गनिमैं उपजैं हैं, तिनके कषायनिकी मंदता वढती वढती होय, ते उपरि उपरि उपजे हैं । तातैं सोही संस्कार वहां है । तातैं उपरि उपरि कषाय थोरे थोरे हैं ॥

आगैं, तीनि निकायनिके तौ लेश्या पहली कही थी । अब वैमानिकनिके लेश्याकी विधिप्रतिपत्तिके अर्थि सूत्र कहै हैं–

॥ पीतपद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥

याका अर्थ— दोय युगलनिमें पीतलेश्या, तीनि युगलनिमें पद्मलेश्या, बहुरि बाकी तीनि युगल तथा अहमिन्द्रनिकै शुक्ललेश्या है । यहां पहले पीत पद्म शुक्लका द्वंद्वसमास करि पीछे ए लेश्या जिनके होय ते पीत पद्म शुक्ललेश्यावाले देव हैं, ऐसैं बहुव्रीहिसमास है । इहां प्रश्न, जो, इहा समासविषैं पीत पद्म शुक्ल इनके ऱ्हस्व अकार कैसैं भया? शब्द तौ पीता पद्मा शुक्ला ऐसा चाहिये । तहां कहिये है, जो व्याकरणविषैं उत्तरपदतैं ऱ्हस्व होना भी कह्या है । जैसैं द्रुती ऐसा शब्दका तपरकरणविषैं है । तहां मध्याविलंविताका उपसंख्यान है, ऐसैं इहां भी जानना । अथवा पीत पद्म शुक्ल ऐसे शब्द वर्णसहित वस्तुके वाचक भी हैं, ते पुरुषलिंगी हैं । तिनिकी उपमा भी इन लेश्यानिकूं है । तातैं उपमितिसमास-विषैं ऱ्हस्व हैही ॥

ऐसैं कोनकैं कैसी लेश्या है, सो कहिये है— सौधर्म ऐशानके देवनिकै तौ पीतलेश्या है, ताके मध्यम अंश है । सानत्कुमार माहेन्द्रके देवनिकै पीतलेश्या है, तथा तहां पद्म भी है । ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर लातव कापिष्ट शुक्र महाशुक्र इन तीनि युगलनिविषैं पद्मलेश्या मध्यम अंश है । शतार सहस्रारविषैं पद्मलेश्या तथा शुक्ललेश्या है । आनतआदि अनुत्तर-पर्यंत तेरह स्थाननिविषैं शुक्ललेश्या है । तहां भी अनुदिश अनुत्तरविषैं परमशुक्ललेश्या जाननी । इहा प्रश्न, जो, सानत्कुमार माहेन्द्रविषैं पीत पद्म दोऊ कही । तथा शतार सहस्रारविषैं पद्म शुक्ल दोऊ कही । सो सूत्रविषैं तो एक एकही कही है, दोऊं कैसैं कहौ हौ? ताका समाधान— जो, इहां साहचर्यतैं मुख्य है, ताकूं सूत्रमें कही है । ताकी साथी गौणका भी ग्रहण करना । जैसैं लौकिकमें राजादिक छत्रधारी गमन करै, तिनकी साथि अन्य भी जाय है । तहां कोई पूछै कौन जाय है? तहा कहै छत्रधारी जाय है । तहां जे विना छत्रवाले साथी हैं, ते भी जानि लेने । तैसैं इहां मुख्यके कहेही गौणका ग्रहण किया है । तहा यहु अर्थ सूत्रतैं ऐसैं जानना, जो, दोय युगलम पीतलेश्या कही तहां दूसरे युगलमें

जुदे हैं, इनका विमान ब्रह्मलोकस्वर्गके अन्तमें है। तथा ए सर्वही एक मनुष्यके भव लेय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं ॥

आगैं सामान्यकरि कहे जे लौकान्तिक देव तिनके भेद दिखावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ सारस्वतादित्यवन्ह्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥ २५ ॥

याका अर्थ— ए आठ प्रकारके लौकांतिक देव हैं। चशब्दतैं इनके विमान अन्तरालविषैं दोय दोय प्रकारके और हैं। ते देव कहा हैं सो कहै हैं। अरुण नामा समुद्रतें उपजा मूलविषैं संख्यातयोजनका विस्तार जाका ऐसा अंधकारका स्कंध समुद्रका वलयकी ज्यौं वलयाकार तीव्र है। अंधकाररूप परिणमन जाका ऐसा सो उर्ध्व अनुक्रमतैं बधता चलता संख्यातयोजनका मोटा होता पंचमस्वर्गका पहला पटलका अरिष्ट नामा विमानके नीचैं प्राप्त होय कूकडाकी कुटीकी ज्यौं मिल गया है। ऐसैं अंधकारतैं उपरि आठ अंधकारकी पंक्ति उठी हैं। सो अरिष्टविमानके समान निकट चारो दिशामें दोय दोय ऐसैं आठ तिर्यग् चाली सो लोकके अंतताईं गई। तिन अंधकारकी पंक्तिनिके अंतरालनिविषैं सारस्वत आदि लौकान्तिकनिके विमान हैं, तहां वसैं हैं, सो कहिये हैं ॥

पूर्वउत्तरके कौणविषैं सारस्वतनिका विमान है। देवनिकी संख्या सातसै है। बहुरि पूर्वदिशाविषैं आदित्यनिका विमान है। देवनिकी संख्या सातसै है। बहुरि पूर्वदक्षिणके कौणमें वह्निदेवनिका विमान है। देवनिकी संख्या सातहजार सात है। बहुरि दक्षिणदिशाविषैं अरुणका विमान है। देवनिकी संख्या सातहजार सात है। बहुरि दक्षिणपश्चिमका कौणमें गर्दतोयनिका विमान है। देव नवहजार नव हैं। बहुरि पश्चिमदिशाविषैं तुषितनिका विमान है। देव नवहजार नव हैं। बहुरि उत्तरपश्चिमके कौणमें अव्याबाधनिका विमान है। देव ग्यारहहजार ग्यारह हैं। बहुरि उत्तरदिशाविषैं अरिष्टनिका विमान है। देव ग्यारहहजार ग्यारह हैं। बहुरि चशब्दकरि समुच्चय किये इनके अंतरालमें दोय दोय देवनिके समूह और हैं सो कहिये हैं। सारस्वतआदित्यके अंतरालमें अग्न्याभ सूर्याभ ये हैं। तिनके देव अग्न्याभके सातहजार सात हैं, सूर्याभके नवहजार नव हैं। बहुरि आदित्यवह्निके अंतरालमें चंद्राभ सत्याभ हैं। तामैं चन्द्राभके देव ग्यारहहजार ग्यारह हैं, सत्याभके तेरहहजार तेरह हैं। बहुरि वह्निअरुणके अंतरालमें श्रेयस्कर क्षेमंकर हैं। तहां श्रेयस्करके देव पंद्रहहजार पंद्रह हैं, क्षेमंकरके सत्रहहजार सत्रह हैं। बहुरि अरुणगर्दतोयके अंतरालमें वृषभेष्ट कामचर हैं। तहां वृषभेष्टके उगणीसहजार उगणीस हैं, बहुरि कामचर इकईसहजार इकईस हैं। बहुरि गर्दतोयतुषितके अंतरालमें निर्माणरज दिगंतराक्षित हैं। तहां निर्माणरजके देव तेईसहजार तेईस हैं, दिगंतराक्षित पचीस-

हजार पच्चीस हैं। बहुरि तुषितअव्याबाधके अंतरालमें आत्मरक्षित सर्वरक्षित हैं। तहां आत्मरक्षित सत्ताईसहजार सत्ताईस हैं, सर्वरक्षित उनतीसहजार उनतीस हैं। बहुरि अव्याबाधअरिष्टके अंतरालमें मरुत वसु हैं। तहां मरुतके देव इकतीसहजार इकतीस हैं, वसुके देव तेतीसहजार तेतीस हैं। बहुरि अरिष्टसारस्वतके अंतरालमें अश्व विश्व हैं। तहां अश्वदेव पैंतीसहजार पैंतीस हैं, विश्व सैंतीसहजार सैंतीस हैं। ए सर्व चालीस लौकांतिक देव भेले किये चारि लाख सातहजार आठसै छह हैं। सर्वही स्वाधीन हैं। इनमें हीनाधिक कोऊ नहीं। बहुरि विषयनिके रागनितैं रहित हैं। तातैं इनकू देवर्षि भी कहिये। याहीतैं अन्यदेवनिके ये पूज्य हैं। चौदहपूर्वके धारी हैं। तीर्थंकरनिके तपकल्याण विषैं प्रतिबोधनेविषैं तत्पर हैं। निरंतर ज्ञानभावनाविषैं जिनका मन रहै है, संसारतैं सदाही विरक्त हैं, बारह अनुप्रेक्षा-विषैं जिनका चित्त प्रवर्तै है ऐसा नामकर्मकी प्रकृतिविशेषके उदयतैं उपजे हैं ॥

आगैं पूछै हैं, जो, लौकान्तिक देव कहे ते एकभव ले निर्वाण पावै हैं, तो ऐसा और भी देवनिकै निर्वाण पावनेका कालविभाग है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— विजयादिक च्यारि विमानवाले तथा अनुदिशवाले देव दोय भव मनुष्यका लेय मोक्ष जाय हैं। यहां आदिशब्द प्रकारार्थमें है। तातैं विजय वैजयंत जयंत अपराजित अनुदिश विमान तिष्ठै हैं तिनका ग्रहण है, जातैं इनविषैं सम्यग्दृष्टीविना उपजै नाहीं ऐसा प्रकारार्थ जानना। इहां कोई कहै है, ऐसैं तो सर्वार्थसिद्धिका भी ग्रहण होय है। ताकूं कहिये नाही होय है। जातैं सर्वार्थसिद्धिके देव परम उत्कृष्ट हैं। तातैं इनकी संज्ञाही सार्थिक हैं। एक भव ले मोक्ष पावै हैं। बहुरि इस सूत्रमें चरमपणां मनुष्यभवकी अपेक्षा है, जे दोय भव मनुष्यके ले ते द्विचरम कहिये। तातैं ऐसा अर्थ है, जो, विजयादिकतैं चयकरि मनुष्य होय बहुरि संयम आराधि फेरि विजयादिकविषैं उपजैं, तहांतैं चयकरि मनुष्य होय मोक्ष जाय हैं ऐसैं द्विचरमदेहपणा है। ऐसैं ग्यारह सूत्रनिकरि वैमानिक देवनिका निरूपण किया ॥

आगैं पूछै है, जीवके औदयिक भावनिविषैं तिर्यग्योनि औदयिकी कही बहुरि स्थितिके निरूपणतैं तिर्यंचनिकी स्थिति कही; तहातैं ऐसा न जाना गया, जो, तिर्यंच कौन हैं? ऐसा पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमेऽधिके ॥ २९ ॥

याका अर्थ— सौधर्म ऐशान स्वर्गविषैं दोय सागर क्यों (कुछ) अधिक स्थिति है । इहां सूत्रमें सागरोपमे ऐसा द्विवचन है, तातैं दोय सागर लेने । बहुरि अधिक ऐसा शब्द अधिकारस्वरूप है सो सहस्रारस्वर्गताई लीजियेगा । तातैं आगैं सूत्रमें तु शब्द है । तातैं ऐसा जाना जाय है । तातैं इहां ऐसा अर्थ भया, सो, सौधर्म ऐशान इन दोय स्वर्गके देवनिकी आयु दोय सागर कुछ अधिक है ॥ आगै, अगिले स्वर्गनिविषैं स्थितीके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥ ३० ॥

याका अथ—सानत्कुमार माहेन्द्र इन दोय स्वर्गनिविषैं सात सागर अधिक सहित है ॥ आगें ब्रह्मलोकादिकतैं लगाय अच्युत स्वर्गपर्यंत स्थितीके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपंचदशभिरधिकानि तु ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— यहां पहल सूत्रमें सातसागर कहे हैं । तिनमें इस सूत्रमें कहे जे तीनि आदि ते अधिक करने जोडने । बहुरि पूर्वसूत्रके अधिक शब्दकी अनुवृत्ति है । सो इस सूत्रमें तु शब्दकरि इहां च्यारि युगलनिताई तौ अधिक लेना, और अंतके दोय युगलमें न लेना, ऐसा अर्थ तु शब्दकरि भया । तातैं इहां ऐसा अर्थ है, ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर विषैं तौ सातमें तीनि मिले तब दशसागरकी स्थिति अधिक सहित भई । लांतव कापिष्ठविषैं सातमें सात मिले तब चौदहसागर अधिक सहित हैं । शुक्र महाशुक्रविषैं सातमें नव मिले तब सोलहसागर साधिक हैं । शतार सहस्रारविषैं सातमें ग्यारह मिले तब अठारहसागर साधिक है । आनत प्राणतविषैं सातमें तेरह मिले तब वीस सागर अधिकरहित है । आरण अच्युतविषैं सातमें पंद्रह मिले तब बाईस सागर अधिकरहित है ॥

आगैं इनके उपरि स्थिति जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिध्दौ च ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— इहां अधिकका ग्रहणकी अनुवृत्ति करि एकएक बढावना । ग्रैवेयककैं नवशब्दका ग्रहण एक एक करि

बढता जुदा जनावै है । नवशब्द न होय तौ ग्रैवेयकविषैं एकही बधावना ठहरै । बहुरि विजयादिके आदिशब्द है सो प्रकारार्थ है । सो विजयादिकी ज्योंही अनुदिश है, ताका ग्रहण करना । बहुरि सर्वार्थसिद्धिका जुदा ग्रहण जघन्यस्थितिका अभाव जनावनेके अर्थि है । तातैं ऐसा अर्थ भया, नीचिले ग्रैवेयकत्रिकमें पहले ग्रैवेयकमें तौ तेईस सागरकी स्थिति है । दूसरेमें चौवीस सागरकी है । तीसरेमें पचीस सागरकी है । बहुरि मध्यग्रैवेयकत्रिकमें पहलेमें छब्बीस सागर है । दूसरेमें सताईस सागर है । तीसरेमें अठ्ठाईस सागर है । ऊपरले ग्रैवेयकत्रिकमें पहलेमें उनतीस सागर है । दूसरेमें तीस सागर है । तीसरेमें इकतीस सागर है । अनुदिशविमानविषैं बत्तीस सागर है । विजयादिक विमाननिविषैं तेतीससागर उत्कृष्ट है । सर्वार्थसिद्धिविषैं तेतीस सागर उत्कृष्टही है। इहां जघन्य नाहीं ॥

आगैं जिन देवनिकी उत्कृष्ट स्थिति कही तिनकैं जघन्य स्थिति कहनेकौं सूत्र कहैं हैं-

॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— अपरा कहिये जघन्य स्थिति सौधर्म ऐशानके देवनिकी कुछ अधिक एक पल्यकी है । यह सूत्रतैं कैसैं जानिये ? अगिले सूत्रमें ' परतः परतः ' ऐसा कहा है तातैं इहां सौधर्म ऐशान जाना जाय है । आगें याके उपरि जघन्यस्थिति कहनेकूं सूत्र कहै हैं-

॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥ ३४ ॥

याका अर्थ- इहां परतः परतः ऐसा तौ सप्तमी विभक्तिका अर्थ है। बहुरि वार वार कहने तातैं दोय वार कह्या है। बहुरि पूर्वशब्दके अधिक ग्रहणकी अनुवृत्ति है तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, सौधर्म ऐशानविषैं उत्कृष्ट स्थिति साधिक दोय सागरकी कही । सो यातैं परे सानत्कुमार माहेन्द्रविषैं जघन्यस्थिति साधिक दोय सागरकी है । बहुरि सानत्कुमार माहेन्द्रविषैं उत्कृष्ट स्थिति साधिक सात सागरकी है । सोही ब्रह्म ब्रह्मोत्तरविषैं जघन्यस्थिति है । ऐसेंही विजयादिकपर्यंत जाननी । अनन्तरशब्द है सो पहली पहली लगतीकूं जनावै है । आगें नारकीनिकी उत्कृष्टस्थिति तौ यह पहली कही थी, बहुरि जघन्य पहली न कही, बहुरि इहां ताका प्रकरण भी नाहीं, तौ भी पहले सूत्रतैं क्रममें थोरे अक्षरनिमें कही जाय है, तातैं इहां ताकूं कहनेकूं सूत्र कहै हैं-

॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥

याका अर्थ— इहां चशब्द है सो इसतैं पहले सूत्र कह्या ताका समुच्चयके अर्थि है। तातैं अर्थ होय है, जो, रत्नप्रभाविषैं नारकीनिकी उत्कृष्ट स्थिति एकसागरकी कही है, सो शर्कराप्रभाविषैं जघन्य स्थिति है। बहुरि शर्कराप्रभाविषैं उत्कृष्ट स्थिति तीनि सागरकी कही है, सो वालुकाप्रभाविषैं जघन्यस्थिति है। ऐसैंही महातमःप्रभा सातवी पृथ्वीताईं जानना ॥ आगें दूसरी आदि पृथिवीविषैं जघन्य स्थिति कही, तौ पहली पृथिवीविषैं जघन्यस्थिति कहा है? ऐसैं पूछै ताके दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६ ॥

याका अर्थ— इहां अपरा शब्दकी अनुवृत्ति है। तातैं जघन्य जाननी। सो पहली पृथिवी रत्नप्रभाविषैं नारकीनिकी जघन्यस्थिति दशहजारवर्षकी है ॥

आगें भवनवासी देवनिकी जघन्यस्थिति कही सो सूत्र कहै हैं ॥

॥ भवनेषुच ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— इहां च शब्द पहले सूत्रमें कही स्थितिका समुच्चय करै है। तातैं ऐसा अर्थ है जो भवनवासी देवनिकी भी जघन्यस्थिति दशहजार वर्षकीही है ऐसैं जाननी ॥

आगें व्यंतरदेवनिकी जघन्यस्थिति कहा है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ व्यन्तराणां च ॥ ३८ ॥

याका अर्थ— यहां भी च शब्दकरि पूर्वसूत्रमें कही स्थितिका समुच्चय करै है। तातैं व्यंतरदेवनिकी भी जघन्यस्थिति दशहजार वर्षकी जाननी ॥

आगें व्यंतरदेवनिकी उत्कृष्टस्थिति कहा है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— व्यंतरदेवनिकी उत्कृष्टस्थिति एक पल्य कछु अधिक है ॥

आगें ज्योतिषी देवनिकी उत्कृष्टस्थिति कहनेयोग्य है ऐसैं पूछै सूत्र कहे हैं—

॥ ज्योतिष्काणां च ॥ ४० ॥

याका अर्थ— इहां च शब्द है सो पहले सूत्रमें स्थिति कही ताका समुच्चय करै है। तातैं ज्योतिषी देवनिकी आयु साधिक एक पल्यकी है ॥

आगैं ज्योतिपीनिकी जयन्यस्थिति कहा है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै है—

॥ तदष्टभागोऽपरा ॥ ४१ ॥

याका अर्थ— तिस पल्यके आठवे भाग ज्योतिपी देवनिकी जघन्य स्थिति है। इहां अधिक कही विशेप लिखिये हैं। उत्कृष्टस्थितिकामें अधिक कही सो उत्कृष्टस्थितिमें केती अधिक है सो कहिये हैं। तहां चन्द्रमाकी तो एकलाखवर्ष अधिक है। सूर्यकी एकहजारवर्प अधिक है। शुक्रकी एकसौवर्प अधिक है। बृहस्पतिकी एक पल्यकी है, अधिक नाही। अन्य ग्रहनिकी आध पल्यकी उत्कृष्ट आयु है। नक्षत्रनिकी आध पल्यकी उत्कृष्ट आयु है। तारानिकी पल्यका चौथा भाग आयु है। बहुरि जघन्य चन्द्रमा सूर्य आदिकी तौ पल्यका चौथा भाग है। बहुरि तारानिकी अर नक्षत्रनिकी पल्यका आठवा भाग है॥ बहुरि कोई पूछै है, लौकान्तिक कहे तिनकी स्थिति न कही सो तौ केती हैं? तहां कहिये है—

॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ४२ ॥

याका अर्थ— जो लौकान्तिक देवनिकी सर्वहीकी आठ सागरकी स्थिति है। ते सर्वही बराबर हैं, सर्वके शुक्ललेश्या है, पांच हाथका सर्वका शरीर है। इहां कोई तर्क करै है, जो, प्राणिकी स्थिति कर्मकी विचित्रतासूं हीनाधिक कहिये है, तौ जैसैं घट आदि वस्तुनिकी स्थिति कर्मकी अपेक्षा विना हैं, तैसैंही क्यों न कहो? ताका समाधान- जो, घट

आदि वस्तु तौ पुद्गलद्रव्य हैं, इनके कर्मका बंध उदय नाहीं, तिनकी भी स्थिति प्राणीनिके कर्मके उदयके अनुसारी है। जो ऐसैं न मानिये तौ समानकारणतैं उपज्या समानकालमें उपज्या समानक्षेत्रमें उपज्या समान जिनका आकार ऐसैं घटनिकी समान स्थिति चाहिये, सो है नाहीं, तातैं जे घटादिकके भोगनेवाले प्राणी तिनके कर्मके उदयके अनुसार तिनकी भी स्थिति है। निमित्तनैमित्तिकभावरूप वस्तुस्वभाव है ॥

ऐसैं जीवपदार्थका स्वरूपविषैं संसारी जीवनिका स्वरूप कह्या ॥ सो प्रथम अध्यायमें प्रमाण नय निक्षेप अनुयोग-निका स्वरूप कहिकारि द्वितीय अध्यायमें पंचभावरूप आदि जीवपदार्थस्वरूप कह्या। तीसरे चौथे अध्यायमें इन जीव-निका आधार आदि विशेषका निरूपण किया। जातैं जीवपदार्थ है सो एकही अनेकस्वरूप है, तातैं द्रव्यपर्यायनिकारि याविषैं सर्व अवस्था निर्बाध संभवै है। कोई अन्यवादी जीवकूं एकरूपही कहै है, तथा कोई अनेकरूपही कहै, तौ ऐसा जीवपदार्थका स्वरूप प्रमाणबाधित है। अब एकही जीव नानास्वरूप कैसैं है सो कहै हैं। जो भावरूप पदार्थ है, सो अनेक रूप है। जातैं भाव है सो अभावतैं विलक्षण है। अभाव तौ सदा एकरूप है। यातैं भाव अनेक-रूपही होय, ऐसा न मानिये तौ भावअभावमें विशेष न ठहरै। सो ऐसा भाव छह प्रकारका है। जन्म। अस्तितव। निवृत्ति। वृद्धि। अपक्षय। विनाश। तहां बाह्याभ्यंतर कारणके वशतैं वस्तु उपजै सो जन्म है। जैसैं सुवर्ण कडा-पनाकरि उपज्या। तथा मनुष्यगतिनामकर्मका उदयकरि जीव मनुष्य भया बहुरि अपने निमित्तके वशतैं वस्तुका अवस्थान रहै सो अस्तित्व है। सो ऐसा अस्तित्व है सो शब्दके तथा ज्ञानके गोचर है। ऐसैं मनुष्यआदि आयु-कर्मके उदयकरि जीव मनुष्यआदि पर्यायविषैं अस्तित्वस्वरूप रहै। बहुरि सत्कैं अवस्थान्तरकी प्राप्तिकूं निवृत्ति कहिये याकूं परिणाम भी कहिये। बहुरि पहले स्वभावतैं अनुक्रमतैं बधै ताकूं वृद्धि कहिये। बहुरि पहले स्वभावतैं अनुक्रमतैं घटै ताकूं अपक्षय कहिये। बहुरि पर्यायसामान्यका अभाव होय ताकूं विनाश कहिये। ऐसैं भाव है सोही अनेकरूप क्षणक्षणमें होय है। सो सर्वथा अभावको ऐसैं मानिये तौ सिद्धि होय नाहीं। बहुरि सर्वथा सत्कूं नित्यही मानिये तौ प्रत्यक्ष जन्मआदि होय हैं, तिनका विरोध आवै। इत्यादि युक्तिमें सर्वथा एकान्तपक्ष सर्वही बाधित है।

ऐसैंही अनेकवचन तथा अनेक ज्ञानका विषयपणांतैं भी भावरूप जीव नामा पदार्थ एकही अनेकरूप है, वचनकारि अनेकरूप कहिये है ज्ञानकारि अनेकरूप जानिये है, बहुरि अनेकशक्ति कारि सहित है। जातैं द्रव्य क्षेत्र काल भावके निमित्ततैं अनेक अवस्थारूप होय है, सो बहु शक्तिरूप है तो होय हैं। ऐसैं भी एक अनेकरूप है। बहुरि अन्यवस्तुके

संबंधतैं भी अनेकरूप है। जैसैं कर्मके संबंधतैं जीवस्थान गुणस्थान मार्गणास्थानरूप होय है, तैसैं अन्यकी अपेक्षाकरि व्यक्त भये भाव तिनका घटनावधनाकरि अनेकरूप है। तथा अतीत अनागत वर्तमान कालके संबंधतैं अनेकप्रकार हैं। तथा उत्पादव्ययपणाकरि अनेकरूप हैं ॥

वहुरि अन्वयव्यतिरेकपणाकरि अनेकप्रकार है। तहां अन्वय तौ गुणके आश्रय कहिये, व्यतिरेक पर्यायके आश्रय कहिये। ऐसैं एक अनेकस्वरूप जीव नामा पदार्थ है सो शब्दकरि जाकूं कहिये तहां सकलादेश विकलादेशकरि दोय प्रकारकरि कह्या जाय है। तहां सकलादेश तौ प्रमाण कहिये, विकलादेश नय कहिये। तहां काल आदि आठ भाव पूर्वैं प्रथम अध्यायमें कहे हैं, तिनिकरि अभेदवृत्ति अभेदउपचार तथा भेदवृत्ति भेदोपचारकरि द्रव्यार्थिकके पर्यायार्थिकके प्रधानगौण-पणाकरि कहिये है। ताके सात भंग अस्तिनास्ति आदि कहे ते पहले अध्यायमें उदाहरण सहित कहे है, तहांतैं जानने ॥

इहा कोई वादी तर्क करै है, जो, वस्तु एक भी कहिये अनेक भी कहिये। ऐसैं तौ विरोध नामा दूपण आवै है। ताका समाधान, जो, विरोध तीनिप्रकार है। वध्यघातकस्वभावरूप सहानवस्थानरूप प्रतिवंध्यप्रतिवंधकस्वरूप। तहां न्यौलाके सर्पकै, जलके अग्निकै तौ वध्यघातकस्वभावरूप विरोध है। सो तौ एककाल विद्यमान होय अरु तिनका संयोग होय तव होय। सो जो वलवान् होय सो दूसरे निर्वलकूं वांधे। सो इहां अस्तिनास्ति एक वस्तुविपैं समानवल है। सो वध्यघातकविरोध समानवलके नाही संभवै। वहुरि सहानवस्थानलक्षण विरोध आम्रके फलकैं हरितभाव पीतभावके है। दोऊ वर्ण साथि होय नाही। सो यहू विरोध भी अस्तित्वनास्तित्व एकवस्तुमें एकही काल है। तातैं संभवै नाही। जो भिन्नकाल होय तो जिसकाल जीववस्तुविपैं अस्तित्व होय तिसकाल नास्तित्व न होय तौ सर्ववस्तु जीवस्वरूप एक ठहरै। वहुरि नास्तिकैं काल अस्तित्व न मानिये तो वंध मोक्ष आदिका व्यवहार न ठहरै। तातैं सहानवस्थानलक्षण विरोध भी नाही संभवै। वहुरि प्रतिवंध्यप्रतिवंधकरूप विरोध फलके अरु वींटके है। जेतैं संयोग है जेतैं फल भाऱ्या होय सो भी पडै नाही। जातैं वींट फलका प्रतिवंधक है, फलकूं पडने दे नाही। सो ऐसा विरोध भी अस्तित्व नास्तित्वकै नाही है। अस्तित्व तौ नास्तित्वके प्रयोजनकूं रोकै नाही। नास्तित्व अस्तित्वके प्रयोजनकूं रोके नाहीं। इन दोऊनिका प्रयोजन जुदा जुदा है। तातैं इनके वचनमात्र विरोध है सो विरोधकूं नाहीं साधै है, ऐसैं जानना ॥

ऐसैं चौथे अध्यायविपैं च्यारि निकायरूप देवनिके स्थानके भेद, सुखादिक, जघन्य उत्कृष्ट स्थिति, लेश्यादिक निरूपण किये ॥

छप्पय ॥

देव च्यारि परकार भेदयुत भाषे स्वामी ।
तिनके वीस निवास अधो मध्य ऊरध नामी ॥
तिन दुति सुख पर अपर आयु परभाव अवधि फुनि ।
लेश्या भाव विच्यारि आदि नीकै आगम सुनि ॥
अध्याय तुरिय इम उच्चर्यौ जानि जिनेश्वर सेवकूं ।
सरधो भलैं तजि मिथ्यात्वकुदेवकूं ॥ १ ॥

ऐसैं तत्त्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं चतुर्थ अध्याय पूर्ण भया ॥

इति श्री परमपूज्य धर्मसाम्राज्यनायक योगींद्रचूडामणि, सिद्धांतपारंगत, चारित्रचक्रवर्ति श्री १०८ आचार्य श्रीशांतिसागरजी महाराजके आदेशसे ज्ञानदानके लिए श्री. प. पू. चा. च. आ. श्री १०८ शांतिसागर दिगंबर जैन जीर्णोद्धारक संस्थाकी ओरसे छपी हुई श्री तत्त्वार्थसूत्रकी श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचित सर्वार्थसिद्धीकी पंडित जयचंदजीकृता टीका-वचनिकाविषै चतुर्थ अध्याय संपूर्ण भया ॥ ४ ॥
ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण वीर स. २४८१

———***———

संबंधतैं भी अनेकरूप है । जैसैं कर्मके संबंधतैं जीवस्थान गुणस्थान मार्गणास्थानरूप होय है, तैसैं अन्यकी अपेक्षाकरि व्यक्त भये भाव तिनका घटनाबधनाकरि अनेकरूप है । तथा अतीत अनागत वर्तमान कालके संबंधतैं अनेकप्रकार हैं । तथा उत्पादव्ययपणाकरि अनेकरूप हैं ॥

वहुरि अन्वयव्यतिरेकपणाकरि अनेकप्रकार है । तहां अन्वय तौ गुणके आश्रय कहिये, व्यतिरेक पर्यायके आश्रय कहिये । ऐसैं एक अनेकस्वरूप जीव नामा पदार्थ है सो शब्दकरि जाकूं कहिये तहां सकलादेश विकलादेशकरि दोय प्रकारकरि कह्या जाय है । तहां सकलादेश तौ प्रमाण कहिये, विकलादेश नय कहिये । तहा काल आदि आठ भाव पूर्वैं प्रथम अध्यायमें कहे हैं, तिनिकरि अभेदवृत्ति अभेदउपचार तथा भेदवृत्ति भेदोपचारकरि द्रव्यार्थिकके पर्यायार्थिकके प्रधानगौण-पणाकरि कहिये है। ताके सात भंग अस्तिनास्ति आदि कहे ते पहले अध्यायमें उदाहरण सहित कहे हैं, तहांतैं जानने ॥

इहा कोई वादी तर्क करै है, जो, वस्तु एक भी कहिये अनेक भी कहिये । ऐसैं तौ विरोध्र नामा दूषण आवै है । ताका समाधान, जो, विरोध्र तीनिप्रकार है । वध्यघातकस्वभावरूप सहानवस्थानरूप प्रतिवंध्यप्रतिवंधकस्वरूप । तहां न्यौलाके सर्पकै, जलके अग्निकै तौ वध्यघातकस्वभावरूप विरोध है । सो तौ एककाल विद्यमान होय अरु तिनका संयोग होय तव होय । सो जो वलवान् होय सो दूसरे निर्वलकूं वांधे । सो इहां अस्तिनास्ति एक वस्तुविषैं समानवल है । सो वध्यघातकविरोध समानवलके नाही संभवै । वहुरि सहानवस्थानलक्षण विरोध आम्रके फलकैं हरितभाव पीतभावके है । दोऊ वर्ण साथि होय नाही । सो यहू विरोध भी अस्तित्वनास्तित्व एकवस्तुमें एकही काल है । तातैं संभवै नाही । जो भिन्नकाल होय तो जिसकाल जीववस्तुविषैं अस्तित्व होय तिसकाल नास्तित्व न होय तौ सर्ववस्तु जीवस्वरूप एक ठहरै । वहुरि नास्तिकैं काल अस्तित्व न मानिये तो वंध मोक्ष आदिका व्यवहार न ठहरै । तातैं सहानवस्थानलक्षण विरोध भी नाही संभवै । वहुरि प्रतिवंध्यप्रतिवंधकरूप विरोध फलके अरु वींटके है । जेतैं संयोग है जेतैं फल भाग्या होय सो भी पडै नाही । जातैं वींट फलका प्रतिवंधक है, फलकूं पडने दे नाही । सो ऐसा विरोध भी अस्तित्व नास्तित्वकै नाही है । अस्तित्व तौ नास्तित्वके प्रयोजनकूं रोकै नाही । नास्तित्व अस्तित्वके प्रयोजनकूं रोकै नाहीं । इन दोऊनिका प्रयोजन जुदा जुदा है । तातैं इनके वचनमात्र विरोध है सो विरोधकूं नाहीं साधै है, ऐसैं जानना ॥

ऐसैं चौथे अध्यायविषैं च्यारि निकायरूप देवनिके स्थानके भेद, सुखादिक, जघन्य उत्कृष्ट स्थिति, लेश्यादिक निरूपण किये ॥

छप्पय ॥ देव च्यारि परकार भेदयुत भाषे स्वामी ।
तिनके वीस निवास अधो मध्य ऊरध नामी ॥
तिन दुति सुख पर अपर आयु परभाव अवधि फुनि ।
लेश्या भाव विच्यारि आदि नीकै आगम सुनि ॥
अध्याय तुरिय इम उच्चर्यौ जानि जिनेश्वर सेवकूं ।
सरधो भलैं ताजि मिथ्यात्वकुदेवकूं ॥ १ ॥

ऐसैं तत्त्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं चतुर्थ अध्याय पूर्ण भया ॥

इति श्री परमपूज्य धर्मसाम्राज्यनायक योगींद्रचूडामणि, सिद्धांतपारंगत, चारित्रचक्रवर्ति श्री १०८ आचार्य श्रीशांतिसागरजी महाराजके आदेशसे ज्ञानदानके लिए श्री. प. पू. चा. च. आ. श्री १०८ शांतिसागर दिगंबर जैन जीर्णोद्धारक संस्थाकी ओरसे छपी हुई श्री तत्त्वार्थसूत्रकी श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचित सर्वार्थसिद्धीकी पंडित जयचदजीकृता टीका-वचनिकाविषै चतुर्थ अध्याय संपूर्ण भया ॥ ४ ॥

ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण वीर सं. २४८१

———***———

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यवर्य श्री १०८ शांतिसागर महाराजके आदेशसे श्री दिगंबर जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्थाकी तरफसे ज्ञानदानके लिय छपी हुई

श्रीवीतरागाय नमः

[ग्रथ प्रकाशन समिति, फलटण वीर संवत् २४८१]

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता

॥ दोहा ॥ सकल द्रव्य पर्यायकूं जानि तजे रुपराग ॥
अद्भुत अतिसैं जिन धरें नमूं ताहि वडभाग ॥ १ ॥

ऐसैं मंगल करि पंचम अध्यायकी वचनिका लिखिये है । तहां सर्वार्थसिद्धि नाम संस्कृतटीकाका कर्ता कहै है । जो, सम्यग्दर्शनके विषयभावकरि कहे जे जीवआदि पदार्थ, तिनविर्षें जीव पदार्थका तौ व्याख्यान किया । अब आगैं अजीव नामा पदार्थ विचारविर्षें प्राप्त हुवा, ताका नाम तथा भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं —

॥ अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥

याका अर्थ— धर्म अधर्म आकाश पुद्गल ए अजीवकाय हैं । इहां कायशब्द है सो शरीरके अर्थमैं है । तौ उपचारतैं इहां अध्यारोपण किया है । जैसैं शरीर पुद्गलद्रव्यके प्रचय कहिये समूहरूप है, तैसैं धर्म आदि द्रव्य भी प्रदेशनिके प्रचयरूप हैं । तातैं इनकूं भी कायकी ज्यौं काय ऐसा नाम कह्या है । वहुरि ए अजीव जीवरहित हैं, तातैं अजीवकाय कहिये । इहां विशेषणविशेष्यका संबंध है । तातैं कर्मधारय समास है । इहां कोई पूछै है, जो, नीला कमल इत्यादिविर्षें विशेषणविशेष्यका योग होतैं व्यभिचार है । नीलवस्तु और भी हो है, तातैं व्यभिचारके प्रसंगतैं कर्मधारय समास हो है । इहां अजीवकायविर्षें कहा व्यभिचार है ? ताकूं कहिये है, अजीवशब्द है सो कायरहित जो कालद्रव्य ताविर्षें भी वर्तै है । वहुरि कायसहित जीव भी है, तातैं इहां यहु समास वणैं है । वहुरि पूछै है, कायशब्द कौन अर्थि है ? ताकूं कहिये, प्रदेशवहुत्व जनावनेके अर्थि है । धर्मादिक द्रव्यके प्रदेश बहुत हैं ॥

बहुरि कोई पूछै है, आगैं सूत्र कहेंगे तामें कह्या है, जो, धर्म अधर्म एकजीव इनके असंख्यातप्रदेश है, तिस सूत्रतैं प्रदेशबहुत्व जनाये हैं, इस सूत्रमें काहेकौं कहैं? ताकूं कहिये, यह तौ सत्य है । परंतु तहां तो प्रदेशनिकी संख्याका नियम जनाया है, जो, इनके प्रदेश असंख्यातही हैं, संख्यात तथा अनंत नाहीं हैं । अर इहां बहुत्व सामान्य जनावनेकूं कायशब्द है । पहलें बहुत्व कहे, ताकी संख्या तहां जनाई है । अथवा कालद्रव्यके प्रदेशप्रचयका अभाव जनावनेकूं इहां कायशब्द है । कालद्रव्य आगैं कहसी सो बहुप्रदेशी नाहीं है । जैसैं पुद्गलपरमाणु एकदेशमात्र है, दूसरा आदि प्रदेश जाकैं नाहीं है, तातैं ताकूं अप्रदेशी कहिये है, तैसैं कालका परमाणु भी एकप्रदेशमात्र है, तातैं ताकूं अप्रदेशी कहिये है ॥

बहुरि तिन धर्म आदि द्रव्यनिकी अजीव ऐसी सामान्यसंज्ञा है, सो यह संज्ञा जीवलक्षणकारि रहितपणांतैं प्रवर्तै है । बहुरि धर्म अधर्म आकाश पुद्गल ऐसी विशेष संज्ञा है सो इनमें जैसा विशेषणगुण है ताका संकेत अनादितैं सर्वज्ञ-पुरुषकृत है तिस संकेततैं प्रवर्ती है, वहू संज्ञा सार्थिक है । समस्त जातैं गमन करते जे जीवपुद्गल तिनकूं काल गमन-सहकारी है । ऐसें लक्षणकूं धारणेतैं धर्म ऐसी संज्ञा है । बहुरि इसतैं विपरीत जो जीवपुद्गलकूं स्थानसहकारी एक-काल है, तातैं धर्मके लक्षण नाही धारणेतैं अधर्म है । बहुरि समस्तद्रव्य जामें एककालविषैं अवकाश पावै तथा आप अवकाशरूप है, तातैं आकाश ऐसी संज्ञा है । बहुरि तीनि कालविषैं पूरै तथा गलै ते पुद्गल हैं । ऐसैं सार्थिक भी नाम बणै है । बहुरि अन्यवादी सांख्य कहै हैं, अजीव एक प्रधानही है । ताकूं प्रकृतिहू कहै है । सो यहू प्रमाणबाधित है । तातैं अजीव भिन्नलक्षणस्वरूप जुदे जुदे बहुत बणैं हैं । एकहीकी सिद्धि नाही । बहुरि जे पुरुष अद्वैत मानै है, ते अजीव तत्त्वही न कहै है । तिनका मत तौ प्रत्यक्ष विरुद्धही हैं । अजीव पदार्थ पुद्गलादि नाना प्रत्यक्षसिद्ध है । बहुरि तिनकूं अनित्य देखि अवस्तु बतावै तौ जीव भी अनित्यही दीखैं । सो भी अवस्तु ठहऱ्या तब सर्वका लोप भया ॥

इहां अदृष्टकी कल्पनाकारि एक ब्रह्म बतावै तौ जीवपदार्थविना ताकूं देखैगा कौंन? देखनेवाला जो अवस्तु है, तौ अवस्तुका देख्या सत्य कैसैं? बहुरि ताकूं आगमके कहेमात्रही मानैं, तौ आगम भी अवस्तु, आगमका माननेवाला भी अवस्तु । तब अदृष्टकल्पनाही भई । इत्यादि युक्तितैं पुरुषके द्वैतकी सिद्धि नाही है । बहुरि पृथ्वी अप तेज वायु मन दिशा काल आकाश ऐसैं अजीव पदार्थके भेद नैयायिक वैशेषिक मानैं हैं । ते भी प्रमाणबाधित हैं । जातैं पृथ्वी अप तेज वायु मन ए तौ पुद्गलद्रव्यही हैं । जुदी जाति नाही । भेदसंघातकारि स्कंधरूप मिलै खुलै है । बहुरि दिशा है सो आकाशहीका भेद है जुदा द्रव्य नाही । आकाशके प्रदेशनिकी पंक्तिविषैं सूर्यके उदयादिके वशतैं पूर्वआदि दिशा

कहिये है । वहुरि बौद्धमती एकरूप स्कंधमात्र अजीव मानै है । सो स्कंध तौ पुद्गलद्रव्यमयीही है । वहुरि इहां धर्मादिक जुदे द्रव्य कहे, तिनका समर्थन आगें होयगा ॥

आगै पूछै है कि, सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य इत्यादि सूत्रविषैं द्रव्य कहे, ते कौन हैं? ऐसें पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥

याका अर्थ— धर्म अधर्म आकाश पुद्गल ए अजीव काय कहे, तिनकौं द्रव्य भी कहिये । यातैं द्रव्य हैं । तहां जे अपना जैसा स्वरूप है, ताकरि पर्यायनिकूं द्रवंति कहिये प्राप्त होय तथा ते पर्याय जिनकूं प्राप्त होय ते द्रव्य हैं। इहां अन्यवादी कहै है, जो, द्रव्यपणांका योग कहिये संबंध ताकरि द्रव्य है, सो यह वनै नाहीं । ऐसैं कहे द्रव्यत्वकी तथा द्रव्यकी दोऊहीकी सिद्धि न होय है । जैसैं दण्ड अरु पुरुष दोऊ न्यारे सिद्ध हैं, जब तिनका संयोग होय तब दण्डीपुरुष कहावै; तैसैं द्रव्यत्व अरु द्रव्य न्यारे न्यारे दीखते नाही तातैं द्रव्यत्वके योगतैं द्रव्य सिद्ध होय । जो, न्यारे न्यारे सिद्ध भये विना भी संबंध कहिये तौ आकाशफूल असिद्ध है ताकैं अर आकाशकैं भी संबंध ठहरै । तथा स्वभावकरि तौ पुरुष मस्तकसहित हैही, ताकूं दूजे मस्तकका संबंध ठहरै । ऐसैंही द्रव्य तौ द्रव्यत्वरूप हैही कै दूजा द्रव्यत्वका संबंध ठहरे अथवा आकाशके फूलकैं अरु कल्पितपुरुषके मस्तककैं भी योग होय, सो होय नाहीं. ॥

अथवा द्रव्य अरु द्रव्यत्व न्यारे न्यारेही मानिये तौ द्रव्य तौ न्यारा ठहराही । ताके द्रव्यत्वका योग है, तातैं द्रव्य है, ऐसी कल्पना निष्प्रयोजन है । वहुरि कोई कहै, गुणनिका सद्भाव कहिये समुदाय है सो द्रव्य है सो ऐसैं भी जो गुणनिके अरु समुदायके कथंचित् भेद मानिये तौ द्रव्यका जुदा नाम न ठहरै । गुणनिका समुदायही कहिये तौ द्रव्य कहां? वहुरि भेद मानिये तौ पूर्वोक्त दोष आवै समुदाय तौ जुदा ठहरयाही । गुणनिका समुदाय काहेकूं कहिये? वहुरि वादी कहै, जो तुम भी कहो हौ, जो गुणनिकूं प्राप्त होय तथा जो गुण जाकूं प्राप्त होय, सो द्रव्य है । सो ऐसैं कहे भी तुम गुणनिके समुदायमें दोष वताया सोही तुमारै आवेगा । ताकूं कहिये हमारै दोष नाहीं आवेगा । जातैं हम कथंचित् भेद कथंचित् अभेद मानै हैं । तातैं द्रव्यका व्यपदेश कहिये नामकी सिद्धि होय है । तहां गुण अरु द्रव्य जुदे नाहीं दीखै है, तातैं अभेद है ॥

वहुरि संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजन आदिके भेदकरि भेद है । वहुरि द्रव्यशब्दकैं वहुवचन है सो धर्मआदि द्रव्य वहुत हैं, तातैं समान आधारका योग है । इहां कोई कहै, तुम संख्याकी अनुवृत्ति ले वहुवचन कह्या है, तौ लिंगकी

अनुवृत्ति चाहिये, धर्मादिककैं पहलै सूत्रमें पुरुपलिंगका बहुवचन है, इहां नपुंसकलिंग कैसैं? ताकूं कहिये, इहां द्रव्यशब्द है सो नपुंसकलिंगही है। सो अपने लिंगकूं न छोडै है, तातैं नपुंसकलिंगही युक्त है। ऐसैं धर्मादिक द्रव्य हैं। इहां कोई कहै है, द्रव्य गुण पर्याय ए तीनि कहे ते जुदे जुदे हैं। सो ऐसैं नाहीं। इनकै प्रदेशभेद तौ नाहीं हैं। अर संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजनादिककरि भेद भी कहिये हैं ॥

आगैं कहै है कि, धर्मादिककै लगताही द्रव्याणि ऐसा सूत्र कह्या तातैं ए च्यारिही द्रव्य हैं, ऐसा प्रसंग होतैं अन्य भी द्रव्य हैं, ऐसा सूत्र कहे हैं।–

॥ जीवाश्च ॥ ३ ॥

याका अर्थ— जीव हैं ते द्रव्य हैं। तहां जीवशब्दका अर्थ तौ पहले कह आये सो जानना। बहुरि बहुवचन है सो कहे जे जीवके भेद ताकूं जाननेकूं है। बहुरि चशब्द है सो द्रव्यसंज्ञाकूं ग्रहण करावे है। तातैं ऐसा अर्थ होय है, जो, जीव हैं ते भी द्रव्य हैं, ऐसैं ए आगे कहेंगे जो कालद्रव्य ताकरि सहित छह द्रव्य हैं। बहुरि द्रव्यका लक्षण भी 'गुणपर्यायवत् द्रव्यं' ऐसा कहेंगे तिस लक्षणके संबंधतैं धर्म अधर्म आकाश जीव पुद्गल काल इन छहुनिकूं द्रव्य नाम कहिये हैं। बहुरि इनकी गणतीतैं कछू अर्थ नाहीं बहुरि गणती है। सो भी नियमके अर्थि है, द्रव्य छहही हैं। अन्यवादीनिकरि कल्पे जे पृथ्वी आदिक नव द्रव्य तिनका निषेध है। जातैं पृथ्वी अप तेज वायु मन ते तौ रूप रस गंध स्पर्शवान् हैं तातैं पुद्गलद्रव्यविषैं गर्भित हैं ॥

इहां कहै, वायुमनकैं रूपादिका योग नाही दीखै है। ताकूं कहिये, वायु तौ स्पर्शवान् है सो रूपादिकतैं अविनाभावी है। जहां स्पर्श है तहां रूपादिक होयही होय, यह नियम है। जैसैं घट आदि है तैसैं है। इहां कहै, नेत्रनिकरि तौ वायुरूप दीखै नाही। ताकूं कहिये, ऐसैं तौ परमाणु भी नेत्रनिकरि नाही दीखै, ताकैं भी स्पर्शादिकका अभाव ठहरै है। ऐसैंही जल भी स्पर्शवान् है, तातैं पृथिवीकी ज्यौं गंधवान् अवश्य हैं। तथा अग्नि भी स्पर्शवान् है, तातैं रसगंधवान् है। बहुरि मन है सो दोयप्रकार है द्रव्यमन भावमन। तहां भावमन तौ ज्ञान है। सो जीवका गुण है, सो आत्मद्रव्यविषैं गर्भित भया। बहुरि द्रव्यमन है सो रूपादिकके योगतैं पुद्गलद्रव्यका विकार है, तातैं यह ज्ञानोपयोगकूं निमित्त है, तातैं नेत्र इन्द्रियकी ज्यौं रूपआदिसहितही कहिये ॥

इहां तर्क, जो, शब्द मूर्तिक है, सो ज्ञानकूं कारण है, तैसैं मन भी रूपादिरहित अमूर्तिकज्ञानकूं कारण हैं, तातैं

मूर्तिकसाधनविषैं हेतुकै व्यभिचार भया । ताका समाधान, जो, ऐसैं नाहीं है । शब्द भी पुद्गल जघन्यही है, तातैं मूर्तिकही है । बहुरि अन्यवादी तर्क करै है, जो, एकपरमाणुनिका रूपादिसहित कार्य देखिये है, तातैं रूपादिमान् कहिये है, तैसैं वायुमनका रूपादिसहित कार्य दीखैं नाही । ताका समाधान, जो, वायुमनकै भी रूपादिकार्यकी प्राप्ति वर्णै है । जातैं परमाणुमात्र सर्वहीकै रूपादिकार्यसहितपणा है । ऐसा तौ नाही । जो कोई पृथिवीतैं उपजे जातिविशेषकूं लिये परमाणु हैं ते न्यारेही हैं । सर्वही परमाणुनिकी पलटनी दीखै है । पृथिवीतैं जल होय है, जलतैं पृथिवी होय है, अग्नितैं पृथिवी होय है, पृथिवीकाष्ठादिकतैं अग्नि होय है, ऐसैं परस्पर जातिका संकर देखिये है । तातैं वायुमनके न्यारेही परमाणु नाही, सर्व पुद्गलद्रव्यके विकार हैं ॥

बहुरि दिशाका आकाशविषैं अन्तर्भाव है । सूर्यके उदयादिककी अपेक्षातैं आकाशप्रदेशनिविषैं पूर्वादिकका व्यवहार है । इहां बौद्धमती कहै है, जो, चैतन्य क्षणिक है, ताका संतान कल्पित है, ताकूं जीव कहिये है । बहुरि चार्वाकमती कहै है, पृथिवी आदिके समुदायतैं चैतन्य उपजै है, ताकूं जीव कहिये है, इत्यादि कल्पना करै हैं । तिनका निराकरण जीव-द्रव्य कहनेतैं भया । जातैं द्रव्य है सो गुणपर्यायसहित है । तहां सततैं अन्वयरूप गुण है, व्यतिरेकरूप पर्याय है, दोऊ-सहित द्रव्य है, ऐसैं जानना ॥

आगैं द्रव्य कहे तिनका विशेष जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥

याका अर्थ— कहे जे द्रव्य ते नित्य हैं, अवस्थित है, अरूपी हैं । इहां नित्य तौ ध्रुवकूं कहिये । जातैं नि ऐसा धातुका ध्रुव अर्थविषैं नित्यशब्द निपजाया है । ए धर्मादिक द्रव्य हैं ते गतिहेतुत्व आदि विशेपलक्षणतैं तथा अस्तित्व आदि सामान्यलक्षणतैं द्रव्यार्थिकनयके आदेशकारि कोईही कालविषैं व्यय कहिये नाशस्वरूप न होय हैं, तातैं नित्य हैं । नित्यका लक्षण आगैं सूत्रमें तद्भावाव्ययं नित्यं ऐसैं कहसी । बहुरि ये द्रव्य एते हैं ऐसी संख्याकूं नाहीं छोडे हैं, तातैं अवस्थित कहे धर्मादिक छह द्रव्य हैं ऐसी संख्याकूं नाहीं उलंघै हैं । इहां भी सामान्यविशेपलक्षणरूप द्रव्यार्थिकनय लगावणी । बहुरि जिनकैं रूप विद्यमान नाहीं, ते अरूपी कहिये । इहां रूपका निपेधतैं ताके सहचारी जे रस गंध स्पर्श तिनका निपेध जानना तातैं ए द्रव्य अरूपी कहिये अमूर्तिक हैं ॥

इहां प्रश्न— जो, नित्य अरु अवस्थित इन शब्दनिका अर्थका विशेप न जान्या । तहां कहिये हैं- जो, द्रव्यविषैं

अनेक धर्म हैं सो द्रव्यपणाकरि सदा विद्यमान हैं, तातैं यह तौ नित्यशब्दका अर्थ है। बहुरि द्रव्यविषैं विशेष लक्षण है, ताकूं कबहू छोडै नाही। चेतनतैं अचेतन होय नाही, अमूर्तिकतैं मूर्तिक होय नाही, तातैं द्रव्यनिका संख्याकी व्यवस्था है, यह व्यवस्थितका अर्थ है। इस सूत्रतैं जे अन्यमती वस्तुकूं एकान्तकरि क्षणिकही माने हैं तथा सत्तामात्र एकही वस्तु माने हैं, तिनका निराकरण भया। बहुरि कोई अन्यमती कहै हैं, जो, द्रव्य सर्वगत होय सो अमूर्तिक कहिये, ताका निराकरण हैं। जातैं मूर्तिकका लक्षण रूपादिक जामैं पाईये सो है। सो ऐसा मूर्तिकपणा जामैं न होय सो अमूर्तिक है, ऐसा जानना ॥

आगें नित्यावस्थितान्यरूपाणि यह सूत्र सामान्यकरि कह्या, तामैं पुद्गलकै भी अरूपीपणाकी प्राप्ति आवै है, ताका निषेधके अर्थि विशेषसूत्र कहै हैं—

॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥

याका अर्थ — पुद्गल हैं ते रूपी हैं। रूपशब्दके अनेक अर्थ हैं। तथापि इहां रूपादिका आकाररूप मूर्तिका अर्थ है। सो रूप जाकै होय सो रूपी कहिये, ऐसैं अर्थतैं मूर्तिमान् रूपी भया। अथवा रूप गुणकूं कहिये, सो जामैं रूपगुण होय सो रूपी कहिये, ऐसैं रूपतैं अविनाभावी रस गंध स्पर्श भी गर्भित भये। बहुरि पुद्गल ऐसा बहुवचन है, सो, पुद्गलके भेद बहुत हैं, स्कंध परमाणु इत्यादि आगें कहेंगे; ताके जनावनेकूं है। जो सांख्यमती प्रकृतिकूं अरूपी एक माने है तैसैं मानिये तौ समस्तलोकमें मूर्तिक कार्य देखिये है, तिनका विरोध आवै ॥

आगें पूछै है कि, धर्मादिक द्रव्य हैं, ते पुद्गलकी ज्यों भिन्न अनेक हैं कि नाही? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं।

॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥

याका अर्थ— धर्म अधर्म आकाश ए एक एक द्रव्य हैं। इहां आङ् उपसर्ग है सो आभिविधि अर्थमें है। तातैं सूत्रमें धर्म अधर्म आकाश कहे हैं, सो आकाशतांई तीनूं द्रव्य ग्रहण करने। बहुरि एकशब्द है सो द्रव्यका विशेषण है, तातैं एकद्रव्य है ऐसा कहिये। इहां तर्क, जो, ऐसा है तौ द्रव्यशब्दकै बहुवचन अयुक्त है। ताका समाधान, जो, धर्म अधर्म आकाश ए तीनि हैं ताकी अपेक्षा बहुवचन है। एकशब्दकै अनेक अर्थकी प्रतीति उपजावनेकी सामर्थ्य है। इहां फेरि तर्क करै हैं, जो, एक एक ऐसा शब्द क्यों न कह्या? तातैं सूत्रमें अक्षर थोरे आवते अर द्रव्यका ग्रहण

अनर्थक होता । ताका समाधान, इहां द्रव्यकी अपेक्षा एकत्व कहना हैं, तातैं द्रव्यका ग्रहण है। क्षेत्रभावकी अपेक्षा असंख्यात अनंत भेद हैं, तातैं जीवपुद्गलकी ज्यों इन तीनूं द्रव्यनिकैं वहुपणा नाही है । ऐसा अर्थ सूत्रकारि प्रसिद्ध होय है । आगें अधिकाररूप किये जे धर्म अधर्म आकाश ए तीनूं द्रव्य, तिनका विशेष जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥

याका— अर्थ ए तीनूं द्रव्य क्रियासूं रहित है । वाह्याभ्यंतर इन दोऊ निमित्तके वशतैं द्रव्यके क्षेत्रतैं अन्य-क्षेत्रमें गमन करनेका कारण उपज्या जो अवस्थाविशेषरूप पर्याय, सो क्रिया है। इहां दोऊ निमित्त कहे । तहां अभ्यंतर तौ क्रियापरिणाम शक्तिकरि युक्त होय है, वाह्य परद्रव्यकी प्रेरणा तथा भिडना आदि होय ते दोऊ निमित्त हैं । सो निमित्त कहनेतैं द्रव्यका स्वभावका निषेध है । जो क्रियास्वभावही होय तौ निरंतर क्रियाही ठहरै । तातैं स्वभाव न कहना । वहुरि क्रियाकूं द्रव्यहीकी अवस्था कही । तातैं ऐसा जानना, जो, क्रिया गुणतैं जुदी नाही । वहुरि देशान्तरकी प्राप्तिकूं कारण कही सो यातैं गुणरूप न जाननीं, तिस परिस्पंदरूप क्रियातैं रहित होय ते निष्क्रिय कहिये ।

इहां तर्क, जो धर्मादिक द्रव्य क्रियारहित हैं, इनकै उत्पाद न चाहिये, जातैं परिस्पंदरूप क्रियापूर्वकही घटादिककैं उत्पाद देखिये है, वहुरि उत्पाद न होय, तव नाश भी न होय, तव सर्व द्रव्यनिकैं उत्पाद व्यय ध्रौव्य इन तिनूं रूप-निकी कल्पना न ठहरै । ताका समाधान, जो, ऐसैं नाहीं हैं । उत्पादादिक क्रियानिमित्त भये तिन सिवाय अन्यप्रकार भी होय है । तहां उत्पाद दोयप्रकार है स्वनिमित्त परनिमित्त । तहां अगुरुलघुगुणके परिणमनतैं उत्पाद होय, सो तौ स्वभावान्त कहिये । कैसैं हैं अगुरुलघुगुण ? परिणामकारि अनंत हैं । वहुरि षट्स्थानपतित हानिवृद्धिकारि रहित है । वहुरि आगमप्रमाणकारि मानैं हैं । वहुरि ऐसैंही व्यय हो है । वहुरि परनिमित्त उत्पादव्यय है । सो गऊ घोडा प्रति-दिनकूं गतिस्थितिअवगाहकूं ए द्रव्यनिमित्त हैं । अर शिक्षणविषैं तिन गति आदिका भेद हैं । तातैं तिनके हेतुके भी भिन्नपणा मानिये । ऐसा परनिमित्त उत्पाद व्यय मानिये हैं ॥

वहुरि इहां तर्क, जो, धर्म आदि द्रव्य क्रियारहित हैं, तो जीवपुद्गलकूं गति आदिके कारण नाहीं वर्णेंगे । जल आदि क्रियावान् हैं। तेही मत्स्य आदिकूं गति आदिके निमित्त देखिये हैं। ताका समाधान, जो, यहू दोष इहां

निमित्त है, ते बलाधान निमित्त हैं । जैसें नेत्र पुरुपके रूप
नाहीं है । ए धर्म आदि द्रव्य जीवपुद्‌गलकूं गति आदिके निमित्त है, ते बलाधान निमित्त हैं । जैसें नेत्र पुरुपके रूप
देखनेविर्षे निमित्त हैं । जो पुरुपका चित्त अन्यपदार्थोंमें लागि रह्या होय, तौ रूपकूं न देखें । जव पुरुपका चित्त तिस
रूप देखनेकी तरफ आवै तव नेत्र भी निमित्त होय हैं । तैसैं इहां भी है । जब जीवपुद्गल गमन करै तव धर्मद्रव्य
निमित्त है । जब बैठे तव अधर्म द्रव्य निमित्त है । जव अवगाहै तब आकाश निमित्त है । प्रेरकनिमित्त नाहीं है ।
बहुरि सूत्रमें चशब्द है, सो पहले सूत्रमें कहे तिन तीनिही द्रव्यके संबंधके अर्थि है । जीवपुद्‌गल क्रियावान हैं ॥

इहां कोई अन्यमती कहै है, जो, आतमा सर्वगत है, यातैं क्रियारहित है । क्रियाके कारण जे संयोग प्रयत्न गुण
तिनका समवायतैं परविर्षे क्रियाका कारण है । ताकूं कहिये, जो, द्रव्य परके क्रियाका कारण होय, सो आप भी
क्रियावानही होय है । जैसें पवन आप चलै है, सोही परकूं चलावै है । तैसैं आतमा भी क्रियाकी शक्तियुक्त है । जब
वीर्यांतरायज्ञानावरणकर्मका क्षय क्षयोपशम अंगोपांग विहायोगति नामकर्मका उदययुक्त होय, तब शक्ति प्रगट होय
गमनक्रियारूप प्रवर्तै है । ऐसैंही आतमाके हस्तादि चलावनेकी क्रियाकूं निमित्त संयोग प्रयत्नयुक्त होय है । निःक्रिय
आत्माके संयोग प्रयत्न ए दोय गुणके संबंधहीतैं हस्तादिकारि चलावनां बणै नाही । इहां दृष्टान्त, जैसैं दोऊ अंधे मिलै
तव देखना वणै नाही, तैसैं आत्माकी निःक्रियताके गुण भी निःक्रिय दोऊ निःक्रिय मिलै परविषैं क्रिया कैसैं करावै ?

इहां पूछै, जो, धर्मादिक द्रव्य क्रियारहित हैं, जे जीवपुद्‌गलकौं क्रियाके कारण कैसैं कहौ हौ ? ताका समाधान, जो,
धर्मादिक प्रेरकनिमित्त नाही कहैं है बलाधाननिमित्त मानै है । बहुरि आत्माकूं सर्वगत कह्या, सो सर्वथा सर्वगत भी
नाही है । संकोचविस्तारशक्तिकारि असर्वगत भी है। ऐसैं इत्यादि युक्तिकारि आत्मा कथंचित् क्रियावान् है । बहुरि पुद्‌गल
क्रियावान् प्रसिद्धही है । धर्म अधर्म आकाश ए क्रियारहित हैं । बहुरि आगें कहियेगा कालद्रव्य सो भी क्रियारहित है ॥

आगें, अजीवकाया ऐसैं सूत्रविर्षे पहले कह्या तहां कायशब्दकारि प्रदेशनिका अस्तित्वमात्र तौ जान्या । परंतु प्रदेश
एते हैं ऐसा न जान्या । सो प्रदेशनिकी संख्याके निश्चय करनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥ ८ ॥

याका अर्थ— धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य एकजीवद्रव्य इनकैं प्रत्येक असंख्यात प्रदेश हैं । असंख्यात गणना मानके तीनि
भेद हैं, जघन्य मध्यम उत्कृष्ट । तिनमें इहां मध्यका असंख्यात लेना । बहुरि जितने आकाशक्षेत्रकूं अविभागी पुद्‌गल-
परमाणु रोके, तितने आकाशकूं एक प्रदेश कहिये । तहां धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य एकजीवद्रव्य ए तीनि द्रव्य वरावरी

असंख्यातप्रदेशी हैं । तहां धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य ए दोऊ तौ क्रियारहित सर्वलोकाकाशमें व्यापि तिष्ठै हैं । वहुरि जीव है सो तिनकी वरावरी है । सो तौ संकोचविस्तारस्वभाव है। सो कर्मकरि रच्या शरीर छोटा तथा वडा पावै, तिसप्रमाण होय तिष्ठै है । वहुरि जव केवलसमुद्घातकरि लोकपूरण होय है तव मेरुकै नीचैं चित्राप्टथिवीका वज्रमयी पटलकै मध्य जीवका मध्यका आठ प्रदेश निश्चल तिष्ठै है । वहुरि अन्य प्रदेश ऊर्ध्व अधः तिर्यक् समस्तलोकमें व्यापै है॥

आगें पूछै है, आकाशके केते प्रदेश हैं ? ऐसैं पूछें सूत्र कहै हैं--

॥ आकाशस्यानन्ताः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— आकाशद्रव्यके अनंत प्रदेश हैं । जाका अंत न होय ताकूं अनंत कहिये । ऐसैं गणनामानकरि आकाशके अनंतप्रदेश हैं । इहां प्रश्न, जो, अनंतके प्रमाणकूं सर्वज्ञ जानै है, कि नाहीं ? जो जान्या है, तौ अनंत कैसें कहिये ? वहुरि न जान्या है, तौ सर्वज्ञ कैसें कहिये ? ताका समाधान, जो, सर्वज्ञका ज्ञान क्षायिक है सातिशय है, तातैं ताकूं जानकरि अनंत कह्या है । जाके ज्ञानमें तौ सान्तही है, परंतु गणना करि अनंत है । अथवा अनंत ऐसा गणनाकूं सर्वमतके माने हैं । कोई कहै लोक धातु अनंत है । कोई कहै हैं, दिशा काल आत्मा आकाश अनंत हैं । केई कहै है, प्रकृति पुरुपकै अनंतपणा है । तातैं ऐसा न कहिये, जो, अनंतपणा जाकूं न जानिये सो है । अरु जाकूं जानिये ताकूं अंतसहित कहिये ॥

इहां अन्यमती कहै, जो, आकाश सर्वगत है, तातैं निरंश है । ताकूं कहिये, यह अयुक्त है । तातैं ऐसा नियम नाहीं, जो सर्वगत होय सोही निरंश होय, परमाणु असर्वगत है सो भी निरंश होहै । वहुरि जैसैं वस्त्र वडा होय ताकूं गज आदिकरि मापिये तव एकही वस्त्र वहुत गजका कहिये, तव अंशसहित भी भया अरु निरंश भी भया । वहुरि तिसही वस्त्रविपैं अनेक जुदी जुदी जायगा जुदी जुदी वस्तु देखिये तव जुदा जुदा अंश प्रगट देखिये है; तैसैं आकाश भी सर्वगत है, तौ परमाणुद्रव्यकरि मापिये तव अनंत अंश होय तिनकूं अनंतप्रदेश कहिये । तव अनेक घट मंदिर ग्राम नगरादि जामैं वसैं हैं तहा घटका आकाश ग्रामका आकाश नगरका आकाश ऐसा देखिये है । तातैं एकही आकाश द्रव्यनयकरि एक है निरंश है, पर्यायनयकरि अंशसहित है ॥

इहां कहै, जो, ए तौ कल्पना है, कल्पित अंश है । ताकूं कहिये, जो, सर्वथा कल्पितही कहिये तौ अनंत वस्तुका संवंधी जुदा जुदा न होय, जहां घटका आकाश कहिये तहां सर्व वस्तुका आकाश तेताही ठहरै । सो यह वडा दोप आवै ।

बहुरि एक क्षेत्रमें गऊ आदि तिष्ठै पीछैं अन्यक्षेत्रमें जाय तब ऐसा कहिये है, जो, गऊ इहींतैं अन्यक्षेत्रमें गया, सो यह न वणै। जो आकाश सर्वथा एक निरंशही होय तौ, अन्यक्षेत्र कैसै कहिये ? कल्पनामात्रमें ऐसी अर्थक्रिया होय नाहीं कल्पित अग्नितैं पाक आदि होय नाहीं ऐसा जानना ॥

आगें कहै हैं, अमूर्तिक द्रव्यनिका प्रदेशनिका परिमाण कह्या, अब मूर्तिकद्रव्यका प्रदेशनिका परिमाण जान्या चाहिये, ताके जनावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥

याका अर्थ— पुद्गल द्रव्य हैं तिनके प्रदेश संख्यात भी हैं, असंख्यात भी हैं, चकारतैं अनंत भी हैं। इहां चशब्दतैं पहले सूत्रमें अनंतशब्द है सो लेणां। तहां केई पुद्गलद्रव्य तौ दोय आदि अणुके स्कंध हैं, ते तौ संख्यातप्रदेशी हैं। केई पुद्गल असंख्यातप्रदेशी स्कंध हैं। केई स्कंध अनंतप्रदेशी हैं। अनंतानंतके स्कंध अनंत सामान्य कहनेमें गर्भित हैं। जातैं अनंतके तीनि भेदकरि कहे हैं। परीतानंत, युक्तानंत, अनंतानंत ऐसैं। इहां प्रश्न, जो, लोक तौ असंख्यातप्रदेशी है, सो अनंत प्रदेशका स्कंध तामैं कैसैं रहै ? ताका समाधान, जो, यह दोष इहां नाहीं। सूक्ष्मपरिणमन परमाणुनिका तथा अवगाहन शक्तिके योगतैं एक एक आकाशप्रदेशविषैं अनंतानंत परमाणु तिष्ठे हैं। आकाशके प्रदेशनिविषैं ऐसी अवगाहनशक्ति है। तथा परमाणुनिमें ऐसीही सूक्ष्मपरिमाण शक्ति है। तातैं यामैं विरोध नाहीं। अल्प आधारविषैं बहुतका अवस्थान देखिये है। जैसैं एक चंपाकी कलीविषैं तिष्ठते सुगंधपरमाणु सूक्ष्मपरिणामतैं संकुचे तिष्ठै हैं। बहुरि ते सुगंधपरमाणु फैलैं तब सर्व दिशामें व्यापक होय, तैसैं इहां भी जानना। सूक्ष्मपरिणामतैं एक प्रदेशमें तिष्ठैं परमाणु बादर परिणमें तब बहुतप्रदेशमें तिष्ठैं ॥

आगें, पहले सूत्रमें ऐसा कह्या, जो, पुद्गलनिके बहुप्रदेश हैं। तहां सामान्यपुद्गल कहनेमें परमाणुको भी बहुप्रदेशका प्रसंग आवै है। ताके निषेधके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ नाणोः ॥ ११ ॥

याका अर्थ– परमाणुके बहु प्रदेश नाहीं हैं। इहां अणुके प्रदेश नाहीं हैं। ऐसैं वाक्यशेष लेना। इहां पूछैं, जो, परामाणुकैं प्रदेशमात्र काहेतैं नाहीं। ताका उत्तर, जो, परमाणु एकप्रदेशमात्र हैं। जैसैं आकाशके एकप्रदेशके भेदका अभाव है, तातैं अप्रदेशपणां

कहिये, तैसैं परमाणुके प्रदेशमात्रपणातैं प्रदेशके भेदका अभाव जानना। जातैं परमाणुतैं अन्य छोटा परमाणु नाहीं। यातैं छोटा और होय तौ वह प्रदेशका भेद करै। इहां कोई कहै, परमाणु अप्रदेश कहिये है, तातैं याकै एकप्रदेश भी नाहीं। ताकूं कहिये, एकप्रदेश भी न होय तौ द्रव्य भी न ठहरै। तातैं द्रव्य मानिये तौ एकप्रदेश भी मानना योग्य है। विनाप्रदेश अवस्तु होय है। इहांताई अजीव तथा जीव ये पांच अस्तिकाय कहे तिनके प्रधानपणांकरि द्रव्यत्व नित्यत्व अवस्थिततत्व अरूपत्व एकद्रव्यत्व निःक्रियत्व स्वभाव कहे। गौणभावकरि पर्यायत्व अनित्यत्व अनवस्थिततत्व सरूपत्व अनेकद्रव्यत्व स्वभाव भी है। ते विना कहे भी गम्यमान जानने। ऐसैं द्रव्यार्थिक पर्य्यार्थिक नयकरि सिद्ध होय है॥

आगैं कहे जे धर्मादिकद्रव्य, तिनकी प्रदेशनिका परिमाण तौ कह्या। अव तिनका आधार जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥

याका अर्थ— ए कहे जे धर्म आदि द्रव्य तिनका लोकाकाशविषैं अवगाह है वाहिर नाहीं है। इहां कोई पूछै है, जो, धर्म आदि द्रव्यनिका लोकाकाश आधार है, तौ आकशका कहा आधार है? ताका उत्तर, जो, आकाश आपहीके आधार है याका अन्य आधार नाहीं। फेरि पूछै है, जो, आकाश आपहीकै आधार है तौ धर्मादिक भी आपहीकै आधार क्यों न कहौ? जो धर्मादिककै अन्य आधार है तौ आकाशकै भी अन्य आधार कल्पा चाहिये। तव अनवस्थादोप आवेगा। ताकूं कहिये है, यह दोप नाहीं। जातैं आकाश सर्वतैं वडा है, यातैं अधिक परिमाण और नाहीं, जाकै आधार आकाश कहिये। सर्वतरफ आकाश अनंत है। तातैं धर्मादिकका आधार आकाश कहिये है। सो यह व्यवहारनयकरि जानना। वहुरि एवंभूतनयकी अपेक्षा सर्वही द्रव्य अपने अपने आधार कहिये। जैसैं कोई काहूकूं पूछै, तू कहां वैठा है? तव वह कहै, मैं मेरा आत्माविषैं वैठा हूं, ऐसा एवंभूतनयका वचन है। तातैं धर्म आदि द्रव्य लोकाकाशतैं वाहिर नाहीं हैं। एतावन्मात्र इहां आधारआधेयभाव कहनेका फल है॥

इहां कोई तर्क करै है, जो, पहली पीछैं होय तिनकै आधार आधेय भाव देखिये है। जैसैं कूंडाविषैं ठौर है। सो ऐसैं आकाश पहली होय पीछै तामें धर्म आदिक द्रव्य धरे होय तव आधाराधेयभाव कहिये। सो ऐसैं है नाहीं। तातैं व्यवहारनयकरि भी आधारआधेयभाव कहना युक्त नाहीं। ताका समाधान, यह दोप नाहीं। एककाल होय तिनकैं भी आधाराधेयभाव देखिये है। जैसैं घटविषैं रूप आदिक हैं, शरीरविषैं हस्त आदि हैं, ऐसैं लोकविषैं कहिये है। वहुरि पूछै है, लोक कहा? जामैं धर्म आदिका अवगाह कहिये। तहां कहिये, धर्म आदि द्रव्य जामैं देखिए सो लोक है।

ऐसैं लोकशब्दकै अधिकरणसाधन सन् प्रत्यय है । ऐसैं आकाशके दोय भेद भये हैं, लोकाकाश अलोकाकाश । सो लोक जामैं है सो तौ लोकाकाश है यातैं बाहिर अलोकाकाश । सो सर्वतरफ अनंत है । ऐसैं लोकालोकका विभाग धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकायके सद्भाव अभावतैं जानना । जो धर्मास्तिकाय न होय तौ पुद्गलजीवनिके गमनके नियमके कारणके अभावतैं लोकालोकका विभाग न होय । तथा अधर्मास्तिकाय न होय तौ स्थितिके आश्रयके निमित्तके अभावतैं स्थितिका अभाव होय तब भी लोकालोकविभागका अभाव होय । तातैं तिन दोऊके सद्भावतैंही लोक अलोककी विभागसिद्धि होय है ॥

आगैं, लोकाकाशविषैं जिनका अवगाह है, तिनके अवस्थानविषैं विशेष है, ताके जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥

याका अर्थ— धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य इन दोऊनिका अवगाह समस्तलोकाकाशमें है । इहां कृत्स्न ऐसा वचन है सो सर्वलोकविषैं व्याप्तिके दिखावनेकूं है । जैसैं घरकेविषैं घट तिष्ठै, तैसैं ए धर्म अधर्म द्रव्य लोकमें नाहीं तिष्ठै हैं । जैसैं तिलनिविषैं तेल तिष्ठै तैसैं व्यापक हैं । बहुरि इनकै अवगाहनकी सामर्थ्यके योगतैं परस्पर प्रदेशके प्रवेशतैं व्याघात नाहीं है । जातैं ये अमूर्तिक हैं । मूर्तिक भी एकपात्रविषैं जल भस्म धूलि घालिये तिनकैं परस्पर व्याघात नाहीं हो है, तौ अमूर्तिककै कैसैं होय? बहुरि अनादितैं संबंध है, तातैं अविरोध है ॥

आगैं, मूर्तिक जे पुद्गलद्रव्य तिनकैं एकप्रदेशतैं लगाय संख्यात असंख्यात अनंत प्रदेशताईके स्कंध हैं, तिनके अवगाहके विशेष जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥

याका अर्थ— पुद्गलद्रव्यका अवगाह आकाशके लोकके एक प्रदेशतैं लगाय असंख्यात प्रदेशतांई एक दोय आदि भाज्यरूप प्रदेशनिविषैं है ॥ इहां एकप्रदेशादिषु इसका समास अवयवकरि किया है, तातैं समुदाय जानना । तहां एकप्रदेश भी लेणा । सोही कहिये है । एक आकाशके प्रदेशविषैं एक परमाणुका भी अवगाह है । बहुरि दोय आदि संख्यात असंख्यात अनंतके स्कंध सूक्ष्म परणाये तिनका भी है । बहुरि दोय परमाणु खुली तथा बंधीका दोय प्रदेशमें अवगाह है । बहुरि तीनि आदि संख्यात असंख्यात अनंतके स्कंधनिका भी है । बहुरि तीनि प्रदेशनिविषैं तीनि परमाणु

खुली तथा बंधीका अवगाह है। बहुरि च्यारि आदि संख्यात असंख्यात अनंतके स्कंधनिका भी है। ऐसैं च्यारि आदि संख्यात लोकाकाशके प्रदेश हैं, तहांताईं भाज्यरूप पुद्गलनिका अवगाह जानना ॥

इहां प्रश्न, जो अमूर्तिक द्रव्यनिका तौ एकक्षेत्रविषैं अवगाह अविरोधरूप होय बहुरि मूर्तिकद्रव्यकैं कैसैं अविरोधरूप होय? ताका समाधान, इन मूर्तिकद्रव्यनिकैं भी अवगाहनशक्ति है। तथा सूक्ष्म परिणमन ऐसा होय है, तातैं विरोध नाहीं। जैसैं एक घरमें अनेक दीपकनिका प्रकाश समावै तैसैं जाननां तथा आगमप्रमाणकरि जानना। इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ— यह लोकाकाश है, सो सूक्ष्म बादर जे अनंतानंत अनेक प्रकारके पुद्गलद्रव्य, तिनकरि सर्वप्रदेश-निविषैं जैसैं गाढैं खूंदि खूंदि भरै तैसैं संचयरूप भरे है। ऐसाही द्रव्यस्वभाव है सो स्वभावविषैं तर्क नाहीं ॥ बहुरि इहां कपासपिंडका दृष्टांत है ॥

आगैं जीवनिका कैसैं अवगाह है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ असंख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥

याका अर्थ— लोकका असंख्यातवां भाग आदिविषैं जीवनिका अवगाह है। इहां लोक शब्दकी तौ अनुवृत्ति है। तिस लोकका असंख्यात भाग कीजे, तामें एकभागकूं असंख्यातवां भाग कहिये। तिसकूं आदि लेकर लोकपर्यंत जानना। सोही कहिये हैं, एक असंख्यातवां भागविषैं एकजीव तिष्ठै ऐसैं दोय भाग, तीनि भाग च्यारि भाग इत्यादि असंख्यात भागविषैं सर्वलोकपर्यंत एकजीवका अवगाह जाननां। संख्यातके संख्यात भेद हैं। तातैं असंख्यातवां भागके भी प्रदेश असंख्यातही जानने। बहुरि नानाजीवनिका सर्वलोकही है। इहां प्रश्न, जो, एक असंख्यातवां भागमें एक जीव तिष्ठै तौ द्रव्य प्रमाणकरि जीवराशि अनंतानंत हैं, ते शरीरसहित कैसैं लोकविषैं तिष्ठै? ताका समाधान, जो, सूक्ष्म बादरके भेदतैं जीवनिका अवस्थान जाननां ॥ तहां बादर तौ परस्पर सप्रतीघातशरीर हैं, जिनका शरीर परस्पर रुकै हैं। बहुरि सूक्ष्म हैं ते शरीरसहित हैं तौ भी सूक्ष्मभावतैं एकनिगोदजीवकरि अवगाहने योग्य जो क्षेत्र ताविषैं साधारण शरीरसहित अनंतानंतजीव वसैं हैं, ते परस्पर भी अरु बादरजीवनितैं भी व्याघातरूप न होय हैं, तातैं अवगाहविषैं विरोध नाहीं।

आगैं प्रश्न, जो, एकजीव लोकाकाशके प्रदेशनिकै तुल्य असंख्यातप्रदेशी है। सो सर्वलोकमें व्याप्ति चाहिये, लोका-काशके असंख्यातवां भाग आदिविषैं अवगाह कैसैं कह्या? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ प्रदेशसंहारविसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥ १६ ॥

याका अर्थ--- जीवके प्रदेश लोकबराबरि हैं । तथापि संकोचविस्तारकरि दीपकी ज्यौं जैसा आधार होय तेते क्षेत्रमें तिष्ठै । आत्मा अमूर्तिक है, तौ भी कर्मके अनादिबंध एकतारूप है । तातैं कथंचित् मूर्तिक भी कहिये है । बहुरि कार्मणशरीरकरि सहित हैं । ताके वशतैं बडे छोटे शरीरमें वसैं है । ताके वशतैं प्रदेशनिका संकोचविस्तारस्वभाव है, सो तिस शरीरप्रमाण होतें संतें लोकके असंख्यातवां भाग आदिविषैं वृत्ति वर्णै है । जैसैं दीपक चौडैं धरैं तब तौ प्रकाश अमर्याद फैलै । बहुरि करवा पतोली घर आदिविषैं धरैं तब आवरणके वशतैं तेतेही परिमाण प्रकाश होय । इहां संकोचनेका सूके चर्मका भी दृष्टान्त है । फैलनेका जलविषैं तेलका दृष्टांत है । इहां प्रश्न, जो, ऐसे संकुचै विस्तारै है तो अनित्य ठहरै ? ताका उत्तर, जो, पर्यायनयकरि अस्तित्व मानियेही है ॥

बहुरि जो, प्रश्न, संकुचेतैं प्रदेश घट जाते होयेंगे । विस्तारितैं प्रदेश बधि जाते होयेंगे । ताका समाधान, जो, आत्मा अमूर्तिकस्वभाव है, ताकूं छोडै नाहीं है, प्रदेश संख्यातलोकप्रमाण हैं, सोही रहै हैं, स्याद्वादनयकरि सर्व अविरुद्ध सधै है । इहां कोई आशंका करै, जो, संकुचै विस्तरै हैं, तौ परमाणुबराबर भी कोई कालमें होता होयगा । सो ऐसा नाहीं हैं । शरीरप्रमाणही होय है । सूक्ष्मनिगोदजीवकी अवगाहना जघन्य अंगुलके असंख्यातवै भाग है । ताके असंख्यात-प्रदेश हैं । तिस प्रमाणतैं घाटि होय नाहीं है । जातैं संकुचना विस्तरना कर्महीके निमित्ततैं है । आगैं कोई कहै, जो, धर्मादिक द्रव्य परस्पर प्रदेशनिकरि मिल रहे हैं, तातैं तिनके आपसमें पलटकरि एकता होती होयगी । ताकूं कहिये, जो, एकता न होय है । परस्पर मिलि रहै हैं । तौ अपने अपने स्वभावकूं नाहीं छोडै हैं । इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ- ए छह द्रव्य परस्पर प्रवेश करता आपसमें अवकाश देते हैं, परस्पर मिलते संते भी अपने अपने स्वभावकूं नाहीं छोडै हैं ॥

इहां पूछै है, जो, ऐसैं है; इनके स्वभावभेद है तौ इनका जुदा जुदा स्वभावभेद कहो । ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ गतिस्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ॥ १७ ॥

याका अर्थ--- गति कहिये गमन स्थिति कहिये तिष्ठना ये दो उपकार जीव पुद्गल इन दोऊ द्रव्यनिकूं धर्मद्रव्य तथा अधर्मद्रव्यका है । तहां द्रव्यके एक क्षेत्रसे अन्यक्षेत्रमें गमन करना सो तौ गति है । बहुरि गमनकरि थंभि जाना

सो स्थिति है । ए दोऊ उपकार धर्म अधर्म द्रव्यके हैं । धर्मद्रव्यका तौ गति उपग्रह है । अधर्मद्रव्यका स्थिति उपग्रह है । इहां कोई पूछै है, जो, ऐसै है तो उपकारशब्दकै द्विवचन चाहिये है। ताकूं कहिये यह दोष नाहीं है । सामान्यकरि कह्या है, तातैं पाई संख्याकूं शब्द छोडै नाहीं, तातैं एकवचनही है । जैसैं साधुपुरुषका तप करना शास्त्र पढना कार्य है, इहां दोऊ कार्यकूं सामान्यकरि एक कहिये; तैसैं इहां भी जानना । इहां ऐसा अर्थ भया, गमन करते जे जीव पुद्गल द्रव्य तिनकूं गमनका उपकारविषैं साधारण आश्रय धर्मद्रव्य है, जैसैं मत्स्यकूं गमनविषैं जल है तैसैं । बहुरि तैसैंही तिष्ठता जो जीव पुद्गल द्रव्य तिनकूं स्थिति उपकारविषैं अधर्मद्रव्य साधारण आश्रय है, जैसैं घोडा आदिकूं तिष्ठतैं पृथिवी है तैसैं ॥

इहां कोई तर्क करै– जो, उपकार शब्द तौ कह्याही, सूत्रमें उपग्रहवचन निष्प्रयोजन है ॥ ताका समाधान, जो, इहां धर्मद्रव्यका उपकार गतिसहकारी अधर्मद्रव्यका स्थितिसहकारी ऐसा यथासंख्य है, सो उपग्रहवचन न कहिये तौ जीवनिकूं धर्मद्रव्य गतिसहकारी पुद्गलनिकूं अधर्मद्रव्य स्थितिसहकारी है । ऐसैं इहां भी यथासंख्यकी प्राप्ति आवै । तातैं ताके निषेधके अर्थि उपग्रहवचन है । तहां उपकार तौ सामान्यवचन भया । ताका विशेप उपग्रहशब्द भया । तब ऐसैं भी जानिये, जो, धर्म अधर्मकैं गति स्थिति करावनेका उपकार तौ नाहीं है, अर उपग्रहमात्र है । इहां उपग्रह अरु उपकार ए दोऊ शब्द कर्मसाधन हैं । तहां उपकार तौ सामान्यवचन है अर उपग्रह विशेषवचन है । तहां फेरि तर्क, जो, गति स्थिति उपकार धर्म अधर्म द्रव्यका कह्या, सो आकाश सर्वगत है, सो याहीका क्यों न कह्या? ताकूं कहिये, यह अयुक्त है । आकाशका सर्वद्रव्यनिकूं अवगाह देना उपकार है । जो एक आकाशहीके दोय उपकार कल्पिये तौ लोक-अलोकके विभागका अभाव होय ॥

बहुरि कहै, जो, भूमि, जल आदि पदार्थही गतिस्थिति आदि उपकारविषैं समर्थ हैं । धर्म अधर्म द्रव्यनितैं कहा प्रयोजन है? तहां कहिये हैं, भूमि जल आदिक तौ कोई कोई द्रव्यकूं एक एक प्रयोजनविषैं अनुक्रमतैं समर्थ हैं । बहुरि धर्म अधर्म द्रव्य है ते सर्व जीवपुद्गलकूं एककाल गति स्थिति साधारण आश्रय हैं । बहुरि एक कार्यकूं अनेक कारण साधै हैं, तहा दोप नाहीं । बहुरि तर्क, जो, धर्म अधर्म द्रव्य दोऊ समानबल हैं सो धर्मद्रव्य तौ गति करावै तिसही काल अधर्मद्रव्य गतिस्थिति करावै, तब विरोध भया, दोऊ एककाल होय नाहीं । ताका समाधान, जो, ए प्रेरकनिमित्त नाही, बलाधाननिमित्त हैं । जीवपुद्गल गमन स्थिति करै तौ निमित्त होय, न करै तौ नाहीं होय ॥

बहुरि तर्क, जो, धर्म अधर्म द्रव्यकी उपलब्धि नाहीं, कोऊके देखनेमे आये नाहीं, तातैं ए नाही हो हैं । ताका

समाधान, जो, ऐसैं नाहीं । ए परोक्ष हैं, सो सर्वही मतमें प्रत्यक्ष तथा परोक्ष पदार्थ मानिये है । प्रत्यक्ष न देखनेतैं इनका अभाव मानिये, तौ अन्यमतमें जे परोक्ष वस्तु मानिये हैं, तिनका भी अभाव ठहरैगा । बहुरि हमारे स्याद्वादीनिके मतमें सर्वज्ञ इनकूं प्रत्यक्ष भी देखै हैं, ऐसैं कह्या है, तातैं ए प्रत्यक्ष भी हैं, तिनके उपदेशतैं परोक्ष ज्ञान भी माने हैं । तातैं ये हेतु हम प्रति असिद्ध हैं ॥

आगैं पूछे हैं, जो, धर्म अधर्म द्रव्य अतीन्द्रिय हैं, तिनका उपकारके संबंधकरि अस्तित्व निश्चय कीजिये तैसैंही ताकै लगताही कह्या जो आकाशद्रव्य सोही अतीन्द्रिय है । ताके जाननेविषैं कहा उपकार है? ऐसैं पूछे उत्तरसूत्र कहैं है—

॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥

याका अर्थ— आकाशद्रव्यका सर्वद्रव्यनिकूं अवगाह देना उपकार है । इहां उपकारशब्दकी अनुवृत्ति लेणी । जीवपुद्गल आदि जे द्रव्य अवगाह करनेवाले हैं, तिनकूं अवकाश देना आकाशका उपकार है । इहां तर्क, जो, जीवपुद्गल क्रियावान हैं, ते अवगाह करनेवाले हैं, तिनकूं अवकाश देना युक्त है । बहुरि धर्मास्तिकाय आदिक तौ निष्क्रिय हैं, बहुरि नित्यसंबंधरूप हैं, तिनकौं कैसैं अवगाह दे है? ताका समाधान, जो, इहां उपचारतैं अवकाश देना प्रसिद्ध है, तैसैं आकाशकूं सर्वगत कहिये है, आकाश तौ नित्य निष्क्रिय है, कहूं जाय नाहीं तौ सर्वगत उपचारतैं कहिये है तैसैं इहां भी जानना । इहां तर्क, जो, आकाशका अवकाश देना स्वभाव है । तौ वज्र आदिकरि पाषाण आदिका तथा भींत आदिकरि गऊ आदिका व्याघात कहिये । रुकना नाहीं चाहिये बहुरि व्याघात देखियेही है । तातै आकाशकै अवकाश देना नाहीं ठहऱ्या । ताका समाधान, जो, यहु दोष इहां नाहीं है । वज्रलोष्टादिक स्थूल हैं तिनकै परस्पर व्याघात है । यातैं आकाशका अवकाश देना नाहीं बाध्या जाय है । तहां अवगाह करनेवालेहीकै व्याघात है, तेही परस्पर अवगाहन करै है, तातैं यह आकाशका दोष नाहीं । बहुरि जे सूक्ष्मपुद्गल हैं ते भी परस्पर अवकाशदान करै हैं ॥

बहुरि इहां प्रश्न, जो, ऐसैं है सूक्ष्मपुद्गल भी परस्पर अवकाश दे हैं, तौ अवकाश देना आकाशका असाधारण लक्षण न ठहऱ्या । ताका समाधान, जो, ऐसैं नाहीं है । सर्वपदार्थनिकूं साधारण युगपत् अवकाश देना आकाशका असाधारण लक्षण है, यातैं दोष नाहीं । बहुरि कहै है, जो, लोकाकाशविषैं अवगाह करनेवाले नाहीं, तातैं तहां अवकाशदान भी नाहीं । ताका समाधान, जो, द्रव्यका स्वभाव है, ताका त्याग द्रव्य करै नाहीं । इहां क्रियावान जीवपुद्गल

तौ आकाशकूं अवगाहे हैं, तिनकी अपेक्षा तौ अवकाशदान मुख्य है। बहुरि धर्म आदिक नित्यसंबधरूप निष्क्रिय द्रव्य हैं, तिनकी अपेक्षा गौण हैं ॥

बहुरि कोईवादी तौ आकाशकूं अनावरणमात्र अवस्तु कहै है, भीति आदि आवरण दूरि भये अवकाश अनावरण भया सो शून्य है, कछु वस्तु नाहीं। सो यह कहना अयुक्त है। आवरण दूरि भये अवशेष भी परोक्ष वस्तु होय है। बहुरि कोई आकाशका शब्द गुण कहै है। सो यह भी अयुक्त है। शब्द इंद्रियगोचर है, सो मूर्तिक पुद्गल-द्रव्यका पर्याय है, आकाश अमूर्तिक है, सो अमूर्तिकका गुण मूर्तिक होय नाहीं। बहुरि कोई अवगाहकूं प्रधानका परि-णाम कहै है। सो यहू अयुक्त है। जातैं प्रधानका विकार घट आदिकै अनित्यपणा असर्वगतपणा अमूर्तिकपणा है, तैसैं आकाशकै नाहीं, तातैं प्रधानका धर्म नाहीं। इत्यादि युक्तितै पूर्वोक्त अवगाहधर्मस्वरूप आकाश कह्या, सोही प्रमाणसिद्ध है ॥

आगै आकाशका तौ उपकार कह्या; अब ताके लगतेही कहे जे पुद्गलद्रव्य तिनका कहा उपकार है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ शरीरवाङ्मनःप्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥

याका अर्थ— शरीर वचन मन प्राण कहिये उच्छ्वास अपान कहिये निःश्वास ये पुद्गलद्रव्यके जीवकूं उपकार हैं। इहां तर्क, जो, पुद्गलका उपकारका प्रश्न किया था, तुम पुद्गलका लक्षण कह्या, शरीर आदि तौ पुद्गलमयी हैं सो यह सूत्र कहना अयुक्त है। ताका समाधान, जो, यह अयुक्त नाहीं हैं। पुद्गलका लक्षण तौ आगे कहेंगे। यह तौ जीवनिकै पुद्गलनिका उपकारही कहनेकै अर्थि सूत्र है। इहां उपकारहीका प्रकरण है। तहां शरीर तौ औदारिक आदि कर्मकी प्रकृतिरूप कहे ते तौ सूक्ष्म हैं, तातैं इन्द्रियगोचर प्रत्यक्ष नाहीं हैं। बहुरि तिनके उदयकरि भये ऐसैं नोकर्म-संचयरूप ते केई इन्द्रियगोचर प्रत्यक्ष है। केई इन्द्रियगोचर प्रत्यक्ष नाहीं। तिनके कारण कर्मप्रकृतिरूप शरीर है। सो भी इहां गिण लेने। सो शरीर पुद्गलमयी हैंही। ऐसैं जीवनिकैं ए होय हैं। तातैं पुद्गलके उपकार कहिये। इहां उपकार शब्दका अर्थ भला करणाही न लेना। विविध कार्यकूं निमित्त होय ताकूं उपकार कहिये है ॥

इहां कोई पूछै, कार्मणशरीर तौ आकाररहित है, सो पुद्गलमयी नाहीं। आकारवान् होय ताकूं पुद्गलमयी कहना युक्त है। ताकूं कहिये, यह युक्त नाहीं है। कार्मण भी पुद्गलमयीही है। तातैं ताका उदय है सो मूर्तिवानके निमि-त्ततैं पचिकरि उदय प्रवर्तै है। जैसैं तंदुल हैं, ते जल आदिके संबंधकरि पचै हैं, ते दोऊ पुद्गलमयी हैं। तैसैंही

कार्मण भी गुड कंटक मूर्तिकद्रव्यकरि पकै है । गुड बोर झडी आदिका दारू बणै, ताकूं पीवै तब चित्त विभ्रमरूप होय। तहां ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय कर्मका उदय आया जानिये । तथा गुड खाये सुख भया, तहां साता-वेदनीयका उदय आया कहिये । कांटा लागै तब दुःख होय, तब असाताका उदय आया कहिये । इत्यादि बाह्य मूर्तिक-द्रव्यके संबंधतैं पचिकरि उदय आवै है, तातैं कार्मण पुद्गलमयी है ॥

बहुरि वचन दोयप्रकार है । द्रव्यवचन भाववचन । तहां वीर्यान्तराय मतिश्रुतिज्ञानावरणकर्मके क्षयोपशम होतैं अंगोपांग नामा नामकर्मके उदयतैं आत्माकै बोलनेकी सामर्थ्य होय, सो तौ भाववचन ह। सो पुद्गलकर्मके निमित्ततैं भया तातैं पुद्गलका कहिये । बहुरि तिस बोलनेकी सामर्थ्यसहित आत्माकरि कंठ तालुवा जीभ आदि स्थाननिकरि प्रेरे जे पुद्गल, ते वचनरूप परिणये ते पुद्गलही हैं । ते श्रोत्र इन्द्रियके विषय हैं, और इन्द्रियके ग्रहणयोग्य नाहीं हैं । जैसैं घ्राण इंद्रियका विषय गंधद्रव्य है । तिस घ्राणके रसादिक ग्रहणयोग्य नाहीं हैं तैसैं । बहुरि कोई अन्यमती कहै है, वचन मूर्तिक हैं । सो अयुक्त हैं । इह वचन मूर्तिक जे इन्द्रिय ताके तौ ग्रहणमें आवै है । बहुरि मूर्तिककरि रुकि जाय है । बहुरि मूर्तिककरि बिगडि जाय है। बहुरि मूर्तिकके धकेतैं तिरस्कार होय है । अन्यदिशातैं अन्यादिशाकूं चल्या जाय है । तातैं अमूर्तिक नाहीं-मूर्तिकही है । बहुरि मन दोयप्रकार है । द्रव्यमन भावमन । तहां ज्ञानावरण वीर्यांतराय क्षयोपशमतैं पाया जो गुणदोषविचारस्मरणकी शक्तिरूप लब्धि तथा उपयोग सो तौ भावमन है, सो तौ पुद्गलकर्मके क्षयोपशमतैं भया, तातैं पुद्गलका कहिये । बहुरि तिस भावमनकरि सहित आत्माकै अंगोपांगनामकर्मके उदयतैं तिनि गुणदोषविचारस्मरणके उपकारी जे मनपणाकरि परिणये पुद्गल ते पुद्गलमयी हैही ॥

इहां कोई अन्यमती कहै है, जो, मन तौ न्यारा द्रव्य है, रूपादिपरिणामरहित है, अणुमात्र है, ताकूं पुद्गलमयी कहना अयुक्त है । ताकूं कहिये ए कहना युक्त है । ताकूं पूछिये, तेने मन न्यारा द्रव्य कह्या सो इन्द्रियकरि तथा आत्माकरि संबंधरूप है, कि असंबंधरूप है? जो असंबंधरूप है, तौ आत्माका उपकारी कैसैं होय? तथा इन्द्रियनिका मंत्रीपणां कैसैं करै? बहुरि संबंध हैं तौ यह अणुमात्र बताया सो आत्माके तथा इन्द्रियके एकप्रदेशमें रहता, अन्यप्रदेश-निविषैं उपकार नाहीं करै। बहुरि कहै, जो, आत्माके अदृष्टगुणके वशतैं याका आलातचक्रकी ज्यों सर्वप्रदेशनिमैं परिभ्रमण है । ताकूं कहिये, जो, आत्माका अदृष्टगुण तौ आत्माकी ज्यौं अमूर्तिककी है, क्रियारहित है । सो ऐसा होतैं अन्य-वस्तुविषैं क्रिया करावनेकी सामर्थ्यरहित है। जो आप क्रियावान् स्पर्शवान् पवन है सो अन्य वनस्पति आदिकौ चलाव-नेका कारण देखिये है । अदृष्टगुण है सो पवनकी ज्यौं नाहीं । तातैं अन्यविषैं क्रियाका कारण नाहीं ॥

बहुरि वीर्यान्तराय ज्ञानावरणकर्मका क्षयोपशम अंगोपांग नामा नामकर्मके उदयकी है अपेक्षा जाकै ऐसा जो आत्मा ताकारि ऊंचा लिया जो कोठेतैं पवन सो उच्छ्वास, ताकूं तौ प्राण कहिये। बहुरि तिसही आत्माकारि बाहिरका पवन अंतर किया सो निःश्वास है, ताकूं अपान कहिये। ते दोऊही आत्माके उपकारी हैं, जीवितव्यके कारण हैं, ते भी पुद्गलमयी हैं। ऐसैं मन प्राण अपान ए मूर्तिक हैं। जातैं इनका मूर्तिकद्रव्यकारि प्रतिघात आदि देखिये है। तहां भयके कारण जे अशनिपात आदि शब्द तिनकारि मनका प्रतिघात देखिये है बहुरि मदिरापान आदिकारि चित्तभ्रम होनेतैं अभिभव कहिये तिरस्कार कहूंका कहूं चला जाना देखिये है। बहुरि हस्ततैं मुख दाबनेतैं प्राण अपान कहिये उच्छ्वास निःश्वासका प्रतिघात कहिये रुकना देखिये है। बहुरि श्लेष्मकफकारि अभिभव तिरस्कार देखिये है। जो ए अमूर्तिक होय तौ मूर्तिककारि नाही रुकै। बहुरि प्राण अपान आदि क्रिया हैं, तिनतैं आत्माका अस्तित्व जान्या जाय है। जैसैं कलकी पूतलीकी कलह लावनावाला पुरुष परोक्ष छिप्या कल फेरै, तब पूतली चेष्टा करै। तब जानिये याकी कल फेरनेवाला कोई पुरुष परोक्ष है। ऐसैं शरीरकी श्वासोच्छ्वास आदि चेष्टा आत्माका अस्तित्व जनावै है॥

आगैं जैसैं ए शरीर वचन प्राणापान गमन बोलना विचारना उच्छ्वास लेना इन उपकारनिविषैं हैं; तैसैं अन्य भी कोई उपकार है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च ॥ २० ॥

याका अर्थ— सुख दुःख जीवना मरना ए भी उपकार पुद्गलके जीवनिकूं हैं। साता असाता वेदनीयकर्मका उदय अंतरंगकारण होतैं अर बाह्य द्रव्य क्षेत्र काल भावके परिपाकके निमित्ततैं उपज्या जो आत्माकै प्रीतिरूप तथा क्लेशरूप परिणाम सो सुखदुःख है। बहुरि भवधारणकूं कारण जो आयुनामा कर्म ताके उदयतैं भवविषैं स्थितिरूप रहता जो जीव ताके पूर्वै कहे जे उच्छ्वासनिःश्वासरूप क्रियाविशेष ताका विच्छेद न होना सो जीवित कहिये। बहुरि तिस जीवितव्यका विच्छेद होना सो मरण कहिये। ए च्यारि जीवनिके पुद्गलके किये उपकार हैं। जातैं ए मूर्तिकद्रव्यके निकट होतैं होय हैं। तातैं पुद्गलहीके कहिये॥

इहां कोई कहै, उपकारका तौ अधिकार चल्या आवै है। इस सूत्रमें उपग्रहवचन निष्प्रयोजन है। ताकूं कहिये, निष्प्रयोजन नाहीं है। इहां पुद्गलकूं पुद्गलका उपकार भी दिखावना है, ताके अर्थि उपग्रहवचन है। जैसैं कासी भस्मतैं मांजै तव उज्ज्वल होय हैं, तथा जलमें कतक कहिये निर्मली नांखै तब निर्मल होय, तातैं लोहपरि जल क्षेपै

तब शीतल होय इत्यादि पुद्गलकूं पुद्गल उपकार जानना। अथवा इस द्रव्यकर्मकूं द्रव्यकर्मका उपकार है, अर सुख
आदि जीवके भी परिणाम हैं ऐसा भी सूचै है। बहुरि इहां सूत्रमें च शब्द है सो जैसें शरीरादिक पुद्गलके जीवकूं
उपकार है। तैसें नेत्र आदि इंद्रिय भी उपकार है, तिनका समुच्चयके अर्थि है। जो आत्माकूं एकांतकरि नित्यही कहै
हैं तथा अनित्यही कहै हैं तिनके मतमें सुखादि आत्माकै नाहीं बणै हैं, स्याद्वादीकरि सिद्ध होय है॥

आगैं, पुद्गलका उपकार जीवनिकूं दिखाया, अजीवनिके जीव भी परस्पर उपकार करै हैं ताके दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं–

॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥ २१ ॥

याका अर्थ— जीवनिकै भी परस्पर उपकार है। इहां परस्पर ऐसा शब्द है, सो कर्मव्यतिहार तथा क्रियाव्यति-
हारमें वर्तै है। व्यतिहार कहिये वाका वह करै वाकूं वह करै, सो आपसमें जीवनिकै उपग्रह कहिये उपकार वर्तै है।
सो कहा सोही कहिये है। स्वामीकै अर चाकरकै परस्पर उपकार है। स्वामी तौ चाकरकूं धन आदि देनेकरि
उपकार करै है। चाकर स्वामीकै हितकी वार्ता कहिकरि अहितका निषेधकरि उपकार करै है। बहुरि आचार्यकै अरु
शिष्यकै परस्पर उपकार है। आचार्य तौ शिष्यकूं दोऊ लोकके फलका उपदेशकौ दिखावनेकरि तथा तिस उपदेशकथित
क्रियाका आचरण करावनेकरि उपकार करै हैं। बहुरि शिष्य आचार्यकौ अनुकूलप्रवृत्ति उपकार करै है॥

इहां कोई कहै है, उपकारका तौ अधिकार चल्याही आवै है। सूत्रमें उपग्रहवचन कौन अर्थि है? ताका समाधान,
पहलैं कहे जे सुख आदिक च्यारि तिनके दिखावनेकूं उपग्रहवचन फेरि कह्या है। सुख आदि भी परस्पर जीवनिकै
उपकार हैं। इहां परस्पर जीवनिकै उपकार देखनेतैं ऐसा भी अनुमानप्रमाणकरि सिद्ध होय है, जो, जीव नानाही
है एकही आत्मा नाही॥

आगैं, जो सत्तारूप वस्तु है सो उपकारसहित है, तहां कालद्रव्य भी सत्तास्वरूप है, तातैं ताका कहा उपकार है?
ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥

याका अर्थ— वर्तना परिणाम क्रिया परत्वापरत्व ए कालके उपकार हैं। इहां वृत्ति धातुकै णिच् प्रत्यय प्रयोजनके
हेतु कर्ताविषैं आवै है। ताके कर्मविषैं तथा भावविषैं युट् प्रत्ययतैं स्त्रीलिंगविषैं वर्तना ऐसा शब्द हो है। तहां धर्म

आदिक द्रव्य हैं, ते अपने पर्यायनिकी उत्पत्तिरूप वर्तें हैं, सो आपहीकरि वर्तें हैं। सो तिस वर्तनाकूं बाह्यनिमित्त चाहिये। जातैं बाह्य उपकार निमित्त विना वर्तना होय नाहीं। तहां तिस वर्तनाका समय है सो कालका चिह्न है। तातैं तिस द्रव्यनिकै प्रवर्त्तावनेहारा कालद्रव्य है। तातैं तिस समयस्वरूप वर्तनाकूं कालका वर्तना कहिये। याकरि कालका निश्चय कीजिये है। इहां णिच् प्रत्ययका यह अर्थ जो वर्तावै सो काल है। इहां वर्तें तौ सर्वद्रव्यनिके पर्याय हैं ताका हेतु कर्त्ता काल है॥

इहां कोई कहै है, जो, ऐसा है तौ कालकै क्रियावान्‌पणा आया। जैसैं शिष्य पढै है उपाध्याय पढावै है तब दोऊ क्रिया हो है। ताकूं कहिये, इहां दोष नाहीं है। निमित्तमात्रके विषैं भी हेतु कर्त्ताका व्यपदेश है। जैसैं शीतकालमें अग्नितैं तपते शिष्य पढै है। तहां ऐसैं भी कहिये है, जो, कारी वाकी अग्नि पढावै है। तैसैं इहां कालकै हेतु कर्त्ता-पणा है। बहुरि पूछै है ऐसे कालके समयका निश्चय कैसैं कीजिये? तहां कहिये है, समय आदि क्रियाविशेष तथा समय आदिकरि कीजिये जे पाक आदि कार्य तिनकूं समय तथा पाक इत्यादिक नाम प्रसिद्ध हैं। तिनकूं समयकाल तथा भातका पाककाल ऐसा आरोपण कीजिये हैं। भात अनुक्रमतैं पच्या है ताका पचनेका क्रम कालका सूक्ष्म अंशका अनुमानतैं निश्चय भया है। ताकूं काल ऐसा नाम कहिये है। सो यह व्यवहारकाल हैं। ताका नामकूं निमित्त जो निश्चयकाल ताका अस्तित्व जनावै है। जातैं गौण होय सो मुख्यविना होय नाहीं॥

इहां भावार्थ ऐसा, जो, धर्म आदि द्रव्यनिके पर्याय समय समय पलटैं हैं। सो इस पलटानिकूं समय है सोही निमित्तमात्र है। तिस समयहीकूं कालकी वर्तना कहिये है। यह वर्तनाही कालाणुद्रव्यका अस्तित्व जनावै है। बहुरि इस वर्तनाकूं जेती वार लागी ताका नाम काल कहिये। सो यह व्यवहारकालसंज्ञा है, सो तिस निश्चयकालकी अपेक्षा-हीतैं कहिये है। ऐसैं यह वर्तना द्रव्यनिकूं कालका उपकार है। बहुरि द्रव्यका पर्यायकूं परिणाम कहिये। कैसा है पर्याय? पहली अवस्थाकूं छोडि दूसरी अवस्थारूप भया हैं। बहुरि क्षेत्रसूं क्षेत्रांतरविषैं चलनरूप नाहीं है। तहां जीवकै तौ क्रोधआदि परिणाम हैं। बहुरि पुद्‌गलके वर्णआदि परिणाम हैं। धर्म अधर्म आकाशके अगुरुलघुगुणकी हानि-वृद्धिरूप होना परिणाम है। बहुरि क्रिया क्षेत्रतैं अन्य क्षेत्रविषैं चलनेरूप है। सो दोयप्रकार है, प्रायोगिकी वैस्रसिकी तहां प्रायोगिकी तौ अन्यके प्रयोगतैं होय है। जैसैं बलध आदिक प्रयोगतैं गाडा आदि चालै। बहुरि वैस्रासिकी विना-निमित्त होय है। जैसैं मेघ आदिके बादल स्वयमेव चालै। बहुरि परत्व अपरत्व दोयप्रकार है, क्षेत्रकृत कालकृत। सो इहा कालके उपकारका प्रकरण है। तातैं कालकृत लेणैं। बहुतकाल लगै ताकूं तौ परत्व कहिये। अलपकालका होय ताकूं अपरत्व कहिये। ऐसैं ए वर्तना आदि कालके उपकार हैं, सो कालके अस्तित्वकूं भी जनावैं हैं॥

इहां तर्क जो, वर्त्तनाहीके भेद परिणाम आदि हैं। तातैं एक वर्तनाही कहना था। तिनका जुदा ग्रहण अनर्थक है। ताका समाधान, जो अनर्थक नाहीं है। इहां काल दोयप्रकारके सूचनेके अर्थि विस्तार कह्या है। काल दोय प्रकार है, । निश्चयकाल, व्यवहारकाल। तहां निश्चयकाल तौ वर्त्तनालक्षण है। व्यवहारकाल परिणामादिलक्षण है। यह व्यवहारकाल अन्यपदार्थकरिही तौ जान्या जाय हैं। सूर्यादिकके उदयअस्ततैं दिन आदिक जानिये है। बहुरि अन्यके जनावनेकूं कारण है। यातैं निश्चयकाल जान्या जाय है। ऐसा क्रियाविशेषकूं काल ऐसा नाम व्यवहारकाल कहिये है। सो तीन प्रकारका है, भूत वर्तमान अनागत ऐसैं। तहां परमार्थकाल जो निश्चयकाल एक एक आकाशके प्रदेशविषैं तिष्ठते कालाणु तिनकूं काल कहना, सो तौ मुख्य है। अर भूत आदि नाम कहिये सो गौण है। व्यवहारकालविषैं भूत आदि नाम है सो मुख्य है। अर काल कहना गौण है। जातैं यह क्रियावान जो अन्यद्रव्य ताकी अपेक्षातैं काल नाम पाया है तथा निश्चयकालकरि किया है। तातैं काल नाम है, ऐसैं जानना॥

इहां परिणामकी चर्चा वार्तिकमें विशेष है, तहांतैं जाननी। तहां कही है, जो द्रव्यके निजस्वभावकूं न छोडीकरि पर्याय पलटना सो परिणाम है। सो दोयप्रकार है, एक नैमित्तिक एक स्वाभाविक। तहां जीवकै तौ औपशमिक आदि पांच भावरूप हैं। पुद्गलके घटादि अनेकरूप हैं। धर्मद्रव्यादिकके अगुरुलघुगुणके हानिवृद्धिपर्यायरूप है। इहां अन्यमती कहै हैं, जो परिणाम तौ निर्बाध संभवै नाहीं। जातैं सत्‌रूप कहिये तौ विद्यमानके पलटना नाहीं। असत् कहिये तौ अभावही आया। ताकूं कहिये, स्याद्वादपक्षसूं परिणामकी सिद्धि है। द्रव्यकी अपेक्षा सत् है। पर्यायकी अपेक्षा असत् है। जैसैं मृत्तिका द्रव्य हैं, पिंड घट आदि पर्याय हैं। तहां पिंडका घट भया तामैं द्रव्यकी अपेक्षा पिंडमें माटी है, पर्यायापेक्षया पिंडही कहिये। बहुरि पिंडतैं घट भया तब द्रव्यापेक्षया घटमें माटीका पिंड कहिये, पर्यायापेक्षया घटही है, पिंड नाहीं हैं इत्यादि दृष्टांत प्रसिद्ध हैं।

बहुरि पूछै, जो द्रव्यतैं परिणाम अन्य हैं कि अनन्य हैं? जो अन्य हैं, तौ द्रव्यमें नाहीं। अनन्य है तौ द्रव्यही हैं, परिणाम नाहीं। इहां भी पूर्वोक्तही उत्तर है। बहुरि कहै, द्रव्यविषैं परिणाम तिष्ठै है, कि नाहीं? जो तिष्ठै है, तौ एक परिणाम एककालमें है सोही है, तामैं दूजा परिणाम नाहीं। बहुरि नाहीं तिष्ठै है, तौ अभाव आया। तहां भी सो ही उत्तर, जो, द्रव्य है सो त्रिकालस्वरूप है, सो क्रमतैं होतैं जे परिणाम तिनमैं एककाल एकही परिणाम है, सो पर्याय कहिये। जब द्रव्यदृष्टिकरि देखिये तब सर्वपरिणामनिकी शक्ति लिये द्रव्य कहिये, तिनकी शक्ति क्रमतैंही

होय है। सो शक्तिकी अपेक्षा सर्वपरिणाम द्रव्यमें तिष्ठै हैं, व्यक्तिकी अपेक्षा एककाल एक है, तामें दूजी नाहीं है। ऐसें द्रव्यमें तिष्ठै भी है, नाहीं भी तिष्ठै हैं। ऐसें स्याद्वाद जानना। इत्यादि अनेक विधिनिषेधकारि चरचा है। तहां स्याद्वादही निर्बाधसिद्ध होय, सर्वथा एकान्तपक्ष निर्बाध नाहीं॥

आगें पूछै है, धर्म अधर्म आकाश पुद्गल जीव काल इनका उपकार कहे। बहुरि लक्षण भी कह्या। बहुरि पुद्गलनिका सामान्यलक्षण तौ कह्या। अर विशेषलक्षण न कह्या। सो कहा है? ऐसें पूछें सूत्र कहै है—

॥ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— पुद्गल हैं ते स्पर्श रस गंध वर्ण इन च्यारि गुणनिकरि सहित है। तहां जाकूं स्पर्शिये अथवा जो स्पर्शना सो स्पर्श है, सो आठ प्रकार है। कोमल कठिण भारी हलका शीत उष्ण चीकणा रूखा ऐसें। बहुरि जाकूं स्वाद लीजिये अथवा जो स्वादमात्र सो रस है। सो पंचप्रकार है। तीखा खाटा कठा मीठा कसायला ऐसें। बहुरि जाकूं सूंघिये अथवा सूंघना सो गंध है। सो दोयप्रकार है। सुगंध दुर्गंध ऐसें। बहुरि जाकूं वर्णरूप देखिये अथवा वर्णरूप होना सो वर्ण है। सो पांचप्रकार है। काला, नीला, पीला, धौला, लाल ऐसें। एते ए मूलभेद हैं इनके उत्तरभेद न्यारेन्यारेके कीजिये। तब स्थानकनिकी अपेक्षा तौ संख्यात असंख्यात हैं। बहुरि अविभागप्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा अनंत भी हैं। ए जिनके होय ते पुदगल हैं। इहां नित्ययोगविषैं वत्प्रत्यय है। जैसें वड हैं ते दूधसहित हैं, ताकूं 'क्षीरिणो न्यग्रोधा' ऐसा कहिये। ऐसें प्रत्यक्षका अर्थ है॥

इहांतक, जो, पूर्व सूत्रमें 'रूपिणः पुदगलाः' ऐसा कह्या है। तातैं रूपतैं अविनाभावी जो रसादिक तिनका ग्रहण तिसही सूत्रतैं होय है, यह सूत्र अनर्थक है। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है। तहां तौ 'नित्यावस्थितान्यरूपाणि' इस सूत्रमें धर्मादिक अरूपी कहे तहां पुदगलनिकै भी अरूपीपणाका प्रसंग आवै था, ताकै दूरि करनेकूं निषेधसूत्र कह्या था। बहुरि इहां यह सूत्र तिन पुदगलनिका विशेषस्वरूप जाननेकूं है। इहां अन्यमती कहै है। पृथ्वी आदिके परमाणु जातिभेदरूप हैं। तहां जलविषैं तौ गंधगुण नाहीं है। अग्निकेविषैं गंध रस दोऊ नाहीं हैं। पवनके विषैं रस गंध रूप ए तीनि गुण नाहीं हैं ऐसा कहै हैं, तिनका निषेध इस सूत्रमें भया। जातैं पृथ्वी जल अग्नि पवन ए च्यार्योंही पुद्गलद्रव्यके विकार हैं, पुद्गल हैं ते स्पर्श आदि च्यार्योंही गुणनिसहित हैं। पृथ्वीआदिविषैं च्यार्यों गुण अनुमान आगमप्रमाणकरि सिद्ध होय हैं। बहुरि पृथ्वीतैं जल होना, जलतैं पृथ्वी होना, पाषाण काष्ठतैं अग्नि होना,

अग्नितैं पृथ्वी होना इत्यादि जातिसंकर देखिये है। तातैं अन्यमतीका कहना प्रमाणसिद्ध नाहीं हैं ॥

आगैं तिस पुद्गलहीके विकारके विशेषके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ शब्दबंधसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायाऽऽतपोद्योतवन्तश्च ॥ २४ ॥

याका अर्थ- शब्द बंध सौक्ष्म्य स्थौल्य संस्थान भेद तम छाया आतप उद्योत इनसहित हैं ते भी पुद्गल हैं। तहां शब्द दोयप्रकार हैं, भाषास्वरूप अभाषास्वरूप। तहां भाषास्वरूप दोयप्रकार है, अक्षरसहित अक्षररहित। तहां अक्षरसहित तौ संस्कृत देशभाषारूप आर्य म्लेंच्छके व्यवहारकूं कारण, शास्त्रका प्रगट करणहारा है। बहुरि अक्षररहित द्वीन्द्रिय आदि जीवनिकैं पाईये है। सो सूक्ष्मज्ञानके स्वरूप कहनेकूं कारण है। सो यह भाषास्वरूप तौ सर्वही प्रायोगिक है, पुरुषके प्रयत्नतैं होय है। बहुरि अभाषास्वरूप शब्द है सो दोयप्रकार है, प्रायोगिक वैस्रसिक। तहां वैस्रसिक तौ बलाहक कहिये मेघका गर्जना आदिक है। बहुरि प्रायोगिक च्यारि प्रकार है। तत वितत घन सुषिर ऐसैं। तहां चर्मके तवनेतैं ढोल नगारे डफ आदिकारि उपजै सो तौ तत कहिये। बहुरि तांति तारकारि वीण सुघोष सहतार तमूरे आदिकारि उपजै सो वितत है। बहुरि ताल घंटाका हलावना आदिकारि होय सो घन है। बहुरि बंसुरी शंख आदितैं उपजै सो सुषिर है॥

बहुरि बन्ध दोय प्रकार हैं, वैस्रसिक प्रायोगिक। तहां पुरुषके प्रयत्नकी अपेक्षातैं रहित होय, सो वैस्रसिक है। सो रूक्ष सचिक्कण गुणके निमित्ततैं विजिली उल्का आदि अरु इंद्रधनुष आदि होय है। बहुरि पुरुषके प्रयत्नतैं होय सो प्रायोगिक है। सो अजीवसंबंधी तौ लाखकै अर काष्ठकै बंधन होय, सो है। बहुरि कर्मनोकर्मका बंधन होय है, सो जीव अजीव दोयसंबंधी है॥

बहुरि सूक्ष्म दोय प्रकार है, अन्त्य आपेक्षिक। तहां परमाणु तौ अन्त्यसूक्ष्म है। बहुरि बीलफलतैं सूक्ष्म आंवला तिनतैं सूक्ष्म बोर इत्यादि आपेक्षिक सूक्ष्म है॥

बहुरि स्थौल्य भी दोयप्रकार है, अन्त्य आपेक्षिक। तहां जगद्व्यापी महास्कंध तौ अंत्य स्थौल्य है। बहुरि बोरतैं बडा आंवला, आंवलातैं बडा बीलफल, बीलतैं बडा तालफल इत्यादि आपेक्षिक स्थौल्य है॥

संस्थान कहिये आकार, सो दोयप्रकार है इत्थंलक्षण अनित्थंलक्षण। तहां गोल तिकूंणा चौकूंणा लंबा इत्यादि तौ इत्थंलक्षण है, ऐसा है ऐसैं कह्या जाय है। बहुरि अनित्थंलक्षण है, सो अनेकप्रकार है। सो बादलनिके आकार आदि है। सो कैसैं हैं, ऐसैं कहे जाते नाही॥

बहुरि भेद छहप्रकार है, उत्कर चूर्ण खंड चूर्णिका प्रतर अणुचटन ऐसैं। तहां काष्ठ आदिकूं करोत आदिकरि विदारिये सो उत्कर है। बहुरि जो गेहूं आदिका चून होय सो चूर्ण है। बहुरि घट आदिका कपाल आदि होय सो खंड है। बहुरि उडद मूग आदिकी दाल आदि होय सो चूर्णिका है। बहुरि मोडल आदिके पत्र उतारिये सो प्रतर है। बहुरि लोहका पिंड अग्नितैं तपाय घणकी चोट दे तब फुलिंग उछलै ताकूं अणुचटन कहिये। ऐसैं छह भये ॥

बहुरि तम है सो प्रकाशका विरोधी दृष्टिके प्रतिबंधका कारण है, ताकूं अंधेरा कहिये है ॥

बहुरि छाया प्रकाशके आवरणका कारण है। सो दोयप्रकार है। तहां कांचविषैं मुखका वर्णादिरूप परिणवना इत्यादिक सो तद्वर्णपरिणत कहिये। बहुरि दूजी प्रतिबिंबस्वरूपही है ॥

बहुरि आतप सूर्यके निमित्ततैं उष्णप्रकाश होय सो कहिये ॥

बहुरि उद्योत चंद्रकांतमणिका उजाला तथा आक्षाका चमकणा इत्यादिक है। एते शब्द आदि पुद्गलके विकार हैं। ए जिनकैं होय ते सर्व पुद्‌गल हैं ॥

बहुरि सूत्रमें च शब्द है तातैं प्रेरणा अभिघात आदि भी जाकैं होय ते भी लेणा। ते आगममें प्रसिद्ध हैं, तिनका समुच्चय करै हैं। इहां केई अन्यमती शब्दकूं आकाशका गुण कहै हैं। केई अमूर्तिक द्रव्य कहै हैं। केई स्फोटस्वरूप कहै हैं। सो यह कहना प्रमाणसिद्ध नाहीं। शब्द है सो श्रोत्र इन्द्रियका विषय है। आकाश अमूर्तिक है तातैं ताका गुण नाहीं। तथा अमूर्तिक द्रव्य भी नाहीं। बहुरि स्फोटरूप कहै सो अर्थका प्रगट करनेवाला स्फोट तौ वक्ताका ज्ञान हैं अर शब्द श्रवणमें आवै है, सो है, अन्य कछु न्यारा स्फोट प्रमाणसिद्ध नाहीं। तातैं पुद्‌गलद्रव्यका पर्याय कहनाही प्रमाणसिद्ध है। याकी चरचा वार्तिकमें विशेषकरि है, तहांतैं जाननी ॥

आगें कहे जे पुद्‌गलद्रव्य तिनके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ अणवः स्कन्धाश्च ॥ २५ ॥

याका अर्थ—पुद्‌गलद्रव्यके अणु स्कंध ऐसैं दोय भेद हैं। तहां एकप्रदेशमात्र है अर स्पर्श आदि पर्यायनिकी उपजावनेकी सामर्थ्ययुक्त है, ऐसैं अण्यन्ते कहिये कहनेमें आवै ते अणु है। सूक्ष्मपणांतैं आपही तौ जिनकै आदि है आपही अंत है आपही मध्य है। इहां उक्तंच गाथा है, ताका अर्थ; जाके आपही आदि है आपही मध्य है आपही अंत्य है इन्द्रियगोचर नाहीं है, जाका दूसरा विभाग नाहीं होय है ऐसा परमाणु द्रव्य जानूं ॥ बहुरि स्थूलपणांकरि जाकैं

ग्रहणनिक्षेपणरूप व्यापारका स्कंध न होय ताकी स्कंध ऐसी संज्ञा उपजै है, इहां दोय अणु आदिके स्कंधके ग्रहणनिक्षेपणांके व्यापारकी योग्यता नाहीं है तौ भी रूढिके वशतैं स्कंधसंज्ञा जाननी । रूढिविषैं क्रिया कहूं एक हुई सती उपलक्षणपणांकरि आश्रय कीजिये है । बहुरि पुद्गलनिके अनंत भेद हैं । तौ अणु स्कंध इन दोऊमें जाति अपेक्षा गर्भित है, तिसही अर्थि सूत्रमें दोऊकै बहुवचन है । बहुरि दोय भेदका कहना पूर्वै दोय सूत्र कहे तिनका भी संबंध जनावै है । अणु हैं ते तौ स्पर्श रस गंध वर्णवान् हैं । बहुरि स्कंध हैं ते स्पर्श रस गंध वर्णवान् भी हैं अर शब्द बंध सौक्ष्म्य स्थूल संस्थान भेद तम छाया आतप उद्योतवान् भी हैं बहुरि परमाणु अतीन्द्रिय हैं । तिनका अस्तित्व शरीर इन्द्रिय पृथ्वी आदि स्कंधनामा कार्यनितैं जानिये है । जातैं कार्यतैं कारणका अनुमान होय है । ए स्कंध हैं ते परमाणुनिके कार्य हैं ॥

बहुरि अनंतपरमाणु बंधनरूप होय सो स्कंध है ताका आधा स्कंधदेश कहिये । ताका भी आधा स्कंधप्रदेश कहिये । तिनकेही भेद पृथिवी अप तेज वायु आदिक हैं ॥

आगें पूछै है, इन पुद्गलनिकै अणुस्कंधलक्षण परिणाम है, सो अनादिका है, कि आदिमान् है ? ताका उत्तर, जो, उत्पत्तिकी अपेक्षा आदि मानै है । फेरि पूछै है, सो जो आदि मानै है, तौ कौन निमित्ततैं उपजै है ? सो कहो । तहां प्रथमही स्कंधनिकी उत्पत्तिका कारण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥ २६ ॥

याका अर्थ— पुद्गलनिक स्कंध हैं ते भेदतैं तथा संघाततैं उपजै हैं । तहां बाह्य अभ्यंतर निमित्तके वशतैं स्कंध विदारे जाय सो भेद है । बहुरि न्यारे न्यारे होय तिनका एकपणां होना सो संघात है । इहां दोऊकै बहुवचन है सो तीसरेके ग्रहणके अर्थि है । भेदतैं संघाततैं भेदसंघाततैं ऐसैं तीनि हेतुतैं स्कंध उपजै हैं । सोही कहिये है । दोय परमाणुके संघाततैं दोय प्रदेशका स्कंध उपजै है । दोय प्रदेशका स्कंध अर एक परमाणु मिलै तीनि प्रदेशका स्कंध उपजै । तथा तीनि परमाणु मिलै भी तीनि प्रदेशका स्कंध उपजै है । बहुरि दोय स्कंध दोय दोय परमाणुके मिलै । तथा एक तीनि परमाणुका स्कंध अर एक परमाणु मिलै । तथा च्यारि परमाणु खुली मिलै तब च्यारि परमाणुका स्कंध निपजै । ऐसेही संख्यात असंख्यात अनंत अनंतानंतके संघाततैं तिन परमाणुनिके स्कंधनिकी उत्पत्ति है । बहुरि तैसैं स्कंधनिके भेद होतैं दोय प्रदेशके स्कंधतांई स्कंध उपजै है । बहुरि ऐसैही कोई स्कंधका तौ भेद हुवा अरु अन्य

स्कंधतैं तिसही काल संघात हुवा, ऐसैं भेदसंघाततैं स्कंध उपजैं हैं। ऐसैं स्कंधनिकी उत्पत्ति कही ॥

आगैं परमाणुनिकी उत्पत्तिका कारण दिखावनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ भेदादणुः ॥ २७ ॥

याका अर्थ— परमाणु है सो भेदहीतैं उपजै है, संघाततैं नाहीं उपजै है। इहां अणु भेदहीतैं उपजै है, ऐसी सिद्धी तौ पहले सूत्रकी सामर्थ्यहीतैं होय है। फेरि यह सूत्र है सो अणुभेदहीतैं होय है, संघाततैं नाहीं होय है, ऐसा नियमके अर्थि है। जातैं व्याकरणविषैं परिभाषासूत्र ऐसैं है, सो सिद्ध भये पीछैं फेरि जाकी विधि करिये सो नियमके अर्थि है, ऐसैं जानना ॥

आगैं पूछे हैं, जो संघांततैंही स्कंधनिकी उत्पत्ति सिद्ध भई बहुरि भेदसंघातग्रहणका कहा प्रयोजन है? ऐसैं पूछैं ताका प्रयोजन दिखावनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ भेदसंङ्घाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥

याका अर्थ— नेत्रगोचर जो स्कंध होय है सो भेदसंघात दोऊतैं होय है। स्कंध है सो अनंतानंतपरमाणुनिकरि उपजै है। तौ कोई इन्द्रियगोचर होय है। कोई इन्द्रियगोचर नाहीं होय है। तहां जो इन्द्रियगोचर नाहीं है, सोही कैसैं इन्द्रियगोचर होय है? तहां कहिये, जो, भेद संघात इन दोऊनितैं चाक्षुष होय है भेदतैं न होय है। इहां चाक्षुष कहनेतैं इन्द्रियनिकरि ग्रहणमैं आवनेयोग्य होय सो लेणा। सो उत्पत्ति कैसै है? सो कहिये है। जो सूक्ष्मपरिणाम स्कंध है, ताका भेद होतैं तौ सूक्ष्मपणाकूं छोडै नाहीं। तातैं सूक्ष्म इन्द्रियनितैं अगोचरही रहै। बहुरि कोई सूक्ष्म परिणया स्कंध होय ताका भेद होतैं अन्य जो स्कंध होय तातैं संघातरूप होय मिलै। तब सूक्ष्मपरिणामकूं छोडि स्थूलपणाकी उत्पत्तितैं चाक्षुप होय है ॥

आगैं पूछे हैं, धर्म आदिक द्रव्यनिके विशेषलक्षण तौ कहे। तथापि सामान्यद्रव्यका लक्षण न कह्या, सो कह्या चाहिये। ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ सद् द्रव्यलक्षणम् ॥ २९ ॥

याका अर्थ द्रव्यका लक्षण सत् है । जो सत् है सोही द्रव्य है ऐसा जानना । यह सामान्य अपेक्षाकरि द्रव्यका लक्षण है । जातैं सर्व द्रव्य सत्मयी हैं ॥ आगैं पूछै है, जो ऐसैं है सत् द्रव्यका लक्षण है तौ सत् कहा है? सोही कहो । ऐसैं पूछै सूत्र कहै है—

॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥ ३० ॥

याका अर्थ— उत्पाद व्यय ध्रौव्य तीनूंकरि युक्त है सो सत् है । तहां चेतन तथा अचेतन द्रव्यकै अपनी जातिकूं नाहीं छोडनेकै निमित्तके वशतैं एकभावतैं अन्यभावकी प्राप्ति होना सो उत्पाद है । जैसैं मांटीके पिंडकै घटपर्याय होनां । तैसैंही पहले भावका अभाव होना सो व्यय है । जैसैं घटकी उत्पत्ति होतैं पिंडके आकारका नाश होना । बहुरि ध्रुवका भाव तथा कर्म होय ताकूं ध्रौव्य कहिये । जैसैं मांटीका पिंड तथा घट आदि अवस्थाविषैं मांटी है सो अन्वय कहिये । सो पिंडमैं था सोही घटमें है तैसैं । ऐसैं उत्पाद व्यय ध्रौव्य इन तीनूंहीकरि युक्त होय सो सत् है ॥

इहां तर्क, जो, युक्तशब्द तौ जहां भेद है तहां देखिये है । जैसैं दंडकरि युक्त देवदत्त कहिये कोई पुरुष होय ताकूं दंडयुक्त कहिये है । जो ऐसैं तीनि भाव जुदे जुदेनिकरि युक्त है तौ द्रव्यका अभाव आवै है । ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है । जातैं अभेदविषैं भी कथंचित् भेदनयकी अपेक्षाकरि युक्तशब्द देखिये है । जैसैं सारयुक्त स्तंभ है । इहां स्तंभतैं सार जुदा नाहीं, तौ युक्तशब्द देखिये है । तैसैं उत्पाद व्यय ध्रौव्य इन तीनूंका अविनाभावतैं सत्का लक्षण बणै है । अथवा युक्तशब्दका समाहित भी अर्थ होय है । युक्त कहिये समाहित तदात्मक तत्स्वरूप ऐसा भी अर्थ है। तातैं उत्पाद व्यय ध्रौव्यस्वरूप सत् है, ऐसा अर्थ निर्दोष है । तातैं इहां ऐसा सिद्ध होय है, जो, उत्पाद आदि तीनि तौ द्रव्यके लक्षण हैं । अरु द्रव्य लक्ष्य है । तहां पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षाकरि तौ तीनूही द्रव्यतैं तथा परस्पर अन्य अन्य पदार्थ हैं । बहुरि द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षाकरि जुदे नाहीं दीखै हैं । तातैं द्रव्यतैं तथा परस्पर एकही पदार्थ है । ऐसैं भेदाभेदनयकी अपेक्षाकरि लक्ष्यलक्षणभावकी सिद्धि हो है ॥

इहां कोई कहै हैं, जो, ध्रौव्य तौ द्रव्यका लक्षण अर उत्पाद व्यय पर्यायका लक्षण ऐसैं कहना था, यामें विरोध न आवता, त्रयात्मक द्रव्यहीका लक्षण कहनेमें विरोध है । ताका समाधान जो, ऐसैं कहना अयुक्त है । जातैं सत्ता तौ

एक है सोही द्रव्य है । ताके अनंतपर्याय हैं । द्रव्यपर्यायकी न्यारी न्यारी दोय सत्ता नाहीं हैं । बहुरि एकान्तकरि ध्रौव्यहीकूं सत् कहिये तौ उत्पादव्ययरूप प्रत्यक्ष व्यवहारकै असत्पणां आवै । तब सर्व व्यवहारका लोप होय । तथा उत्पादव्ययरूप रूपही एकान्तकरि सत् कहिये तौ पूर्वापरका जोडरूप नित्यभाव विना भी सर्वव्यवहारका लोप होय । तातैं त्रयात्मक सत्‌ही प्रमाणसिद्ध है, ऐसाही वस्तुस्वभाव है, सो कहनेमें आवै है ॥

आगैं पूछै है कि 'नित्यावस्थितान्यरूपाणि' इस सूत्रमें नित्य कह्या, सो नित्यका स्वरूप न जान्या, सो कहौ! ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— तद्भाव कहिये जो पहले समय होय सोही दूसरे काल होय सो तद्भाव है, सोही नित्य कहिये । जो पूर्वैं था सोही यहू अब वर्तमानमें है ऐसा जोडरूप ज्ञान सो प्रत्यभिज्ञान कहिये । तिसका कारण जो वस्तुमें भाव सो तद्भाव कहिये । यहू प्रत्यभिज्ञान है । सो विना हेतु अकस्मात् न होय है । वस्तुमें तद्भाव है ताकूं जाने है, तातैं यहू सिद्ध होय है, जो, जिस स्वरूपकरि पहलें वस्तु देख्या तिसही स्वरूपकरि वर्तमानविषैं भी देखिये है । जो पहलें था, ताका अभावही भया मानिये । बहुरि नवा ही उपज्या मानिये तौ स्मरणका अभाव होय, तब जो स्मरणके आधीन लोकव्यवहार सो विरोध्या जाय है । तातैं ऐसा निश्चय है, जो, तद्भावकरि अव्ययरूप है सो नित्य है । सो यहू कथंचित् जानना । सर्वथा नित्य कहतें कूटस्थके पर्याय पलटनेका अभाव ठहरै है । सो तब संसार तथा तिसकी निवृत्तिके कारणके विधानका विरोध आवै । इहां तर्क, जो, सोही वस्तु नित्य सोही अनित्य ऐसैं कहनेमें तौ विरोध है । ताका समाधान करै है, जो, यह विरोध नाहीं है । जातैं ऐसा कहिये है, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— अर्पित कहिये जो मुख्य करिये सो, तथा अनर्पित कहिये जो गौण करिये सो इन दोऊ नयकरि अनेकधर्मस्वरूप वस्तुका कहना सिद्ध होय है । तहां अनेक धर्मस्वरूप जो वस्तु ताकूं प्रयोजनके वशतैं जिस कोई एक-धर्मकी विवक्षाकरि पाया है प्रधानपणा जानैं सो अर्पित कहिये ताकूं उपनीत अभ्युपगत ऐसा भी कहिये । भावार्थ- जिस धर्मकूं वक्ता प्रयोजनके वशतैं प्रधानकरि कहै सो अर्पित है, यातैं विपरीत जाकी विवक्षा न करि सो अनर्पित है।

जातैं जाका प्रयोजन नाहीं । बहुरि ऐसा नाहीं, जो, वस्तुमें धर्म नाहीं । ताकूं गौणकरि विवक्षातैं करै है । जातैं विवक्षा तथा अविवक्षा दोऊही सत्‌की होय है । तातैं सत्‌रूप होय ताकूं प्रयोजनके वशतैं अविवक्षा करिये सो गौण है । तातैं दोऊमें वस्तुकी सिद्धि है । यामें विरोध नाहीं है । इहां उदाहरण, जैसें पुरुषके पिता पुत्र भ्राता भाणिजो इत्यादि संबंध हैं ते जनकपणां आदिकी अपेक्षातैं विरोधरूप नाहीं । जातैं अर्पणके भेदतैं पुत्रकी अपेक्षा तौ पिता कहिये । बहुरि तिसही पुरुषकूं पिताकी अपेक्षा पुत्र कहिये भाईकी अपेक्षा भाई कहिये मामाकी अपेक्षा भाणिजो कहिये इत्यादि । तैसैंही वस्तुकी सामान्य अर्पणातैं नित्य कहिये । विशेष अर्पणातैं अनित्य कहिये । यामें विरोध नाहीं । बहुरि ते सामान्य-विशेष हैं । ते कथंचित् भेद अभेदकरि व्यवहारके कारण होय हैं ॥

इहां सत् असत् एकानेक नित्यानित्य भेदाभेद इत्यादि अनेक धर्मात्मक वस्तुके कहनेमें अन्यमती विरोध आदि दूषण बतावै हैं । तहां सत् असत् दोऊ एकवस्तुविषैं कहिये तौ दोऊ प्रतिपक्षी हैं, तिनकै विरोध आवैही । तथा दोऊनिका एक आधार कैसैं होय? तातैं वैयधिकरण्य दूषण आवै है । दोऊके एक आधारका अभाव है । बहुरि परस्पराश्रय कहिये सत असत्‌के आश्रय कहिये, तौ पहले असत् होय तौ आश्रय बणै । सो असत्‌कूं सत्‌के आश्रय कहतैं पहली सत् नाहीं है । ऐसैं दोऊका अभावरूप परस्परआश्रय नामा दूषण है । बहुरि सत् काहेकारे है? तहां कहिये असत्‌करि है । तहां पूछिये है, असत् काहेकारि है तहां कहैं? अन्य सत्‌करि । फेरि पूछिये है, अन्य सत् काहेकारि है? तहां कहैं, अन्य असत्‌करि । ऐसैं कहूं ठहरना नाहीं । तातैं अनवस्थादूषण है । बहुरि सत्‌में असत् मिलै असत्‌में सत् मिलै, तब व्यतिकरदूषण है । बहुरि सत्‌तैं असत् होय जाय, असत्‌तैं सत् होय जाय, तहां संकरदूषण है । बहुरि सत्‌की प्रतिपत्ति होय तहां असत्‌की प्रतिपत्ति नाहीं । असत्‌की प्रतिपत्ति है, तहां सत्‌की प्रतिपत्ति नाहीं । ऐसैं अप्रतिपत्तिदूषण है । बहुरि सत् होतैं असत्‌का अभाव, असत् होतैं सत्‌का अभाव, ऐसैं अभाव नामा दूषण है । ऐसैंही ए आठ दूषण सर्व विरुद्धपक्षमें आवैं हैं । तातैं विरोधरूप अनेकधर्मस्वरूपकी सिद्धि नाहीं ॥

ऐसैं दूषण बतावै । ताकूं कहिये, जो, ये दूषण जे सर्वथा एकान्तपक्षकरि ऐसैं अनेकधर्म वस्तु कहैं, तिनकै आवै हैं । बहुरि अनेकधर्मविरुद्धरूप एकवस्तुमें संभवै हैं, तिनकूं द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयकी अर्पणका विधानकरि प्रयोजनके वशतैं मुख्य गौणकरि कहिये । तामें दूषण नाहीं । स्याद्वाद बडा बलवान है, जो, ऐसैं भी विरोधरूपकूं अविरोधरूपकारि कहै है । सर्वथा एकांतकी यह सामर्थ्य नहीं, जो, वस्तुकूं साधे । जैसा कहेगा, तैसैंही दूषण आवेगा । तातैं स्याद्वादका सरणा ले वस्तुका यथार्थज्ञानकरि श्रद्धानकरि हेयोपादेय जानि हेयतैं छूटि उपादेयरूप होय वीतराग होना योग्य है, यह श्रीगुरुनिका उपदेश है ॥

आगे पूछै है कि, सत्कै अनेकनयके व्यवहारका आधीनपणा है। तातैं स्कंधनिकै भेदसंघाततैं उत्पत्ति बणै है। परंतु यह संदेह रह्या, जो, दोय परमाणुके आदिका संघात होय है। सो संयोगमात्रतैंही होय है, कि कोई और विशेष है? ऐसैं पूछै कहै है, जो, संयोग होतैं एकत्वपणारूप बंधनितैं संघातकी निष्पत्ति होय है। फेरि पूछै है, जो, ऐसैं है तौ पुद्गल जातिकूं छोडै नाहीं, अरु संयोग होयही, तब कोई परमाणुनिकै तौ बंध होय, बहुरि अन्य केईकै न होय, सो याका कारण कहा? ताका समाधान जो, तिन परमाणुनिकै पुद्गलस्वरूपकरि अविशेष है, तौ अनंतपर्यायनिकै परस्परविलक्षणपरिणामकरि सामर्थ्य होय है, तातैं बंध होय है ऐसैं, प्रतीतिमैं आवै है। याका सूत्र कहै हैं—

॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— स्निग्ध कहिये सचिक्कण रूक्ष कहिये लूखा इन दोऊपणातैं पुद्गलपरमाणुनिकैं परस्पर बंध होय है। तहां बाह्य अभ्यंतर कारणके वशतैं सचिक्कणपर्यायका प्रगट होना सो स्निग्ध है। तैसैंही रूक्ष है। ऐसैं स्निग्धरूक्ष-पणा है। जो सचिक्कणगुणपर्याय होय सो तौ स्निग्धपणा है। तिसतैं विपरीतपरिणाम होय सो रूक्षपणां है। दोऊनिकूं हेतुकरि कह्या है। ऐसैं बंध होय है। सो जहां दोय परमाणु रूक्ष तथा सचिक्कण परस्पर मिलैं तब बंध होतैं दोय अणुका स्कंध होय है। ऐसैंही संख्यात असंख्यात अनंत परमाणुनिका स्कंध उपजै है। तहां परमाणुनिमें रूक्ष सचिक्कण गुण कैसैं हैं? सो कहिये है- एकगुण स्निग्ध दोय गुण स्निग्ध तीनि गुण स्निग्ध च्यारि गुण स्निग्ध संख्यातगुण स्निग्ध असंख्यातगुण स्निग्ध अनंतगुण स्निग्ध ऐसैं अनंतभेदरूप हैं। ऐसैंही रूक्षगुण भी जानना। ऐसैं रूक्ष सचिक्कणगुण परमाणु हैं। जैसैं जल छेलीका दूध गऊका भैंसीका दूध ऊंटनिका दूध तथा घृतविषैं सचिक्कणगुण घाटि बधिकरि प्रवर्तै है; तथा पांशु कहिये धूली कणिका कहिये वालु रेत शर्करा कहिये काकराकी जिमी इत्यादिविषैं रूक्षगुण घाटि वाधि है; तैसैंही परमाणुनिविषैं स्निग्धरूक्षगुणकी घाटि वाधि प्रवृत्ति है, ऐसा अनुमान है। इहां एक दोय गुण कहनेतैं गुणनिके अविभागपरिच्छेद जानने ॥

आगैं स्निग्धरूक्षगुण है निमित्त जाकूं ऐसा बंध है, सो अविशेषकरि होता होयगा, ऐसा प्रसंग होतैं जिनकै बंध नाहीं होय है, तिनके निषेधकूं सूत्र कहै हैं—

॥ न जघन्यगुणानाम् ॥ ३४ ॥

याका अर्थ— जे जघन्यगुण परमाणु हैं, तिनकैं बंध नाहीं हो है। जघन्य कहिये घाटिसूं घाटि जामें गुण कहिये गुणके अविभागपरिच्छेद होय सो जघन्यगुण कहिये। सो जघन्यगुणकै बंध नाहीं है। सोही कहिये है, जो, एकगुण स्निग्ध होय तिस परमाणुकै एकगुण स्निग्धपरमाणुकरि तथा दोयगुण स्निग्धकरि तथा संख्यात असंख्यात अनंतगुण स्निग्धकरि बंध नाहीं होय है। तैसैंही एकगुण स्निग्धकैं एकगुण रूक्षपरमाणुकरि तथा दोय आदि संख्यात असंख्यात अनंतगुण रूक्षपरमाणुनिकरि बंध नाही हो है। ऐसैंही एकगुण रूक्षकै भी बंधका अभाव जानना। इहां कोई पूछै, जो, जघन्यगुण परमाणु केई लोकमें होय हैं, ऐसा निश्चय काहेतैं होय? ताका समाधान, जो, केई स्कंधनिमें सचिक्कणपणां घटता है, कोईमें वधता है, तथा केईमें रूक्षगुण घटता है, केईमें बधता है,। ऐसैं घटतें घटतें कोई परमाणु जघन्यगुण भी हैं, ऐसा अनुमानप्रमाणतैं निश्चय होय है ॥

आगें ए दोऊ जघन्यगुण स्निग्धरूक्षपरमाणुनिकूं वर्जिकरि अन्य स्निग्धरूक्षपरमाणुनिकै परस्पर बंध होय है। ऐसा अविशेष प्रसंग होतैं, तहां भी जिनके बंध नाहीं होय है, तिनका निषेधका सूत्र कहै हैं—

॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥ ३५ ॥

याका अर्थ— गुणसाम्य कहिये जिनकै अविभागपरिच्छेदरूप गुण बरावरि होय ऐसैं परमाणुनिकै अर सदृश कहिये स्निग्धही स्निग्ध तथा रूक्षही रूक्ष होय तिनकै भी बंध नाहीं होय हैं। इहां सदृशशब्दका अर्थ तौ समानजातिके परमाणु है। वहुरि साम्यका अर्थ बरावरि अविभागपरिच्छेद है। तहां ऐसा अर्थ होय है, दोयगुण स्निग्धपरमाणुनिकै दोयगुण स्निग्धपरमाणुनिकरि बंध नाही है। तीनि गुणस्निग्धकै तीनि गुण स्निग्धकरि बंध नाही है ॥ वहुरि दोय गुण स्निग्धपरमाणुनिकै दोय गुण रूक्षपरमाणुनिकरि बंध नाहीं है। दोय गुण रूक्षपरमाणुनिकै दोय गुण रूक्षपरमाणुनिकरि बंध नाहीं हैं। वहुरि तीनि गुण रूक्षपरमाणुनिकैं तीनि गुण रूक्षपरमाणुनिकरि बंध नाहीं है। इत्यादि समानगुण होय तथा सदृश भी होय तिनकैं बंध नाही होय है। इहां सदृशका ग्रहण है, सो गुणकी विषमता होय है ऐसैं जनावनेके अर्थ है ॥

आगें ऐसैं कहनेतैं विषमगुण परमाणुनिकै तुल्यजातीयकै तथा अतुल्यजातीयकै नियमरहित बंधका प्रसंग होतै जिनकै नियम है तिनके जनावनेकूं सूत्र कहै हैं--

॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥ ३६ ॥

याका अर्थ— दोय अधिक गुणके परमाणुनिकैही बंध होय है। दोय गुण जामें अधिक होय सो द्व्यधिकगुण कहिये। सो कौन दोय गुण? परमाणुतैं दोयगुण अधिक परमाणु जामें च्यारि गुण है सो है। बहुरि इहां आदिशब्दकरि तीनिगुण परमाणुतैं जामें पांचगुण होय सो दोय अधिक गुण है। इत्यादिक दोयगुण अधिक समानजातीय तथा असमानजातीय परमाणुनिके बंध होय है, अन्यकै नाही होय है। सोही कहिये है, दोयगुण सचिक्कणका जामें होय ऐसै परमाणुका एकगुण स्निग्धकारि तथा दोयगुण स्निग्धकारि तथा तीनिगुण स्निग्धकारि बंध नाहीं हो है। जामें च्यारि गुण स्निग्धका होय ताकरि बंध होय है। बहुरि तिसही दोयगुण स्निग्धके पांचगुण स्निग्धकारि तथा छहगुण स्निग्धकारि तथा सात आठ आदि संख्यात असंख्यात अनंतगुण स्निग्धकारि भी बंध नाहीं होय है। ऐसैं तीनिगुण स्निग्धके पांचगुण स्निग्धकारि बंध होय है। तिसासिवाय एक दोय तीनि च्यारि तथा छह सात आदि अनंतपर्यंत गुणसहित परमाणुनिकारि बंध नाहीं है। बहुरि च्यारिगुण स्निग्धपरमाणुकै छहगुण स्निग्धपरमाणुकारि बंध होय है। बाकी पहले तथा अगिले गुणसहित परमाणुनिकारि बंध नाहीं है। ऐसैंही दोयगुण अधिक सर्वके विषैं जोडना। बहुरि तैसैंही एक दोय तीनिगुण रूक्षपरमाणुनिकारि दोयगुण रूक्षपरमाणुकै बंध नाहीं है। च्यारिगुण रूक्षपरमाणुकै बंध होय है। तिसकै पांच गुणरूक्षादिकारि बंध नाहीं है। ऐसैंही तीनिगुण रूक्षादिकै भी दोयगुण अधिककारि बंध जानना। ऐसैंही भिन्नजाति जे रूक्षके सचिक्कण ताकारि दोयगुण अधिककारि बंध जानना ॥

इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ— स्निग्धके स्निग्धकारि दोयगुण अधिककारि बंध होय है। तथा रूक्षके रूक्ष कारि दोयगुण अधिककारि बंध होय है। जघन्यगुण वर्जिकारि समगुण होऊ तथा विषमगुण होऊ दोयगुण अधिकहीकारि बंध है अन्यकारि नाहीं है। बहुरि सूत्रमें तु शब्द है सो पहले दोय सूत्रकै निषेधके अर्थि है। तिस निषेधके व्यावर्त-नके अर्थ है। तथा बंधकी विधिकूं जनावै है। बहुरि इहां कोई अन्यमती तर्क करै, जो, परमाणु तौ सदा बंधरूपही है। परमाणु बुद्धिकारि कलपना कीजिये है। तैसें एकपरमाणुके विषैं अविभागपरिच्छेद कलिपये है। तैसैं बंधनरूप स्कंध है ताके विषैं परमाणु कलिपये है। तुमने काहू परमाणुके बंध बताया काहूकै निषेध बताया सो यहू युक्त नाहीं। ताका समाधान, जातैं आगममें पुद्गलके छह भेद कहे हैं। पृथ्वी जल छाया च्यारि इन्द्रियनिके विषय रसादिक कार्मणस्कंध परमाणु ऐसैं। इनमें परमाणु कह्या है, सो सत्यार्थ प्रत्यक्षज्ञानी देखिकारि कह्या है। तातैं कलिपत नाहीं है। तातैं केई

परमाणुके बंध न होय है तिनके निषेध भी है । ऐसा न कहना जो स्कंधही बंधनरूप सदा है, परमाणु नाहीं ॥

आगें अधिकगुणकरि बंध होय है, तुल्यगुणनिकरि न होय है, ऐसा कौन अर्थ कह्या ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं-

॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥ ३७ ॥

याका अर्थ-- बंध होतैं अधिक गुण दोय हैं । ते हीनगुणकूं अपने परिणामस्वरूप करै हैं । इहां अधिक शब्दके गुणशब्दकी पूर्वसूत्रतैं अनुवृत्ति करणी । ऐसैं अधिक गुण ऐसैं कहना । या भांति दोयगुण आदि स्निग्ध रूक्ष परमाणुके चतुर्गुण आदि स्निग्ध रूक्ष परमाणुनिस्वरूप पारिणामिकपणां होय है । जैसै आला गुडमें मधुर रस बहुत होय तब तामें रेत आय पडै तिनकूं अपने मधुररसरूप करै तिसकूं पारिणामिक कहिये, तैसैं अन्य भी अधिकगुण होय सो अलपगुणकूं अपने परिणामस्वरूप करै है । तातैं पहली अवस्थाके अभावपूर्वक तीसरी अवस्था प्रगट होय है । अधिक गुण न रह्या हीनगुण भी न भया । ऐसैं तीसरी अवस्था भई । ऐसैं अधिकगुणकै अर हीनगुणकै एकस्वरूपपणां होय है । जो ऐसैं न मानिये तौ शुक्ल कृष्ण तंतूनिका एक रस्सा करै तिनके तारनिकै संयोग होतैं भी एकरूप परिणाम नाहीं भया, धौला काला तार जुदे जुदे दीखवौ करै, तैसैं ठहरै । सो ऐसैं है नाहीं । अधिकगुण हीनगुणका ऐसा एक परिणाम होय, जो, जुदाजुदा न दीखै ऐसा जानना । ऐसैं कह्या जो पारिणामिकपणाकरि बंध तिसके होतैं ज्ञानावरणादिक कर्मकी तीस कोडाकोडीसागर आदिकी स्थिति संभवै है ॥

आगें “ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ” ऐसा द्रव्यका लक्षण कह्या । अब अन्यप्रकारकरि द्रव्यका लक्षण कहैं हैं—

॥ गुणपर्ययवद्द्रव्यम् ॥ ३८ ॥

याका अर्थ-- गुण अर पर्याय इनकरि सहित द्रव्य है । इहां गुणपर्याय जाके होय सो द्रव्य है, ऐसा प्रत्ययका अर्थ है । इहां मतुप्प्रत्ययकी उत्पत्तिके विषैं प्रश्नका समाधान पूर्वैं किया, सोही है । कथंचित् भेदाभेद होतैं मतुप्प्रत्यय वणै है । बहुरि इहां पूछै है, गुण कहा तथा पर्याय कहा ? ताका उत्तर, अन्वयी तौ गुण है व्यतिरेकी पर्याय है । तहां क्रमवर्ती पर्यायनिमें जोडरूप एक चलया जाय सो तौ गुण है । बहुरि न्यारेन्यारे स्वभावरूप पर्याय हैं । इन गुणपर्यायनिकरि युक्त होय सो द्रव्य है । इहां उक्तं च गाथा है ताका अर्थ-गुण ऐसा तो द्रव्यका विधान है बहुरि गुणका एक समुदाय सो द्रव्य है बहुरि द्रव्यके विकार कहिये क्रमपरिणाम ते पर्याय हैं ऐसा कह्या है । बहुरि तिनकरि

अन्यून कहिये सहित द्रव्य है सो कैसा है ? अयुतप्रसिद्ध है संयोगरूप नाहीं, तादात्मक स्वरूप है बहुरि नित्य है अपने विशेषलक्षणकूं कवहूं नाहीं छोडै है ॥

इहां ऐसा कह्या, जो, द्रव्य है सो अन्यद्रव्यतैं जाकरि विशेषरूप होय जुदा दीखै तिस भावकूं गुण कहिये। तिस गुणहीकरि द्रव्यकी विधि है, जो ऐसा गुण न होय तो द्रव्यनिका संकर कहिये पलटना ठहरै। जैसैं जीव है सो पुद्गलादिक द्रव्यनितैं ज्ञानआदि गुणनिकरि न्यारा दीखै है। बहुरि पुद्गल आदि द्रव्य हैं, ते जीवद्रव्यतैं रूप आदि गुणनिकरि न्यारे दीखै हैं। जो ऐसा विशेषगुण न होय तो आपसमें पलटना तथा एकता ठहरै। तातैं सामान्य अपेक्षाकरि अन्वयी तौ ज्ञान आदि जीवके गुण हैं। बहुरि पुद्गल आदिके रूप आदि गुण हैं। बहुरि तिनके विकारतैं विशेषरूपकरि भेदरूप भये ते पर्याय हैं। जैसैं घटका ज्ञान पटका ज्ञान क्रोध मान इत्यादि जीवके पर्याय। बहुरि वर्ण गंध तीव्र मंद इत्यादि पुद्गलके पर्याय। बहुरि तिनतैं कथंचित् अन्यपणाकूं प्राप्त होता समुदाय है, सो द्रव्यनाम पावै है। जो समुदाय तिन गुणपर्यायनितैं सर्वथा अनर्थांतरभूत होय जुदा पदार्थ न गिनिये, तौ सर्वहीका अभाव होय, सोही कहिये है ॥

जो परस्पर भिन्न भिन्न लक्षणस्वरूप गुणपर्याय तिनका समुदाय होतैं एक अनर्थांतरभावतैं समुदाय जुदा पदार्थ न मानिये तौ सर्वका अभाव होय। जातैं ते गुणपर्याय परस्पर न्यारे न्यारे पदार्थ हैं। सो जो प्रत्यक्षरूप गुण हैं, तातैं जुदे पदार्थ रस आदिक हैं, सो जो समुदाय तिस रूपसूं जुदा न ठहरै, रूपमात्र समुदाय ठहरै, तव रस आदिक रूपतैं न्यारे हैं। तिनतैं समुदाय भी न्यारा भया। तव एकरूपमात्र रहनेतैं समुदाय न ठहरै। समुदाय तौ वहुतनिका होय, रूप तौ एकही है। समुदाय काहेकूं कहना ? ऐसैं समुदायका अभाव आया। याहीतैं समुदायी सर्वही समुदायतैं जुदे नाहीं, तिनका भी अभाव आया। ऐसैं समुदाय समुदायी दोऊका अभाव होतैं सर्वका अभाव आया। ऐसैं रस आदिकेविषैं भी जोडना। तातैं समुदायकूं जो चाहै है सो गुणपर्यायनिके समुदायरूप जो द्रव्य ताकूं कथंचित् संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजनादिकी अपेक्षा न्यारा पदार्थ मानना योग्य है ॥

इहां प्रश्न, जो, द्रव्यका लक्षण सत् ऐसा पहलैं तौ कह्याही था, यह दूसरा लक्षण कहनेका कहा प्रयोजन है ? ताका उत्तर, पहलैं सत् लक्षण कह्या, सो तौ शुद्धद्रव्यका लक्षण है, सो एक है, सो सामान्य है, अभेद है, याकूं महान् द्रव्य भी कहिये, जातैं सर्व वस्तु है सो सत्ताकूं उलंघि नाहीं वर्तै हैं। सर्वद्रव्य सर्वपर्याय सत्ताके विशेषण हैं। जाकूं ज्ञानगोचर तथा वचनगोचर कहिये सो सर्व सत्तामयी है। बहुरि द्रव्य अनेक है, तिनका भिन्नव्यवहार करनेकूं यह गुण

पर्यायसहितपणा दूजा लक्षण कह्या है । सो यह लक्षण न कहिये तौ द्रव्यनिके गुणपर्याय न्यारे न्यारे हैं, ते द्रव्य न ठहरै, तब सर्वथा सत्‌ही द्रव्य ठहरै । चेतन अचेतन आदि द्रव्यनिका लोप होय, तब संसार मोक्ष आदि व्यवहारका भी लोप होय, तातैं दूजा लक्षण युक्त है । तिसही लक्षणतैं अशुद्धद्रव्यकी सिद्धि है । जातैं सत् द्रव्य दूसेर विशेषणसहित भया, तब दूसरेके मिलापतैं अशुद्धता भई । जैसैं सत् था सो चेतनतासहित तथा अचेतनतासहित कह्या, तब सत्‌कैं अशुद्धता आई ऐसा अशुद्धद्रव्य भी कहिये, इत्यादि स्याद्वादकरि सिद्ध होय है, सो वार्तिकतैं जानना ॥

बहुरि अन्यमती द्रव्यलक्षण अन्यथा कल्पै हैं । केई तौ क्रियादानपणा द्रव्यका लक्षण कहै हैं । सो आकाशविषैं क्रिया नाहीं, तिनकै द्रव्यपणा न ठहरै । बहुरि केई समवायिकारणपणा लक्षण कहै हैं सो भी गुणकर्मकेविषैं पाईये है । तब ते गुणकर्म भी द्रव्य न ठहरै । बहुरि कोई गुणवानपणा होतैं क्रियावानपणा समवायिकारणपणा लक्षण कहै है । सो यह तौ गुणवानपणा कहनेतैंही आय गया । क्रियावान्‌पणा कहना आदि निःप्रयोजन है । बहुरि अनेकान्तका आश्रय ले विवक्षातैं कछु कहै तौ निर्दोषही है । स्याद्वादका आश्रय लिये विवाद नाहीं है । बहुरि द्रव्यविषैं क्रमवर्ती अनेक धर्म हैं, तथा तिन सर्व क्रमवर्ती धर्मनिकीसाथि वर्तते अनेक धर्म हैं, तथा कालभेद न करिये तब सर्वकालमैं एकही द्रव्य सहवर्ती क्रमवर्ती धर्मनिस्वरूप एककाल है । ऐसैं इस लक्षण करनेतैं सदानेकान्त क्रमानेकांत क्रमाक्रमानेकांत भली भांति सिद्ध होय है ॥

आगैं कहे जे पांच द्रव्य तिनके लक्षणनिर्देश करनेतैं पांचही द्रव्यका निश्चयका प्रसंग आवै है, तातैं छठा द्रव्य न कह्या, ताके सूचनेके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ कालश्च ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— काल हैं सो भी द्रव्य है । इहां द्रव्य है ऐसा वाक्यशेष है । इस कालविषैं भी द्रव्यका लक्षण है । यातैं द्रव्य है । द्रव्यका लक्षण दोयप्रकार कह्या है । सद्द्रव्यलक्षणं उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ऐसा तथा गुणपर्ययवद्द्रव्यं ऐसा दोऊही लक्षण कालके विद्यमान है । तहां प्रथम तौ ध्रौव्यपणा कालके है । जातैं स्वभावहीतैं व्यवस्थिति है । सो ध्रौव्यपणा स्वकारणकृत है, काहू अन्यका किया नांही । बहुरि व्यय उत्पाद ये दोऊ अगुरुलघुगुणकी हानिवृद्धिकी अपेक्षातैं स्वभावकृतही है । बहुरि परद्रव्यके परिणामनिकी अपेक्षा परकृत भी हैं । बहुरि गुण साधारण तथा असाधारण दोऊही कालके हैं । तहां असाधारणता सर्वद्रव्यनिपरि वर्तनाहेतुपणा है । अर साधारण अचेतनपणा अमूर्तिकपणा सूक्ष्मपणा

अगुरुलघुपणा इत्यादिक है। बहुरि पर्याय उत्पाद व्ययरूप होय हैं, ते हैंही। तातैं दोयप्रकारके लक्षणसहितपणातैं आकाश आदिकी ज्यौं कालकै द्रव्यपणां प्रसिद्ध है। ताका अस्तित्वका चिह्न धर्मआदि द्रव्यकी ज्यौं पूर्व कह्याही था, जो, वर्तनालक्षण काल है ॥

इहां प्रश्न, जो, इहां कालद्रव्य कह्या अर धर्मआदि द्रव्य कहे थे, तहांही न कह्या, सो याका कहां प्रयोजन? अजीवकायाधर्माधर्माकाशकालपुद्गला ऐसैं क्यौं न कह्या? ताका समाधान, जो, तहां कहते तौ कालकै कायपणा ठहरता, सो याकै कायपणा नाहीं है। जातैं कालके मुख्यपणैं तथा उपचारकरि भी प्रदेशनिका प्रचयकी कल्पना नाहीं है। धर्मादिककैं तौ पूर्वैं मुख्यप्रदेशनिका प्रचय कह्याही है असंख्येयाः प्रदेशा इत्यादि सूत्रमें। बहुरि पुद्गलपरमाणु एकप्रदेशमात्र हैं तौ पूर्वउत्तरभावप्रज्ञापननयकी अपेक्षाकरि उपचारकल्पनाकरि प्रदेशप्रचय कह्या ॥

भावार्थ— परमाणु संघाततैं स्कंधरूप होय है, तातैं प्रदेशप्रचय होय है। बहुरि कालकैं दोऊही रीति प्रदेशप्रचयकी कल्पना नाहीं। तातैं याकै अकायपणाही है। बहुरि जो कालकूं धर्मादिकके पाठमें कहते तौ तहां निष्क्रियाणि इस सूत्र-विषैं धर्मआदि आकाशपर्यंत क्रियारहित कहे थे, तातैं अन्य जे जीवपुद्गल तिनकै क्रियासहितपणांकी प्राप्ति आई थी, सो कालकै भी सक्रियपणां ठहरता। बहुरि जो आकाशतैं पहलै काल कहते तौ 'आ आकाशादेकद्रव्याणि' इस सूत्रतैं आकाशकैं एकद्रव्यपणा ठहरता। तातैं न्याराही इहां कालका उपदेश किया है ॥

इहां पूछै है, जो, कालकूं अनेकद्रव्य कहिये है, तहां कहा प्रमाण है? ताका उत्तर, जो, आगमप्रमाणकरि कहिये है। लोकाकाशके जेते प्रदेश हैं तेते कालके अणु क्रियारहित एक एक आकाशके प्रदेशविषैं एक एक न्यारे न्यारे लोकमें व्यापिकरि तिष्ठै हैं। इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ— लोकाकाशके प्रदेश एकएकके विषैं जे एक एक रत्ननिकी ज्यौं प्रगटपणैं तिष्ठै हैं ते कालाणु जानने। रूपआदिगुणनिकरि रहित अमूर्तिक वर्तनालक्षण जो मुख्यकाल है, ताका यह आगमप्रमाण कह्या ॥

आगैं, परिणामादिकरि जान्या जाय ऐसा व्यवहारकालके जाननेकूं प्रमाण कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ सोऽनन्तसमयः ॥ ४० ॥

याका अर्थ— काल है सो अनंत हैं समय जाके ऐसा है। इहां वर्तमानकाल एक समयमात्र है। तौ अतीत अनागत कालके समय अंतरहित हैं। तातैं अनंत कहिये है। अथवा मुख्यकालकाही प्रमाण जाननेकूं यह सूत्र है।

आगैं शिष्य कहै है, जो, तीनिप्रकार याग कहे ते हम जाने, परंतु प्रकरण आस्रवका है, सो अब कहौ, आस्रवका लक्षण कहा है? ऐसैं पूछैं कहै हैं, जो, यह योगशब्दकरि कहिये सो संसारी जीवकैं आस्रव है ऐसा सूत्र कहै हैं—

॥ स आस्रवः ॥ २ ॥

याका अर्थ— कह्या जो योग सो आस्रव है। जैसैं सरोवरके जल आवनेका द्वार होय सो जलके आवनेकूं कारण हैं, ताकूं आस्रव ऐसा कहिये, तैसैं इहां भी योगद्वारकरि आतमाकै कर्म आवै है, तातैं योगही आस्रव है। ऐसा नामके योग्य है। इहां ऐसा भी दृष्टांत जानना– जैसैं ओला वस्त्र चौगिरदतैं आई रजकूं ग्रहण करै है तथा लोहका पिंड अग्निकरि तपाये जलकूं खैंचै है, तैसैं कषायनिकरि सहित जीव योगद्वारकरि आये कर्मकूं सर्व अपने प्रदेशनिकरि ग्रहण करै है॥ आत्माके प्रदेशनिका चलना सो योग है। सो निमित्तके भेदतैं तीनिप्रकार भेद कीजिये है, काययोग, वचन–योग, मनोयोग। तहां आत्माके वीर्यांतरायकर्मका क्षयोपशम होतैं औदारिक आदि सात काय तिनकी वर्गणामें एक कायवर्गणाका अवलंबनकी अपेक्षातैं भया जो आत्मप्रदेशनिका चलना, सो काययोग है। बहुरि शरीर नामा नामकर्मके हृदयकरि किया जो वचनवर्गणा ताका अवलंबनके होतैं, बहुरि वीर्यांतरायकर्म तथा श्रुत अक्षर आदि ज्ञानावरणकर्मका क्षयोपशमकरि किया जो अभ्यंतर वचनकी लब्धि कहिये बोलनेकी शक्ति ताकी संनिधि होतैं, वचनपरिणामके सन्मुख भया जो आत्मा ताके प्रदेशनिका चलना, सो वचनयोग है। बहुरि अभ्यंतर तौ नोइन्द्रियावरण नामा ज्ञानावरणकर्म अर अंतरायकर्मके क्षयोपशमरूप लब्धि ताका निकट होतैं, अर बाह्य मनोवर्गणाका अवलंबन होतैं मनःपरिणामके सन्मुख जो आत्मा ताकें प्रदेशनिका चलना, सो मनोयोग है॥

आगैं पूछैं हैं, जो, कर्म पुण्यपापभेदकरि दोयप्रकार है, तिसका आस्रवका कारण योग है सो अविशेषकरिही है, कि कुछ विशेष है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं––

॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥

याका अर्थ–– शुभयोग तौ पुण्यका आश्रव करै है। अशुभयोग पापका आश्रव करै है। तहां शुभयोग कहा? अशुभयोग कहा? सो कहिये हैं। प्राणनिका घात अदत्तका ग्रहण मैथुनसेवन इत्यादिक तौ अशुभका योग है। झूट बोलना कठोरवचन कहना ऐसैं असत्यवचन आदि अशुभ वचनयोग है। परका घातका चिंतवन करना, ईर्षा राखनी,

अदेखसाभाव करना इत्यादि अशुभमनोयोग है । यातैं उलटा शुभयोग है । तहां अहिंसा अस्तेय ब्रह्मचर्यादिक शुभकाययोग है । सत्यवचन हितमित भाषण आदि शुभवचनयोग है । अरहंतआदिविषैं भक्ति स्तवविषैं रुचि शास्त्रआदिविषैं विनय आदि प्रवृत्ति ए शुभमनोयोग हैं ॥

इहां प्रश्न, जो, योगके शुभ अशुभ परिणाम कैसैं? ताका उत्तर, जो, शुभपरिणामकरि निपज्या योग सो तौ शुभ है । बहुरि जो अशुभपरिणामकरि निपज्या सो अशुभयोग है । बहुरि शुभअशुभकर्मके कारणपणातैं शुभअशुभयोग नाहीं हैं । सो ऐसा होय तौ शुभयोगही न ठहरै । जातैं शुभयोगतैं ज्ञानावरणादि घातियाकर्म पापरूप हैं, तिनका भी आश्रव होय है । तातैं पापका कारण शुभयोग नाहीं ठहरै । तहां जो कर्म आत्माकूं पवित्र करै, अथवा याकरि आत्मा पवित्र होय ऐसैं पुण्य कहिये । सो सातावेदनीय आदिक हैं । बहुरि आत्मानैं शुभतैं पाति कहिये राखै शुभरूप न होने दे सो पाप है । सो असातावेदनीय आदिक हैं ॥

आगैं पूछै है, जो, यहु आश्रव सर्व संसारी जीवनिकै समानफलका कारण है, कि कछु विशेष है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— कषायसहित जीवकै तौ सांपरायिक आश्रव होय है । बहुरि कषायरहित जीवकै, ईर्यापथ आश्रव होय है । इहां स्वामीके भेदतैं आश्रवविषैं भेद है । तहां स्वामी दोय हैं, सकषायी जीव अकषायी जीव । तहां कषाय जे क्रोधादिक ते कषायसारिखे हैं । जैसैं फिटकडी लोध आदि कषायले द्रव्य होय हैं, ते वस्त्रके रंग लगनेकूं कारण हैं; तैसैं ए क्रोधादिक भी आत्माके कर्म लेपके कारण हैं । तातैं इनकूं भी कषाय कहिये हैं । ऐसैं कषायनिकरि सहित होय ताकूं सकषायी कहिये । बहुरि कषायरहित होय सो अकषायी है । बहुरि संपराय नाम संसारका है, सो जाका संसार प्रयोजन है ऐसा जो कर्म ताकूं सांपरायिक कर्म कहिये । बहुरि ईर्याभाव योगनिकी गतिका है तिसहीकरि कर्म आवै, ताकूं ईर्यापथकर्म कहिये । इनका यथासंख्य संबंध करना । तहां सकषायी मिथ्यादृष्टीकूं आदि देकरि जीव हैं, तिनकै तौ सांपरायकर्मका आश्रव होय है । बहुरि कषायरहित जीव हैं, जो, उपशांतकषायकूं आदि देकरि तिनकैं ईर्यापथकर्मका आश्रव होय है ॥ इहां भावार्थ ऐसा, जो, सकषायी जीवकैं तौ कर्मकी स्थिति अनुभाग पडै है । बहुरि अकषायी जीवकैं स्थिति अनुभाग नाहीं । एकसमय मात्र आश्रव होय, तिसही समय झडि जाय है ॥

आगैं आदिमें कह्या जो सांपरायिक आश्रव ताके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पंचचतुःपंचपंचविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— पहलैं कह्या जो सांपरायिक आश्रव ताके भेद– इंद्रिय पांच, कषाय च्यारि, अव्रत पांच, क्रिया पचीस ए गुणतालीस भेद है। इहां इंद्रिय आदिनिकैं पंच आदिकी संख्याकरि यथासंख्य जानना। इंद्रिय पांच, कषाय च्यारि, अव्रत पांच क्रिया पचीस ऐसैं। तहां पंच इन्द्रिय तौ पहले कही थी सोही। बहुरि कषाय क्रोध आदिक। बहुरि पांच अव्रत हिंसा आदिक आगें कहसी। बहुरि क्रिया पचीस कहिये हैं। तहां जो चैत्य गुरु प्रवचननिकी पूजा करना इत्यादिक जो सम्यक्त्वकी बधावनेहारी क्रिया होय सो सम्यक्त्वक्रिया है ॥ १ ॥ अन्य देवताका स्तवनआदिरूप मिथ्यात्वकी कारण प्रवृत्ति सो मिथ्यात्वक्रिया है ॥ २ ॥ कायआदिकरि गमनागमन आदिका प्रवर्तन, सो प्रयोगक्रिया है ॥ ३ ॥ संयमी पुरुषकैं असंयमकैं सन्मुखपणा, सो समादानक्रिया है ॥ ४ ॥ ईर्यापथगमन करना, सो ईर्यापथक्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं पांच ए क्रिया भई ॥

बहुरि क्रोधके वशतैं परकूं दोष लगावनेकी प्रवृत्ति दुष्टस्वभावता, सो प्रादोषिकी क्रिया है ॥ १ ॥ दुष्टपनाके कार्य चोरी आदिका उद्यम करना, सो कायिकी क्रिया ॥ २ ॥ हिंसाके उपकरण शस्त्रादिकका ग्रहण, सो अधिकरणिकी क्रिया है ॥ ३ ॥ जातैं आपकूं परकूं दुःख उपजै ऐसा प्रवर्तन, सो पारितापिकी क्रिया है ॥ ४ ॥ आयु इन्द्रिय बल उच्छ्वास निःश्वास जे प्राण तिनका वियोग करना, सो प्राणातिपातिनी क्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं ए पांच क्रिया ॥

बहुरि प्रमादि पुरुषकैं रागभावका आर्द्रितपणातैं रमणीकरूप देखनेका अभिप्राय सो दर्शनक्रिया है ॥ १ ॥ प्रमादके वशतैं स्पर्शनयोग्य वस्तुकेविषैं रागपरिणामतैं प्रवृत्ति, सो स्पर्शनक्रिया है ॥ २ ॥ विषयके अपूर्व नवे नवे कारण आधार उपजावना, सो प्रात्ययिकी क्रिया है ॥ ३ ॥ जहां स्त्री पुरुष पशु बैठते प्रवर्तते होय तिस क्षेत्रमें मलमूत्र क्षेपणा, सो समंतानुपातक्रिया है ॥ ४ ॥ विनाझाड्या विनामर्दली पृथिवीउपरि काय आदिका निक्षेपण करना, सो अनाभोगक्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं ए पांच क्रिया ॥

बहुरि परके करने योग्य क्रिया आप करै सो स्वहस्तक्रिया ॥ १ ॥ पापका जाकरि आदानग्रहण होय इत्यादिक प्रवृत्तिका विशेषका भला जानना, सो निसर्गक्रिया है ॥ २ ॥ परका आचऱ्या जो सावद्य कहिये पापसहितकार्य आदिकका प्रगट करना, सो विदारण क्रिया ॥ ३ ॥ जैसैं अरहंतकी आज्ञा है, तैसैं आवश्यक आदिकी प्रवृत्ति चारित्रमोहके उदयतैं आपसू करि न जाय ताका अन्यथा प्ररूपण करै सो आज्ञाव्यापादिकी क्रिया है ॥ ४ ॥ साग्र कहिये कपट तथा

आलस्यकरि शास्त्रोक्तविधान करनेकेविषै अनादर करना सो अनाकांक्षक्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं ए पांच क्रिया भई ॥ बहुरि छेदन भेदन विगाडना आदि क्रियाविषै तत्परपणा तथा अन्यपुरुष आरंभ करै तहां आपकै हर्ष होय, सो प्रारंभ-क्रिया है ॥ १ ॥ परिग्रहकी रक्षाके अर्थि प्रवर्तना, सो पारिग्राहिकी क्रिया है ॥ २ ॥ ज्ञानदर्शन आदिविषै कपटरूप प्रवर्तना ठगनेके उपाय, सो मायाक्रिया है ॥ ३ ॥ अन्य मिथ्यादृष्टिपुरुष मिथ्यात्वके कार्यविषै प्रवर्तै है, ताकूं प्रशंसाकरि गाढा करै जैसैं तू भलै करै है इत्यादिक कहना, सो मिथ्यादर्शनक्रिया है ॥ ४ ॥ संयमके घातककर्मके उदयके वशतैं अत्यागरूप प्रवर्तना, सो अप्रत्याख्यानक्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं ए पांचक्रिया भई ए सर्व मिलि पचीस क्रिया भई ॥ एक इन्द्रियकूं आदि देकरि है, ते कार्यकारणके भेदतैं भेदरूप भये है ते संते सांपरायिककर्मके आश्रवके द्वार हो है ॥

इहां इन्द्रिय कषाय अव्रत तौ कारण है। बहुरि क्रिया है ते तिनके निमित्त होय है, तातैं कार्य है। ऐसैं भेदरूप जानने। इहां कोई कहै, इन्द्रिय कषाय अव्रत ए क्रियास्वरूपही है, तातैं क्रियाके ग्रहणतैं ग्रहण भयेही, जुदे काहेकूं कहे? ताकूं कहिये, जो, ऐसैं नाहीं। जातैं एकान्त नाहीं है। जो इन्द्रियादिक क्रियास्वभावही है। प्रथम तौ नाम स्थापना द्रव्यरूप इन्द्रियादिक है, ते क्रियास्वभाव नाहीं है, अर आश्रवकूं कारण हैही, सो न्यारे कहे है। बहुरि ऐसा भी नहीं, जो, ए इन्द्रियादिक द्रव्याश्रवही है। भावाश्रवकर्मका ग्रहण है, सो पचीसक्रियातैं होय है। जातैं योगतैं भया जो कर्मका ग्रहण ताकूं द्रव्याश्रव मानिये। तातैं ऐसा है, जो इन्द्रियकषायाव्रत है ते कारणरूप भावाश्रव है अर कार्यरूप पचीस क्रिया है। सो कारण कार्य दोऊही कहे चाहिये। इन कारणनिविना क्रिया होय नाहीं। अर कारण विद्यमान रहै तैतैं क्रिया प्रवर्तैही। ए पचीस क्रिया कही ते संक्षेपरूप कही है। इनका विस्तार क्रियाके स्थानक असंख्यातलोकमात्र है तिनका विशेष अगिले सूत्रमें ज्ञान अज्ञान तीव्र मंद भाव आदिकरि कहसी ॥

बहुरि कोई कहै, इन्द्रियतैंही सर्व आश्रव है। इनहीतैं लोक कषायादिकविषैं प्रवर्तै है, तातैं कषायादिकका ग्रहण न चाहिये। ताकूं कहिये, ऐसा नाही है। जातैं इन्द्रियनिकी रागसहितप्रवृत्तिके कारण प्रमत्तगुणस्थानताईही है, कषायतैं आश्रव अप्रमत्तादिकविषै भी है। जो इन्द्रियही कहिये कषाय नही कहिये तौ अप्रमत्तादिकविषैं आश्रव न ठहरै। बहुरि एकेन्द्रियादि असंज्ञीपंचेन्द्रिय जीवनिपर्यंत यथासंभव इन्द्रियमनका अभाव होतैं भी क्रोधादिनिमित्ततैं आश्रव होय है सो न ठहरै। बहुरि कोई कहै कषायहीतैं आश्रव है, तातैं इन्द्रियादिक काहेकूं कहना? ताकूं कहिये, सत्तारूप कषायकर्मका सद्भाव उपशांतकषायविषै भी है। ताकै सांपराय आश्रवका प्रसंग आवै तथा योगनिमित्तक आश्रव तहां भी है, ताका अप्रसंग आवै है। तातैं कषायमात्रही कहना युक्त नाहीं। बहुरि कोई कहै अव्रतही कहना, यामें इन्द्रियादि सर्व आगये।

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यवर्य श्री १०८ शांतिसागर महाराजके आदेशसे श्री दिगंबर जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्थाकी तरफसे ज्ञानदानके लिये छपी हुई

श्रीवीतरागाय नमः

वीर संवत् २४८१]

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

[ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण

अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता

दोहा– मोह राग रुष भाव ये, निश्चय आश्रय तीनि ॥
हति ध्यानी ज्ञानी भये, नमूं तिनहि गुणलीन ॥ १ ॥

ऐसैं मंगलाचरणके अर्थि नमस्कार कारि सर्वार्थसिद्धि नाम टीकाके अनुसार कहिये है। तहां पंचम अध्यायमें अजीवपदार्थका व्याख्यान किया। अब ताके अनंतर आस्रवपदार्थका व्याख्यान किया चाहिये। तातैं तिस आस्रव-पदार्थकी प्रसिद्धिके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ कायवाङ्मनः कर्म योगः ॥ १ ॥

याका अर्थ— काय वचन मन इनका कर्म सो योग है। तहां काय आदि शब्दनिका अर्थ तौ पहले कह्या था, सोही जानना। बहुरि कर्मशब्दका अर्थ इहां क्रिया है। जातैं कर्म अरु क्रियामें इहां भेद नाहीं है। ऐसैं काय वचन मनकी क्रिया है सो योग है। तहां ऐसा जाननां, जो,

इहां भावार्थ ऐसा, जो, मनवचनकायके निमित्ततैं आत्माके प्रदेशनिका चलना, सो योग है। बहुरि इहां वीर्यांतराय ज्ञानावरणका क्षयोपशमजनित लब्धिरूप शक्ति कही, सो इनका क्षय होतैं भी कायवचनमनकी वर्गणाके निमित्ततैं सयोग-केवली आत्माके प्रदेशनिका चलना है, तातैं तहां भी योग जानना ॥

जो, कालाणु एक है तौ अनंतपर्यायनिकूं वर्तनाका कारण है । तातैं ताकेविषैं अनंतपणाका उपचार कीजिये है । बहुरि समय है सो उत्कृष्टपणैं कालका अंश है । तिसके समूहविशेषकूं आवली इत्यादि जाननी ॥

आगैं, गुणपर्ययवद् द्रव्य है ऐसा कह्या, तहां गुण कहां ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥ ४१ ॥

याका अर्थ— जिनका द्रव्य आश्रय है बहुरि जे आप अन्यगुणनिकरि रहित हैं, ते गुण हैं, इहां निर्गुण ऐसा गुणनिका विशेषण है, सो कौन अर्थि है सो कहिये है । दोय आदि परमाणुनिका स्कंध भी द्रव्यकै आश्रय है । जातैं परमाणुनितैं भया है सो द्रव्याश्रया गुणा एताही कहिये तौ तिन स्कंधानिकै गुणपणां ठहरता । तातैं निर्गुण कहनेतैं तिनके गुणका निषेध भया ते स्कंध भी गुणसहित हैं, तातैं द्रव्यही हैं, गुण नाहीं हैं । बहुरि द्रव्याश्रया इसविशेषणतैं पर्यायनिकैं गुणपणाका निषेध होय हैं । जातैं गुण हैं ते तौ द्रव्यतैं नित्य संबंधरूप हैं । पर्याय हैं ते क्रमतैं होय। सो कदाचित् होय विनशि जाय हैं । तातैं जे नित्यही द्रव्यकूं आश्रयकरि प्रवर्तै ते गुण हैं । ऐसैं पर्याय हैं ते गुण नाहीं हैं । तहां जीवके गुण अस्तित्व आदिक तौ साधारण । बहुरि ज्ञानादिक असाधारण । पुद्गलके अचेतनत्व आदि साधारण । रूप आदिक असाधारण । बहुरि पर्याय जीवके घटका ज्ञान आदिक हैं । पुद्गलके घट कपाल आदिक हैं ॥

आगैं पूछे है बारबार परिणामशब्द कह्या ताका कहा अर्थ है ? ऐसैं पूछैं उत्तरका सूत्र कहै हैं—

॥ तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

याका अर्थ—द्रव्य जिस स्वरूप परिणमे, ताकूं जिनका भाव कहिये, ऐसा तद्भाव है, सो परिणाम है । इहां इस सूत्रको कहनेका अन्यप्रयोजन कहै हैं । गुण हैं ते द्रव्यतैं जुदे पदार्थ हैं, ऐसा अन्य कोईका मत है । सो स्याद्वादीनिकूं अन्यमती कहै हैं । तुमारै यह मान्य है कि नाहीं ? ताकूं आचार्य कहैं हैं, जो, तुम मानूं जैसैं तौ जुदा पदार्थ नाहीं मानैं हैं, कथंचित् संज्ञासंख्यादि भेदकी अपेक्षाकरि द्रव्यतैं गुण भेदरूप भी मानैं हैं, तथापि तिसतैं प्रदेशनिकी अपेक्षाकरि अभेद है । जातैं तिस द्रव्यहीके परिणाम हैं । तातैं जुदे नाहीं । ऐसैं कहते पूछैं हैं, जो, तुम परिणाम कह्या सो

ताकूं कहिये, अव्रत तौ भावमात्र, है, ताकी प्रवृत्ति इन्द्रियादिकरूप है, सो कहे विना कैसैं जानिये? तातैं इन्द्रिय कषाय अव्रत क्रिया च्यार्‍यौंही कहना युक्त है ॥

आगें इहा कोई कहै है, जो, मन वचन काय योग हैं ते सर्व आत्माके कार्य हैं तातैं सर्व संसारीजीवनिकै समान हैं। तातैं बंधका फल भोगनेमें विशेष नाहीं है। ऐसा कहतैं कहै हैं जो, यह ऐसैं नाहीं हैं। जातैं योग सर्वही जीवनिकैं पाईये हैं ॥ तौ तिन जीवनिके परिणाम अनंतभेद लिये हैं, सो ऐसा है सो कहिये हैं। ताका सूत्र—

॥ तीव्रमंदज्ञाताज्ञात भावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— तीव्रभाव मंदभाव ज्ञातभाव अज्ञातभाव अधिकरण वीर्य इनके विशेषतैं तिस आश्रवका विशेष है। तहां बाह्य अभ्यंतरके कारणके वशतैं उदयरूप भया जो उत्कट परिणाम सो तीव्र है। यातैं विपरीति जो उत्कट नाहीं, सो मंद हैं। यहू प्राणी मैं मारूं ऐसैं जानि मारनेकी प्रवृत्ति करै, सो ज्ञात ऐसा कहिये। मदतैं तथा प्रमादतैं विना जाणिकरि प्रवृत्ति होय, सो अज्ञात है। जाविषैं कार्य अधिककरि कीजिये, सो अधिकरण है, याकूं आधार भी कहिये तथा द्रव्य कहियें। द्रव्यकी तिन शक्तिका विशेष, सो वीर्य है। भावशब्द प्रत्येक दीजिये। तब तीव्रभाव मंदभाव इत्यादि जानना। इनके विशेपतैं तिस आश्रवका विशेष है। जातैं कारणके भेदतैं कार्यविषैं भी भेद होय है ऐसैं जानना ॥

इहां भावार्थ ऐसा, जो, क्रोध आदिके अतिबंधनेतैं तीव्रभाव होय है, तिन कषायनिके मंद उदयतैं मंदभाव हो है। बहुरि या प्राणीकूं मैं मारूं ऐसा परिणाम भी न होय अर प्राणी मार्‍या जाय ताहि जाणे जो यह मार्‍या गया तथा आप जाणिकरि मारै सो ज्ञातभाव है। बहुरि मदिरादिकके निमित्ततैं इन्द्रियनिका असावधान होना, सो मद तथा असावधानीतैं प्रवर्तना प्रमाद है। इनके वशतैं विना जाणैं प्रवृत्ति करना, सो अज्ञातभाव है। पुरुषका प्रयोजन जाकै आधार होय सो वस्तु द्रव्य अधिकरण है। द्रव्यकी शक्ति सो वीर्य है। बहुरि कषायनिके स्थानक असंख्यातलोकप्रमाण है। तातैं जीवनिके भाव बहुत हैं। तातैं तिनका अभावमें विशेष जानना। बहुरि अनुभागके भेदतैं आश्रवनिविषैं भी भेदसिद्धि होय है। इसहीतैं जीवनिकै शरीरादिकका अनंतपणा सिद्ध है। ऐसा भावार्थ जानना ॥

आगैं पूछै है, जो, अधिकरण कह्या ताका स्वरूप जान्या नाहीं, सो कहो। ऐसैं पूछैं तिस अधिकरणके भेदके प्रतिपादनके द्वारकरि ताका स्वरूपका निर्णयके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— आश्रवका अधिकरण जीवद्रव्य अजीवद्रव्य ऐसैं दोयभेद लिये है। तहां जीव अजीवका लक्षण पहलें कह्या तेही हैं। इहां अधिकरणविशेष जनावनेकूं फेरि नाम कहे हैं। सो अधिकरण हिंसाआदिका उपकरणपणां है। इहां कोई कहै, जीव अजीव मूलपदार्थ दोयही हैं। तातैं सूत्रमें द्विवचन चाहिये। ताकूं कहिये, ऐसैं नाहीं है। इहां अधिकरणसामान्य नाहीं है। जीव अजीवके पर्याय अधिकरण हैं। तातैं जिसतिस पर्यायसहित द्रव्य बहुतप्रकार हैं। तातैं बहुवचन है। सो यह अधिकरण आश्रवका है ऐसा संबंध अर्थके वशतैं सूत्रमें कारण ॥

आगें जीवाधिकरणके भेद जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥ ८ ॥

याका अर्थ— आदिका जीवाधिकरण है, सो संरंभ समारंभ आरंभ ए तीनि बहुरि मन वचन काय योग तीनि, कृत कारित अनुमोदना ए तीनि, क्रोध मान माया लोभ कषाय च्यारि ए एक एकप्रति देना ऐसा परस्पर गुणे एकसौ आठ भेदरूप है। तहां प्रमादी जीवकै हिंसाआदिकेविषैं प्रयत्न कहिये उद्यमरूपपरिणाम सो संरंभ है। बहुरि हिंसाके कारणका अभ्यास करना सामग्री मिलावणी सो समारंभ है। प्रक्रम कहिये आरंभ करणा सो आरंभ है। ऐसैं ए तीनि भये। बहुरि योगपूर्वैं कहेही। मन वचन काय भेद लिये तीनि। बहुरि कृत कहिये आप स्वाधीन होय करै सो, कारित कहिये परकनै करावै सो, अनुमत कहिये पैला करै, ताकूं आप मन वचन कायकरि भला जानै ऐसैं तीनि। बहुरि क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि कषाय इनका लक्षण पूर्वैं कह्या सोही ऐसैं। विशेषशब्द इन सर्वनिकैं संबंध करणा। संरंभविशेष समारंभविशेष इत्यादि। जाकरि अर्थकूं अन्य अर्थ लेकरि जुदा कीजिये सो विशेषशब्दका अर्थ है। ऐसैं आदिका जीवाधिकरण है, सो एते विशेषनिकरि भेदरूप कीजिये है। बहुरि त्रिआदि च्यारि शब्द हैं, ते सुचप्रत्ययान्त हैं, ते यथानुक्रम संबंधकरि लेने। संरंभादि तीनि, योग तीनि, कृत आदि तीनि, कषाय च्यारि इन गणतीकी रीति सुच्प्रत्ययकरि जाणिये है। बहुरि एकशः शब्दकरि वीप्स्या कही है। एक एकप्रती तीनि आदि भेद प्राप्त करने, सोही कहिये हैं। क्रोधकृतकायसंरंभ, मानकृतकायसंरंभ मायाकृतकायसंरंभ, लोभकृतकायसंरंभ, क्रोधकारितकायसंरंभ, मानकारितकायसंरंभ, मायाकारितकायसंरंभ, लोभकारितकायसंरंभ, क्रोधानुमतकायसंरंभ, मानानुमतकायसंरंभ, मायानुमतकायसंरंभ लोभानुमत-

कायसंरंभ । ऐसें बारह कायसंरंभ भये। ऐसें वचनयोग मनोयोगविषैं बारहबारह प्रकार संरंभ होय। ते भेले किये छत्तीस होय। तैसैंही छत्तीस समारंभ होय। तथा तैसैंही आरंभ होय। सर्व जोडि जीवाधिकरण एकसोआठ होय हैं। बहुरि सूत्रमें चशब्द है सो अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण संज्वलन जे कषायके भेद च्यारि तिनकरि च्यारिसैं बत्तीस भेद होय हैं। ऐसैं असंख्यातभेदके समुच्चयके अर्थि हैं॥

आगें दूसरा अजीवाधिकरणके भेद जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं–

॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥ ९ ॥

याका अर्थ— निर्वर्तना निक्षेप संयोग निसर्ग ये च्यारि। तहां निर्वर्तनाके भेद दोय, निक्षेपके च्यारि भेद, संयोगके दोय भेद, निसर्गके तीनि भेद। ए अजीवाधिकरण हैं, ते संरंभादिकतैं परं कहिये अन्य हैं। तहां जो निपजाईये सो निर्वर्तना है। बहुरि जो निक्षेपणा करिये धरिये सो निक्षेप है। बहुरि जो संयोजन करिये मिलाईये सो संयोग है। बहुरि जो निसर्जन करिये प्रवर्ताईए सो निसर्ग है। इनका दोय आदि संख्यातैं अनुक्रमतैं संबंध करिये। निर्वर्तनाके दोय भेद, निक्षेपके च्यारि भेद, संयोगके दोय भेद, निसर्गके तीनि भेद ए अजीवाधिकरणके भेद हैं। इहां सूत्रमें परवचन है, ताका अन्य ऐसा अर्थ लेणा। ए संरंभादिक जीवाधिकरण कहे तिनतैं अन्य हैं। जो ऐसा न लीजिये तौ निर्वर्तना आदि जीवहीके परिणाम हैं। तातैं जीवाधिकरणही ठहरै। तहां निर्वर्तना अधिकरण दोय प्रकार है। मूलगुणनिर्वर्तना उत्तरगुण निर्वर्तना। तहां मूल पांचप्रकार, शरीर वचन मन उच्छ्वास निःश्वास ऐसैं इनका निपजावना। बहुरि उत्तर काष्ठ पुस्त चित्रकर्म इत्यादि इनका निपजावना॥

बहुरि निक्षेप च्यारिप्रकार। तहां अप्रत्यवेक्षितनिक्षेपाधिकरण कहिये विना देख्या वस्तु निक्षेपणा स्थापना। दुःप्रमृष्टनिक्षेपाधिकरण कहिये पृथ्वीआदिक बुरीतरह बुहारे मर्दन किये वस्तु धरना। सहसानिक्षेपाधिकरण कहिये शीघ्र वस्तु धरना पटकि देणां। अनाभोगनिक्षेपाधिकरण कहिये वस्तु जहां धरी चाहिये तहां न धरणां जैसैं तैसैं हरेक जायगा धरणां। बहुरि संयोग दोयप्रकार। तहां भुक्तपानसंयोगाधिकरण कहिये भोजनपानका मिलावणां। उपकरणसंयोगाधिकरण कहिये जिन वस्तुनितैं कार्य किया चाहिये तिन उपकरणनिका संयोग करणां मिलावनां। बहुरि निसर्ग तीनिप्रकार तहां कायनिसर्गाधिकरण कहिये कायका प्रवर्तन करना। वाग्निसर्गाधिकरण कहिये वचनका प्रवर्तन करना। मनोनिसर्गाधिकरण कहिये मनका प्रवर्तन करना। इहां भावार्थ ऐसा जानना, जो, जीव अजीव द्रव्य हैं तिनकै आश्रय आधारकरि

॥ अधिकरणं जीवाजीवा ः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— आश्रवका अधिकरण जीवद्रव्य अजीवद्रव्य ऐसैं दोयभेद लिये है । तहां जीव अजीवका लक्षण पहलैं कह्या तेही हैं । इहां अधिकरणविशेष जनावनेकूं फेरि नाम कहे हैं । सो अधिकरण हिंसाआदिका उपकरणपणा है । इहां कोई कहै, जीव अजीव मूलपदार्थ दोयही हैं । तातैं सूत्रमें द्विवचन चाहिये । ताकूं कहिये, ऐसैं नाहीं है । इहां अधिकरणसामान्य नाहीं है । जीव अजीवके पर्याय अधिकरण हैं । तातैं जिसतिस पर्यायसहित द्रव्य बहुतप्रकार हैं । तातैं बहुवचन है । सो यह अधिकरण आश्रवका है ऐसा संबंध अर्थके वशतैं सूत्रमें कारण ॥

आगें जीवाधिकरणके भेद जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥ ८ ॥

याका अर्थ-- आदिका जीवाधिकरण है, सो संरंभ समारभ आरंभ ए तीनि बहुरि मन वचन काय योग तीनि, कृत कारित अनुमोदना ए तीनि, क्रोध मान माया लोभ कषाय च्यारि ए एक एकप्रति देना ऐसा परस्पर गुणे एकसौ आठ भेदरूप है । तहां प्रमादी जीवकै हिंसाआदिकेविषैं प्रयत्न कहिये उद्यमरूपपरिणाम सो संरंभ है । बहुरि हिंसाके कारणका अभ्यास करना सामग्री मिलावणी सो समारंभ है । प्रक्रम कहिये आरंभ करणा सो आरंभ है । ऐसैं ए तीनि भये । बहुरि योगपूर्वैं कहेही । मन वचन काय भेद लिये तीनि । बहुरि कृत कहिये आप स्वाधीन होय करै सो, कारित कहिये परकने करावै सो, अनुमत कहिये पैला करै, ताकूं आप मन वचन कायकरि भला जाने ऐसैं तीनि । बहुरि क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि कषाय इनका लक्षण पूर्वैं कह्या सोही ऐसैं । विशेषशब्द इन सर्वानिकैं संबंध करणा । संरंभविशेष समारंभविशेष इत्यादि । जाकरि अर्थकूं अन्य अर्थ लेकरि जुदा कीजिये सो विशेषशब्दका अर्थ है । ऐसैं आदिका जीवाधिकरण है, सो एते विशेषनिकरि भेदरूप कीजिये है । बहुरि त्रिआदि च्यारि शब्द हैं, ते सुचप्रत्ययान्त हैं, ते यथानुक्रम संबंधकरि लेने । संरंभादि तीनि, योग तीनि, कृत आदि तीनि, कषाय च्यारि इन गणतीकी रीति सुच्प्रत्ययकरि जाणिये है । बहुरि एकशः शब्दकरि वीप्स्या कही है । एक एकप्रती तीनि आदि भेद प्राप्त करने, सोही कहिये हैं । क्रोधकृतकायसंरंभ, मानकृतकायसंरंभ मायाकृतकायसंरंभ, लोभकृतकायसंरंभ, क्रोधकारितकायसंरंभ, मानकारितकायसंरंभ, मायाकारितकायसंरंभ, लोभकारितकायसंरंभ, क्रोधानुमतकायसंरंभ, मानानुमतकायसंरंभ, मायानुमतकायसंरंभ लोभानुमत-

कायसंरंभ । ऐसें बारह कायसंरंभ भये । ऐसें वचनयोग मनोयोगविषैं बारहबारह प्रकार संरंभ होय । ते भेले किये छत्तीस
होय । तैसैंही छत्तीस समारंभ होय । तथा तैसैंही आरंभ होय । सर्व जोडि जीवाधिकरण एकसोआठ होय हैं । बहुरि
सूत्रमें चशब्द है सो अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण संज्वलन जे कषायके भेद च्यारि तिनकारि च्यारिसैं
बत्तीस भेद होय हैं । ऐसें असंख्यातभेदके समुच्चयके अर्थि हैं ॥

आगें दूसरा अजीवाधिकरणके भेद जाननेके आर्थि सूत्र कहै हैं–

॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥ ९ ॥

याका अर्थ— निर्वर्तना निक्षेप संयोग निसर्ग ये च्यारि । तहां निर्वर्तनाके भेद दोय, निक्षेपके च्यारि भेद, संयो-
गके दोय भेद, निसर्गके तीनि भेद । ए अजीवाधिकरण हैं, ते संरंभादिकतैं परं कहिये अन्य हैं । तहां जो निपजाईये
सो निर्वर्तना है । बहुरि जो निक्षेपणा करिये धरिये सो निक्षेप है । बहुरि जो संयोजन करिये मिलाईये सो संयोग
है । बहुरि जो निसर्जन करिये प्रवर्ताईए सो निसर्ग है । इनका दोय आदि संख्यातैं अनुक्रमतैं संबंध करिये । निर्वर्त-
नाके दोय भेद, निक्षेपके च्यारि भेद, संयोगके दोय भेद, निसर्गके तीनि भेद ए अजीवाधिकरणके भेद हैं । इहां
सूत्रमें परवचन है, ताका अन्य ऐसा अर्थ लेणा । ए संरंभादिक जीवाधिकरण कहे तिनतैं अन्य हैं । जो ऐसा न
लीजिये तौ निर्वर्तना आदि जीवहीके परिणाम हैं । तातैं जीवाधिकरणही ठहरै । तहां निर्वर्तना अधिकरण दोय प्रकार
है । मूलगुणनिर्वर्तना उत्तरगुण निर्वर्तना । तहां मूल पांचप्रकार, शरीर वचन मन उच्छ्वास निःश्वास ऐसैं इनका निप-
जावना । बहुरि उत्तर काष्ठ पुस्त चित्रकर्म इत्यादि इनका निपजावना ॥

बहुरि निक्षेप च्यारिप्रकार । तहां अप्रत्यवेक्षितानिक्षेपाधिकरण कहिये विना देख्या वस्तु निक्षेपणा स्थापना । दुःप्रमृष्ट-
निक्षेपाधिकरण कहिये पृथ्वीआदिक बुरीतरह बुहारे मर्दन किये वस्तु धरना । सहसानिक्षेपाधिकरण कहिये शीघ्र वस्तु
धरना पटकि देणां । अनाभोगनिक्षेपाधिकरण कहिये वस्तु जहां धरी चाहिये तहां न धरणां जैसैं तैसैं हरेक जायगा
धरणां । बहुरि संयोग दोयप्रकार । तहां भुक्तपानसंयोगाधिकरण कहिये भोजनपानका मिलावणां । उपकरणसंयोगाधि-
करण कहिये जिन वस्तुनितैं कार्य किया चाहिये तिन उपकरणनिका संयोग करणां मिलावनां । बहुरि निसर्ग तीनिप्रकार
तहां कायनिसर्गाधिकरण कहिये कायका प्रवर्तन करना । वाग्निसर्गाधिकरण कहिये वचनका प्रवर्तन करना । मनो-
निसर्गाधिकरण कहिये मनका प्रवर्तन करना । इहां भावार्थ ऐसा जानना, जो, जीव अजीव द्रव्य हैं तिनकैं आश्रय आधारकरि

कर्मका आश्रव होय है, तिनके भावनिके ए विशेष हैं। ऐसैं सामान्यकरि तौ आश्रवके भेद कहे ॥

अब कर्मनिके विशेषकरि आश्रवके भेद कहनेकूं वक्तव्य होतैं आदिके ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्म तिनके आश्रवके भेद जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ तत्प्रदोषनिन्ह्वमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥ १० ॥

याका अर्थ— तिस ज्ञानदर्शनके विषैं प्रदोष निह्नव मात्सर्य अंतराय आसादन उपघात इनका करना, सो इन दोऊनिकै आवरणकर्मनिका आश्रव करै है। तहां मोक्षका कारण जो तत्वज्ञान ताका कोई पुरुष कथन प्रशंसा करता होय ताकूं कोई सराहै नाहीं तथा ताकूं सुणिकारि आप मौन राखै अंतरंगविषैं वासूं अदेखसाभावकारि तथा ज्ञानकूं दोष लगावनेके अभिप्रायकरि वाका साधक न रहै, ताके ऐसे परिणामकूं प्रदोष कहिये। बहुरि आपकूं जिसका ज्ञान होय अर कोई कारणकरि कहै जो नाहीं हैं, तथा मैं जानू नाहीं। जैसैं काहूंनें पूछ्या जो हिंसातैं कहा होय? तहां आप जानैं है जो हिंसातैं पाप है, तहां कोई हिंसक पुरुष बैठ्या होय ताके भयतैं तथा आपकूं हिंसा करनी होय तथा आपके अन्य कछु कार्यका आरंभ होय इत्यादिक कारणनितैं कहै, जो, मैं तौ जानूं नाहीं, तथा कहै हैं, हिंसामें पाप पाप नाहीं इत्यादिकारि अपने ज्ञानकूं छिपावै, ताकूं निह्नव कहिये बहुरि आप शास्त्रादिका ज्ञान भलेप्रकार पढ्या होय पैलेकूं शिखावनेयोग्य होय तौ कोई कारणतैं शिखावै नाहीं। ऐसैं विचारै, जो पैलेकूं होय जायगा तौ मेरी बरोबरी करैगा इत्यादि परिणामकूं मात्सर्य कहिये ॥

बहुरि ज्ञानका विच्छेद करै विघ्न पाडै ताकूं अंतराय कहिये ॥ बहुरि परके तथा आपका प्रगट करने योग्य ज्ञान होय ताकूं वचनकरि तथा कायकरि बजै प्रगट करै नाहीं तथा परकूं कहै ज्ञानकूं प्रकाशै मति, इत्यादि कहै सो आसादना कहिये। बहुरि सराहने योग्य साचा ज्ञान होय ताकूं दूषण लगावै सो उपघात कहिये। इहां कोई कहै, दूषण लगावणा उपघात कह्या सो तौ आसादनाही भई ताकूं कहिये, जो छते ज्ञानकूं सद्विज्ञानका विनय करना तथा प्रदान कहिये शिखावने आदि तथा ज्ञानके गुणानुवाद करना इत्यादि न करै सो तौ आसादना है। बहुरि साचे ज्ञानकूं कहै यह ज्ञान झूठा है तथा ज्ञानही नाहीं ऐसैं कहना तथा ज्ञानके नाशका आभिप्राय सो उपघात है। ऐसा भेद जानना। बहुरि सूत्रमें तत्शब्द है ताकारि ज्ञानदर्शन लेना ॥

इहां पूछै, जो, इहां ज्ञानदर्शनका प्रकरण नाहीं, विना कहे कैसैं लेने? ताकूं कहिये, इहां प्रश्नकी अपेक्षा है।

शिष्यका प्रश्न जो ज्ञानदर्शनावरणकर्मका आश्रव कहा ? ऐसैं प्रश्नतैं ज्ञानदर्शन लेने । ऐसैं कहनेतैं ज्ञानदर्शनविषैं तथा तिनके कारण जे गुरु पुस्तक आदि तिनविषैं प्रदोषादिक करै ते लगाय लेने । जातैं गुरु आदि ज्ञानके कारण हैं, ते भी जानने । ऐसैं ए प्रदोषादिक ज्ञानदर्शनावरणकर्मके आश्रवके कारण हैं । यहां ऐसा जाननां, जो, एककारणकरि अनेक कार्य होय हैं, सो प्रदोषादिक ज्ञानकेविषैं होय । तैसैंही दर्शनविषैं होय ऐसैं समानै हैं । तौ दोऊ कर्मका आश्रवरूप कार्य न्यारा न्यारा करै हैं । अथवा विषयके भेदतैं आश्रवका भी भेद है । तातैं ज्ञानसंबंधी प्रदोषादिक ज्ञानावरणकर्मका आश्रव करै है । दर्शनसंबंधी दर्शनावरणका आश्रव करै है ॥

इहां एता और जाननां, जो, आचार्योपाध्यायतैं तौ प्रतिकूल रहना, अकाल अध्ययन करना, श्रद्धान न करना, अभ्यासविषैं आलस्य करना, अनादरतैं शास्त्रके अर्थकूं सुनना, तीर्थ कहिये मोक्षमार्ग ताका उपरोध कहिये रोकना-चलनैं न देना, बहुश्रुत होय गर्व करना, झूठा उपदेश करना, बहुश्रुतकी अवज्ञा करनी, परमतकी पक्ष करनेविषैं पंडितपणा करना, अपने मतकी पक्ष छोडणी, असंबद्धप्रलाप कहिये वृथा बकवाद करना, उत्सूत्रभाषण, ज्ञानाभ्यास करै सो कुछ लौकिकप्रयोजन लधै तैसैं करै, शास्त्रको बेचे, प्राणीनिका घात करै इत्यादिक ज्ञानावरणकर्मके आश्रवकूं कारण हैं । बहुरि तैसैंही दर्शनविषैं मात्सर्य कहिये पैलै देखैं ताकूं दिखावै नहीं, तथा देखताके देखनेविषैं अंतराय करै, बहुरि पैलाके नेत्र उपाडै, तथा परके इन्द्रियनिविषैं प्रतिकूलता कहिये बिगाड्या चाहैं, अपनी दृष्टि सुंदर होय बहुरि दीखता होय ताका गर्व, तथा नेत्रनिकूं आयत लंबे करने फाडिकरि देखना, तथा दिनविषैं सोवना, तथा आलस्यरूप रहना, तथा नास्तिकपक्षका ग्रहण करना, सम्यग्दृष्टीकूं दूषण लगावना, कुतीर्थकी प्रशंसा करनी, प्राणीनिका घात करना, यतीश्वरनिकूं देखि ग्लानि करनी इत्यादि दर्शनावरणकर्मके आश्रवकूं कारण हैं ॥

आगैं, जैसैं ज्ञानदर्शनावरणकर्मका आश्रवका विशेष कह्या, तैसैंही वेदनीयकर्मका कहै हैं, ताका सूत्र—

॥ दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥ ११ ॥

याका अर्थ— दुःख शोक ताप आक्रंदन वध परिदेवन एते आपकै तथा परकै तथा दोऊकै करै करावै ते असातावेदनीयकर्मके आश्रवकूं कारण हैं । तहां पीडारूप परिणाम सो तौ दुःख है । अपना उपकारी इष्टवस्तुके संबंधका विच्छेद होतैं खेदसहित निराशपरिणाम होय, सो शोक है । कोई निंद्यकार्य करनेतैं अपना अपवाद होय तब मन मैला होय तिसका पश्चात्ताप बहुत करना, सो ताप है । कोई निमित्ततैं परिताप भया तातैं विलापकरि अश्रुपातसहित प्रगट

पुकारकरि रोवना, सो आक्रंदन है । आयु इन्द्रिय बल प्राणनिका वियोग करना, सो वध है । संक्लेशपरिणामकरि ऐसा रोवना, जामें अपने तथा परके उपकार करावनेकी तथा करनेकी वांछा होय जाके सुणें पैलाकैं अनुकंपा करुणा उपजै, सो परिदेवन है ॥

इहां कोई कहै, जो, शोक आदि तौ दुःखकेही विशेष हैं; तातैं एक दुःखही ग्रहण करना । ताकूं कहिये, यह तौ सत्य है, दुःखमें सारेही आय जाय हैं तथापि केई विशेष कहनेकारि दुःखकी जातिका जनावना होय है । जैसैं गऊ ऐसा कहतैं ताके विशेष न जानिये ताके जनावनेकूं खाडी मूडी काली धौली इत्यादिक कहिये हैं; तैसैं दुःखसंबंधी आश्रवके असंख्यातलोकप्रमाण भेद हैं, तातैं दुःखही कहते विशेष न जानिये तव केईक विशेष कहनेकारि तिनका भेदका ज्ञान होय है । तातैं विशेष कहे हैं । ते एते दुःखआदिक क्रोधादिक परिणामनितैं आपविषैं भी होय हैं । तथा परकैं भी कीजिये है तथा आपकै कारि पैलाकै भी करै ऐसैं दोऊविषैं भी होय हैं ते सर्वही असातावेदनीयकर्मके आश्रवके कारण हैं ॥

इहां तर्क, जो, दुःखआदिक आपकै तथा परकै तथा दोऊकै किये याके असातावेदनीयके आश्रवके कारण हैं, तौ केशनिका लोंच करना, अनशन तप करना, आतापनादि योग करना ए दुःखके कारण हैं ते आप करै परके करावै सो कौन अर्थि है ? ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है । जो अंतरंग क्रोधआदिकपरिणामके आवेशपूर्वक दुःखआदिक हैं, ते असातावेदनीयके आश्रवकूं निमित्त हैं ऐसा विशेपकारि कह्या है । जैसैं कोई वैद्य परमकरुणाचित्तकारि निःशल्य हुवा यत्नतैं संयमीपुरुपके गूमडाकै चीरा दे है, सो वाकै दुःखका कारण है, तौ तिस वैद्यके बाह्य दुःखके निमित्तमात्रतैं पापबंध न होय है; तैसैंही संसारसंबंधी महादुःखतैं विरक्त जो मुनि तिस दुःखको अभाव करनेके उपायविषैं मन लगाया है, शास्त्रोक्तविधानकारि अनशनादिकविषैं प्रवर्तै है तथा अन्यकूं प्रवर्त्तावै है, ताके संक्लेशपरिणामके अभावतैं बाह्य दुःख-निमित्तपरता होतैं भी पापबंध नाहीं होय है ॥ इहा उक्तं च दोय श्लोक हैं, तिनका अर्थ कहै हैं— जैसैं रोगीका इलाज करतैं वाकै सुख होऊ तथा दुःख होऊ ते सुखदुःख तिस इलाजके कारण नाहीं देखिये है, रोग गमाव-नेका तौ इलाज सामान्य है; तैसैं संसारतैं छूटनेकूं मोक्षका साधनकेविषैं सुख होऊ तथा दुःख होऊ ते दोऊही मोक्ष-साधन विषैं कारण नाहीं हैं ॥

भावार्थ— जैसैं वैद्यका अभिप्राय रोगीकूं नीरोग करनेका है, तैसैं संसारदुःख मेटि मोक्ष प्राप्त होनेका अभिप्राय-वालेकै सुखदुःख होना प्रधान नाहीं । तातैं तिनके दुःखके कारण होतैं भी असाताका कारण नाहीं है । इहां दुःखके समानजातीय भाव अन्य भी उपलक्षणतैं जानने । ते कौन सो कहिये हैं । अशुभप्रयोगकारि परकूं पापविषैं प्रेरणा,

परपरिवाद कहिये परका अपवाद करना, पैशुन्य कहिये परतैं अदेखसाभावकरि खोटी कहना, चुगली खाणी, परकी करुणा न करनी, परकै परिताप कहिये तीव्र पीडा उपजावनी, अंग उपांगका भेदन करना, मर्मकी ज्यायगां भेदन विदारण करना, परकूं ताडन करना, परकैं त्रास उपजावना, परका तिरस्कार करना, परकूं भुलसना दडावना, परका अंग छोलना, काटना, श्वासनिरोध करना, बांधना, रोकना, मसलना, परकूं बसमैं राखना, स्वच्छंद रहने न देना, परकूं वाहना, वोझ आदि दे चलावना, परकूं शरीरकूं घसना, रगडना, परकी निंदा करणी, अपनी प्रशंसा करनी, संक्लेश उपजावना, वहु आरंभ करना, बहुपरिग्रह चाहना, परका प्राण हरणा, क्रूरस्वभाव राखणा, पापकर्मकी आजीविका करनी, अनर्थदंड विनाप्रयोजन पाप करना, आहारादिमें विष मिलावना, पांसी वागुरा जाल पींजरा मंत्र आदि जीवनिके घातका उपाय करना, शस्त्रनिका अभ्यास करना, पापमिश्रभाव राखना, पापी जीवनिसूं मित्रता राखनी, तथा तिनकी चाकरी करनी, तिनतैं संभापण देने लेनेका व्यवहार करना, ए सर्वेही असातावेदनीयके आश्रवकूं कारण हैं ॥

आगैं, असातावेदनीयके आश्रवके कारण तौ कहे, बहुरि सातावेदनीयके आश्रवका कारण कहा है ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं —

॥ भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥

याका अर्थ— भूत कहिये प्राणी अर व्रतवान् इनविषैं तौ अनुकंपा, बहुरि दान देना, सरागसंयम आदिक इनका योग कहिये समाधि भलेप्रकार चित्तका समाधानकरि इनमें लगावणा चिंतवना, बहुरि क्षमा शौच बहुरि इतिशब्दतैं अरहंतपूजादिक ए सर्व सातावेदनीयके आश्रवके कारण हैं । तहां कर्मके उदयके वशतैं गतिगतिविषैं वर्तता जो भूत कहिये प्राणिमात्र लेणे । बहुरि अहिंसादिकव्रत जिनके होय ते व्रती कहिये, ते घरके त्यागी तौ मुनि बहुरि घरहीमें अणुव्रत पालें ते श्रावक । बहुरि जो परके उपकारविषैं आर्द्रितचित्त पैलाकी पीडाकूं अपनेविषैं भई ऐसैं माननेवाले पुरुषके करुणाभाव होय, सो अनुकंपा कहिये । जो प्राणिमात्रविषैं तथा व्रतीनिविषैं अनुकंपा होय सो भूतव्रत्यनुकंपा कहिये । बहुरि परके उपकारकी बुद्धिकरि अपना धनादिक देना सो दान है । बहुरि संसारके कारण जे द्रव्यभावकर्म तिनके अभाव करनेविषैं उद्यमी अर जिनके चित्तमें संसारके कारणकी निवृत्ति करनेका राग ते सराग कहिये, बहुरि प्राणी तथा इन्द्रियनिविषैं अशुभप्रवृत्तीका त्याग सो संयम कहिये, सो पूर्वोक्तसरागिनिका सयम सो सरागसंयम कहिये । अथवा रागसहित संयम सो सरागसंयम है ॥

इहां आदिशब्दकरि संयमासंयम अकामनिर्जरा बालतप लेणे । बहुरि योग कहिये समाधी सम्यक् चित्त लगावणा । भावार्थ– प्राणीमात्र तथा व्रतीनिविषैं तौ करुणाभाव बहुरि दान बहुरि सरागसंयमादिक इनकेविषैं तौ चित्त राखणा । बहुरि क्रोधादिपरिणामका अभाव सो क्षान्ति कहिये क्षमा है । बहुरि लोभके प्रकार जीवनेका लोभ, नीरोग रहनेका लोभ, इन्द्रिय बणी रहनेका लोभ, उपकरणवस्तुका लोभ ए हैं, तथा अपना द्रव्य न देना, परका द्रव्य लेणा, चोरि भी लेणा, पैलाकी धरी वस्तूकूं छिपावना इत्यादि अनेक प्रकार हैं, तिनका न करना सो शौच है ॥ बहुरि इतिशब्द इहां प्रकार अर्थमें है, ताकरि अरहंतकी पूजा करवाविषैं तत्परपणा तथा बाल वृद्ध तपस्वी मुनिनिका वैयावृत्य करना इत्यादिक लेणा । इहां प्रश्न, जो, भूतके कहनेतैं प्राणिमात्र तौ आयही गये, फेरि व्रतीका ग्रहण काहेकूं किया ? ताका समाधान जो, व्रतीकेविषैं अनुकंपाका प्रधानपणां जनावनेके अर्थि फेरि व्रतीका ग्रहण है । प्राणीनिकेविषैं तौ सामान्यपणें होयही परंतु व्रतीनिकेविषैं विशेषकरि होय । जैसैं बडे आदमीकै हरेकसूं प्रीति होय है, परंतु अपना जिनतैं प्रयोजन सधता होय ऐसैं कुटुंब आदिक तिनतैं विशेपकरि होय; तैसैं इहां भी जानना । ऐसैं एते सातावेदनीयके आश्रवके कारण जानने । ऐसैं ए परिणाम सर्वथा एकान्तवादी आत्माकूं नित्यही माने तथा अनित्यही माने हैं तिनके मतमें सिद्ध नाहीं होय हैं । जातैं सर्वथा नित्यकै तौ परिणाम पलटेही नाहीं । बहुरि सर्वथा अनित्यकैं पूर्वापरका जोड नाहीं । तातैं कैसैं बनै ?

आगें तिस वेदनीयकैं अनंतर कह्या जो मोहनीयकर्म ताके आश्रवके भेद कहनेयोग्य है । तातैं ताका भेद जो दर्शनमोह, ताके आश्रवके भेद कहनेकूं सूत्र कहैं हैं —

॥ केवलिश्रुतसंघधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥ १३ ॥

याका अर्थ–– केवली श्रुत संघ धर्म देव इनका अवर्णवाद कहिये अणछते दोप कहने, ताकरि, दर्शनमोहकर्मका आश्रव होय है । तहां इंद्रियनितैं जाननां बहुरि अनुक्रमतैं जानना बहुरि कछु आडो आवै तब न जानै सो व्यवधान ताकूं अंतर भी कहिये । इनतैं उलंघि जाके विना इन्द्रिय एककाल सर्व जाननेवाला ज्ञान होय सो केवली, ऐसैं अरहंतभगवान तिनकूं कहै कवलाहार करै है विना आहार करै जीवै कैसैं ? तथा केवल आदि तथा तूंबी आदि राखै है, तथा कालभेदकरि ज्ञान वर्तै है इत्यादिक वचन कहै सो केवलीनिका अवर्णवाद है । बहुरि तिन केवलीनिका भाष्या बुद्धिका अतिशय ऋद्धिकरि युक्त जे गणधर तिनकरि ग्रंथरचनारूप किया सो श्रुत शास्त्र ताविषैं कहै मांसभक्षण मदिरापान करना

कामातुर होय तौ मैथुन भी सेवना रात्रिभोजन भी करै इनमें पाप नाहीं ऐसें शास्त्रमें कह्या है ऐसैं कहना शास्त्र श्रुतका अवर्णवाद है। बहुरि संघविषैं कहे मुनि ते शूद्र हैं स्नान करैही नाहीं मललिप्त जिनका अंग है ए दिगम्बर अपवित्र हैं निर्लज्ज हैं, इहांही दुःख भोगवैं हैं, परलोकविषैं कैसैं सुखी होयेंगे इत्यादिक वचन कहना, संघका अवर्णवाद है॥

इहां संघ कहतां रत्नत्रयकरि सहित च्यारिप्रकारके मुनिकूं संघ कह्या है। तहां मुनि कहिये अवधिमनःपर्ययज्ञानी ऋषि कहिये ऋद्धि जिनकूं फुरी होय, यति कहिये इन्द्रियके जीतनहारे, अनगार कहिये सामान्य साधु ऐसें च्यारि भेद हैं। इहां कोई पूछै, एकही मुनिकूं संघ कैसैं कहिये? अनेक व्रतआदि गुणनिका समूह जामें है तातैं एककै भी संघपणा बणै है। बहुरि अहिंसाका लक्षण बहुरि केवली श्रुतकेवलीके आगमकरि कह्या है ऐसा धर्म है, ताकूं कहै जिनका धर्म है सो गुणरहित है याके सेवनहारे असुर होयेंगे इत्यादिक कहना, सो धर्मविषैं अवर्णवाद है। बहुरि देव च्यारिप्रकारके पहलैं कहे तेही, तिनकूं कहै देवता मांसआहारी हैं, मदिरा पीवैं हैं, ऐसै कहिकरि तिनकी स्थापना करि जीव मारि तिनकूं चढावै मदिरा चढावै इत्यादिक कहैं करै सो देवनिका अवर्णवाद है। ऐसैं गुणवान् महंतपुरुषनिविषैं तथा तिनका प्रवृत्तिविषैं विना होते दोष आरोपणा करै, सो अवर्णवाद है। सो यातैं मिथ्याश्रद्धानलक्षण जो दर्शनमोहकर्म ताका आश्रव होय है॥

आगें, मोहनीयकर्मका दूसरा भेद जो चारित्रमोह, ताके आश्रवके भेदकूं सूत्र कहै हैं—

॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥ १४ ॥

याका अर्थ— कषायनिके तीव्रउदयतैं तीव्रपरिणाम होय तातैं चारित्रमोहनीयकर्मका आश्रव होय है। तहां आपकै अर परकै कषाय उपजावना बहुरि तपस्वीजनकूं तथा ताके व्रतकूं दूषण लगावना बहुरि जामें संक्लेशपरिणाम बहुत होय ऐसा भेप तथा व्रत धारणा इत्यादि तीव्रकषायनिके अनेक कार्य हैं, सो करने, ताकरि कषायवेदनीयका आश्रव होय है॥

बहुरि नोकषायवेदनीयके कहे हैं। तहां सत्यधर्मकी हास्य करना, दीनजननिके मुखपरि हास्य करना, बहुतप्रलाप, निरर्थक हसना, हास्यहीका स्वभाव राखना ताकरि हास्यवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि अनेकप्रकार क्रीडा करनेविषैं तत्परपणां, व्रतशीलनिविषैं अरुचिपरिणाम रतिवेदनीयका आश्रव है। बहुरि परकैं अरति उपजावना, परकी रतिका विनाश करना, पापीपणाका स्वभाव राखणा, पापीजनका संसर्ग करना इत्यादिकतैं अरतिवेदनीयके आश्रव होय हैं।

बहुरि आपकैं शोक उपजावना परकै शोक होय तामें हर्ष मानना इत्यादिकतैं शोकवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि अपने परिणाम भयरूप राखने परकै भय उपजावनां इत्यादिकतैं भयवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि भले आचारक्रियाविषैं जुगुप्सा राखणी, ताकी निंदा करणी, परका अपवाद करनेहीका स्वभाव राखना इत्यादिकतैं जुगुप्सावेदनीयका आश्रव होय है।

बहुरि झूठ बोलनेहीका स्वभाव राखना, परकूं ठगनेविषैं तत्पर रहना, परके छिद्र दूषण हेरनेविषैं अपेक्षा राखणी, अतिवधतैं राग, काम कुतुहलादिकके परिणाम राखने इत्यादिकतैं स्त्रीवेदवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि थोरे क्रोध आदि कषायनिकारि लिप्त होना, अपनी स्त्रीहीविषै संतोष राखना इत्यादिकतैं पुरुषवेदवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि प्रचुरकषाय परिणाम गुह्येंद्रिय लिंग आदिकका काटना, परस्त्रीविषैं आसक्ततातैं वशीभूतपणा इत्यादिकतैं नपुंसकवेद-वेदनीयका आश्रव होय हैं ॥

आगैं, मोहनीयकर्मका आश्रवभेद कहे, अर ताके अनंतर कह्या जो आयुकर्म, ताके आश्रवके कारण कहने हैं। तामें आदिका नारकीजीवनिका आयुआश्रवका कारण कहनेकूं सूत्र कहै हैं। कैसा है यह आयु? नियमरूप है उदयकाल जाका, इनका आयु छिदै नाहीं है ॥

॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— बहुतआरंभपणा तथा बहुतपरिग्रहपणां नारकीके आयुके आश्रवकौं कारण है। तहां प्राणीनिकूं पीडाका कारण व्यापार प्रवर्त्तन करना, सो तौ आरंभ है। बहुरि मेरा यहू है एसा ममत्वभाव है लक्षण जाका, सो परिग्रह है। बहुरि ए जाके बहुत होय सो बहुआरंभपरिग्रह कहिये। सो कहा? हिंसा आदि पंच पापनिविषैं क्रूरकर्म करना निरंतर प्रवर्त्तना, परधन हरणां, विषयनिकी अतिलोलुपता करणी, कृष्णलेश्याकारि तज्या जो रौद्रध्यान तिससहित मरणा इत्यादिक हैं लक्षण जाका, सो नरकआयुका आश्रव है। याका विशेष— मिथ्यात्वसहित आचार, उत्कृष्टमानकषाय, शिलाभेदसदृश क्रोध, तीव्रलोभविषैं अनुरागपणां, अनुकंपारहित परिणाम परकै परिताप उपजावनेहीके भाव, वधबंधनका अभिप्राय, प्राणी भूत जीव सत्व इनका निरंतर घातहीके परिणाम, ऐसाही असत्यवचन, कुशील, चोरीका अभिप्राय, दृढ वैर, परके उपकारतैं विमुख परिणाम, बहुरि देवगुरुशास्त्रका भेदकारि बुद्धिकल्पित मत चलावना इत्यादि जानना ॥

आगैं नारकआयुका आश्रव तौ कह्या अब तिर्यंचयोनिका आश्रव कहना, ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं है—

॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥ १६ ॥

याका अर्थ— माया कहिये कुटिलपरिणाम सो तिर्यंचयोनिका आश्रव है । तहां चारित्रमोहकर्मका विशेषका उदयतैं प्रगट हूवा आत्माका कुटिलभाव सो माया है याकूं निकृति भी कहिये, सो यह तिर्यंचयोनिका आश्रव जानना । याका विस्तार– मिथ्यात्वसहित धर्मका उपदेश देना, शीलरहितपणां, परकूं ठगनेके विषैं प्रीतिरूप परिणाम, नीलकापोतलेश्या, आर्तध्यानकरि मरना इत्यादिक जानना ॥

आगैं, तिर्यंचयोनिका आयुका आश्रव कह्या अब मनुष्यआयुका आश्रवका कारण कहा है ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं–

॥ अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७ ॥

याका अर्थ—अल्पारंभपणा अल्पपरिग्रहपणा है सो मनुष्यके आयुका आश्रवका कारण है । तहां जो नारकका आयुका आश्रव कह्या था, तातैं विपरीति कहिये उलटा मानुषआयुका आश्रव है । ऐसा तौ संक्षेपकरि जानना । बहुरि याका विस्तार ऐसा– विनययुक्तस्वभाव होय, प्रकृतिहीकरि भद्रपरिणाम होय, मनवचनकायकी सरलतासूं व्यवहार करै, थोरे कषाय होय, मरणकालविषैं संक्लेशपरिणाम नाहीं होय इत्यादिक जानना ॥ भावार्थ ऐसा, जो, पापपुण्यरूप मिश्रमध्यके परिणामनितैं मनुष्यआयुका आश्रव होय है ॥

आगैं प्रश्न, जो, मनुष्यआयुका आश्रव एतावन्मात्रही है, कि कछु और भी है ? ऐसैं पूछैं उत्तरका सूत्र कहैं हैं—

॥ स्वभावमार्दवं च ॥ १८ ॥

याका अर्थ— स्वभावहीकरि कोमलभाव होय सो भी मनुष्यआयुका आश्रव है । इहां मृदुका भाव सो तौ मार्दव है, सो अन्यकारणकी अपेक्षारहित स्वभावहीकरि मार्दव होय, सो तौ मार्दव कहिये । यह भी मनुष्यआयुका आश्रव है । इहां पहले सूत्रतैं न्यारा सूत्र किया, ताका यह प्रयोजन है, जो, आगैं देवआयुका आश्रव कहेंगे, सो स्वभावमार्दव देवायुका भी आश्रव है ऐसा जणाया ॥

आगैं पूछै है कि ए दोयही मनुष्यायुके आश्रव हैं कि और भी हैं ? ऐसैं पूछ सूत्र कहैं कहैं—

॥ निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥ १९ ॥

याका अर्थ— शील कहिये उत्तरगुण, व्रत कहिये मूलगुण, तिनकरि रहितपणा है; सो सर्व आयु कहिये च्यार्यौंही आयुका आश्रव होय है। इहां सूत्रमें चशब्द है सो पहलै अल्पारंभपरिग्रहपणा कह्या ताका मनुष्यके आयुका समुच्चयके अर्थि है। तातैं अल्पारंभपरिग्रहपणा भी अरु निःशीलव्रतपणा भी मनुष्यआयुके आश्रव हैं, ऐसैं जानना। शील अर व्रत इनका व्याख्यान आगैं होसी। इनतैं रहित सो निःशीलव्रतपणां बहुरि सर्वेषां कहतां सर्वही आयुका यह आश्रव जानना। इहां पूछै, जो, देवायुका आश्रवही भी शीलव्रतरहितपणातैं होय है कहा? तहां आचार्य कहै हैं, सत्य है, होय है, परंतु भोगभूमिकी अपेक्षा जानना, तहांका जीव अव्रती है अर देवायुही बांधै है॥

आगैं, चौथा आयु जो देवआयु ताका आश्रव कहा है ऐसैं पूछै सूत्र कहैं हैं—

॥ सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ॥ २० ॥

याका अर्थ— रागसहित संयमासंयम अकामनिर्जरा बालतप ए देवआयुके आस्रवके कारण हैं। तहां सरागसंयम संयमासंयम इनका व्याख्यान तौ पहलै किया थाही। बहुरि काहूकूं वंदीखानैं रोकै तथा बंधनसे बांधै तहां भूक तृषाका भुगतना बहुरि स्त्रीका संगम नाहीं तातैं ब्रह्मचर्य भी सहजही तथा भूमिपर सोवना शरीरविषैं मलका धारण तथा परके किये पीडा दुःख सहना सो अकामनिर्जरा है। विना लिये दुःख आये तिनकूं सहैंहै, सो पापकर्मनिकी निर्जरा होय है। बहुरि मिथ्यात्वकरि सहित विना उपाय कायक्लेश जामें पाईये ऐसैं कपटकी बहुलताकरि व्रत धारना जामें होय, सो बालतप कहिये। ते ए देव आयुके आश्रवके कारण जानने॥

इहां विस्तार, जो, जिनतैं अपना भला जाने ऐसैं मित्रनिका तौ संबंध करै, आयतन कहिये कल्याण होनेके ठिकाणे देव शास्त्र गुरु तिनकी सेवा करै, भले धर्मका आश्रय करै, धर्मका गुरुपणा महान्पणां दिखावै, निर्दोष प्रोषधउपवास करै, जीवअजीवपदार्थनिके विना जाणें बालतप करै, तथा अज्ञानरूप संयम पालै ऐसैं केई क्लेशभावनिके विशेषतैं भवनवासी व्यंतर आदि सहस्रारस्वर्गपर्यंतविषैं उपजै हैं। बहुरि अकामनिर्जरावाले सूत्रमें कहे हैं तिनके विना लिये दुःख आवै तामें संक्लेशपरिणाम न करै ऐसा बहुरि धर्मबुद्धितैं पर्वततैं पडै वृक्ष चढि पडै अनशन करै अग्नि जलमें प्रवेश करै विष खाय ऐसैं मरण करै चित्तमें करुणा राखै जलकी रेखा समान क्रोध तिनके होय ऐसैं व्यंतरादिविषैं उपजै हैं॥

आगैं पूछैं, कहा देव आयुका आश्रव एतावन्मात्रही है? आचार्य कहै हैं, नाहीं, और भी है ऐसैं सूत्र कहै हैं—

॥ सम्यक्त्वं च ॥ २१ ॥

याका अर्थ— सम्यक्त्व भी देव आयुके आश्रवकूं कारण है। इहां देवका विशेष न कह्या, तौ कल्पवासीहीका
ग्रहण करना। जातैं न्यारा सूत्र ऐसैं जनावनेकूंही किया है। इहां प्रश्न, जो, पहले सूत्रमें सरागसंयम संयमासंयम कहे।
तिनकैं भवनत्रिककी आयुका भी आश्रवकी प्राप्ति आवै है। जातैं इहां सम्यक्त्वका सूत्र न्यारा कह्याही है। ताका समा-
धान, जो, यह दोष नाही है। जातैं सम्यक्त्वका अभाव जाकै होय ताके सरागसंयम संयमासंयम ए नामही न पावै
हैं, ते दोऊ भी इस सूत्रमें गर्भित कर लेणे। इहां कोई पूछै, सम्यक्त्वतैं कल्पवासी देवहीका आयु बंधै ऐसा नियम
कह्या तहां तीव्र सम्यग्दृष्टिनिका तौ समझे। बहुरि जे अव्रती सम्यग्दृष्टि हैं तिनके मिथ्यादृष्टीकेसे बहुआरंभादिक कार्य
देखिये हैं, ताकै कैसैं नियम संभवै? तथा राजा श्रेणिक क्षायिकसम्यक्त्वी अपघाततैं मरण किया, तातैं नरक गया
ऐसैं पुराणमें लिखै है सो कैसैं समझें? ताका उत्तर, जो, इहां मनुष्यतिर्यंचकी अपेक्षाकरि नियम है। देव नारकीनिकैं
सम्यक्त्व होतैं भी मनुष्य आयुका बंध हो है। सम्यग्दृष्टि देव नारकी मनुष्यही उपजै हैं। बहुरि मनुष्य तिर्यंचकै
देवायु बंधै है। तिनकैं मिथ्यात्वके अभावतैं जीवतत्वविषैं अजीवतत्वकी श्रद्धाका अभाव भया है। त्रसस्थावर जीवनिकूं
सर्वज्ञके आगम अनुसार श्रद्धान किया है॥

बहुरि अनंतानुबंधीकषाय मिथ्यात्वकी लार लगी है। सो तिसके विशेष क्रोध मान माया लोभका अभाव भया
है। तातैं तिस अनंतानुबंधिसंबंधी हिंसाका अभाव है। सर्व जीवनितैं अंतरंगविषैं करुणाभाव है। सर्वकूं आप समान
जाने है। कदाचित् अप्रत्याख्यानावरणके तीव्र उदयतैं आरंभादिकविषैं प्रवर्तै है। तहां अपने तीव्र अपराध जाने है।
तीव्र उदयतैं कार्यका अभाव न किया जाय है। तहां भी न्याय अन्याय लौकिकसंबंधी आचार विचार बहुत करै है।
अपनी जाणिमें अन्यायविषैं नाही प्रवर्तै है। शुद्धवृत्ति न्यायने लिये आरंभादिक करै है। तामैं हिंसा होय है ताकूं
ऐसा जानै है, जो, यामें दोष नाहीं; हमारी पदवी है ऐसैं स्वच्छंद निःशंक परिणमन करै है। ऐसैं होतैं अतरंगके
कषाय निपट हलके हैं। तातैं कल्पवासी देवहीका आयु बंधै है॥

बहुरि श्रेणिक राजा पूर्वैं मोटा अपराधतैं सप्तम नरकका आयु बंध्या था, सो आयुबंध भये पीछैं पलटै नाहीं, तातैं
सम्यक्त्व भये पीछैं ताके महात्म्यतैं बव्हायुका अपकर्षण करि स्थिति घटाई प्रथमपृथ्वीके पहले पाथडे चौरासी हजार

वर्षकी आयु तै उपज्या सो आयुवंधके निमित्ततैं अंतसमय अप्रत्याख्यानावरणका ऐसा तीव्रस्थानकउदय आया, जो, अपघातकरि मरण भया, तातैं तहां उपज्या । सो पूर्वै मिथ्यात्वमें आयु न बंधै ताकै तौ मनुष्यतिर्यंचकै कल्पवासी देवहीकी आयुका आश्रव होय है ऐसा अर्थ जानना ॥

आगैं, आयुकर्मकै अनंतर रह्या जो नामकर्म, ताका आश्रवकी विधि कहनी, तहां अशुभनामकर्मके आश्रव जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥ २२ ॥

याका अथ— मनवचनकायके योगनिकी वक्रता कहिये कुटिलता बहुरि विसंवाद कहिये अन्यकूं अन्यथा प्रवर्तावना ए दोऊ अशुभनामके आश्रवके कारण हैं । तहां योग तीनिप्रकार तौ पहले कह्या सोही हैं, तिनकी वक्रता कहिये कुटिलता मनमें कछू और विचारणा, पीछें परकूं ठगनेके अर्थि वचनतैं कछू और कहना, बहुरि कायतैं कछू और क्रिया करणी, जाकरि पैला ठिगाय जाय ऐसैं भुलावा देणां सो कुटिलता है । बहुरि विसंवाद कहिये अन्यकूं अन्यथा प्रवर्तावना । इहां कोई कहै, योगनिकी वक्रता सोही अन्यथा प्रवर्तन है इनमें अर्थभेद दीखै नाहीं । ताकूं कहिये, जो, यह तो सत्य है, परंतु अर्थभेद भी है । आपकी अपेक्षा तौ योगवक्रता है । विसंवाद परकी अपेक्षा है । पैला कोई अपना आत्मकल्याण करनहारी जो भली स्वर्गमोक्षके उपायकी क्रिया ताविर्षै प्रवर्तता होय, ताकूं भुलाय आप तिसकी क्रियाकूं मन वचन कायतैं अन्यथा कहै, ताका विसंवाद करै निंदा करैं; ऐसैं कहैं, जो ' यह क्रिया मति करै वुरी है हम कहैं जैसी करि ' ऐसैं ठगनेके अर्थि करै सो विसंवादन है । ए दोऊं अशुभनामकर्मके आश्रवके कारण जानने ॥

इहां सूत्रमें चशब्द है ताकरि मिथ्यादर्शन, अदेखसाभाव, चुगली खाणी, चलायमानचित्तपणां, हीनाधिक मान ताखडी तौला करना, परकी निंदा करणी, आपकी प्रशंसा करनी इत्यादिक समुच्चय करना । इहां विशेष और लेणें । खोटे सुवर्ण मणि आदि वनाय तिससारिखे वनाय ठगाना, झूठी साखि भरना, परके अंग उपांग विगाडने, वर्ण रस गंध स्पर्शका अन्यथा प्रवर्तन करना, यंत्र पींजरे बणावने, अन्यद्रव्यका अन्य द्रव्यविर्षै संबंधकरि कपटकी प्रचुरता करणी, झूठ बोलना, चोरी करना, घणा आरंभ करना, परिग्रहकी चाह तीव्र राखनी, परके ठगनेकूं उज्वल वेश करना, मद करना, कठोर वचन बोलने, वुरा प्रलाप वकना परकूं वश करनेकूं अपना सौभाग्य दिखावना, परकूं कुतूहल उपजावना, सुंदर अलंकार पहरने, चैत्यमंदिरके उपकरण पूजाकी सामग्री चोरना, परकूं वृथा विलमाय राखना, परका उपहास करना,

ईंटनिके पजावा पकावने, दौं लगावना आदि अग्निका प्रयोग करना, प्रतिमा तथा ताका आयतन कहिये मंदिर तथा वनकी वस्तिका बाग आदिका विनाश करना, तीव्र क्रोध मान माया लोभविषैं प्रवर्तना, पापकर्मकी आजीविका करनी इत्यादि जानने ॥

आगैं शुभनामकर्मका कहा आश्रव है ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥ २३ ॥

याका अर्थ— अशुभनामकर्मका आश्रव कह्या तातैं विपरीत कहिये उलटा शुभनामकर्मका आश्रव है। तहां काय वचन मनका सरलपणा बहुरि अविसंवादन ए तद्विपरीत हैं। बहुरि पहलैं चशब्दकरि समुच्चय किये थे तिनके विपरीत लेणे। धर्मात्मा पुरुषनिका दर्शन करना, तिनका आदर सत्कारकरि अपने हितू मायने, संसारतैं भय करना, प्रमादका वर्जन करना इत्यादिक ए शुभनामकर्मके आश्रवके कारण जानने। इहां भी पूर्वैं विशेष कहे तिनतैं उलटे जान लेणे ॥

आगैं, शुभनामकर्मका आश्रव कहा एतावन्मात्रही है, कि कोई और भी विशेष है? ऐसैं पूछैं इहां कहै कि, जो, यह तीर्थंकरनामपणां नामा नामकर्म है, सो अनंत अनुपम प्रभावकूं लिये है, बहुरि अचिंत्यविभूतिविशेषका कारण है। तीनि लोकविषैं विजय करणहारा है; सर्व त्रैलोक्यके इन्द्रादिकरि पूज्य है, ताका आश्रवकी विधि विशेषरूप है। तहां फेरि पूछै है, जो, ऐसा है तो कहो ताके आश्रवके कारण केते हैं? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्ति-रावश्यकापरिहाणिमार्गप्रभावनाप्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥ २४ ॥

याका अर्थ— ए सोलह भावना हैं ते तीर्थंकरनामा नामकर्मके आश्रव हैं। तहा जिनभगवान् अरहंतपरमेष्ठीका उपदेश्या कह्या जो निर्ग्रन्थलक्षण मोक्षमार्ग ताविषैं रुचि प्रतीति श्रद्धा सो दर्शन कहिये, ताकी विशुद्धि कहिये पहलैं कही निरतिचारपणा सो जानना। याके आठ अंग हैं निःशंकितत्व, निःकांक्षितत्व, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टिता, उपबृंहण, स्थितीकरण, वात्सल्य, प्रभावना ऐसैं। तहां इहलोक परलोक व्याधिवेदना मरण अरक्षण अगुप्ति अकस्मात् ए सात भय

हैं, तिनके निमित्ततैं श्रद्धातैं छूटै नाहीं, तथा अरहंतका उपदेश्या प्रवचन ताविषैं 'यह सत्य है कि असत्य है' ऐसा संदेहका न करना, सो निःशंकितत्व है ॥ १ ॥ इहलोक परलोक संबंधी विषयभोगकी वांछा न करै, तथा अन्यमतमें कछू लौकिकचमत्कार देखि तिस मतकी वांछा न करै, कोऊ कारण नाही बणै तौ वांछाकारि श्रद्धान न छोडै, सो निःकांक्षितत्व है ॥ २ ॥ शरीर आदिकूं अशुचि जानि यह शुचि है ऐसा मिथ्यासंकल्पका अभाव तथा अरहंतके प्रवचनविषैं फलाणां कष्ट घोर कह्या है जो 'यह न होय तौ और तौ सर्व युक्त है' ऐसी अशुभभावनाका अभाव सो निर्विचिकित्सा हैं ॥ ३ ॥ अनेकप्रकारके कुनयके पक्षपातरूप मत ते तत्वसारिखे समान दीसै अर यथार्थ नाहीं, तिनविषैं परीक्षारूप नेत्रनिकारि परीक्षा करि युक्तका अभाव देखि मूढतातैं रहित होना, सो अमूढदृष्टिता है ॥ ४ ॥

उत्तमक्षमाआदि धर्मनिकी भावना करि आत्माके धर्मकी वृद्धि करणी, सो उपबृंहण है तथा याका नाम उपगूहन भी है। तहां साधर्मी जनकूं कर्मके उदयतैं कोई अवगुण लग्या होय ताकूं उपदेशकारि छुडावनेकूं तथा जामें धर्ममार्गकी अवज्ञा न होय तैसैं छिपावना सो उपगूहन है ॥ ५ ॥ कषाय आदि कर्मके उदयकारि धर्मतैं छूटनेके कारण बणै तहां आपकूं तथा साधर्मीजनकूं धर्मतैं दृढ करि थिरता करणी सो स्थितीकरण है ॥ ६ ॥ धर्मविषैं तथा धर्मात्माविषैं प्रीति दृढ होय परमवत्सलभाव होय सो वात्सल्य है ॥ ७ ॥ दर्शन ज्ञान चारित्र तेई भये तीनि रत्न तिनकारि आत्माकूं अलंकाररूप शोभायमान करि उद्योत करना तथा महान् दान जिनपूजा प्रतिष्ठा विद्या मंत्र अतिशय चमत्कार करि मार्गका उद्योत करना जातैं लोक ऐसा जानै 'यह धर्म सत्यार्थ है' ऐसैं करना, सो प्रभावना है ॥ ८ ॥ ऐसैं सम्यग्दर्शनके अतीचार सोधि अष्टांगभूषित करना, सो दर्शनविशुद्धि है ॥ १ ॥

सम्यग्ज्ञानादिक जे मोक्षके साधन तथा तिनके साधन जे गुरु शास्त्र आदि तिनविषैं अपने योग्य प्रवृत्ति करि आदर सत्कार करना अथवा कषायकी निवृत्ति, सो विनयसंपन्नता है ॥ २ ॥ अहिंसादिक व्रत तथा तिनके रक्षक क्रोधवर्जनादिक शील तिनकूं उत्तरगुण भी कहिये तिनविषैं यथापदवी मनवचनकायकरि दोष लगावना, सो शीलव्रतेष्वनतिचार है ॥ ३ ॥ मति आदि ज्ञानके भेद प्रत्यक्षपरोक्षप्रमाणरूप अज्ञानका अभाव जिनका फल तथा हेयका त्याग उपादेयका ग्रहण तथा उपेक्षा कहिये वीतरागता जिनका फल ऐसैं ज्ञानकी भावनाविषैं निरंतर उपयोग राखणा, सो अभीक्ष्णज्ञानोपयोग है ॥ ४ ॥ संसारविषैं शरीरसम्बन्धी मनसंबंधी अनेकभेद लिये अतिकष्ट लिये दुःख है, बहुरि प्यारेका वियोग अनिष्टसयोग चाहीवस्तुका अलाभ इत्यादिसहित है ऐसैं संसारतैं भय करना, सो संवेग है ॥ ५ ॥ पैलेकूं प्रीतिका कारण वस्तुका देना, सो त्याग है। तहां पात्रके निमित्त आहार देना, सो तिस दिनविषैं वाकै प्रीतिका कारण है।

साधर्मिविषैं अकृत्रिम स्नेह होय, सो प्रवचनवत्सलत्व है ॥ १६ ॥ ऐसैं ए सोलह भावना भलेप्रकार भाये हुते समस्तही तथा व्यस्त कहिये जुदे जुदे भी सम्यग्दर्शनकी शुद्धतासहित तीर्थंकरनामके आश्रव हैं ॥

आगैं नामकर्मका आश्रवका कथनकै अनंतर गोत्रकर्मके आश्रवके कारण कहने हैं, तहां नीचगोत्रका आश्रव कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥

याका अर्थ— परकी निंदा करनी, अपनी प्रशंसा करनी, परके छते गुण निषेध करने, अपने अनछते गुण प्रगट करने इन भावनितैं नीचगोत्रका आश्रव होय है। तहां सांचे तथा झूठे दोषनिके कहनेविषैं इच्छा करणी सो तौ निंदा कहिये। तैसैही सांचे तथा झूठे गुणनिके कहनेविषैं इच्छा सो प्रशंसा कहिये। तिनका यथासंख्य संबंध करना परकी निंदा करनी, अपनी प्रशंसा करनी। बहुरि वस्तु रोकनेवाला कारणके निकट होतैं प्रगट होना, सो उच्छादन कहिये। बहुरि रोकने-वाला कारणका अभाव होय, तब प्रगट होना उद्भावन है। इहां भी यथासंख्य सम्बन्ध करना परके सांचे भी गुण होय तौ तिनकूं प्रगट न करना, अपने झूठे गुणनिका प्रगट करना। ए सर्व नीचगोत्रके आश्रवके कारण हैं। इहां विशेष जो, जाकरि आत्मा नीचस्थान पावै, सो नीचगोत्र है तिसके आश्रव कहे। तिनका विस्तार ऐसा, जाति आदि आठ मदका करना, परकी निंदातैं हर्ष मानना, परका अपवाद करनेहीका स्वभाव राखना, धर्मात्माकी निंदा करनी, परका यश न सुहावना, गुरुनिका अपमान करना, तिनके दोष कहने, तिनतैं विनयादिकरूप न प्रवर्तना इत्यादि जानना ॥ आगैं, उच्चगोत्रकर्मका आश्रवकी विधि कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ तद्विपर्य्ययौ नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥ २६ ॥

याका अर्थ— नीचगोत्रका आश्रव कह्या। तातैं विपर्यय उलटा तथा नीचा होय प्रवर्तना, उद्धत होय न प्रवर्तना ए उच्चगोत्रके आश्रव हैं। तहां तत्शब्दकरि तौ नीचगोत्रका आश्रव लेणा। जातैं इस सूत्रके पहलैं लगता सोही है। तिसतैं अन्यप्रकार है सो विपर्यय है। सो कहां? अपनी तौ निंदा, अर परकी प्रशंसा, अपना गुण प्रगट न कहना, परका गुण प्रगट कहना बहुरि गुणनिकरि उत्कृष्ट होय महान् होय तिनविषैं विनयकरि नम्रीभूत रहना, सो

नीचैर्वृत्ति कहिये । बहुरि आपमें विज्ञानआदि अनेक गुण विद्यमान हैं, उत्कृष्टपणां है, तौ तिन गुणनिका मद न करै, अहंकाररहित होय, सो अनुत्सेक कहिये । ते ए उत्तर कहता दूसरा गोत्रकर्म उच्चगोत्र ताके आश्रव हैं । इहां विस्तारका भी विपर्यय कहना । तहां जातिआदि आठ मद न करने, परकी निंदा न करनी, उद्धत न प्रवर्तना, परका उप-हास अपवाद न करना, मानकषाय तीव्र न राखणा, पूज्यपुरुषकी पूजा विनय सत्कार वंदना करनी, बहुरि इस निकृष्ट-कालमें कोईमें भले गुण होय 'जैसे हरेकमें न पाईये' तिनतैं भी उद्धत न रहना, सो भी नीचैर्वृत्ति है । बहुरि अपना माहात्म्यका प्रकाशन आप न चाहै, तथा धर्मके कारणनिविषैं बडा आदर करै इत्यादि जानना ॥

आगें गोत्रकर्मके अनंतर कह्या जो अंतरायकर्म, ताका आश्रव कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं ॥

॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥ २७ ॥

याका अर्थ— दानआदिकै विषैं विघ्न करना, सो अंतरायकर्मका आश्रव है । तहां दान आदि तौ पहले कहे तेही, दान लाभ भोगोपभोग वीर्य ए । तिनिका हनना घात करना विगाडना सो विघ्न है । ताका करना सो अंतरायकर्मके आश्रवकी विधि जाननी ॥

याका विस्तार— ज्ञानका निषेध करना, सत्कारका निषेध करना, दान लाभ भोगोपभोग वीर्य स्नान अनुलेपन सुगंध पुष्पमाला वस्त्र भूषण शयन आसन भोजन आदिका परकैं विघ्न करना, परकी संपदा देखि आश्चर्य करना, अपना द्रव्यका अतिलोभतैं दानादिक न करने, सामर्थ्य होय तिसमें प्रदान करना, परकूं झूठा दूषण लगावना, निर्माल्य-द्रव्य लेना, निर्दोष उपकरणका त्याग करना, परका वीर्य लोपना, धर्मका विच्छेद करना, भला आचारविषैं तपस्वी जनका पूजाविषैं विघ्न करना, मुनिका तथा दीन अनाथका वस्तु पात्र वसतिकाका प्रतिषेध करना, परकैं क्रियाका रोकना, बांधना, गुह्यअंगका छेदना, कान नाक ओष्ठ काटना, प्राणिनिका घात करना इत्यादिक जानना ॥

इहां कोई पूछे, आश्रवका विस्तार सूत्रमें विना कह्या कैसैं कहौ हौ? ताका समाधान, जो, वेदनीयके सूत्रमें इतिशब्द कह्या है सो प्रकारार्थमें हैं ताकी अनुवृत्ति ले सर्वकर्मके आश्रवमें विस्तार कह्या है । ऐसैं कह्या जो आश्रवका विधान तिसकरि उपजाया जो आठप्रकार ज्ञानावरणआदि कर्म तिनके निमित्ततैं आत्माकैं संसाररूप विकार ताकूं आत्मा निरंतर भोगवै है । जैसैं मदिराका पीवनवाला अपनीही रुचितैं मोहविभ्रमके करनहारी मदिराकूं पीयकरि ताके परिपाकके वशिकरि

॥ सवैया ॥ २३ ॥

आश्रवभाव मुनीन्द्र कहे नय दोय विचार यथाविधि नीकी ।
शुद्धनयातम आश्रव एक चिदातम भावन रति जीकी ॥
सोउ अनेक विकारमयी लखि भेद अशुद्धनयाश्रित टीकी ।
इन्द्रिय अव्रत और कषाय क्रिया वहु जानि तजौ जु अलीकी ॥ १ ॥

ऐसैं तत्वार्थका है अधिगम जाकरि ऐसा जो मोक्षशास्त्र, ताविषैं छठा अध्याय सम्पूर्ण भया ॥ ६ ॥

इति श्री परमपूज्य धर्मसाम्राज्यनायक योगींद्रचूडामणि, सिद्धांतपारंगत, चारित्रचक्रवर्ती श्री १०८ आचार्य श्रीशांतिसागरजी महाराजके आदेशसे ज्ञानदानके लिए श्री. प. पू. चा. च. आ. श्री १०८ शांतिसागर दिगंबर जैन जीर्णोद्धारक संस्थाकी ओरसे छपी हुई श्री तत्त्वार्थसूत्रकी श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचित सर्वार्थसिद्धीकी पंडित जयचदजीकृता टीका-वचनिकाविषैं षष्ठम अध्याय संपूर्ण भया ॥ ६ ॥

ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण वीर स. २४८१

——***——

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यवर्य श्री १०८ शांतिसागर महाराजके आदेशसे श्री दिगंबर जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्थाकी तरफसे ज्ञानदानके लिये छपी हुई

श्रीवीतरागाय नमः

वीर संवत् २४८१]

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

[ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण

अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता

दोहा— आठ कर्म आश्रवविषैं, पुण्यपापकौ भेद ॥
जानि जिनेश्वर भाषियो, नमूं देव निरखेद ॥ १ ॥

ऐसैं मंगलाचरणके अर्थि भगवानकूं नमस्कार करि सातमा अध्यायकी वचनिका लिखिये है। तहां सर्वार्थसिद्धि नामा टीकाकारके वचन हैं, जो, आश्रवपदार्थका व्याख्यान किया, ताके प्रारंभमें ऐसा कह्या था, जो, शुभयोग पुण्यकर्मका आश्रव है, सो यह तौ सामान्यकरि कह्या, ताका विशेष न जाण्या, जो, शुभ कहा है? सो अब ताके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥ १ ॥

याका अर्थ— हिंसा अनृत स्तेय अब्रह्म परिग्रह ए पांच पाप हैं। तिनतैं विरति कहिये निवृत्ति होना सो व्रत है। तहां प्रमत्तयोगात् प्राणव्यपरोपणं हिंसा इत्यादि सूत्रनिकरि आगैं हिंसादिक कहैंगे, तिनतैं विरमण करना, सो व्रत ऐसैं कहिये। तहां यऊ करना यऊ न करना ऐसा अभिप्रायकरि किया जो नियम ताकूं व्रत कहिये। इहां तर्क, जो, हिंसादिक तौ परिणामके विशेष हैं, ते अध्रुव हैं, तिनकूं पंचमीविभक्तिकरि अपादान कहै, सो अपादान तौ ध्रुव होय है। अध्रुवकै अपादानपणां कैसैं बणे? ताका समाधान, जैनेन्द्रव्याकरणमें अपादानका लक्षण ऐसा है। ध्यपाये ध्रुवमपादानम्।

याका अर्थ कहैं हैं, जो बुद्धिका नाश होतैं ध्रुव रहै, सो अपादान है । सो ऐसैं ध्रुवपणांकी विवक्षा बणैं है, ऐसा
कह्या है । धर्मांद्विरमति ऐसैं कहते जो यऊ मनुष्य विचारसहित है बुद्धि जाकी सो विचारै है, धर्म है सो दुष्कर है
याका करना कठिन है, बहुरि याका फल प्रत्यक्ष नाहीं, श्रद्धामात्र जान्या है ऐसैं बुद्धिकरि ग्रहणकरि ताकूं छोडैं है,
ऐसैं इहां भी जाननां । जो परीक्षावान् मनुष्य है, सो विचारै है ये हिंसादिक परिणाम हैं ते पापके कारण हैं, जो,
इस पापनिविषैं प्रवर्तै है तिनकूं इसही लोकविषैं राजा दंड दे है, बहुरि परलोकविषैं दुःखकूं प्राप्त होय है ऐसैं बुद्धि-
करि ग्रहणकरि तिनतैं निवृत्ति होय है, तातैं बुद्धिके अपायकी अपेक्षाकरि ध्रुवपणांकी विवक्षा बणैं है । ए हिंसा-
पदार्थ तौ ध्रुवही हैं । इनका ज्ञान बुद्धिमें रहै ही है । त्यागग्रहण बुद्धिमें होय है ताकी अपेक्षा है, यातैं
अपादानपणां युक्त है ॥

इहां विरतिशब्द प्रत्येककै लगावणा, हिंसातैं विरति, अनृततैं विरति इत्यादि । तहां अहिंसाव्रत प्रधान है, तातैं
आदिविषैं कह्या सत्य आदि व्रत हैं ते अहिंसाकी रक्षाके अर्थि हैं । जैसैं धान्यका खेतकी रक्षाके अर्थि बाडि कीजिये
है तैसैं है । सर्वसावद्ययोगकी निवृत्ति है लक्षण जाका ऐसा सामायिक एकही व्रत है, सोही छेदोपस्थापनकी अपेक्षाकरि
पांचप्रकारका है, सो इहां कहिये है । बहुरि तर्क, जो, व्रतकै आश्रवका कारणपणां कहना अयुक्त है । जातैं व्रतका संव-
रके कारण विषैं आगे गुप्तिसमित्यादिक कहियेगा तहां दशप्रकारधर्मविषैं तथा संयमविषैं अन्तर्भाव किया है । ताका समाधान
कहैं हैं, जो, यह दोष नाहीं है । संवर तौ निवृत्तिस्वरूप आगें कहसी । इहां आश्रवअधिकारमें प्रवृत्तिस्वरूप कही है,
सो हिंसा अनृत अदत्तादान आदिका त्याग होतैं अहिंसा सत्यवचन दत्तादान आदि क्रियाकी प्रवृत्ति है, सो प्रतीतिसिद्ध
है । बहुरि गुप्त्यादिकरूप जो संवर ताका परिवार व्रत है । व्रतनिविषैं प्रवृत्ति करनेवाला साधुकै संवर सुखतैं होय है ।
तातैं न्यारा बणाकरि उपदेश कीजिये है ॥

बहुरि तर्क, जो, छठा अणुव्रत रात्रिभोजनका त्याग करना है, सो भी इहां गणनामें लेना चाहिये । आचार्य कहै
हैं, इहां न चाहिये । जातैं याका अहिंसाव्रतकी भावनाविषैं अंतर्भाव है, आगें अहिंसाव्रतकी भावना कहैंगे तहां आलो-
कितपानभोजनभावना कही है तामें गर्भित जानना । इहां विशेष कहिये है, जो, भावनाविषैं आलोकितपानभोजन करना
कह्या, सो तहां दीपकका तथा चन्द्रमाका प्रकाशविषैं देखिकरि भोजन कीजिये तौ कहा दोष ? ऐसैं कोई कहै, सो यह
युक्त नाहीं । दीपकआदिके प्रकाशविषैं भी रात्रिभोजन करनेमें अनेक आरंभके दोष आवै हैं । सो फेरि कहै, जो, पैला
कोई दीपकआदिका प्रकाश कर दे तब आरंभका दोष नाहीं होय । ताकूं कहिये, जो, आचारसूत्रका ऐसा उपदेश है, जो,

अपना ज्ञानसूर्य अपनी इन्द्रियनिकारि देखे मार्गविषैं तथा पहलैं देश काल विचारि जूडा प्रमाण अगिली पिछली भूमि विहारभ्रमणकारि साधु शुद्धभिक्षा ग्रहण करै है, सो ऐसी विधि रात्रिभोजन करनेमें बणै नाहीं ॥ फेरि कहैं, जो, दिनविषैं भोजन ले आवै ताकूं रात्रिमें खाय तौ कहा दोष? ताकूं कहिये, पूर्वोक्त दीपकआदि आरंभका दोष है। तथा ल्यायकारि भोजन खाना यह संयमका साधन नाहीं। बहुरि सर्व परिग्रहरहितमुनिकैं पाणिपात्र आहार है। सो ल्याय खाना बणैं नाहीं। पात्रका संग्रह करै तौ अनेकदोष उपजे हैं, तथा दीन आचरणका प्रसंग आवै है, निवृत्तिपरिणाम न होय है। फेरि कहै, पात्रमें ल्याये परीक्षाकारि भोजन संभवै है। तहां कहिये ऐसा नाहीं। जे मुनि जीवनिके ठिकाने शास्त्रोक्त जानैं हैं तिनकूं संयोगविभाग गुणदोषका ज्ञान है, तिनकै तत्कालही भोजन बणैं हैं, ल्यायकारि खानेमें अनेक दोष दीखैं हैं। ताका विसर्जन करै तौ तामें अनेकदोष उपजे हैं। तातै सूर्यके प्रकाशमें प्रगट देखि दिनमेंही भोजन करना युक्त है। जैसैं सूर्यके प्रकाशमें प्रगट भूमि देश दातार जन गमन आदि तथा अन्नपान डाऱ्या स्पष्ट दीखै; तैसैं चंद्रमा आदिका प्रकाशतैं नाहीं दीखै ऐसा जानना ॥

आगैं तिस पांच व्रतनिके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं —

॥ देशसर्वतोऽणुमहती ॥ २ ॥

याका अर्थ— ए पांचूही व्रत जब एकदेश होय तब तौ अणुव्रत कहिये। बहुरि सकल होय तब महाव्रत कहिये। इहा देश ऐसा तौ एकदेशकूं कहना। सर्व सकलकूं कहना। तिन देशतैं विरति होय सो देशव्रत अणुव्रत है, सकलव्रत महाव्रत है, ऐसे दोय भेद भये। विरतिशब्दकी अनुवृत्ति ऊपरले सूत्रतैं लेणी। ए दोऊ प्रकार व्रत न्यारे न्यारे भावनारूप किये संते श्रेष्ठ औषधकी ज्यौं दुःख दूरि करनेके कारण होय हैं ॥

आगैं पूछैं, तिन व्रतनिकी भावना कौन अर्थि है? तथा कौनप्रकार है सो कहौ ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पंचपंच ॥ ३ ॥

याका अर्थ— इन व्रतनिके स्थिर करनेके अर्थ एक एक व्रतकी पांच पांच भावना हैं। इहां ऐसा जानना, जो, इनि भावना भायेतैं व्रतीनिके उत्तरगुणका संभवना होय है ॥

आगैं, जो ऐसैं है भावनातैं व्रत दृढ होय है, तौ आदिमें कह्या जो अहिंसाव्रत ताकी भावना कहा है ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं--

॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पंच ॥ ४ ॥

याका अर्थ-- वचनगुप्ति, मनोगुप्ति, ईर्यासमिति, आदाननिक्षेपणसमिति, आलोकितपानभोजन ए पांच अहिंसाव्रतकी भावना हैं । तहां गुप्तिसमितिका स्वरूप आगैं कहसी । बहुरि आलोकितपानभोजन कहिये आहारपाणी लेना सो दिनविषैं नीकै देखिकरि लेना । इनका बार बार चिंतवन करना, सो भावना है ॥

आगैं, दूसरे व्रतकी कहा भावना है, ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं--

॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पंच ॥ ५ ॥

याका अर्थ-- क्रोधका प्रत्याख्यान, लोभका प्रत्याख्यान, भयवानपणांका प्रत्याख्यान, हास्यका प्रत्याख्यान, अनुवीचि-भाषणंकहिये निष्पाप सूत्रके अनुसार वचन बोलना ऐसैं ए पांच भावना सत्यव्रतकी जाननी । इहां भावार्थ ऐसा, जो, क्रोधादिकके निमित्ततैं असत्य बोलिये है, तिसका बार बार चिंतवन राखणा, तब असत्यकी प्रवृत्ति न होय, सत्यव्रत दृढ रहै ॥

आगैं तीसरे व्रतकी कहा भावना है, ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्माविसंवादाः पंच ॥ ६ ॥

याका अर्थ—शून्यागार कहिये गिरिकी गुफा वृक्षका कोटर इत्यादिविषैं वसना, परका छोड्या ठिकाना होय सो विमोचितावास है तहां वसना, बहुरि परका उपरोध कहिये वर्जना सो न करना भावार्थ – जिस ठिकाणे आय बैठै तहां कोई और आवै ताकूं वर्जै नाहीं तथा आपकूं कोई मनैं करै तहां बैठै नाहीं, बहुरि आचारशास्त्रके मार्गकरि भिक्षाकी शुद्धता करि आहार ले, बहुरि यऊ वास्तिका तथा श्रावकआदि हमारे हैं यह तुमारे हैं ऐसा आपसमें साधर्मीनिसूं विसं-वाद न करै ऐसैं ए पांच भावना तीसरा अदत्तादानविरमणव्रतकी हैं ॥ इहां भावार्थ ऐसा, जो, वस्तिका भोजनआदि वस्तुनिके आर्थि कोईसूं परस्पर झगडा उपजै तहां अदत्तादानका प्रसंग आवै है । तातैं इन भावनातैं व्रत दृढ रहै है ॥

आगैं, ब्रह्मचर्यकी भावना कहनेयोग्य है सो कहौ ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरसस्वशरीर-संस्कारत्यागाः पंच ॥ ७ ॥

याका अर्थ— इहां त्यागशब्द प्रत्येककै लगाय लेणां तहां स्त्रीनिकी रागसहित कथा सुननेका त्याग, स्त्रीनिका सुन्दर मनोहर अंगका रागसहित देखनेका त्याग, वृष्य कहिये पुष्टरस कहिये रसीला झरता सर्वत आदिका त्याग, पहले भोग किये थे तिनका बार बार यादि करनेका त्याग, अपने शरीरका संस्कार कहिये सवारना स्नान सुगंध लेपन इत्यादि करनेका त्याग ऐसैं ए चौथे व्रतकी पांच भावना हैं । इनकूं बार बार भाये ब्रह्मचर्यव्रत थिरता पावै है ॥

आगें पांचमा व्रतकी कहा भावना है, ऐसैं पूछें सूत्र कहैं हैं—

॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पंच ॥ ८ ॥

याका अर्थ— स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु श्रोत्र ए पांच इन्द्रिय तिनके विषय जे स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द इनका संबंध होतैं रागद्वेषका न करना ए पांच भावना आकिंचन्य नामा पांचवा व्रतकी जाननी ॥ भावार्थ ऐसा, जो, परिग्रह हैं ते इन्द्रियनिके विषयके सेवनेके तथा कषाय पोषनेके अर्थि हैं, तातैं विषयकषायका गुणदोष विचारिकरि भावना राखै, परिग्रहत्यागव्रत दृढ रहै है ॥

आगें कछु और कहै हैं, कि, जैसैं इन व्रतनिकी दृढताके अर्थि व्रतनिका स्वरूप जाननेवाला ज्ञानीनिककरि भावनाका उपदेश किया है, तैसैंही तिन व्रतनिके विरोधी जे पांच पाप तिनविषैं भी भावना राखणी । तिनके दोषनिका बार बार चिंतवन राखणां । तातैं दृढव्रत रहै है । ताका सूत्र कहै हैं—

॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥ ९ ॥

याका अर्थ— हिंसादिक पांचपापनिविषैं इस लोकविषैं तौ अपाय कहिये नाश तथा भय होय है । बहुरि परलोकविषैं पापतैं दुर्गति होय है । ऐसा देखना बार बार विचारणा । तहां अभ्युदय कहिये स्वर्गादिककी संपदा पावना निःश्रेयस कहिये कल्याणरूप मोक्ष तिनके अर्थि जो क्रिया ताका नाश करनेवाला जो प्रयोग आरंभ, सो तौ अपाय कहिये । अथवा सात भयकूं भी अपाय कहिये । अवद्य कहिये गर्ह्य निंद्य पाप इन दोऊनिकूं देखनें विचारनें । कहां देखने ?

इस लोकविषैं तथा परलोकविषैं । बहुरि कौनविषैं देखने ? इन पांच पापनिविषैं । सो कैसैं सो कहिये है । प्रथम तौ हिंसाविषैं देखौ, जो, हिंसक जीव होय सो निरंतर सर्वका वैरी शत्रु है । ताकूं सर्व पीड्या चाहैं मार्‍या चाहैं । इस लोकविषैं अनेक वध बंधन क्लेशादिक पावै हैं । परलोकविषैं अशुभगति पावै है । बहुरि सर्वकरि निंदनीक होय हैं । तातैं हिंसाका त्याग करना कल्याणकारी है, ऐसी भावना राखणी ॥

तैसैंही असत्यवचनका बोलनेवाला सर्वकै अश्रद्धेय होय जाका वचन कोई श्रद्धान न करै सांच न मानै । बहुरि इसही लोकमें जीव काटना आदि दुःखकूं पावै है । ताके झूठवचनकरि दुःखी होय ते वैरकरि अनेक कष्ट दे, सो सहने होय । बहुरि परलोकविषैं दुर्गति पावै है । बहुरि निंदनीक होय है । तातैं अनृतवचनतैं विरमण करना । कल्याणकारी है, ऐसी भावना राखणी ॥ तैसैंही परद्रव्यका हरणहारा चोर है सो सर्वकै पीडा देने योग्य होय है जाका कोई रक्षक न होय । इसही लोकमें घात होना, वध, बंधन हाथ पग कान नाक उपरलेहोठका छेदन, भेदन सर्व धनादिका लूटि लेना इत्यादिक दुःख पावै है । बहुरि परलोकविषैं अशुभगति पावै है । बहुरि निंदनीक होय है । यातैं चोरी करनेका त्याग करना कल्याणकारी है, ऐसी भावना राखणी ॥

तैसैंही अब्रह्मचारी मदविभ्रमकरि उद्भ्रांत है चित्त जाका सो कपटकी हथणीके अर्थि भ्रमतैं खाडामें पड्या जो हस्ती तिसकी ज्यों परवश हुवा वध बंधन अतिक्लेश आदिकूं भोगवै है । मोहका पीड्या कार्य अकार्यकूं न गिणता अपना कल्याणरूप कार्य कछु भी नाहीं आचरण करै है । बहुरि परकी स्त्रीके आलिंगन सेवनविषैं करी है रति जानैं सो इस-लोकविषैं वैरके निमित्ततैं लिंगछेदन वध बंधन धनहरण आदि कष्टनिकूं पावै हैं । बहुरि परलोकविषैं दुर्गति पावै है । बहुरि निंदनीक होय है, यातैं अब्रह्मचर्यपापतैं छुटना अपना हित है, ऐसी भावना राखणी ॥ तैसैंही परिग्रहवान् पुरुष है सो जे परिग्रहके अर्थि चोर आदि हैं तिनकै पीडा देनेयोग्य होय है । धनवानकूं चोर मारि जाय है । जैसैं कोइ पंछी मांसकी डलीकूं चूंचमें ले चलै, तब मांसके अर्थि अन्यपक्षी ताकूं चूंचनितै मारै, दुःख दे; तैसैं धनके लोभी धनवानकूं दुःख दे ॥

बहुरि धनके परिग्रहके उपार्जन करना रक्षा करनाविषैं बडा कष्ट है, तथा नष्ट होय जाय, जाता रहै तब बडा दुःख उपजै इत्यादि अनेक दोषनिकूं प्राप्त होय है । बहुरि यातैं तृप्ति भी नाहीं होय है । जैसैं अग्नि इंधनतैं तृप्त होय, तौ तृष्णावान धनतैं तृप्त होय । बहुरि लोभका पीड्या कार्य अकार्यकूं गिनैं नाहीं । बहुरि याकै पापतैं परलोकविषैं अशुभ-गति पावै है । बहुरि सर्व लोक कहैं 'बडा लोभी है' ऐसैं निंदनीक, होय है । तातैं परिग्रहका त्याग कल्याणकारी

है ऐसी भावना राखणी ॥ ऐसैं हिंसादिक पंचपापनिविषैं ऐसी भावना करणी ॥

आगैं, इन हिंसादिकनिविषैं अन्यभावना राखणी, ताके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥

याका अर्थ हिंसा आदि पांच पाप हैं, ते दुःखरूपही हैं, ऐसी भावना राखणी । इहां पूछै हैं, हिंसादिक दुःख कैसैं हैं? ताका समाधान, जातैं ए हिंसादिक हैं ते दुःखके कारण हैं । जैसैं अन्न है सो प्राणनिकी रक्षा करै है, तातैं कारण है । तहां कहिये, अन्न है सोही प्राण है, ऐसैं कारणकूं कार्य कहसी । तैसैं हिंसादिक दुःखके कारण हैं, तिनकूं दुःखही है ऐसैं कहना । इहां कारणविषैं कार्यका उपचार है । बहुरि कारणका कारण होय ताकूं भी कार्यही कहिये है । तैसैं अन्न तौ प्राणका कारण अरु धन है सो अन्नपानका कारण है । तहां धन है सोही प्राण है, ऐसैं कहते कारणके कारणविषैं कार्यका उपचार होय है, तैसैं हिंसादिक कहे ते असातावेदनीय आदि अशुभकर्मके कारण हैं । बहुरि असाता-वेदनीयआदि कर्म दुःखके कारण हैं । ऐसैं दुःखके कारणविषैं तथा दुःखके कारणके कारणविषैं दुःखका उपचार जानना । सो ए हिंसादिक पाप दुःखही हैं, ऐसी भावना राखणी ॥

बहुरि जैसैं आपके दुःखके कारण हैं, तैसैंही परकेविषैं भी जानना । बहुरि इहां तर्क, जो, ते सर्वही दुःख कहे सो नाहीं है । जातैं विषयनिके सेवनेविषैं सुख देखिये हैं । ताका समाधान, जो, विषय सेवनेविषैं सुख मानै है, सो सुख नाहीं है । विषयनिकी इच्छा नामा वेदना पीडा उपजै है, ताका इलाज प्राणी करै है । जैसैं खाजिका दुःख होय ताकूं खुजावै, तब सुख माने है, परमार्थतैं खुजावनेविषैं सुख नाहीं, सुखका स्वरूप तौ आकुलतारहित है, सो विषय सेवनेमें तो आकुलताही है, निराकुलपणा तौ होय नाही ॥

इहां विशेष जो, जैसैं आपके भावै तैसैं परकै भी भावै, सो कैसैं? जैसैं वध बंधन पीडन मोकूं बुरे लागे हैं, दुःख उपजावै, तैसैं परके भी दुःख उपजावै हैं । तथा जैसैं मोकूं कोई झूट कहै कडी कहै कठोर कहै सो बुरी लागै है, दुःख उपजावै हैं, तैसैं परकूं मैं कहूं तौ ताकूं बुरी लागै है, दुःख उपजावै है । तथा जैसैं मेरा धनादिक जाय तब मेरे वडा कष्ट दुःख उपजै है, तैसैंही अन्यजीवकै उपजै है । तथा मेरी स्त्रीका अपमान करै तब मेरै जैसैं दुःख पीडा उपजैं; तैसैं अन्यजीवकै भी दुःख उपजै है । तथा मेरै धनकी प्राप्तिविषैं वांछा तथा याके नाशविषैं शोक होय है, तैसैं परकै भी कष्ट होय है । ऐसैं हिंसादिक परकै भी दुःखके कारण जानना ॥

आगें फेरि भी भावनाके अर्थि आगें सूत्र कहै हैं-

॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि च सत्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनयेषु ॥ ११ ॥

याका अर्थ— प्राणीनिविषैं तौ मैत्री, अर गुणाधिकविषैं प्रमोद, तथा दुःखी पीडितविषैं करुणा, तथा प्रतिकूलविषैं मध्यस्थ-- परिणाम ऐसैं ये च्यारिनिविषैं च्यारि भावना राखणी । तथा परके दुःख न होनेका अभिलाष, सो तौ मैत्री कहिये । बहुरि वचनकरि तथा प्रसन्नताकरि प्रगट होय ऐसा अंतरंगविषैं भक्तिका अनुराग, सौ प्रमोद कहिये । बहुरि दीनकेविषैं उपकार करनेका भाव, सो कारुण्य कहिये । बहुरि रागद्वेषकरि पक्षपात होय है ताका अभाव, सो माध्यस्थ्य कहिये । बहुरि पापकर्मके उदयके वशतैं अनेकयोनिविषैं कष्ट भोगवै ते सत्व कहिये, तिनकूं जीव कहिये । बहुरि सम्यग्ज्ञानआदि गुणनिकरि बडे होय ते गुणाधिक कहिये । असातावेदनीयके उदयतैं जिनकै क्लेश उपजै, ते क्लिश्यमान हैं । बहुरि तत्वार्थके सुननेकरि ग्रहण करनेकरि अभ्यासकरि जिननें गुण न पाये ते अविनेय कहिये । इन सत्वादिक च्यारिनिविषैं यथासंख्य मैत्री आदि च्यार्यौं भावना भावणी । सर्वजीवनितैं मेरी क्षमा हैं । ते सर्व मेरैंपरि क्षमा करौ । मेरी सर्वतैं प्रीति है-वैर काहूतैं नाहीं है । ऐसैं सर्व प्राणी जीवनिविषैं तौ मैत्रीभावना भावणी । सम्यग्ज्ञानचारित्रादिककेविषैं वंदना स्तुति वैयावृत्य आदिकरि गुणाधिकविषैं प्रमोदभावना भावनी । मोहकर्मके मारे कुज्ञानसहित, विषयअग्निकरि दग्ध, हिताहितमैं समझै नाही, अनेक दुःखनिकरि पीडे, दीन, कृपण, अनाथ, बालक, वृद्ध, क्लिश्यमानविषैं करुणा भावनी । मिथ्यात्वकरि खोटे हठग्राही अविनेयनिविषैं मध्यस्थभावना करणी । ऐसैं भावना भावनेवालेके अहिंसादिकव्रत हैं ते पूर्ण होय हैं ॥

आगें फेरि भी भावना कहनेके अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥

याका अर्थ-- जगत् कहिये संसार अर देह इनका स्वभावकी भावना करनी, संवेगवैराग्यके अर्थि । तहां प्रथमही जगत्का स्वभाव, जो, यह लोक है सो अनादिनिधन वेत्रासन झल्लरी मृदंगसारिखा आकाररूप है । ताविषैं जीव अनादिसंसारविषैं अनंतकाल नानायोनिविषैं निरंतर दुःख भोगवता संता भ्रमण करै है । तहां निश्चित कछु भी नाही है । जीवित है सो जलके बुदेबुदेसारिखा है, तुरत विलाय जाय है । भोगसंपदा है ते बीजली बादलके विकारसारिखे चंचल हैं । इत्यादि ऐसैं जगत्का स्वभाव चिंतवन करनेतैं संसारतैं संवेग होय है, भय लागै है । बहुरि कायका स्वभाव

अनित्य है, दुःखका कारण है, साररहित है, अपवित्र है, इत्यादि ऐसैं चिंतवनेतैं विषयनिविषैं राग न होनेतैं वैराग्य उपजै है । यातैं जगत् अर कायका स्वभावकी भावना करनी ॥

आगें पूछै, जो, हिंसादिकतैं विरति सो व्रत है । तहां हम न जानी, ते हिंसादिक क्रिया कहां हैं? तहां आचार्य कहै हैं, ते युगपत् तौ कहे जाय नाहीं । तातैं तिनका स्वरूप कहना अनुक्रमतैं है । तहां जो आदिविषैं कही हिंसा, ताका लक्षणसूत्र कहै हैं--

॥ प्रमत्तयोगात् प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥ १३ ॥

याका अर्थ-- प्रमत्तयोगतैं प्राणनिका वियोग करना, सो हिंसा है । तहां कषायसहितपणा सो तौ प्रमाद है । तिस प्रमादसहित आत्माका परिणाम सो प्रमत्त है । प्रमत्तका योग सो प्रमत्तयोग कहिये । बहुरि इन्द्रियनिकूं आदि देकरि दश प्राण हैं, तिनका यथासंभव वियोग करना, सो व्यपरोपण है । ऐसैं प्रमत्तयोगतैं प्राणव्यपरोपण है, सोही हिंसा है । सो यऊ हिंसा प्राणीनिके दुःखका कारण है, तातैं याकूं अधर्मका कारण कहिये । इहां प्रमत्तयोग ऐसा विशेषणतैं ऐसा जानना, जो, केवल प्राणनिके वियोग कारणमात्रपणाही अधर्मके अर्थि नाहीं है ॥ इहां उक्तं च अर्द्ध श्लोक है, ताका अर्थ- प्राणनितैं प्राणीनिकूं न्यारा करै है अर हिंसाकरि युक्त न होय है ॥ तथा दूसरा उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ- कोई मुनि ईर्यासमितिकरि गमन करतैं पग उठावै था, ताके पगतले कर्मका प्रेर्या जीव आय पर्या मरि गया, तौ तिस कारणकरि तिस मुनिकै सूक्ष्म भी किंचिन्मात्र भी बंध नाहीं है, ऐसैं सिद्धांतमें कह्या है । बहुरि अध्यात्मप्रमाणतैं ऐसा कह्या है, जो, मूर्छा है सोही परिग्रह है, अन्य नांही ॥

इहां कोई तर्क करै है, जो, प्राणनिका वियोग किये विना भी प्रमत्तयोगमात्रहीतैं हिंसा मानिये है । जैसैं सिद्धान्तकी उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ- जो अयत्नाचार प्रवर्तै है, ताकी प्रवृत्तिमें जीव मरौ अथवा न मरौ ताकै हिंसा निश्चयतैं होय है । अर जो यत्नसहित प्रवर्तै है-समितिसहित है, ताका हिंसामात्रहीकारि बंध नाहीं है । तहां आचार्य कहै हैं, यह दोष नाहीं है । जातैं जो अयत्नाचार प्रवर्तै है, ताकै केवल प्रमत्तयोगही नाहीं है, तहां भावप्राणनिका व्यपरोपण भी है । तैसैंही कह्या है उक्तं च श्लोक, ताका अर्थ- प्रमादवान् आत्मा है, सो पहलैं तौ अपने आत्माकूं आपकरि आप हणै है, पीछै अन्य प्राणीनिका घात होऊ तथा मति होऊ । तातैं प्रमादवानके प्राणव्यपरोपण भी अवश्य जानना ॥

इहां विशेष जो, वार्तिकमें ऐसा अर्थ है, इन्द्रियनिका प्रचारका विशेष अपनी सावधानी विना होय सो प्रमत्त

कहिये अथवा प्रमत्ताकी ज्यौं होय सो प्रमत्त है। इहां उपमाका वाचक इव शब्दका प्रत्ययार्थमें लोप है। सो उपमाका अर्थ ऐसा, जैसैं दारूका पीवनेवाला मतवाला होय तब कार्यअकार्यका जाकै विचार न होय, ताकी उपमा है। तथा जीवनिकै स्थान तथा तिनके उपजनेके ठिकाने तथा जीवनिके आधार जानें नाहीं, कषायनिके उदयकरि देखकरि होय हिंसाके कारणनिविषैं स्थिति करै, सामान्यहिंसाका यत्न न करै, सो प्रमत्त है। अथवा पंदरह प्रमादरूप परिणया होय, सो प्रमत्त है। बहुरि योगशब्द है सो सम्बन्धार्थस्वरूप है। अथवा मनवचनकायकी क्रियाकूं भी योग कहिये। सो प्रमत्तका योग सो प्रमत्तयोग कहिये। सो हेतुरूप कह्या है। इस हेतुतैं प्राणनिका व्यपरोपण होय सो हिंसा है॥

बहुरि प्राणके ग्रहण करनेतैं प्राणीका ग्रहण जानना। प्राणनिके वियोगतैं प्राणीका वियोग होय है, अन्य न्यारा प्राणीके अवयव नाहीं ताका वियोग कैसैं संभवै? ताका समाधान, जो, ऐसैं नाहीं। प्राणनिके घाततैं प्राणीकै दुःख उपजै है तातैं अधर्म होय है। तहां फेरि कहै, जो, प्राणनिके घाततैं प्राणीकै दुःख नाहीं होय है। ताकूं कहिये, जो, पुत्र कलत्र आदिका वियोग होतैंही प्राणीकै दुःख होय है। तौ शरीर तौ अत्यंत निकटवर्ती है, याका वियोगमें दुःख कैसैं न होय? बहुरि शरीर जीव तौ कर्मबंध अपेक्षा एकही होय रहै हैं, याके वियोगमें अवश्य दुःख होय है। याहीतैं प्रमत्तयोग अरु प्राणव्यपरोपण दोऊनितैं हिंसा होय है॥

कोई ऐसैं कहै है, जो, सर्वलोक प्राणीनितैं भर्‍या है। तातैं मुनि अहिंसक कैसैं होय? यह कहना निष्फल है। जातैं मुनिकै प्रमत्तयोग नाहीं है, तातैं तिनकै हिंसा नाही है। बहुरि सूक्ष्मजीव हैं ते तौ पीडेही न जाय हैं। बहुरि ते बादर रक्षायोग्य हैं, तिनका यत्न करै ही है। तातैं तिनकै हिंसा कैसैं होय? बहुरि जे सर्वथा एकान्तवादी हैं, तिनकै प्राणी प्राण, हिंस्य हिंसक, हिंसा हिंसाफलका अस्तित्वही संभवै नांहीं। तिनका मत प्रमाणसिद्ध नाहीं है॥

आगें पूछै है, हिंसा तौ जैसा लक्षण कह्या तैसा जाणी। अब याके अनंतर कह्या जो अनृत, ताका लक्षण कहा? सो कहौ, ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ असदभिधानमनृतम् ॥ १४ ॥

याका अर्थ— जो प्राणीनिकूं पीडा करै ऐसा अप्रशस्त बुरा वचन, ताका कहना, सो अनृत है। इहां सत्‌शब्द प्रशंसावाची है, ताका निषेध सो असत् अप्रशस्त ऐसा कहिये। सो ऐसैं असत् अर्थका कहना सो अनृत है। ऋत कहिये सत्य, ऋत नाहीं सो अनृत है। तहां जो प्राणीनिकूं पीडाकारी वचन होय, सो अप्रशस्त है। जिस वचनका

वस्तु विषय विद्यमान होऊ अथवा विद्यमान मति होऊ, जहां हिंसा होय, सो सर्व अनृत कहिये है। सो पहले ऐसा कह्या था, जो, अन्य व्रत हैं ते अहिंसाव्रतकी रक्षाके अर्थ है। तातैं इहां जो हिंसाका कहनेवाला होय सो वचन अनृत है, ऐसा निश्चय करना। सो सर्वथा निषेधकाही अर्थ लीजिये तौ शून्यका प्रसंग आवै, तातैं युक्त नाहीं। बहुरि सर्वथा विपरीत अर्थ लीजिये तौ वस्तुका स्वरूप अन्यथा कहै हैं, ताहीका प्रसंग होई। कोई सत्यवचन ऐसा है, जाकरी प्राणीनिकूं पीडा होय है, सो नाहीं आवै है। तातैं अप्रशस्त अर्थमें दोऊ आय गये। झूठ कहना भी अनृत है। बहुरि सांच कहै अर जातैं प्राणीनिकूं पीडा होय हिंसा होय सो भी अनृत है। ऐसा भावार्थ जानना ॥

आगें पूछैं अनृतके अनंतर कह्या जो स्तेय ताका कहा लक्षण है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं-

॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥ १५ ॥

याका अर्थ— अदत्त कहिये विना दिया वस्तु धनादिक, ताका आदान कहिये लेना, सो स्तेय है। इहां आदान नाम ग्रहणका है, जो अदत्त कहिये विना दियेका ग्रहण, सो अदत्तादान है। इहां तर्क, जो, ऐसैं है तौ कर्मके वर्गणा तथा नोकर्मके वर्गणा हैं ते काऊने दिये नाहीं, तिनका ग्रहण अदत्तादान ठहऱ्या। ताका समाधान, जो, यह दोष इहां नाहीं। जातैं इहां अदत्त शब्द कह्या है। ताका ऐसा अर्थ आवै है, जो, जिसविषैं देनेलेनेका व्यवहार होय ऐसै धनादि वस्तुतैंही अदत्त जानना, कर्मनोकर्मके ग्रहणविषैं देनेलेनेका व्यवहार नाहीं, ते सूक्ष्म हैं अदृष्ट हैं। बहुरि कहै, जो, ऐसैं भी यह प्रसंग आवै है, जो मुनि आहार लेनेकूं जाय हैं, तब गली रस्ताके दरवाजे आदि होय हैं, तिनमें प्रवेश करै है, सो विना दीये हैं, तिसमें स्तेयका दोष आया। ताकूं कहिये, जो, यह दोष भी नाहीं, जातैं गली रस्ताके दरवाजे आदि लोकनिनें सामान्यपणै देय राखे हैं। कोई आवौ कोई जावौ, तहां वर्जन नाहीं। याहीतैं मुनि है सो जहां द्वारके कपाट आदि जुडे होय तहां वर्जना होय तहां प्रवेश न करैं हैं। अथवा प्रमत्तयोगकी अनुवृत्ति है। तातैं गली आदिमें प्रवेश करते मुनिके प्रमत्तयोग नाहीं है। तातैं यह अर्थ है, जहां संक्लेशपरिणामकरि प्रवृत्ति होय तहां स्तेय कहिये। बाह्यवस्तुका ग्रहण होऊ तथा मति होऊ प्रमत्तयोगके होतैं स्तेय वणी रह्या है ॥

आगें चौथा अब्रह्मका लक्षण कहा है ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं-

॥ मैथुनमब्रह्म ॥ १६ ॥

याका अर्थ– मैथुन कहिये कामसेवन सो अब्रह्म है। तहां स्त्रीपुरुष चारित्रमोहके उदयकूं होतैं रागपरिणामकरि सहित होय तब तिनकैं परस्पर स्पर्शनकी इच्छा होय, सो मैथुन है, तिसका भाव तथा कार्यका नाम मैथुन है। जातैं लोकविषैं तथा शास्त्रविषैं तैसैंही प्रसिद्ध हैं। लोकविषैं तौ बालगोपाल स्त्री सर्व जानैं हैं, जो, स्त्रीपुरुषकैं रागपरिणामतैं चेष्टा होय सो मैथुन है। बहुरि शास्त्रविषैं भी घोडे बलधके मैथुनकी इच्छाविषैं इत्यादिक पाठ हैं, तहां मैथुनका ग्रहण कीजिये है। बहुरि इहां प्रमत्तयोगकी अनुवृत्ति है, ताकरि भी स्त्रीपुरुषंका युगलसंबंधी रतिसुखके अर्थि चेष्टा होइ, सोही मैथुन ग्रहण कीजिये है। सर्वही कार्यमें मैथुन नाहीं। बहुरि जाके पालते संते अहिंसादिक गुण वृद्धिकूं प्राप्त होय सो ब्रह्म है, जो ब्रह्म नाहीं सो अब्रह्म हैं। सो ऐसा अब्रह्म मैथुन है। इस मैथुनतैं हिंसादिक दोष हैं ते पुष्ट होय हैं। जातैं मैथुन सेवनेविषैं जो पुरुष तत्पर है सो थावर त्रस प्राणीनिकूं हणै है, झूंठ वचन बोलै है, चोरी करै है, चेतन अचेतन परिग्रहका ग्रहण करै है, ऐसैं जानना। इहां ऐसे कहनेतैं स्त्रीपुरुष रागपरिणामविना अन्य कोई कार्य करै, सो मैथुन नाहीं। तथा दोय पुरुष कोई कामसेवनविना अन्य कार्य करै सो मैथुन नाहीं, ऐसा सिद्ध होय है। तथा कामसेवनके परिणामतैं एकही पुरुष जो हस्तादिकतैं चेष्टा करै सो भी मैथुन है। जातैं तहां दूसरा रागपरिणामके विषैं संकल्प है। जैसैं काहूंकौं भूत लागै तैसैं इहां दूसरा काम है, तातैं मैथुनशब्दकी सिद्धि है॥

आगें, पांचवां जो परिग्रह ताका कहा लक्षण है ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ मूर्छा परिग्रहः ॥ १७ ॥

याका अर्थ— मूर्छा कहिये परविषैं ममत्वपरिणाम सो परिग्रह है। तहां बाह्य जे गऊ भैंसि मणि मोती आदि चेतन अचेतन वस्तु अर अभ्यंतर जे राग आदिक ऐसे जे परिग्रह तिनकी रक्षा करना उपार्जन करना संस्कार करना ऐसा जो व्यापार, सो मूर्छा है। इहां प्रश्न, जो, लोकविषैं वायु आदि रोगके प्रकोपतैं अचेतन होय जाय ताकूं मूर्छा कहै हैं, सो प्रसिद्ध है, सो तिस अर्थकूं ग्रहण काहेतैं न कीजिये? ताका उत्तर, जो, यह तौ सत्य है, लोकमें तिसहीकूं मूर्छा कहै है। परंतु यह मूर्छि धातु है सो मोहसामान्य अर्थविषैं वर्तै है, सो सामान्यकी प्रेरणा विशेष अर्थिविषैं है। ऐसैं होतैं विशेषका अर्थ इहां ग्रहण है। जातैं इहां परिग्रहका प्रकरण है। इहां फेरि पूछै है, जो ऐसैं कहै भी बाह्य–

वस्तुकै परिग्रहपणा नाहीं ठहरैगा। जातैं तुमनें अभ्यंतर जो मूर्छा है ताहीका ग्रहण किया है। ताका समाधान, जो, सत्य है। प्रधानपणातैं हमने अभ्यंतरकाही ग्रहण किया है। बाह्यपरिग्रह न होतैं भी मेरा यऊ है ऐसैं परविषैं संकल्प करनेवाला पुरुष है, सो परिग्रहसहितही है। अथवा बाह्य परिग्रह नाहीं भी कहिये है वहुरि परिग्रह है भी ऐसा भी कहिये, जातैं मूर्छाका आलंबन कारण है। तथा मूर्छा है कारण जाकूं ऐसा है॥

वहुरि इहां तर्क, जो, मेरा यऊ है ऐसा संकल्प है सो भी परिग्रहवाची है, तौ सम्यग्ज्ञानादिकविषैं भी यह मेरा है ऐसा संकल्प है, सो भी परिग्रह ठहऱ्या। रागादिपरिणाम अभ्यंतरपरिग्रहकी ज्यौं यह भी है। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं। जातैं इहां प्रमत्तयोगकी अनुवृत्ति है, तातैं ज्ञानदर्शनचारित्रवान् पुरुष है सो मोहके अभावतैं अप्रमत्त है, तातैं ताकै मूर्छा नाहीं है, ऐसा याकै निष्परिग्रहपणा सिद्ध है॥ इहां ऐसा भी विशेष जानना, जो, ज्ञानादि आत्माके स्वभाव है, त्यागनेयोग्य नाहीं। तातैं तिनतैं परिग्रहसहितपणा न होय है अर रागादिक हैं ते आत्माके स्वभाव नाहीं। कर्मके उदयके आधीन होय है, तातैं त्यागनेयोग्य हैं। तातैं तिनविषैं मेरा यऊ है ऐसा संकल्प है सो परिग्रह हैही, यह कहना युक्त है। इन रागादिकनिहीतैं सर्व दोष उपजै हैं। ए सर्व दोषनिके मूल हैं। मेरा यऊ है ऐसैं संकल्पतैंही परिग्रहकी रक्षा करनी उपार्जन करना इत्यादिक उपजै हैं। तिनविषैं अवश्य हिंसा होय है। इनके निमित्त झूठ बोलै है, चोरी करै है, मैथुनकर्मविषैं यत्न करैं हैं। तिन पापनिके आभावतैं नरकआदिके दुःख अनेकप्रकार प्रवर्तैं हैं॥

आगैं, ऐसैं उक्त अनुक्रमकारि हिंसादिविषैं दोष देखनेवाला पुरुषकै अहिंसादिकविषैं गुणका निश्चय भया, तब अहिंसादिकविषैं वडा यत्न करने लगा, ताकै अहिंसादि व्रत होय हैं, सो पुरुष कैसा है ऐसैं सूत्र कहै हैं—

॥ निःशल्यो व्रती ॥ १८ ॥

याका अर्थ— मिथ्या माया निदान ए तीनि शल्य जाकै न होय सो व्रती है। जो शृणाति कहिये घातै चुभै सो शल्य कहिये। सौ अर्थतैं शरीरकेविषैं प्रवेश करै घसी जाय ऐसा शस्त्रविशेषकूं शल्य कहिये। तिससारिखा चुभै मनविषैं वाधा करै सो भी शल्यही कहिये। जातैं कर्मके उदयतैं भया जो मानसिक विकार सो प्राणीनिकूं शरीरसंबंधी मनसंबंधी वाधा करै सो भी शल्य है, ऐसा उपचारकारि नाम जानना। सो शल्य तीनिप्रकार है, मायाशल्य निदानशल्य मिथ्यादर्शनशल्य। तहा माया तौ निकृतिकूं कहिये, याकूं ठिगनेके परिणाम भी कहिये। वहुरि विषयभोगनिकी वांछाकूं निदान कहिये। वहुरि अतत्त्वश्रद्धानकूं मिथ्यादर्शन कहिये। इन तीनूंनितैं रहित होय निःशल्य है सो व्रती है ऐसा कहिये है॥

इहां तर्क करै है, शल्यका अभावतैं तौ निःशल्य कहिये। बहुरि व्रतके धारणतैं व्रती कहिये। इहां व्रतीका विशेषण निःशल्य किया सो व्रतकै अर निःशल्यपणाकै विरोध है, तातैं विशेषण बणै नाहीं। निःशल्यकूं व्रती कहना बणै नाहीं। जैसैं दंडके संबंधतैं तौ दंडी कहिये। छत्रके संबंधतैं छत्री कहिये। दंडीके संबंधतैं छत्री कहना तौ बणै नाहीं। ताका समाधान, इहां दोऊ विशेपणतैं व्रती कहना इष्ट किया है। केवल हिंसादिकके छोडनेही मात्र व्रतके संबंधतैं शल्यसहितकूं व्रती कह्या नाहीं, जाकै शल्यका अभाव होय तब व्रतके संबंधतैं गृहादिकमें वसने न वसनेकी अपेक्षा अगार अनगारके भेदकरि व्रती कहनेकी विवक्षा है। जैसैं जाकै बहुत दूध घृत होय ताकूं गऊवाला कहिये बहुरि जाके दूध घृत नाहीं होय अरु गऊ विद्यमान होय तौ गऊवाला कहना निष्फल है। तैसैं जो शल्यसहित होय ताकै व्रत होतैं भी व्रती कहना सत्यार्थ नाहीं। जो निःशल्य है सोही व्रती है। तथा इहां ऐसा भी उदाहरण हैं, जो, प्रधान होय ताका विशेपण अप्रधान भी होय है। जैसैं कोई काटनेवाला पुरुष तौ काटनेकी क्रियाविपैं प्रधान हैही, परंतु ताके विशेषण कीजिये जो तीक्ष्ण फरसीकरि काटै है तहां तीक्ष्णगुण विशेषणसहित फरसी अप्रधान है। सो काटनेवाला पुरुषका विशेपण होय है; तैसैं निःशल्यपणागुणकरि विशेषणस्वरूप जो व्रत ते तिस व्रतसहित पुरुप प्रधान है, ताका विशेपण होय है ऐसैं जानना ॥

आगें ऐसैं व्रतीके भेद जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ अगार्यनगारश्च ॥ १९ ॥

याका अर्थ — अगारी कहिये गृहस्थ दूजा अनगार कहिये मुनि ऐसैं व्रतीके दोय भेद हैं। तहां वसनेके अर्थि पुरुष जाकौं अंगीकार करै सो अगार कहिये ताकूं वेश्म मंदिर घर भी कहिये, सो जाकै होय सो अगारी कहिये। बहुरि जाकै अगार न होय सो अनगार कहिये। ऐसैं दोय प्रकारके व्रती हैं। एक अगारी दूसरा अनगार। इहां तर्क, जो, ऐसैं तौ विपर्ययकी भी प्राप्ति आवै है। शून्यागार देवमंदिर आदिकेविपैं आवास करते जे मुनि तिनकै अगारीपणा आया। बहुरि जो विपयतृष्णातैं निवृत्त नाहीं भया है, ऐसा गृहस्थ सो कोई कारणतैं वनमें ज्याय वस्या ताकै अनगारपणा आया। तहां आचार्य कहै हैं, यह दोष इहां नाहीं आवै है। इहां भाव अगारकी विवक्षा है। चारित्रमोहके उदयतैं अगार जो घर ताके संबंधप्रति जो अनिवृत्ति परिणाम है सो भावअगार है। सो ऐसा जाकै भावअगार होय

सो वनमें वसता होय तौ अगारीही कहिये । अर घरमें वसै ते अगारीही हैं । बहुरि भावअगारका जाकै अभाव है सो अनगार कहिये है ॥

बहुरि तर्क, जो, अगारी जो गृहस्थ ताकै व्रतीपणाकी प्राप्ति नाहीं वणै है । जातैं याके परिपूर्ण व्रत नाहीं । व्रती ऐसा नाम तौ पूर्ण व्रत होय तब वणैं । ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है । नैगम आदि नयकी अपेक्षाकरि अगारी गृहस्थकै भी व्रतीपणां वणैं है । जैसैं कोऊ एक साल ऊबरामें वसता होय ताकूं नगरमें वसनेवाला भी कहिये। तैसैं ताकै सकलव्रत नांही है, एकदेशव्रत है तौ ताकूं व्रती कहिये नैगम संग्रह व्यवहार ए तीनूं नय हैं, तिनकी अपेक्षा जाननी । तहां नैगम तौ आगामी सकलव्रती होयगा । ताकी अपेक्षा संकल्पमात्रविषय करै है । बहुरि संग्रह सामान्यव्रतीका ग्रहण करै है । तहां एकदेश भी आय गया । बहुरि व्यवहार व्रतीका भेद करै है । तातैं एकदेशव्रतीका भेद हैही, एकदेशविषैं सर्वदेशका उपचारतैं भी वणैं है, ऐसा जानना ॥

आगैं पूछै है कि, हिंसादिक पांच पाप हैं, तिनमें कोई पुरुष एकपापतैं निवृत्त हूवा होय सो गृहस्थ व्रती है कि नाहीं? आचार्य कहै हैं नाहीं है । फेरि पूछै है, जो, कैसै हैं? तहां कहैं हैं, पांचूही पापकी विरति वैकल्येन कहिये एकदेशपणैं करै, सो इहां विवक्षित है । ताका सूत्र—

॥ अणुव्रतोऽगारी ॥ २० ॥

याका अर्थ— पांच पापका त्याग अणुव्रत कहिये एकदेश त्याग जाकै होय सो अगारी कहिये गृहस्थव्रती है । तहां अणुव्रतशब्द है सो अल्पवचन है, जाकै अणुव्रत होय सो ऐसा अगारी कहिये है । इहां पूछै है, या अगारी गृहस्थकै व्रतनिका अणुपणा कैसैं है? ताकूं कहै है, याकै सर्वसावद्य कहिये सर्वही पाप तिनकी निवृत्ति कहिये अभाव ताका असंभव है-होय सकै नाहीं । फेरि पूछै, जो, यऊ कोनसे पापतैं निवृत्त है? तहां कहिये है, त्रसप्राणीनिका व्यपरोपण कहिये मारणा तातैं निवृत्त है । तातैं तौ याकै आद्यका अहिंसा नामा अणुव्रत है । बहुरि जिस असत्य वचनतैं घरका विनाश होय, तथा ग्रामका विनाश होय, ऐसा आप जाणैं तिस असत्यवचनतैं निवृत्त होय स्नेहमोहके वशतैं ऐसा वचन न वोलै ऐसैं गृहस्थकै दूसरा अणुव्रत होय है । बहुरि अन्यकूं पीडाका कारण ऐसैं अदत्तादानादि- कका न लेना, ताका राजादिकके भयतैं अवश्य त्याग होयही, तिसविषैं लेनेकी इच्छा भी न होय, ऐसैं परिणाम न होय, जो, भय न होय तौ लेवो विचारै, ऐसा होय तो ताविषैं आदरही न होय, सो तीसरे अणुव्रतधारी श्रावक है ।

वहुरि उपात्त कहिये परकी व्याही अर अनुपात्त कहिये परकी व्याही नाहीं ऐसी जो परस्त्री तिसके संगमतें नाहीं है रति कहिये राग जाकै ऐसा गृहस्थ, सो तौ चौथा अणुव्रतधारी है । वहुरि धन धान्य क्षेत्र आदि परिग्रहका अपनी इच्छाके वशतैं परिमाण करै, जेती इच्छा होय तेता राखै ऐसा जो गृहस्थ सो पांचमां अणुव्रतधारी है ॥

इहां कोई पूछै, जो, गृहस्थव्रतीकूं त्रसके घातका त्यागी कह्या सो याकै व्यापारआदि गृहस्थके आरंभ अनेक हैं, तिनमें त्रसकी हिंसा अवश्य होय है । तामें त्याग कैसें पलै? वहुरि याकै शास्त्रमें ग्यारह प्रतिमारूप भेद कहे हैं, तिनमें समझै नाहीं, सो कैसै है? ताका समाधान, जो श्रावकके ग्यारह प्रतिमारूप भेद कहे हैं, तिनमें प्रथमप्रतिमाविषैंही स्थूलत्यागरूप पांच अणुव्रतका ग्रहण है । याका लक्षण ऐसा कह्या है, जो, आठ तौ मूलगुण पालै, सात व्यसन छोडै, सम्यग्दर्शनके अतीचार मल दोष टालै ऐसैं कहै ते पांच अणुव्रत स्थूलपणैं आवै है । जातैं कोई शास्त्रमें तौ आठ मूलगुण कहे हैं । तामें पांच अणुव्रत कहे मद्य मांस शहतका त्याग कह्या ऐसैं आठ कहे । कोई शास्त्रमें पांच उदुंबर फलका त्याग, तीनि मकारका त्याग ऐसैं आठ कहे । कोई शास्त्रमें अन्यप्रकार भी कह्या है, यह तौ विवक्षाका भेद है॥

तहां ऐसा समझना, जो, स्थूलपणैं पांच पापहीका त्याग है । पंच उदुंबर फलमैं तौ त्रसभक्षणका त्याग भया, शिकारके त्यागमें त्रस मारनेका त्याग भया, चोरी तथा परस्त्री व्यसनत्यागमें दोऊ व्रत भये, द्यूतकर्मआदि अतितृष्णाके त्यागतैं असत्यका त्याग तथा परिग्रहकी अतिचाह मिटी, मांस मद्य शहतके त्यागतैं त्रसकूं मारिकरि भक्षण करनेका त्याग भया । ऐसैं पहली प्रतिमामें पंच अणुव्रतकी प्रवृत्ति संभवै है । अर इनके अतीचार दूरि करि सकै नाहीं । तातैं व्रतप्रतिमा नाम न पावै । सम्यग्दर्शनके मल दोष अतीचार दूर होय सकै हैं, दर्शनप्रतिमा नाम कहावै है । मनवचनकाय कृतकारितअनुमोदनाकरि अतीचाररहित प्रतिज्ञा पलै, तब प्रतिमा नाम पावै है, प्रतिमा नाम मूर्तिका भी है, सो व्रतकी सांगोपांग मूर्ति वणैं तब प्रतिमा कहिये, सो इस दर्शनप्रतिमाका धारक पंचपरमेष्ठीका भक्त है, अन्यकी उपासना नाहीं, संसारदेहभोगतैं विरक्त है । जो प्रतिज्ञा याकै है, सो ऐसी है, जो, संसारके कार्य बिगडै तौ विगडौ, देह बिगडै तौ बिगडौ, भोग बिगडै तौ बिगडौ, प्रतिज्ञा तौ भंग न करनी । ऐसैं दृढपरिणामहीतैं प्रतिज्ञा नाम पावै है ।

वहुरि त्रसके घातकी भी ऐसी तौ प्रतिज्ञा होय है, जो, त्रसप्राणीकूं मनवचनकायकरि मारूं नाहीं, परकूं उपदेशकरि मरवाऊं नाहीं, अन्य मारै तौ ताकूं भला जाणूं नाहीं, देवताके अर्थि गुरुके अर्थि मंत्रसाधनके अर्थि रोगके इलाजके अर्थि त्रसप्राणीकूं घातूं नाहीं अर व्यापार आदिकार्यनिविषैं यत्न तौ करै, परंतु तहां गृहस्थके आरंभके अनेक कार्य हैं, कहांताई बचावै? तौ याके अभिप्रायमैं मारनेहीके परिणाम नाहीं, तातैं पाप अल्प है । वहुरि व्रतप्रतिमामें व्रतनिके

अतीचारकी सोधना है, आरंभपरिग्रह अल्प होय है । पंचपापतैं बड़ भयवान् है । परंतु प्रत्याख्यानावरणके तीव्रस्थानके उदय होतैं सकलव्रत न बणै है, इत्यादि भावार्थ जानना ॥

आगैं पूछै है कि, गृहस्थ अणुव्रतीका एतावन्मात्रही विशेष है, कि कछू और भी है? सो ताके विशेषका सूत्र कहै हैं-

दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोग-परिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥

याका अर्थ- गृहस्थ अणुव्रती है, सो दिग्विरति देशविरति अनर्थदंडविरति ए तीनि तौ गुणव्रत हैं, बहुरि सामायिक प्रोषधोपवास उपभोगपरिभोगपरिमाण अतिथिसंविभाग ए च्यारि शिक्षाव्रत इन सातव्रतनिकरि सहित होय है । इनकूं सात शील भी कहिये है । इहां विरतिशब्द तौ प्रत्येक लेनैं तीनि व्रत भये है । च्यारि सामायिक आदि व्रतही है, सोही कहिये है । दिक् कहिये पूर्वआदि दिशा, तिनविषैं प्रसिद्धचिह्न पर्वत नदी ग्राम नगरादिक, तिन पर्यंत मर्यादा करि नियम करै सो तौ दिग्विरतिव्रत है । यातैं बाहिर त्रसथावर सर्वही प्राणीनिका घातके अभावतैं याकै महाव्रतपणाका उपचार है । तिस बाहर लाभ होतैं भी परिणाम चलै नाहीं । तातैं लोभकषायका निरास होय है । बहुरि दिशाके परिमाणविषैं भी कालकी मर्यादा करि सापेक्षातैं मर्यादा करै, जो, इस महीनामें तथा पक्षमें तथा इस दिनमें अपने घरमेंही रहना है, तथा इस नगरमेंही रहूंगा, तथा फलाणा वाडा तथा बाजार हाटतांईकी मर्यादा है इत्यादि प्रतिज्ञा करै सो देशविरतिव्रत है । इहां भी जेता देशकी मर्यादा करी तातैं बाहिर हिंसादिके अभावतैं महाव्रतपणाका उपचार है ॥

बहुरि जिसतैं कछु अपना परका उपकार नाहीं अर अपने परकै नाश भय पापका कारण ऐसा जो कार्य सो अनर्थदंड है, तिसतैं रहित होना, सो अनर्थदंडविरतिव्रत है । सो यह पंचप्रकार है, अपध्यान पापोपदेश प्रमादाचरित हिंसाप्रदान अशुभश्रुति ऐसैं । तहां परकै जय, पराजय, वध, बंधन, अंगछेदन, सर्वधनका हरण इत्यादि कैसैं होय ऐसैं मनकरि चिंतवना, सो तौ अपध्यान है । बहुरि क्लेशरूप तिर्यग्वणिज प्राणिवधका तथा हिंसाका आरंभ आदिक पापसंयुक्त वचन कहना, सो पापोपदेश है । बहुरि प्रयोजन विना भूमिका कूटना, जलका सींचना, वृक्षका छेदना आदि अवद्य कहिये पाप, ताका कार्य सो प्रमादाचरित है । बहुरि विष, लोहके कांटा, शस्त्र, अग्नि, जेवडा, कोरडा, चावका, दंड आदि हिंसाके उपकरणका देना, सो हिंसाप्रदान है । बहुरि हिंसा तथा रागादिककी बधावनहारी खोटी कथा तिनका सुनना सीखना प्रवर्तन करना, सो अशुभश्रुत है ॥

बहुरि सामायिक कहै हैं । तहां सामायिक शब्दका अर्थ कहै हैं । सम् ऐसा उपसर्ग है, सो एकताके अर्थमें है । जैसें संगतं घृतं कहिये काहू वस्तुमें घृत मिलैं एक होय ताकूं संगतं घृतं कहिये । तथा तेल मिल्या होय एक होय गया होय तहां संगतं तैलं ऐसा कहिये । तैसैं एकही भूत जानिये । बहुरि ऐसैं एकत्वपणाकरि अयनं कहिये गमन होय सो समय कहिये । बहुरि समयही होय, सो सामायिक कहिये । तथा समय जाका प्रयोजन होय सो सामायिक कहिये । भावार्थ ऐसा, जो स्वरूपविषैं तथा शुभक्रियाविषैं एकता करि लीन होना, सो सामायिक है । तहां एते क्षेत्रविषैं एते कालविषैं मैं इस अपने स्वरूपविषैं तथा शुभक्रियाहीविषैं लीन हूं ऐसैं मर्यादा करि सामायिकविषैं तिष्ठै हैं, ताके तेते देशकालसंबंधी महाव्रतका उपचार है । तातैं सूक्ष्मस्थूलप्रकारकरि याकै हिंसादिकका अभाव है ॥

इहां कोई कहै, ऐसैं तौ सकलसंयमका प्रसंग आवै है । ताकूं कहिये, याकै सकलसंयमका घातक प्रत्याख्यानावरण कषायका उदयका सद्भाव है, तातैं सकलसंयम नाहीं । बहुरि कहै, जो, ऐसैं कहै महाव्रतका अभाव आवै है, तुम महाव्रत कैसैं कहौ हौ ? ताकूं कहिये, जो, उपचारकरि कहै हैं । जैसैं कोई पुरुषका राजमें प्रवेश होय, सो कोई राजका प्रच्छन्न ठिकाणा होय तहां ताका गमन नाहीं भी है, तौ ताकूं कहिये इस पुरुषका राजमें सर्व जायगा प्रवेश है सर्वगत है; तैसैं इहां भी व्रतका अंगीकार है, सकलव्रत नाहीं तौ एकदेशविषैं सर्वदेशका उपचारकरि व्रती कहिये है । बहुरि प्रोषधशब्द है सो पर्वका वाचक भी है, प्रोषध अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्वकूं कहिये । बहुरि पांचूही इन्द्रिय अपने विषयतैं छूटि जामें आय वसै सो उपवास कहिये । जहां च्यारिप्रकार आहारका त्याग होय सो उपवास है, ऐसा अर्थ जानना । जो प्रोषधविषैं उपवास होय सो प्रोषधोपवास कहिये । तहां अपने शरीरका संस्कारके कारण स्नान सुगंध पुष्पमाला गहणा आभरण आदिकरि रहित होय पवित्र क्षेत्र अवकाशविषैं तथा साधु मुनि जहां वसैं तैसे क्षेत्रविषैं तथा चैत्यालयविषैं तथा अपने रहनेकी जायगामें न्यारा प्रोषधोपवास करनेका स्थानक होय तहां धर्मकथाका सुनना चिंतवना तिसविषैं मन लगाय बैठा रहै आरंभादिक कछू करै नाहीं, सो प्रोषधोपवास है ॥

बहुरि उपभोग कहिये भोजन पाणी सुगंध माला आदिक एकवार भोगनेमें आवैं बहुरि परिभोग कहिये वस्त्र आभूपण सेज आसन गृह यान वाहन आदिक बार बार भोगनेमें आवैं इन दोऊनिका परिमाण, सो उपभोगपरिभोगपरिमाण कहिये । इहां भोगसंख्या पांचप्रकार है । त्रसघात प्रमाद बहुवध अनिष्ट अनुपसेव्य ऐसैं । तहां त्रसघाततैं निवृत्त है चित्त जाका तिस पुरुषकरि मांस अरु शहत तौ सदाही त्याग करने । बहुरि मद्य है सो मन मोहै है तातैं प्रमाद छोडनेके अर्थि छोडना । बहुरि केवडा केतकी सहीजणा अगथ्याके फूल आदि तथा जमींकंद आदौ मूला आदि बहुजीवनिका उपजनेका

ठिकाण जिनकूं अनंतकाय कहिये ते सर्वही त्याग करने । जातैं इनमें घात तौ बहुतजीवनिका है अर फल अल्प है— किंचित् स्वादमात्र फल है । बहुरि यान वाहन आभरण आदिकविषैं मेरै एता इष्ट है, इससिवाय अनिष्ट है ताका त्याग है, ऐसैं इह अनिष्टत्याग कहिये । बहुरि कालके नियमकरि यावज्जीव यथाशक्ति इष्टवस्तुविषैं भी सेवनेयोग्य नाहीं तिनका त्याग करना, सो अनुपसेव्यत्याग कहिये ॥

बहुरि जो संयमकूं पालता संता अतति कहिये विहार करै सो अतिथि कहिये अथवा जाकै तिथि नाहीं होय सो अतिथि कहिये, जो पडिवा दोयज आदि तिथिरूप कालके नियम विना आहारकूं आवै सो अतिथि है, ऐसा अर्थ है । ऐसैं अतिथिके अर्थि संविभाग कहिये अपने भोजनवस्तुविषैं विभाग देना, सो च्यारिप्रकार है । भिक्षा उपकरण औषध वसतिका । तहां मोक्षके अर्थि उद्यमी संयमीविषैं तत्पर प्रवीण शुद्धआचारी जो अतिथि ताकै अर्थि शुद्धमनकरि निर्दोष भिक्षा भोजन आहार देना । बहुरि धर्मके उपकरण सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रके बधावनेवाले देने । बहुरि औषध भी योग्य देनी । बहुरि परमधर्मकी श्रद्धाकरि वसतिका भी बनावणी । बहुरि सूत्रमें चशब्द है सो आगें कहसी जो गृहस्थधर्म ताके समुच्चयके अर्थि है ॥

इहां ऐसा भी विशेष जानना, जो, ग्यारह प्रतिमाके अनुक्रममें दूजी व्रतप्रतिमा है तामैं पंचअणुव्रतके अतीचार तौ सोधैही हैं । बहुरि ए सप्तशील कहे तिनका आचरण यथाशक्ति है तिनमें अतीचार भी लागै हैं । बहुरि तीजी प्रतिमा सामायिक नाम है, तहां सामायिक अतीचाररहित पलै है । बहुरि चौथी प्रतिमा प्रोषधोपवास नामा है, तहां प्रोषधोपवास अतीचाररहित पलै है । बहुरि पांचमी प्रतिमा सचित्तत्याग नाम है, तहां उपभोगपरिमाण नामा शील है ताके अतीचार सोधै है । तहां सचित्तका भक्षणका तौ त्यागही करै है, बहुरि अन्यकार्य भी सचित्तसूं यत्नपूर्वक करै है । इहां सतरह नियमकी प्रवृत्ति अवश्य होय है । बहुरि छठी प्रतिमा रात्रिभोजनका त्याग दिवा स्त्रीसेवनका त्याग है, सो यह भी उपभोगपरिभोगके परिमाणके अतीचार सोधनेहीका विशेष है । तहांताई जघन्यश्रावक कहिये ॥

बहुरि सातमी प्रतिमा ब्रह्मचर्य है । सो इहां स्वस्त्रीका भी त्याग नववाडसहित शुद्ध अतीचाररहित होय है । बहुरि आठमी प्रतिमा आरंभत्याग है । तहां वणिज आदि आरंभका कछू कुटुंब सामिल रहनेमें दोष अतीचार उपजै तथा ताका भी अतीचाररहित शुद्ध त्याग होय है । बहुरि नवमी प्रतिमा परिग्रहत्याग है । तहां पहलै कछु अल्पपरिग्रह रुपया पईसासंबंधी ममत्व था तिसका भी इहां त्याग है अतीचार न लगावै है । इहांताई मध्यमश्रावक है । बहुरि दशमी प्रतिमा अनुमतित्याग है, सो नवमीमें कुटुंब सामिल भोजनादिक करै था, तामैं भला माननेका दोष उपजै था,

इस दशमी प्रतिमामें ताका भी त्याग है, घरका तथा अन्य कोई बुलावै ताकै भोजन करै, घरतैं उदासीनवृत्ति रहै, कदाचित् घर वैठै कदाचित् मठ मंडप चैत्यालय आदिविषैं वैठि निर्ममत्व रहै। वहुरि ग्यारमी प्रतिमामें घरका त्याग करि मुनिकी ज्यौं मंडपमें रहै है, याका नाम उद्दिष्टत्यागप्रतिमा है। तहां अपने निमित्त किया भोजनादिकूं भी नाहीं अंगीकार करै है, यह उत्तमश्रावक है, एक कोपीनमात्र वस्त्र राखै है। वहुरि याका दूसरा भेद क्षुल्लक है, ताका स्वरूप श्रावकाचारतैं जानना। वहुरि सारीही प्रतिमानिका स्वरूपका भावार्थ इहां संक्षेप लिख्या है। सो विशेषकथन श्रावकाचारग्रंथनितैं जानना ॥ आगैं चशब्दकरि समुच्चय कियाकूं कहै हैं—

॥ मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता ॥ २२ ॥

याका अर्थ— मरणके अंतसंबंधी जो सल्लेखना ताहि सेवनेवाला भी यह श्रावक होय है। तहां अपने परिपाककूं प्राप्त भया जो आयुकर्म ताका वहुरि इन्द्रियप्राण तथा वलप्राण इनका कारणके वशतैं क्षय होना, सो मरण कहिये। ताका जो तिस भवसंबंधी अंत ताकूं मरणांत कहिये, सो मरणांत है प्रयोजन जाका सो मारणांतिकी कहिये। भलेप्रकार वाह्य तौ कायका तथा अभ्यंतर कषायका लेखना कहिये अनुक्रमतैं तिनके कारणनिके घटावनेकारि कृश करना सो सल्लेखना कहिये। ऐसी मरणके अंतसंबंधी सल्लेखना ताहि जोषिता कहिये सेवनेवाला गृहस्थ श्रावक होय है। वहुरि कोई कहै है, जो, जोषिताशब्द कह्या सो सेविता ऐसा स्पष्ट प्रगट अर्थरूप शब्द क्यों न कह्या? ताकूं कहिये, जो इहां सेविता न कहना, जातैं जोषिता कहनेमें अर्थका विशेष वणै है। केवल सेवनाही न ग्रहण किया है। इहां प्रीतिका भी अर्थ है। प्रीति विना जोरीने सल्लेखना न करनी। सल्लेखना प्रीति होतैं आपही करै है। तातैं जोषिताशब्दसें प्रीति अरु सेवना दोऊ अर्थ हैं। वहुरि कोई तर्क करै है, जो, यह हम मान्या, परंतु यामें आत्मघातकी प्राप्ति आवै है। जातैं अपने अपने अभिप्रायपूर्वक आयुआदि प्राणनिकी निवृत्ति करै है। आचार्य कहै हैं, यह इहां दोष नाहीं। जातैं इहां प्रमत्तयोग नाहीं है प्रमत्तयोगतैं प्राणव्यपरोपणा करै सो हिंसा कही है सो याकै हिंसा नाहीं। जातैं रागादिदोषका याकै अभाव है। जो राग दोष मोहके वश होय, सो विषशस्त्रादि उपकरणनिकरि आपकूं घातै, ताकै आत्मघात होय है। तैसैं सल्लेखनामें नाहीं है। जातैं इहां आत्मघातका दोष नाहीं है। इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ— रागादिकनिकी उत्पत्ति न होना, सो अहिंसकपणां सिद्धांतमें कह्या है। वहुरि तिन रागादिकनिकी उत्पत्ति, सो हिंसा है, ऐसैं जिनभगवानने कह्या है ॥

बहुरि विशेष, जो, प्राणीकै मरण अनिष्ट है, तहां जैसैं कोई व्यापारी अनेकप्रकार व्यापारकी वस्तु संचय करी होय घरमें धरी होय ताकै घरका विनाश होना इष्ट नाहीं है, तहां कोई कारण ताके विनाशका कारण आय प्राप्त भया होय ताकूं यथाशक्ति दूरि करै, बहुरि कारण दूरि न होय सकै तौ जैसैं अपनी व्यापारकी वस्तु घरमें धरी थी तिनका विनाश न होय तैसैं यत्न करै; ऐसैंही गृहस्थ श्रावक भी व्रतशीलरूप व्यापारकी वस्तुका संचयविषैं प्रवर्तै है, तिसका आश्रय यह जीवित है ताका नाश तौ न चाहै है, बहुरि तिसके नाशका कारण आय प्राप्त होय तब ता कारणकूं जैसैं अपना गुण विरोध्या न जाय तैसैं दूरि करै, बहुरि जो नाशका कारण दूरि न होय सकै नाइलाज होय तब जैसैं अपना गुणका विनाश न होय तैसैं यत्न करै, यामें कैसैं आत्मघात भया कहिये? तहां पूछै है, कि, सल्लेखना मरणके अंतविषैं कही, सो मरणका ज्ञान कैसैं होय? तथा विना जाणे कैसैं करिये तहां कहीये है, जरा रोग इन्द्रियनिकी हानि दीखै जो अवश्य जाणै अब यह शरीर रहेगा नाहीं, तब प्रासुक आहारपाणीकरि तथा उपवासादि तपकरि अनुक्रमतैं शरीरका बल क्षीण होता जाय तहां मरणपर्यंत द्वादशभावनाका चिंतवनतैं काल गमावै, शास्त्रोक्त विधानकरि समाधि मरण करै ॥

आगैं जो " निःशल्यो व्रती " ऐसा पूर्वैं कह्या था, तहां तीसरा शल्य मिथ्यादर्शन कह्या था, तातैं यह जान्या, जो व्रती होय है सो सम्यग्दृष्टि होय है, मिथ्यादृष्टि व्रतनिकी क्रियारूप प्रवर्तै तौ व्रती नाहीं। तहां पूछै, सो सम्यग्दर्शन अतीचारसहित सापवाद होय है कि अतीचाररहित निरपवाद होय है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं, जो, कदाचित् मोहनीयकर्मका विशेष जो सम्यक्त्वप्रकृति तातैं ए अपवाद कहिये अतीचार होय हैं, याका सूत्र—

॥ शङ्काकाङ्क्षाविचिकित्साऽन्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— शंका कांक्षा विचिकित्सा अन्यदृष्टिप्रशंसा अन्यदृष्टिसंस्तव ए पांच अतीचार सम्यग्दृष्टीके हैं। तहां निःशंकितपणाकूं आदि देकर आठ सम्यक्त्वके अंग पूर्वैं दर्शनविशुद्धिके कथनविषैं कहे थे, तिनके प्रतिपक्षी दोष जानने। इहां पूछै है, प्रशंसा अर संस्तवमें कहा विशेष है? ताका उत्तर, जो, मनकरि मिथ्यादृष्टीके ज्ञानचारित्रगुणका प्रगट करनेका विचार ताकौं भला जानना, सो तौ प्रशंसा है। बहुरि मिथ्यादृष्टीविषैं छते तथा अणछते गुणका प्रगट करनेका वचन कहना सो संस्तव है। इह इनि दोऊनिमें भेद है। बहुरि पूछै है, सम्यग्दर्शनके आठ अंग कहे थे ताके तेतेही प्रतिपक्षी अतीचार चाहिये, पांचही कैसै कहे? तहां कहै हैं, जो, यह दोष नाहीं। आगैं व्रतशीलनिविषैं पांचपांचही संख्याकरि अतीचार कहैंगे, तातैं प्रशंसासंस्तवविषैं अन्य अतीचारनिकूं गर्भितकरि पांचही कहे

हैं। इहां ऐसा भी विशेष जानना, जो, सम्यग्दृष्टि मुनि तथा श्रावक दोऊही होय हैं, सो ए अतीचार दोऊनिकै संभवै हैं ॥

आगें, सम्यग्दृष्टीके अतीचार तौ कहे, बहुरि पूछै है कि ऐसे अतीचार व्रतशीलनिविषैं भी होय हैं कहा? ऐसैं पूछैं आचार्य कहै हैं, हां, होय हैं। ऐसैं कहिकरि तिन अतीचारनिकी संख्या कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ व्रतशीलेषु पंचपंच यथाक्रमम् ॥ २४ ॥

याका अर्थ— पांच व्रत अर सात शील एक सल्लेखना इनविषैं पांच पांच अतीचार अनुक्रमतैं जानने। इहां व्रतशीलका द्वंद्वसमास करना। इहां तर्क कहै हैं, शीलका ग्रहण अनर्थक है। व्रतग्रहणहीतैं शीलका ग्रहण होय है। जातैं शील भी व्रतही है। आचार्य कहैं हैं, अनर्थक नाही है। इहां विशेष जनावनेके अर्थि शीलका ग्रहण है। ए शील हैं ते व्रतनिकी रक्षाके अर्थि हैं ऐसा जान्या जाय है। यातैं दिग्विरत्यादिक इहां शीलके ग्रहणकरि जानने। बहुरि अगारीके अधिकारतैं ऐसा जानना, जो, ए पांच पांच अतीचार कहियेगा ते अगारी गृहस्थ श्रावकके व्रतशीलनिविषैं हैं सोही कहै हैं। तहां प्रथमही आदिका अहिंसा नामा अणुव्रतका सूत्र कहै हैं—

॥ बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— बंध वध छेद अतिभार लादणा अन्नपानका रोकना ए पांच अतीचार अहिंसाअणुव्रतके हैं। तहां प्राणीनिका मनोवांछित गमन करनेकूं रोकना बांधना सो तौ बंध कहिये। बहुरि लाठी चाबुक वेतकरि घात करना चोट देना सो वध कहिये यामें प्राणव्यपरोपण न लेना। जातैं यह पहली हिंसाहीमें कह्या है। बहुरि कान नाक आदिक अंगउपांगका छेदना, सो छेद कहिये। बहुरि न्याय बोझतैं अधिक लादि चलावना, सो अतिभारारोपण कहिये। बहुरि गऊ आदिकूं क्षुधा तृषा आदि बाधारूप क्रियाका करना, खाना पीना न देना, सो अन्नपाननिरोध है। ए पांच अहिंसा अणुव्रतके अतीचार हैं ॥

आगें दूजे अणुव्रतके अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— मिथ्या उपदेश रहोभ्याख्यान कूटलेखक्रिया न्यासापहार साकारमंत्रभेद ए पांच अतीचार सत्यअणुव्रतके हैं। तहां स्वर्गमोक्षके कारण जे क्रियाविशेष, तिनविषैं अन्यप्राणीनिकूं अन्यथा प्रवर्तावना सो मिथ्योपदेश हैं। बहुरि स्त्रीपुरुषनें एकांतविषैं किया जो क्रियाविशेष ताका प्रगट करना, सो रहोभ्याख्यान है। बहुरि अन्यपुरुषनें कह्या नाहीं अर परका प्रयोगके वशतैं परकूं ठगनेके अर्थि झूठा लिखना जो इसनें ऐसा कह्या है तथा ऐसा किया है ऐसैं अपनी इच्छातैं बणावना, सो कूटलेखक्रिया है। बहुरि काऊनें रूपा सोना आदि द्रव्य धरा होय सो ताकी संख्या धरनेवालाकूं यादि न रही विस्मृत होय गया पीछैं मांगी तब अल्प संख्या कहि मांगी तब राखनेवालेनें कही ऐतीही है तुमारी ल्यो ऐसा ताके अल्पसंख्याका वचन कहना जेती पैलैं सोंपी तेती न बतावना, सो न्यासापहार है। बहुरि प्रयोजनकारि प्रकरणकारि अंगकी चेष्टाकारि भवरा भ्रकुटिका विक्षेपकारि इत्यादि चेष्टाकारि परका अभिप्राय जाणिकारि चुगली करनेकूं ईर्षादिकतैं ताका प्रगट करना, सो साकारमंत्रभेद है। ऐसैं ए पांच सत्य अणुव्रतके अतीचार हैं ॥

आगें अचौर्यव्रतके अतीचार कहै हैं—

॥ स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥ २७ ॥

याका अर्थ— स्तेनप्रयोग तदाहृतादान विरुद्धराज्यातिक्रम हीनाधिकमानोन्मान प्रतिरूपकव्यवहार ए पांच अचौर्यअणुव्रतके अतीचार हैं। तहां कोई चोरी करता होय ताकूं आप प्रेरै तथा परकूं कहिकारि प्रेरणा करावै अथवा पैला प्रेरै ताकी सराहना करै ताकूं भला मानै सो स्तेनप्रयोग है। इहां स्तेन नाम चोरका है, ताकूं प्रेरै बहुरि चोरकूं आपु प्रेर्‍या भी नाहीं सऱ्या भी नाहीं परंतु चोरका ल्याया द्रव्यका ग्रहण करै, सो तदाहृतादान है। बहुरि योग्यन्यायकूं उलंघि अन्यप्रकार लेना देना सो तौ अतिक्रम कहिये, सो यऊ राज्यसूं विरुद्ध होय सो विरुद्धराज्यातिक्रम है। तहां बडा मोलकी वस्तु अल्प मोलमें लेणेका यतन विचारवौ करै, सो विरुद्धराज्यातिक्रम जानना। बहुरि पाई माणि इत्यादिक तौ मान कहिये, इनकूं प्रस्थ आदि कहिये। बहुरि ताखडीके तौला आदि उन्मान कहियें। सो इनकारि घटनेकारि तौ परकूं देना अर वधतैंकारि परका लेना इत्यादि कूडा प्रयोग करना, सो हीनाधिकमानोन्मान है। बहुरि खोटे सोना रूपा बणाय ठिगनेके अर्थि व्यवहार करै परकूं खोटी वस्तुकूं क्रियाकारि आच्छी दिखाय दे ऐसैं कूड करै, सो प्रतिरूपकव्यवहार है। ऐसैं

ए पांच अदत्तादानविरति अणुव्रतके अतीचार हैं ॥

आगैं ब्रह्मचर्य अणुव्रतके अतीचार कहै हैं-

॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥ २८ ॥

याका अर्थ— परविवाहकरण परिगृहीतइत्वरिकागमन अपरिगृहीतइत्वरिकागमन अनंगक्रीडा कामतीव्राभिनिवेश ए पांच ब्रह्मचर्य अणुव्रतके अतीचार हैं । तहां कन्याका दना परिणावना सो विवाह है, सो परका विवाह करणा, सो परविवाहकरण कहिये । बहुरि जो परपुरुषनिप्रति गमन करै सो इत्वरी कहिये इस शब्दकै निंदा अर्थविषैं कप्रत्ययतैं इत्वरिका ऐसा नाम भया । सो एकपुरुषही जाका भरतार होय सो परिगृहीता कहिये, तिसप्रति गमन करिये सो परिगृहीत इत्वरिकागमन कहिये । बहुरि जो वेश्यापणाकारि पुंश्चली होय अनेक जाके भरतार होय सो अपरिगृहीता इत्वरिका कहिये, तिसप्रति गमन करै सो अपरिगृहीताइत्वरिकागमन कहिये । बहुरि अंग कहिये प्रजननलिंग तथा योनि इन विना अन्यरीति क्रीडा, सो अनंगक्रीडा कहिये । बहुरि कामका बधता परिणाम सो कामतीव्राभिनिवेश कहिये जामें कामसेवनेका निरंतर अभिप्राय प्रवर्तै ते ए पांच स्वदारसंतोष नामा व्रतके अतीचार कहे हैं ॥

आगैं पांचवा अणुव्रतके अतीचार कहै हैं ॥

॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमाणातिक्रमाः ॥ २९ ॥

याका अर्थ-- क्षेत्र वास्तु, हिरण्य सुवर्ण, धन धान्य, दासी दास, कुप्य इनका प्रमाणतैं उलंघना, सो पंचम अणुव्रतके अतीचार हैं । तहां क्षेत्र तौ नांज उपजनेका आधार ताकूं खेत कहिये, वास्तु अगार घरकूं कहिये, हिरण्य रूपा आदिका व्यवहार, सुवर्ण सोना, धन गऊ आदि, धान्य तण्डुल, दासी दास चाकर स्त्री पुरुष, कुप्य कपास रेसम चंदन आदि । तहां क्षेत्र वास्तु, हिरण्य सुवर्ण, धन धान्य, दासी दास, ऐसैं च्यारि तौ दोयदोयका युगल लेना । बहुरि एक कुप्य ऐसैं ए पांच भये । तिनका परिमाण किया होय जो मेरै एताही परिग्रह है अन्यका त्याग है फेरि तिसकूं अतिलोभके वशतैं उलंघै बधाय ले, सो ए पांच अतीचार परिग्रहपरिमाणव्रतके हैं ॥

ऐसैं पांच अणुव्रतके अतीचार तौ कहे, आगैं शीलनिके अतीचार कहै हैं । तहां प्रथमही दिग्विरति नामा शीलके कहे हैं, ताका सूत्र--

॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ॥ ३० ॥

याका अर्थ— ऊर्ध्व अधः तिर्यक् इन तीनिनिकी मर्यादाका व्यतिक्रम करणा अर क्षेत्रकूं बधाय लेना मर्यादाकरि होय ताकूं भूलि अन्य धारण करणी ए पांच अतीचार दिग्विरतिके हैं । तहां जो दिशाकी मर्याद करी थी तातैं उलंघि जाना सो अतिक्रम कहिये । सो संक्षेपतैं तीनिप्रकार है ऊर्ध्व अतिक्रम अधः अतिक्रम तिर्यक् अतिक्रम ऐसैं । तहां पर्वतादि चढनेमें मर्यादसिवाय चढै सो ऊर्ध्वातिक्रम है । बहुरि कूपआदिविषैं मर्यादसिवाय उतरणा सो अधः अतिक्रम है । बहुरि बिल गुफा आदिका प्रवेशविषैं तिर्यक् अतिक्रम है । बहुरि दिशाकी मर्याद करी थी तामैं लोभका वशतैं अधिकका अभिप्रायकरि बधावना, सो क्षेत्रवृद्धि है । सो यह अतिक्रम प्रमादतैं तथा मोहतैं तथा परिग्रहके निमित्ततैं होय है । बहुरि मर्याद करी होय ताकूं भूलि जाणा यादि न राखणां सो स्मृत्यंतराधान है । ऐसे ए दिग्विरतिके अतीचार पांच हैं ॥

आगैं देशविरति व्रतके अतीचार कहै हैं, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ आनयनप्रेष्यप्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— आनयन प्रेष्यप्रयोग शब्दानुपात रूपानुपात पुद्गलक्षेप ऐसैं ए पांच अतीचार देशविरतके हैं । तहां जिस देशकी मर्यादा करि बैठ्या होय तहांतैं प्रयोजनके वशतैं अन्यकूं कहिकरि कछू वस्तु अन्यक्षेत्रतैं मंगावणा, सो आनयन है । बहुरि अन्यकूं कहना, जो, तुम ऐसैं करौ, सो प्रेष्यप्रयोग है । बहुरि आप मर्यादा करि जिस क्षेत्रविषैं बैठै, तहां बैठाही बाहिरके फिरनेवाले पुरुषनिकूं खासी खंधार आदि शब्दकी समस्याकरि प्रयोजन समझाय देना, सो शब्दानुपात है । बहुरि तैसैंही अपना शरीररूप दिखाय समझाय देना, सो रूपानुपात है । बहुरि तैसैंही कछु कंकर आदि वगाय समझाय देना, सो पुद्गलक्षेप है । ऐसैं ए देशविरमणके अतीचार हैं ॥

आगैं अनर्थदंडविरतिके अतीचार कहै हैं—

॥ कन्दर्पकौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— कंदर्प कौत्कुच्य मौखर्य असमीक्षाधिकरण उपभोगपरिभोगअनर्थक्य ए पांच अतीचार अनर्थदण्ड-

विरतिके हैं । तहां रागके तीव्रउदयतैं जामैं हास्य मिली होय ऐसा नीच हीन मनुष्यके कहनेका गाली आदि भंडवचन पैलेकूं कहना, सो कंदर्प है । बहुरि हास्यके गालीसहित वचन भी कहै अर कायके चेष्टातैं निंदायोग्य क्रिया भी करै जाकूं लौकिकमें खवाखसी आदि कहै हैं, सो कौत्कुच्य है । बहुरि धीठपणा लिये बहुत प्रलापरूप बकवाद करना, सो मौखर्य है । बहुरि विनाविचारे विनाप्रयोजन अधिकी क्रिया करना, फिरना, डोलना, कूदना इत्यादि सो असमीक्ष्याधिकरण है । इहां मन वचन काय तीनीकी क्रिया विनाप्रयोजन न करै सो जाननी । बहुरि खानेपीनेकी सामग्री तथा वस्त्र आभूषण आदि निःप्रयोजन बहुत भेले करने, सो उपभोगपरिभोगानर्थक्य है । ऐसैं ए पांच अतीचार अनर्थदंडविरतिके हैं ॥

आगैं सामायिकके अतीचार कहै हैं —

॥ योगदुष्प्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— योग जे मन वचन कायके कर्म, तिनका बुरा चिंतवन प्रवर्तन करना, तीनि तौ ए अर सामायिकके विषैं अनादर, क्रियापाठ आदिका भूलना ए पांच अतीचार सामायिकके हैं । तहां योगका स्वरूप तौ पहलैं कह्या सोही । ताका दुष्प्रणिधान कहिये खोटी प्रवृत्ति करना, सो ए तीनिप्रकार, वचनका दुष्प्रणिधान कायका दुष्प्रणिधान मनका दुष्प्रणिधान । इहां भावार्थ ऐसा, जो, सामायिक करै तब सामायिकमैं तौ मनवचनकायकी प्रवृत्ति न रहै अर अन्यकार्यमें प्रवृत्ति करै, सो अतिचार है । बहुरि अनादर कहिये सामायिकविषैं उत्साह नाहीं, जैसैंतैसैं काल पूरा करै, सो है । बहुरि स्मृत्यनुपस्थान कहिये पाठक्रिया यादि न रहै भूलि जाय, सो है । ऐसैं सामायिकके अतीचार हैं ॥

आगैं प्रोषधोपवासके अतीचार कहै हैं —

॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३४ ॥

याका अर्थ— अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित कहिये विना नीका देख्या तथा विना नीका झाड्या पृथ्वीपरि क्षेपना उठावना सांथरा करना तीनि तौ ए अरु प्रोषधविषैं उत्साह नाहीं निरादरसूं करना तथा क्रियामें भूली जाणा ए पांच प्रोषधोपवासके अतिचार हैं जहां प्रोषधउपवासकी प्रतिज्ञा लेकरी जहां बैठना तिस भूमिविषैं जीव है कि नाहीं हैं ऐसैं नेत्रनिकरि देखना, सो प्रत्यवेक्षणा कहिये । बहुरि कोमल पीछी आदि उपकरणकरि झाडना सो प्रमार्जन है । तिन दोऊनिका अभावतैं उत्सर्ग कहिये भूमिविषैं मलमूत्र क्षेपणा । आदान कहिये अरहंत आचार्यकी पूजाका उपकरण तथा

गंधमाल धूपादि सामग्री तथा अपने धारणके वस्त्रआदिकका उठावना लेना, सो। संस्तरोपक्रमण कहिये भूमिपरि बिछावणा आदिकरि सांथरा करणा ऐसैं तीनि तौ ए भए। बहुरि क्षुधाकरि पीडित होनेतैं जो उपवासमें आवश्यक आदि क्रिया करनी तिनविषैं उत्साह नाहीं-निरादरतैं कालपूरण करना, सो आनादर है। बहुरि क्रिया यादि न राखणी भूलि जाना, सो स्मृत्यनुपस्थान है। ऐसैं ए पांच अतीचार प्रोषधोपवासके हैं ॥

आगैं उपभोगपरिभोगपरीमाणके अतीचार कहै हैं—

॥ सचित्तसम्बन्धसम्मिश्राभिषवदुष्पक्वाहाराः ॥ ३५ ॥

याका अर्थ— सचित्तवस्तु, सचित्तकरि मिल्या वस्तु, साचित्तके संबंधरूप वस्तु, द्रव्यरूपवस्तु, विना नीका पकी वस्तु इनका आहार करना ए पांच उपभोगपरिभोगपरिमाणके अतीचार हैं। तहां जीवकरि सहित होय सो सचित्त है। तिस सचित्तकरि भिड्या होय सो सचित्त संबंध है। साचित्तसूं मिल्या होय सो सम्मिश्र है। इनविषैं प्रवृत्ति प्रमादतैं तथा अतिभूखतैं तथा तीव्ररागतैं होय। बहुरि द्रव्यरूप रस तथा वृष्य कहिये पुष्टिकरि वस्तु सो अभिषव है। बहुरि भले-प्रकार पक्या नाहीं ऐसी वस्तु। इन पांच वस्तूनिका आहार करना ए पांच अतीचार उपभोगपरिभोगपरिमाणके हैं॥ आगैं अतिथिसंविभागके अतीचार कहै हैं—

॥ सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ॥ ३६ ॥

याका अर्थ— सचित्तविषैं धरणा, सचित्ततैं ढाकना, परका नाम करना, मात्सर्य करना, काल उल्लंघना ए पांच अतीचार अतिथिसंविभागके हैं। तहां सचित्त कहिये जीवसहित कमलका पत्र पातलि आदिक तिनविषैं निक्षेप कहिये मुनिनिकूं देनेका आहारआदिका धरना। बहुरि अपिधान कहिये तिस सचित्तहीतैं ढाकना। बहुरि अन्यदातारका देय कहिये आहार आदि देनेयोग्य वस्तु सो लेकरि अपना नाम करना तथा परकूं आप सोंपि परका नाम करना आप नाम न करना, सो परव्यपदेश है। बहुरि दान देना तामें आदर नाहीं निरादरतैं देना तथा अन्य देनेवाला यथाविधि देय ताकूं गुणकूं सराहना नाहीं अदेखसा भाव करना, सो मात्सर्य है। बहुरि अकालविषैं भोजन दना कालकूं उल्लंघना, सो कालातिक्रम है। ऐसैं ए पांच अतीचार अतिथिसंविभागशीलके हैं। ऐसैं सात शीलके अतीचार कहे ॥

आगैं सल्लेखनाके अतीचार कहै हैं—

जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबंधनिदानानि ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— जीवनेकी वांछा, मरनेकी वांछा, मित्रनतैं अनुराग, सुखका अनुबंध, निदान करना ए पांच अतीचार-सल्लेखनाके हैं । तहां आशंसा नाम वांछाका है, सो जीवना मरणा इनकी वांछा करनी, बहुरि पहले मित्रनिसहित धूली-आदितैं क्रीडा करी थी ताका यादि करना बारबार स्मरण करना, सो मित्रानुराग है । बहुरि पूर्वै सुख भोगे थे तिनसूं प्रीतिविशेषके निमित्ततैं बारबार यादि करना तथा वर्तमानमें सुखही चाहना, सो सुखानुबंध है । बहुरि भोगकी वांछा करि नियम बांधना, जो 'ऐसा भोग मिलै' सो निदान है । ऐसैं ए पांच सल्लेखनाके अतीचार हैं । इहां ऐसा भावार्थ, जो, ए पांच कहे सो कोई जानेगा पांच पांचही हैं, सो ऐसैं न समझना । जहां पांच कहै तहां बहुवचन है । सो इनमें इनके समान अनेक गर्भित हैं । तहां यथासंभव जानने । इनके जाननेकूं तथा व्रतनिकूं श्रीगुरुनिका सरणा निर्दोष करै है । इहां व्रतशीलनिके अतीचार कहनेमें ऐसा भी आशय सूचै है, जो, तीर्थंकरनामकर्मकी प्रकृतिके आश्रवके कारण कहे, तिनमें शीलव्रतेष्वनतीचार ऐसी भावना कही है । तातैं तिनके अतीचार जनाये हैं ॥

आगैं पूछै है, जो, तुमने तीर्थंकरनामप्रकृतीके कारण आश्रवके निर्देशविषैं कह्या जो " शक्तितस्त्यागतपसी " ऐसैं तथा शीलविधानविषैं अतिथिसंविभाग कह्या है, तामैं त्याग दानका लक्षण है, मनमें न जाण्या, सो अब कहौ, ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ॥ ३८ ॥

याका अर्थ— अपना परका उपकारके अर्थि अपना वित्तका त्याग करना सो दान है । तहां अपना परका जो उपकार सो अनुग्रह कहिये । तहां अपना उपकार तौ पुण्यका संचय होना है बहुरि परका उपकार सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी वृद्धि होना है । बहुरि स्व ऐसा धनका नाम है । सो ऐसैं अनुग्रहके अर्थि स्वका अतिसर्ग कहिये त्याग करना, सो दान है ॥

आगैं पूछै है, जो, ए दान है ताका फल एकही अविशिष्ट कहिये विशेपरहित है कि कछू विशेषफलस्वरूप है ? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— विधिका विशेष, द्रव्यका विशेष, दातारका विशेष, पात्रका विशेष इनका विशेषतैं फलका विशेष है। तहां दान देनेकी विधि ताका तौ आदरतैं देना अनादरतैं न देना ऐसा विशेष है। तहां मुनिकूं देनेमें तौ नवप्रकार भक्ति कही है। तहां प्रतिग्रह कहिये पडगावना, ऊंचा आसन देना, पादप्रक्षालन करना, पूजन करना, प्रणाम करना, मन वचन काय शुद्ध करकें, भोजन देनेकी शुद्धता करनी ऐसैं विधिका विशेष है। तपस्वाध्यायकी वृद्धिका करनेवाला आहार देना यह द्रव्यका विशेष है। बहुरि दातारका सात गुण कहे हैं। तहां परका तौ दानका नाम न करना यामें निरादर आवै है, बहुरि क्रोधकरि न देना क्षमातैं देना, बहुरि कपटतैं न देना, बहुरि अन्य देनेवालेतैं ईर्षा करि ताके अवगुण न काढने याकूं अनसूया कहिये, बहुरि देनेका तथा दीयेका पीछैं विषाद पिछताव न करना, बहुरि दीयेका बडा हर्ष मानना, बहुरि दीयेका गर्व न करना ऐसैं दातारके गुणका विशेष है॥ बहुरि मोक्षके कारण जे सम्यग्दर्शनादिक गुण जामें पाईये ऐसा पात्रका विशेष है। ऐसैं विशेषतैं तिस दानके फलविषैं भी विशेष है। जैसैं, जैसी धरती होय तामें जैसा बीज तथा बोवनेवालेकी क्रियाका विशेष होय तैसाही धान्य आदि फल निपजैं, तैसैं जानना॥

इहां ऐसा भी भावार्थ जानना, जो, अन्यमती कोई अपना परका मांसादिक देना भी दान कहै हैं, सो मांस आदि अपना परका उपकारका कारण नाहीं, तथा लेनेवाला योग्य पात्र नाहीं, तातैं ताके देनेका फल खोटाही है। बहुरि पात्र-कुपात्र अपात्रके जघन्य मध्यम उत्कृष्टके भेदतैं तथा तैसैंही विधि द्रव्य दातारके भेदतैं फलका भी अनेकप्रकारपणा है, सो अन्यग्रंथनितैं जानना। सो यह स्याद्वादीनिका मतमें सिद्धी है, सर्वथाएकान्तवादीनिके नित्य निःक्रियादि पक्ष हैं, तथा क्षणिकपक्ष है, तिनकै परिणामपरिणामीके अभावतैं कछु निर्बाधसिद्धि होती नाहीं। बहुरि भावनिकी विशुद्धता संक्लेशता फलमें प्रधान है केवल बाह्यके निमित्तकी प्रधानता नाहीं। जातैं ऐसैं कह्या है, जो, कोई वस्तु तौ विशुद्धतातैं अपात्रनिकूं दीया हुवा भले फलकूं करै है। बहुरि कोई वस्तु पात्रनिकूं भी दीया हुवा संक्लेशपरिणामके वशतैं भला फल नाहीं करै हैं। बहुरि कोई वस्तु पात्र तथा अपात्रनिकूं दीया हुवा भी तथा न दीया हुवा भी विशुद्ध परिणामके योगतैं शुभही फल करै है। ऐसैं स्याद्वादमत बडा गहन है। सो श्रीगुरुही याका निर्वाह करैं हैं। हरेक जनका यामें कहनेका बल नाहीं चले है। जैसैं कूपका मींडक समुद्रका पार न पावै, तैसैं जानना॥

ऐसैं सातवा अध्यायमें आश्रवपदार्थका भेद जो पुण्यका बंध करनेवाली अणुव्रत है, महाव्रत समितिक्रियारूप तथा तिनकी भावना, अतीचार टारना, दानका स्वरूप इत्यादिक कह्या, ताकूं सुनिकरि भव्यजीव मोक्षमार्गका कथंचित् सहकारी जानि सेवौ । तातैं अनुक्रमतैं शुद्धात्मस्वरूपका अनुभव करि मोक्ष पावौ । ऐसा श्रीगुरुनिका उपदेश है ॥

॥ सवैया ॥

आश्रवपदार्थका भेद शुभवृत्तिरूप पंच पापपरिहार समिति सुहावनी ।
शीलके अनेक भेद यती घरवासी वेद अतीचार टारैं विधि धारैं महापावनी ॥
दान देय भाव छानि पात्र मानि दुखी जानि पावैं फल तिस्यौं स्यादवाद यों कहावनी ।
सातमी सुसंधि कथा सुनूं मुनि कही यथा पुण्य लेस होय बंध काटि मोक्ष भावनी ॥ १ ॥

ऐसैं तत्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो यह मोक्षशास्त्र ताविषैं सातवा अध्याय पूर्ण भया ॥

इति श्री परमपूज्य धर्मसाम्राज्यनायक योगींद्रचूडामणि, सिद्धांतपारंगत, चारित्रचक्रवर्ती श्री १०८ आचार्य श्रीशांतिसागरजी महाराजके आदेशसे ज्ञानदानके लिए श्री. प. पू. चा. च. आ. श्री १०८ शांतिसागर दिगंबर जैन जीर्णोद्धारक संस्थाकी ओरसे छपी हुई श्री तत्त्वार्थसूत्रकी श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचित सर्वार्थसिद्धीकी पंडित जयचंदजीकृता टीका-वचनिकाविषैं सातवा अध्याय संपूर्ण भया ॥ ७ ॥

ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण वीर सं. २४८१

***

श्रीवीतरागाय नमः

वीर संवत् २४८१]


॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

[ग्रंथ प्रकाशन समिति, फलटण

अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता

दोहा— आठ करमके बंधकूं । काटि भये निकलंक ॥
नमूं सिद्ध परमातमा । मन वृच काय निशंक ॥ १ ॥

ऐसैं मंगलके अर्थि सिद्धिनिकूं नमस्कार करि आठमां अध्यायकी वचनिका लिखिये है । तहां सर्वार्थसिद्धिटीकाकारके वचन हैं जो आश्रवपदार्थका तौ व्याख्यान किया, ताके अनंतर है नाम जाका ऐसा बंध पदार्थ है, सो अब व्याख्यान करनेयोग्य है, ताकूं व्याख्यान योग्य होतैं पहलै तौ बंधका कारणका स्थापन करिये है । जातैं बंध है सो कारणपूर्वक है, यातैं ताका सूत्र कहै हैं—

॥ मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥ १ ॥

याका अर्थ— मिथ्यादर्शन अविरति प्रमाद कषाय योग ए पांच बंधके कारण हैं । तहां मिथ्यादर्शनादिक तौ पहलें कहे तेही हैं । तत्त्वार्थश्रद्धानका प्रतिपक्षी अतत्वार्थश्रद्धान तथा आश्रवके विधानविषैं मिथ्यादर्शनक्रिया कही, सो तौ मिथ्यादर्शन जानना । बहुरि विरति पहलें कही, तिसके प्रतिपक्षभूत अविरति जाननी । बहुरि आश्रवविधानमें आज्ञा-व्यापादिकी तथा अनाकांक्षा क्रिया कही, तिनविषैं प्रमादका अंतर्भाव जानना । सो प्रमाद कल्याणरूपकार्यविषैं अनादर-

स्वरूप है । बहुरि इन्द्रियकपाय इत्यादि सूत्र आश्रवके कथनविषैं कहा है । तहां अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलन भेदरूप कपाय कहे हैं । बहुरि तिसही आश्रवके कथनविषैं प्रथमही सूत्रमें काय वचन मनके योग कहे हैं, तेही यहां जानने ॥

तहां मिथ्यादर्शन तौ दोयप्रकार है, नैसर्गिक परोपदेशपूर्वक । तहां परोपदेशविना मिथ्यात्वकर्मके उदयके वशतैं तत्त्वार्थश्रद्धानका अभावरूप परिणाम आत्माकै प्रगट होय सो तौ नैसर्गिक है। बहुरि परका उपदेशके निमित्ततैं होय सो च्यारिप्रकार है, क्रियावादी अक्रियावादी आज्ञानिक वैनायिक ऐसैं । अथवा पांचप्रकार है, एकांत विपरीत संशय वैनायिक आज्ञानिक । तहां पदार्थविषैं अनेकधर्म हैं तिनमें ऐसा आभिप्राय करै, जो, वस्तु धर्मीमात्र है, तथा धर्ममात्रही है, तथा कोई एक धर्मकूं ग्रहणकरि कहैं । इस एकधर्ममात्रही है, अस्तित्वमात्रही है, नास्तित्वमात्रही है, एकवस्तुमात्रही है, एक पुरुषमात्रही यह सर्व रचना है, तथा अनेकही है, तथा नित्यही है, तथा अनित्यही है इत्यादिक नयका पक्षपात करै सो तौ एकांत है । बहुरि निर्ग्रंथ मोक्षमार्ग है ताकूं सग्रंथ कहै, केवलीकौं कवलाहार करता बतावैं, स्त्रीकूं मोक्ष बतावैं इत्यादिक विपर्ययरूप विपरीतमिथ्यात्व है । बहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानच्यारित्रात्मक मोक्षमार्ग कह्या है, सो यह है कि नाहीं ऐसा पक्ष करै सो संशयमिथ्यात्व है । बहुरि सर्वदेवनिकूं तथा सर्वशास्त्रनिकूं तथा सर्वमतनिकूं समान मानें, सर्वका विनय करै, मिथ्यात्व सम्यत्वका भेद न जाणैं, सो वैनयिकमिथ्यात्व है । बहुरि हितअहितकी परीक्षातैं रहित अंधेकी ज्यौं परिणाम सो आज्ञानिकमिथ्यात्व है । इहां उक्तंच गाथा है, ताका अर्थ क्रियावादीनिके एकसौ असी भेद हैं, अक्रियावादीनिके चौरासी भेद हैं, अज्ञानवादीनिके सतसठि भेद हैं, वैनयिकवादीनिके बत्तीस भेद हैं । ऐसैं तीनिसै तिरेसठि भेद सर्वथाएकान्तवादीनिके हैं ॥

इहां विशेष ऐसा है, जो, अविरत बारहप्रकार हैं । तहां पांच इंद्रिय अर एक मन इनके विषयनिविषैं रागादिसहित प्रवृत्ति छह तौ ए बहुरि छहकायके जीवनिकी रक्षा न करै छह ए, बहुरि अनंतानुबंधी आदि सोलह कपाय अरु नव नोकपाय ऐसैं पचीस कपाय हैं । नो कहिये ईषत् किंचित् ऐसा नो शब्दका अर्थ लेणा अभाव अर्थ न लेना । बहुरि च्यारि मनोयोग, च्यारि वचनयोग, पांच काययोग ऐसैं तेरह योगके भेद हैं । अर आहारक आहारकमिश्र काययोग ए प्रमत्तसंयमीकै होय हैं तातैं योग पंदरह भी हैं । बहुरि प्रमाद है सो अनेकविध है । तहां भावकायविनय ईर्यापथ भिक्षा प्रतिष्ठापन शयनासन वाक्य ए आठ तौ शुद्धि बहुरि दशलक्षणधर्म इनविषैं उत्साहरहित परिणाम होय तहां प्रमाद कहिये । ऐसैं ए पांच बंधके कारण समस्त कहिये सारे एकठे तथा व्यस्त कहिये ते न्यारे न्यारे होय हैं । सोही कहिये है, मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवालेकै तौ पांचूही कारण बंधके हैं । बहुरि सासादन मिश्र असंयतसम्यग्दृष्टि इन तीनिकैं

अविरत आदि च्यारि बंधके कारण हैं। बहुरि संयतासंयतकै अविरति है सो विरतिकरि मिश्रित है अर प्रमाद कषाय योग ऐसैं च्यारि हैं। बहुरि प्रमत्तसंयमीकै प्रमाद कषाय योग ए तीनि हैं। अप्रमत्त आदि च्यारि गुणस्थानवालेनिकै योग अर कषाय ए दोयही हैं। बहुरि उपशांतकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवली इन तीनिकै एक योगही है। बहुरि अयोगकेवली बंधरहित है ऐसैं जानना ॥

इहां विशेष लिखिये हैं। प्रथम तौ बंधक पहलैं ताके कारण कहे, तामैं तौ यह जनाया है, जो, विनाकारण बंध नाहीं होय है। तथा कूटस्थ सर्वथानित्यकैभी बंध नाहीं होय है। संतानकी अपेक्षा तौ अनादिबंध है। अर पुरातन जड है नवीन बंध है ताकी अपेक्षा आदिसहित बंध है। बहुरि मिथ्यात्व नैसर्गिक परोपदेशपूर्वक दोयप्रकार कह्या, सो तौ नैसर्गिक तौ एकेन्द्रियआदि सर्वही संसारी जीवनिकै अनादितैं प्रवर्तै है, याकूं अगृहीत भी कहिये। अर जो परके उपदेशतैं प्रवर्तै सो परोपदेशपूर्वक है, ताकूं गृहीत भी कहिये। ताके क्रियावादादिक च्यारि भेद तीनिसैं तरेसठि भेद कहे। ते कैसैं हैं सो कहिये है। तहा प्रथमही क्रियावादके एकसौ असी भेद हैं। तहां मूलभेद पांच काल ईश्वर आत्मा नियति स्वभाव ऐसैं। बहुरि आपतैं परतैं नित्यपणाकरि अनित्यपणाकरि ऐसैं च्यारि एक एकपरि लगाय अर जीव अजीव आश्रव संवर निर्जरा बंध मोक्ष पुण्य पाप ऐसैं नवपदार्थ तिनपरि न्यारे न्यारे लगाईये सो ऐसैं इनकूं परस्पर गुणतैं पांचकूं च्यारिकरि गुणै वीस भये, बहुरि नवकरि गुणे एकसौ असी भये, याका उदाहरण जीवपदार्थ आपहीतैं कालकरि अस्तित्व कीजिये है, जीवपदार्थ परहीतैं कालकरि अस्तित्व कीजिये है, जीवपदार्थ कालकरि नित्यत्वकरि अस्तित्व कीजिये है, जीवपदार्थ कालकरि अनित्यत्वकरि अस्तित्व कीजिये। ऐसैंही अजीवादिपदार्थनिपरि लगावना, तब कालकरि नवपदार्थनिपरि छतीस भंग भये। ऐसैंही ईश्वर आत्मा नियति स्वभाव इन च्यारिनिकरि छतीस छतीस होय, तब सारे एकसौ असी भंग क्रियावादके होय हैं ॥

अब इनका आशय लिखिये हैं। कालवादी तौ कहै है, जो, यह काल है सोही सर्वकूं उपजावै है, कालही सर्वका नाश करै है, कालही सर्वकूं सुवाणै है, निद्रा दे है, तथा जगावै है, यह काल काहूकरि जीत्या न जाय, सर्वके ऊपरि खडा है, ऐसैं तौ कालवादी कहै हैं। बहुरि ईश्वरवादी कहै है, जो, यह जीव अज्ञानी है, बहुरि अनीश्वर है, असमर्थ है, याके सुख दुःख स्वर्ग नरकका गमन आदि सर्व कार्य ईश्वर करै है, ऐसा ईश्वरवादीका आशय है ॥ बहुरि आत्मवादी कहै है, जो, पुरुष एकही है, महात्मा है, देव है, सर्वव्यापी है, सर्व अंग जाके गूढ हैं, चेतनासहित है, निर्गुण है, परम उत्कृष्ट है। भावार्थ, यह सर्व सृष्टिकी रचना है, सो पुरुषमयी है, दूसरा कोई नाहीं ऐसा आत्मवादका

अर्थ है ॥ बहुरि नियतवादी कहै है, जो, जिसकाल जाकरि जैसें जाकै नियमकरि होय है, सो तिसकाल तिसकरि तिसप्रकार ताकैही होय है, ऐसा नियम है ऐसा नियतवादका अर्थ है ॥ बहुरि स्वभाववादी कहै है, देखौ, कंटकके तीखापणा कौंन करै है ? अरु पशु पंखी आदि जीवनिकै अनेकप्रकारपणा कौंन करै है ? तातैं जानियै है कि स्वभावही ऐसैं करै है, ऐसैं स्वभाववादका अर्थ है ॥ ऐसैं क्रियावादके भेद कहे ॥

अब अक्रियावादके मूलभेद दोय नास्तिक स्वतः परतः ऐसैं । दोऊकूं पुण्यपापविना सात पदार्थनिपरि लगाईये, तब चौदह भये । बहुरि काल ईश्वर नियति आत्मा स्वभाव इन पांचनिपरि लगाईये तब सत्तरि भंग होय हैं । बहुरि काल अरु नियतिकरि सात पदार्थ फेरि नास्तित्वपरि लगावणा ऐसैं चौदह होय हैं । सब मिली चौरासी अक्रियावादके भंग होय हैं । याका उदाहरण, जीवपदार्थ कालकरि आपहीतैं नास्तिकस्वरूप कीजिये है । जीव नाम पदार्थ कालकरि परतैं नास्तिकस्वरूप कीजिये है । ऐसैंही अजीव आदिपरि लगावणा तब चौदह होय । बहुरि ईश्वरआदि च्यारिपरि लगायें चौदह चौदह होय । सब मिलि सत्तरि हैं । बहुरि ऐसैंही चौदहका उदाहरण काल अरु नियति इन दोयहीपरि नास्तित्वपणा लगाया जो जीवकालतैं नास्तित्व कीजिये है । जीव नियतितैं है नास्तित्व कीजिये है, ऐसैं सातपदार्थके चौदह होय । इहां विशेष यह भया, जो, स्वतः परतः न कह्या नास्तित्वही कह्या । ऐसैं अक्रियावादके चौरासी भंग जानने ॥

अब अज्ञानवादके सतसठि भंग कहे हैं । तहां नवपदार्थनिपरि अस्तिनास्ति आदि वचनके सात भंग हैं ते लगावणे, तब तरेसठि होय । याका उदाहरण, जीवपदार्थ अस्तिस्वरूप है, यह कौन जानें हैं ? कोऊही न जानें । जीव नास्तिस्वरूप है, यह कौंन जाने है ? कोऊही जानें नाहीं । ऐसैं सातौंही भंग नवपदार्थपरि लगाय लेणे । बहुरि नवपदार्थका भेद नाहीं करै, अर एक शुद्धपदार्थ थापि अर अस्ति नास्ति अस्तिनास्ति अवक्तव्य ए च्यारि भंग लगावणे, तब च्यारि होय । यामें ऐसा कहना, जो, पदार्थ है कि नाहीं है, कि दोऊरूप है, कि अवक्तव्य है । ऐसैं कोन जानें है ? कोऊही जानें नाहीं । इहां भावार्थ ऐसा, जो, सर्वज्ञ कोऊ नाही सर्वज्ञविना कोन जाने ? ऐसैं अज्ञानकी पक्ष भई, तातैं सब मिलि अज्ञानवादके सतसठि भंग भये ॥

अब वैनयिक वादके बत्तीस भंग कहै हैं । विनय मन वचन काय ज्ञान इन च्यारिनिकरि होय है, सो देव राजा ज्ञाति यति वृद्ध बाल माता पिता इन आठनिका होय । तब एकएकप्रति च्यारि दिये तब बत्तीस भंग भये । इनका अर्थ देवमात्रका विनय किये सर्वसिद्धि है इत्यादि सुगम है, सो जानना । ऐसैं ए तीनिसै तरेसठि वाद स्वच्छंद प्रवर्तनेवाले निकले हैं । पाखंडी मिथ्यादृष्टीनिके व्याकुल करनहारे हैं । अज्ञानी लोकनिके चित्तकूं हरै हैं, रंजायमान करै हैं । ज्ञानी

यथार्थ जाने है, ऐसैं अन्य भी वाद हैं। तहां पौरुषवादी कहै है, जो, आलस्यवान् उत्साहरहित होय सो किछु भी फल न पावै। जैसैं बालक मातास्तनकूं खैंचिकरि दूध पीवै तौ मिलै नातर न मिलै, तातैं पौरुषहीतैं कार्यसिद्धि है, विना– पौरुष किछु भी नाहीं। बहुरि दैववादी कहै हैं, हम तौ केवल दैवकूंही उत्तम माने हैं, पौरुष अनर्थक है, ताकूं धिक्कार है। प्रत्यक्ष देखो, कर्णराजा एता वडा पुरुष था, सो भी युद्धमें हण्या गया, ऐसैं दैववाद है ॥

बहुरि संयोगवादी कहै है, जो, वस्तुनिका संयोग मिलेही कार्यसिद्धि है। देखौ, एक पह्यासूं रथ चलता नाहीं, तहां अंधा पंगुला जुदेजुदे तौ वनमें भटकै अर दोऊका संयोग भया तब नगरमें आय गये, ऐसैं संयोगवाद है। बहुरि लोकरूढिवादी कहै हैं, जो, लोकविषैं रूढिही एकवार चलि गई पीछैं ताकूं देव भी मिलिकरि निवारण कीया चाहैं तौ निवारी न जाय। देखो, द्रौपदीनैं अर्जुनके गलेमें वरमाला डारी थी, तब लोक परस्पर कहने लगे, जो, माला पांडवनिके गलेमें डारी, सो कहनावति अबताईं चली जाय है। कोऊ मैंरि सकै नाहीं। ऐसैं सर्वथाएकांतपक्षके संक्षेप कहे। बहुत कहाताईं कहिये? जेते वचनके मार्ग हैं तेतेही नयनिके वाद हैं बहुरि जेते नयनिके वाद हैं, तेते अन्यमत हैं, ते सर्व मिथ्या हैं। जातैं सर्वथाएकान्तपक्षकरि कहे हुए हैं, तातैं सर्व परमत हैं। बहुरि तेही नयके वचन सर्वही सम्यक् हैं, सत्य हैं, जैनमतके हैं, जातैं कथंचित्प्रकारकरि कहे हुए होय है ॥

बहुरि स्वामिसमंतभद्राचार्य आप्तकी परीक्षाके अर्थि देवागमस्तोत्र रच्या है, तामैं सत्यार्थ आप्तका तौ स्थापन असत्यार्थका निराकरणके निमित्त दस पक्ष स्थापी हैं। तहां १ अस्ति नास्ति, २ एक अनेक, ३ नित्य अनित्य, ४ भेद अभेद, ५ अपेक्ष अनपेक्ष, ६ दैव पौरुष, ७ अंतरंग बहिरंग, ८ हेतु अहेतु, ९ अज्ञानतैं बंध स्तोकज्ञानतैं मोक्ष, १० परके दुःख करै अर आपकैं सुख करै तौ पाप अर परकैं सुख करै आपकैं दुःख करै पुण्य। ऐसैं दस पक्षविषैं सप्तभंग लगाये सत्तरि भंग भये। तिनका सर्वथाएकांतविषैं दूषण दिखाये हैं। जाने ए कहे सो तौ आप्ताभास है अर अनेकांत साधै हैं ते दूषणरहित हैं, ते सर्वज्ञवीतरागके भाषे हैं। तातैं अनेकान्तका कहनेवाला सत्यार्थ आप्त है, ऐसैं सम्यक् अर मिथ्याका निर्णय किया है। सो देवागमस्तोत्रकी टीका अष्टसहस्रीतैं जानना ॥

बहुरि तीनिसै तरेसठि कुवादके आचार्य इस कालमें भये हैं, तिनके केतेकनिके नाम राजवार्तिक तथा गोमटसारतैं जानने। तिनमें केई अज्ञानवादी चरचा करै हैं, जो, वेदमें क्रिया आचरण यज्ञादि कह्या है, तिस विधानसूं क्रिया करने– वाले अज्ञानी कैसैं? ताकूं कहिये जो, प्राणीनिके वध करनेमें धर्मसाधनका तिनका अभिप्राय है, तातैं ते अज्ञानी हैं। इहां वह कहै, जो, अपौरुषेय वेद है तामें कर्ताका दोष नाहीं आवै, तातैं प्रमाण है, तातैं तिस आगमप्रमाणतैं प्राणीनिका वध करना धर्म है। ताकूं कहिये, जो, जामें प्राणीनिका वध करना धर्म कह्या, सो आगमही नाहीं, सर्वप्राणीनिका

हित कहै सो आगम है। वेदमें कहूं तौ हिंसाका निषेध किया है, कहूं हिंसा करना धर्म कह्या है, तातैं विरुद्धवचन प्रमाणभूत नाहीं। बहुरि अरहंतभाषित आगममें हिंसाका निषेधही है, तातैं प्राणीनिका वध धर्मका कारण नाहीं। फेरि वह कहै, जो, अरहंतका आगम कैसैं प्रमाण करौ हौ? ताकूं कहिये, जो, अरहंत सर्वज्ञ वीतराग है, ताके वचन सत्यार्थ हैं, अतिशयरूप ज्ञानकी खानि है, यामें अनेक चमत्काररूप स्वरूप लिखे हैं, तातैं प्रमाण हैं ॥

फेरि कहै हैं, जो, अन्यके आगममें भी चमत्काररूप है लिखे हैं। ताकूं कहिये, जो, चमत्कारस्वरूप लिख्या होगा, सो अरहंतके आगममेंसूंही लेकरि लिख्या होगा। फेरि कहैं, जो यह तौ तुमारी श्रद्धामात्रतैं कहौ हौ। ताकूं कहिये, जो, यह न्याय है, जहां बहुतवस्तुनिका बहुतप्रकारकरि वर्णन होय ऐसा पूर्ण वर्णन अन्य जायगा नाहीं होय तब जाणिये, जो, जहां पूर्णरूप लिख्या होय सो तौ आदि है मूल है अर जहां थोरा लिख्या होय तहां जानिये पूर्णमेसूं लेकरि अपना नाम चलाया है। फेरि कहै, जो, अन्यके आगममें अरहंतके आगमतैं लेकरि लिखी है तौ ते भी प्रमाणभूत क्यों न मानिये? ताकूं कहिये, जो, लिखे हैं ते साररहित हैं। जातैं आगममें सर्वही वस्तुनिका स्वरूप लिख्या था तिनमेंसूं पांच वस्तु साररहित लेकरि लिख्या तो ते निरर्थक हैं ॥

बहुरि प्राणिवधकूं धर्म लिख्या ताकूं धर्म मानिये तौ जे जीवहिंसक हैं तिनकै सर्वकै धर्मसाधन ठहरै है। फेरि कहै, जो, यज्ञसिवाय अन्य जायगा प्राणिवध करै तौ आपहीके अर्थि है। ताकूं कहिये, प्राणिनिका वध तौ दोयजायगा बरोबरि है, दोऊही जायगा प्राणिनिकूं दुःख होय है, यामें विशेष कहा? फेरि कहै, मंत्रविधानतैं पशुहोम कीये पाप नाहीं होय है। ताकूं कहिये, जो, मंत्रकी सामर्थ्य तौ तब जानिये जो केवल मंत्रहीतैं पशूकूं बुलायकरि होमें। होममें तौ जेवडा बांधिकरि पटकिये है ऐसें मारणेमें मंत्रकी सामर्थ्य कहा रही? तातैं यह तौ प्रत्यक्षतैं विरुद्ध है, जो, मंत्रसामर्थ्यतैं होमें पाप न होय। बहुरि जैसैं शस्त्रादिकरि पशूनिकूं मारै पाप होय है, तैसैं मंत्रतैं भी मारै पापही होयगा हिंसाका दोष तौ न मिटैगा। जातैं पशुकूं बांधि होममें पटकतैं अशुभपरिणामही होय है। अशुभपरिणामहीतैं पाप है ॥

बहुरि वाकूं पूछिये, जो, मंत्रपूर्वक होम करै है, सो इस क्रियाका करनेवाला कर्ता कौन है? जो, पुरुषकौं बतावै तौ पुरुष नित्य कहेगा तौ ताके करनेके परिणाम काहेतैं होते? परिणाम तौ अनित्यकै होय हैं। बहुरि अनित्य कहेगा तौ स्मरणआदिका अभावतैं क्रिया तथा क्रियाका करनेवाला फल लेनेवाला न ठहरेगा। बहुरि पुरुषकूं एकही मानेंगा तौ कर्ता कर्म आदिका भेद किछु भी न संभवैगा। प्रत्यक्ष विरोध आवैगा। इत्यादि विचार कीये जिननें हिंसाकरिधर्म ठहराया है तिनके वचनसौं रागी द्वेषी विषयी प्राणिनिके कहे भासै हैं, तातैं प्रमाणभूत नाहीं। ऐसैं मिथ्यादर्शनके अनेक भेद हैं। तिनकूं

नीकै समाधि मिथ्यात्वकी निवृत्ति होय ऐसा उपाय करना। यथार्थ जिनागमकूं जानि अन्यमतका प्रसंग छोडना अर अनादितैं पर्यायबुद्धि जो नैसर्गिकमिथ्यात्व ताकूं छोडि अपना स्वरूपकूं यथार्थ जानि बंधसूं निवृत्ति होना, तिसहीका अभ्यास जैसैं बणै तैसैं करणा यह श्रीगुरुनिका प्रधान उपदेश है॥

आगैं, बंधके कारण तौ कहे अब बंध कहनेयोग्य है सो कहै हैं—

॥ सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥ २ ॥

याका अर्थ— यह जीव है सो कषायसहितपणातैं कर्मके योग्य जे पुद्गल तिनकूं ग्रहण करै है, सो बंध है। तहां कषायकरि सहित वर्तै ताकूं सकषाय कहिये, ताका भाव सो सकषायत्व कहिये। ऐसा कषायपणाकूं पंचमीविभक्तिकरि हेतुकारण कह्या सो यह हेतु कहनेका कहा प्रयोजन सो कहै है। जैसैं उदरविषै अग्निका आशय है ताके अनुसार आहारकूं ग्रहण करै है, तैसैं तीव्र मंद मध्यम जैसा कषायका आशय होय ताके अनुसार स्थिति अनुभागरूप होय कर्म ग्रहण होय बंधै है ऐसैं जणावनेकूं कह्या है। इहां प्रश्न, जो, आत्मा तौ अमूर्तिक है, याकै हस्त नाहीं, सो कर्मका ग्रहण कैसैं करै है? ऐसैं पूछै सूत्रमें जीव ऐसा शब्द कह्या है, जो प्राणनिकै धारणतैं जीवै, सो जीव कहिये। सो आयु नाम प्राणका संबंध है तैतैं जीव है। जो आयुकर्मका संबंध न होय तौ जीवै नाहीं, ऐसा इस जीवनकूंही हस्तसहितकी उपमा है। ऐसा जीव कर्मकूं ग्रहण करै है। बहुरि कर्मयोग्यान् ऐसा कहनेमें लघुनिर्देश होता अक्षर घाटि आवता, सो यहां कर्मणो योग्यान् ऐसा क्यों कह्या? ताका प्रयोजन कहै है, जो, इहां न्यारा विभक्तिका उच्चार कीया है, सो अन्य-वाक्य जनावनेके अर्थि है। सो न्यारा वाक्य कहा? सो कहै है, कर्मतैं जीव कषायसहित होय है, ऐसैं एक वाक्य तौ यह भया। इहां कर्मशब्दकै पंचमीविभक्तिकरि हेतुअर्थ कीया, जातैं कर्मरहित जीवकै कषायका लेश भी नाहीं है। ऐसा कहनेतैं यह प्रयोजन आया, जो, जीवकर्मका अनादिसंबंध है। तिसकरि ऐसा तर्कका निराकरण भया, जो, अमूर्तिक जीव मूर्तिक कर्मतैं कैसैं बंधै? जो ऐसैं न होय बंध नवीनही मानिये, तौ पहलै जीव सर्वथा शुद्ध ठहरै तौ सिद्धनिकीज्यों बंधका अभाव ठहरै है॥

बहुरि दूसरा वाक्य ऐसा, जो, जीव कर्मके योग्य पुद्गलनिकूं ग्रहण करै है। तहां अर्थके वशतैं विभक्ति पलटि लीजिये, इस न्यायतैं कर्मशब्दकै पष्ठीविभक्तिकरि संबंधका अर्थ कीया है। बहुरि पुद्गल कहनेतैं यह जानिये, जो, कर्म है सो पुद्गलपरमाणुका स्कंध है। सो पुद्गलस्वरूपही है। यामैं पुद्गलकै अर कर्मकै तादात्म्य जनाया है। जातैं केई वैशे-

पिकमती आदि कहे हैं, जो, कर्म आत्माहीका अदृष्ट नामा एक गुण है, ताका निराकरण भया। जातैं जो केवल आत्माहीका गुण होय तौ संसारका कारण होय नाहीं। वहुरि आदितैं ऐसी क्रिया कही सो हेतुकैं अर हेतुमानके भावके प्रगट करनेकूं कही है। हेतु तौ मिथ्यादर्शन आदि पहलैं कहे ते अर हेतुमान् पुद्गलकर्मका वंध है। ताका कर्त्ता जीव है। यातैं ऐसा अर्थ सिद्ध होय है, जो, मिथ्यादर्शन आदिका आवेशतैं आला सचिक्कण भया जो आत्मा ताकै सर्वतर-फकारि योगनिके विशेपतैं सूक्ष्म अर एकक्षेत्र अवगाहकारि तिष्ठते जे अनंतानंत पुद्गलके परमाणु तिनका विभागरहित मिलि जाना सो वंध है, ऐसा कहिये है॥

जैसैं भाजनके विशेप जे हांडी आदिक तिनविषैं क्षेपे जे अनेक रस बीज फूल फल तिनका मदिरारूप परिणाम होय है, तैसैं आत्माविषैं सामिल तिष्ठते जे पुद्गल ते योगनिकारि खैंचि हूये योग कषायके वशतैं कर्मभावरूप परिणामकूं प्राप्त होय हैं, ऐसा जानना। वहुरि सूत्रमें स ऐसा वचन अन्यकी निवृत्तिके अर्थि है, यहही एक बंध है, अन्य नाहीं है। ऐसैं कहनेकारि गुणकै अरु गुणीकैं भी बंध है सो बंध इहां न जानना। बहुरि बंधशब्द है सो कर्मसाधन है, तथा करणसाधन कर्तृसाधन भावसाधन भी जानना। तहां पहले बंधकी अपेक्षातैं आत्मा बंधकारि नवा बंध करै है। तातैं वंधकूं कारण भी कहिये, वहुरि जो आत्मा बांध्या सो बंध ऐसा कर्म भी कहिये, बहुरि आत्मा बंधरूप आपही परिणमें है तातैं कर्ता भी वंधकूं कहिये, वहुरि बंधनरूप क्रिया सोही भाव ऐसैं क्रियारूप भी बंधकूं कहिये। ऐसैं प्रत्ययका अर्थविवक्षातैं सिद्धि होय है। वहुरि ऐसा जानना, जो, आत्माकै कार्मणशरीररूप कोठा है। तामें कर्मरूप नाज भऱ्या रहै है। सो पुराना तौ भोगमें आता जाय है अर नवा धरता जाय है। याका संतान टूटै, तव मोक्ष होय है॥

आगें पूछै है, जो, यह बंध कहा एकरूपही है कि याकैं कोई प्रकार है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३ ॥

याका अर्थ— प्रकृति स्थिति अनुभव प्रदेश ए च्यारि तिस बंधकी विधि है। तहां प्रकृति तौ स्वभावकूं कहिये। जैसैं नीमवृक्षकी प्रकृति कडुपणा है, गुडकी प्रकृति मीठापणा हैं, तैसैं ज्ञानावरणकर्मकी प्रकृति पदार्थकूं न जानना है। दर्शनावरणकी प्रकृति पदार्थका न देखना है। वेदनीयकी प्रकृति सुखदुःखका संवेदन है। दर्शनमोहकी प्रकृति तत्वार्थका अश्रद्धान है। चारित्रमोहकी प्रकृति असंयमभाव है। आयुकी प्रकृति भवका धारणा है। नामकी प्रकृति नारकआदि नामका कारण है। गोत्रकी प्रकृति ऊंचा नीचा स्थानका नाम पावना है। अंतरायकी प्रकृति दान आदिका विघ्न

करणा है। सो ऐसा है लक्षण जाका ऐसा कार्यकूं प्रकर्षकारि करै। जातैं ऐसा कार्य प्रगट होय सो प्रकृति है ॥

बहुरि तिस प्रकृतिस्वभावतैं छूटे नाहीं तेतैं स्थिति कहिये। जैसैं छेली गऊ भैंसि आदिके दूधका मीठापणा स्वभावतैं जेते न छूटना सो स्थिति है। तैसैंही ज्ञानावरण आदिका जो अर्थका न जानना आदि स्वभावतैं न छूटना सो स्थिति है। बहुरि तिन कर्मनिका रसका तीव्र मंद विशेष सो अनुभव है। जैसैं छेली गऊ भैंसि आदिका दूधका तीव्र मंद आदि भावकरि रसस्वादका विशेष है तैसैंही कर्मपुद्गलनिका अपनेविषैं प्राप्त भया जो सामर्थ्यका विशेष, सो अनुभव है ॥

बहुरि परमाणुनिका गणतिरूप अवधारणा जो एते है सो प्रदेश है, जो पुद्गलपरमाणुके स्कंध कर्मभावकूं परिणये तिनका गणनारूप परिमाण यामें करिये है। बहुरि विधिशब्द है सो प्रकारवाची है। ते ए प्रकृति आदि तिस बंधके प्रकार हैं। तहां यौगतैं तौ प्रकृति प्रदेश बंध होय हैं। कषायनिमित्ततैं स्थिति अनुभव बंध होय हैं। तिन योगकषायनिके हीनाधिक होनेतैं तिस बंधका भी विचित्रपणा होय है। इहां उक्तंच गाथा है, ताका अर्थ— आत्मा जोगतैं प्रकृति प्रदेश बंध करै है, अरु स्थिति अनुभाग कषायतैं करै है। बहुरि योग कषायरूप न परिणमे तथा तेऊ छिन्न होय जाय नष्ट होय जाय तब बंध स्थितिके कारण आत्माके नाहीं हैं ॥

आगें आदिका जो प्रकृतिबंध ताका भेद दिखावनेके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय मोहनीय आयु नाम गोत्र अंतराय ए आठ कर्मकी मूलप्रकृति हैं। तहां आद्य कहिये प्रकृतिबंध सो ज्ञानावरण आदि आठ भेदरूप जानना। तहां जो आवरण करै तथा जाकरि आवरण होय सो आवरण कहिये। सो न्यारान्यारा जोडिये ज्ञानावरण दर्शनावरण ऐसैं। बहुरि जो वेदना करावै अथवा जाकरि वेदना होय, सो वेदनीय है। बहुरि जो मूढ करै भुलावै अथवा जाकरि मूढ हूजे भूलिजे सो मोहनीय है। बहुरि जाकरि नारकआदि भव प्राप्त करिये अथवा जो भवनैं प्राप्त करै, सो आयु है। बहुरि जो आत्माका नाम करै तथा जाकरि नाम कीजिये, सो नाम है। बहुरि जाकरि ऊंचा नीचा कहिये, सो गोत्र है। बहुरि दातार तथा देनेयोग्य वस्तु आदिकके मध्य अंतर करै, सो अंतराय है। एकही आत्माका परिणामकरि ग्रहण भये जो पुद्गल ते ज्ञानावरण आदि अनेक भेदकूं प्राप्त होय हैं। जैसैं एकवार खाया जो अन्न ताका रस रुधिर आदि अनेक परिणामरूप

होय तैसैं जानना ॥

तहां कोई कहै, ज्ञानावरण है सोही मोह है। जातैं हिताहितकी परीक्षा न होय सो ज्ञानावरण, सोही मोह, यामें भेद कहा? ताका समाधान, जो, अर्थकूं यथार्थ न जानैं सो तौ ज्ञानावरण है। बहुरि यथार्थ जानिकरि भी यऊ ऐसैंही है ऐसी रुचिरूप सत्यार्थविषैं श्रद्धानका अभाव सो मोह है ऐसा भेद जाका जानना। अथवा कार्यके भेदतैं भी कारणका भेद जानिये। अज्ञान अदर्शन तौ ज्ञानावरण दर्शनावरणके कार्य हैं। अर अतत्वश्रद्धान रागद्वेषरूप इष्ट अनिष्ट बुद्धि मोहका कार्य है। ऐसैंही कार्यके भेदतैं कारणका भेद मूल उत्तर प्रकृतिनिविषैं सर्वत्र जानना। बहुरि कर्मके भेद हैं, ते शब्दकी अपेक्षा तौ एकतैं ले संख्यात भेद जानने। तहां सामान्यकरि तौ बंधरूप कर्म एक है। सोही पुण्यपापके भेदतैं दोय प्रकार है बहुरि सोही अनादि सांत, अनादिअनंत, सादिसांत, ऐसैं तीनिप्रकार है। तथा भुजाकार अल्पतर अवस्थित भेदतैं भी तीनिप्रकार कहिये। बहुरि प्रकृति स्थिति अनुभव प्रदेशभेदतैं च्यारि प्रकार है। बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव इनके निमित्तके भेदतैं पांचप्रकार है। बहुरि छै जीवनिकायके भेदतैं छहप्रकार हैं। बहुरि राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ ए सात कारण हैं। तिनिकी अपेक्षा तौ सात प्रकार हैं। बहुरि ज्ञानावरणादिके भेदतैं अष्टप्रकार हैं। ऐसैं शब्द तौ संख्यातभेद हैं। बहुरि अध्यवसायस्थानके भेदतैं असंख्यातभेद हैं। बहुरि पुद्गलपरिणामरूप स्कंधभेदतैं अनंतभेद हैं। अथवा ज्ञानावरण आदिके अनुभवके अविभागपरिच्छेदनिकी अपेक्षा अनंतभेद हैं। बहुरि इनका अनुक्रम कहनेका प्रयोजन कहै हैं। तहां ज्ञान है सो आत्माके अधिगमकूं निमित्त है, तातैं प्रधान है, तातैं आदिमें ज्ञानावरण कह्या ताके पीछैं दर्शनावरण कह्या। सो दर्शनहू अनाकार उपयोगस्वरूप है, तातैं युक्त है। बहुरि ताके पीछै वेदनीय कह्या, सो ज्ञान दर्शन सुख दुःख जाननेका विरोधी है। जातैं मोही होयकरि सुख दुःख हिताहितका विचार नाहीं करै है, बहुरि याके पीछैं आयु कह्या सो सुख दुःख आदि भवकें आश्रय है भवकूं आयु निमित्त है। तातैं युक्त है। बहुरि ताके पीछैं नाम कह्या। जातैं आयुके उदयके आश्रय नाम है। गति आदिका उदय कार्यकारी होय है। ताके पीछैं भी अंतराय कह्या। सो प्रयोजन कहे पीछैं अवशेष रहै सो अंतमेंही आवै। ऐसैं क्रमप्रयोजन जानना ॥ आगें पूछै है, कि, कर्मबंध प्रकृतिका भेद तो अष्टप्रकार कह्या, अब उत्तरप्रकृतिबंध कहना। ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ पञ्चनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपञ्चभेदा यथाक्रमम् ॥ ५ ॥

याका अर्थ— मूलप्रकृति आठ कहीं, तिनके भेद पांच नव दोय अठाईस च्यारि बयालीस दोय पांच ए यथाक्रमतैं जानने । इहां तर्क, जो, सूत्रमें द्वितीयका ग्रहण करना था, जातैं उत्तर प्रकृतिबंध दूसरा है । आचार्य कहै हैं जो, पारिशेष्यन्यायतैं दूसराका ग्रहण सिद्ध होय है । दोयभेदमें एकका नाम कहै, तब दूसरा विना नाम कहेही जानिये ऐसैं तातैं सूत्रमें द्वितीयका ग्रहण न करना । आदिका मूलप्रकृतिबंध आठभेदरूप कह्या, तातैं अवशेष बाकी उत्तरप्रकृतिबंधकीही विधि है ऐसैं जानि लेना । बहुरि सूत्रमें भेदशब्द है सो पांच आदिकी संख्यातैं जोडना । तहां पांच भेद ज्ञानावरणके नवभेद दर्शनावरणके, दोय भेद वेदनीयके अठाईस भेद मोहनीयके, च्यारि भेद आयुके बयालीस भेद नामके, दोय भेद गोत्रके, पांच भेद अंतरायके ऐसैं जानना ॥

आगें पूछै है, जो, ज्ञानावरणके पाच भेद कहे, ते कौंन हैं सो कहो, ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानाम् ॥ ६ ॥

याका अर्थ— मति श्रुति अवधि मनःपर्यय केवल ए पांच ज्ञान हैं, तिनका आवरण करै सो पांच भेद ज्ञानावरणके हैं । तहां मत्यादिज्ञान तौ पूर्वैं कहे ते लेणे, तिनका आवरणतैं आवरणका भेद होय है, ऐसैं ज्ञानावरणकर्मका पाच उत्तरप्रकृति जाननी । इहां तर्क करै हैं, जो, अभव्यजीवकै मनःपर्ययज्ञान केवलज्ञानकी शक्ति है कि नाहीं है? जो शक्ति है तौ ताकै अभव्यपणाका अभाव है । बहुरि जो शक्ति नाहीं है तौ तिसकै दोऊ ज्ञानका आवरणरूप प्रकृति कहना व्यर्थ है । ताका समाधान, जो, इहां आदेशके वचन कहनेतैं यह दोष नाहीं है । तहां द्रव्यार्थिकनयके आदेशतैं तौ अभव्यकै मनःपर्यय केवलज्ञानकी शक्तिका संभव है । बहुरि पर्यायार्थिकनयके आदेशकरि तिस शक्तिका अभाव कहिये । बहुरि पूछै है, जो ऐसैं कहे तौ भव्यका अभव्यका भेद कहना न बणैगा जातैं दोऊकै तिनकी शक्तिका सद्भाव कह्या । तहां कहिये, जो शक्तिके सद्भावकी अपेक्षा तौ भव्य अभव्यका भेद नाहीं है व्यक्ति होनेके सद्भाव असद्भावकी अपेक्षा भेद है । जाकै सम्यग्दर्शन आदिकी व्यक्ति होयगी सो भव्य कहिये अर जाकै तिनकी व्यक्ति न होयगी सो अभव्य कहिये । जैसैं सुवर्णपाषाणमें अंधपाषाण कहिये है, जामैं सुवर्ण नीसरैगा सो तौ बुरी सुवर्णपाषाण कहिये । जामें नाही नसिरैगा सो अंधपाषाण कहिये ऐसैं जानना ॥

इहां कोई कहै है, जो, मत्यादिज्ञानकै आवरण कह्या सो ए ज्ञान सद्रूप है कि असद्रूप है? जो सद्रूप है तौ जो विद्यमान है ताकै आवरण काहेका? अर जो असद्रूप है तौ विद्यमानही नाहीं, ताकै आवरण कौनके कहिये? ऐसें दोऊही पक्षमें आवरण बनैं नाहीं। ताका समाधान, जो, इहां भी आदेशवचन जानना। द्रव्यार्थिकनयके आदेशतैं तौ सत्‌कै आवरण कहिये। जैसें सद्रूप आकाशकै मेघपटलका आवरण देखिये है, तैसें जानना। बहुरि पर्यायार्थिकनयके आदेशकरि असत्‌कै आवरण कहिये। जातैं उत्पत्तिका रोकनेवाला होय ताकूं भी आवरणशब्दकरि कहिये है। जो एकान्तकरि सत्‌कै तथा असत्‌कै आवरण कहिये तौ ज्ञानकै क्षायोपशमिकपणां बणै नाहीं। बहुरि ज्ञान कछु न्यारे पदार्थ है नाहीं। आत्माके गुणपर्यायस्वरूप है। सो जब आवरण होय तब तिस पर्यायकी व्यक्ति न होय सकै है। बहुरि जब आवरणका अभाव होय तब ज्ञानकी व्यक्ति प्रगट होय है। जैसें प्रत्याख्यानसंयमभाव न्यारा पदार्थ नाहीं आत्माविषैंही शक्तिरूप है। जेतैं प्रत्याख्यानावरणकर्मका सद्भाव होय तेतैं तौ प्रत्याख्यान प्रगट न होय अर जब याका आवरणका अभाव होय तब आत्माकैं प्रत्याख्यानपर्यायकी व्यक्ति होय है; तैसें इहां भी जानना। ऐसें यह ज्ञानावरणकर्म है। याके उदयतैं आत्माकै जाननेकी सामर्थ्य हीन होय तब स्मरण नाहीं होय, धर्मश्रवण नाहीं होय, अज्ञानके वशतैं अनेक दुःखनिकूं भोगवै है॥

आगें पूछैं है कि, ज्ञानावरणकी उत्तरप्रकृतिका भेद तौ कह्या, अब दर्शनावरण कर्मकी प्रकृतिका उत्तरभेद कहनेयोग्य है ऐसें पूछैं सूत्र कहैं हैं--

चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचालास्त्यानगृद्धयश्च ॥ ७ ॥

याका अर्थ— चक्षु, अचक्षु, अवधि केवल ए च्यारि तौ दर्शन, तिनका आवरणरूप च्यारि, प्रकृति बहुरि निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि ए पांच निद्रा ऐसें दर्शनावरणकर्मकी नव उत्तरप्रकृति हैं। तहां चक्षु अचक्षु अवधि केवल इनका आवरणकी अपेक्षाकरि भेद कहना, चक्षुर्दर्शनावरण अचक्षुर्दर्शनावरण अवधिदर्शनावरण केवलदर्शनावरण ऐसें बहुरि मद खेद ग्लानि इनके दूरि करनेकै अर्थि सोवना निद्रा है। बहुरि तिस निद्राका उपरि उपरि फेरिफेरि आवना सो निद्रानिद्रा है। बहुरि जो आत्माकूं सूतैंही क्रियारूप चलायमान करै शोक खेद आदिकरि उपजै बैठेकैं भी नेत्र शरीर विक्रिया होय, सो प्रचला है। बहुरि सोही फेरिफेरि प्रवर्तैं सो प्रचलाप्रचला है। बहुरि जाकरि सोवतैं भी पराक्रम सामर्थ्य बहुत प्रगट होय सूताही उठि कछू कार्य करै फेरि सोवै यह न जानैं 'मैं कछु किया था' सो

स्त्यानगृद्धि है । इहां स्त्यायति धातुका अनेक अर्थ हैं, तिनमैंसूं सोवनेका अर्थ ग्रहण किया है । बहुरि गृद्धिधातुका भी दीप्ति अर्थ ग्रहण है, तातैं सोवते भी जो आत्मा पराक्रमरूप दिपै ऐसा अर्थ भया । जाके उदयतैं आत्मा बहुत रौद्रकर्म करै सो स्त्यानगृद्धि है । इन निद्रादिकरि दर्शनावरणकर्म समानाधिकरणकरि संबंध करना, इनका आधार दर्शनावरणही है । तातैं निद्रादर्शनावरण, निद्रानिद्रादर्शनावरण इत्यादि कहना ॥

इहां कोई पूछै, जो, निद्रा तौ पापप्रकृति है अर सोवनेतैं प्राणीनिकैं सुख दीखै है, सो कैसैं है? ताका समाधान, जो, निद्रा आवै है सो तौ पापहीका उदय है । जातैं दर्शन ज्ञान वीर्य आत्माका स्वभाव है ताका घात होय है । बहुरि सोवनेतैं खेद ग्लानि मिटै भी है, सो याके लगता सातावेदनीयका उदय है । तथा असाताका उदय मंद पडै है ताकूं यह निद्रा सहकारी मात्र होय है । तातैं यह प्राणी सुख भी मानै है । परमार्थतैं कछु सुख है नाहीं । बहुरि दर्शनावरणके उदयमें चक्षु अचक्षुके उदयतैं तौ चक्षु आदि इन्द्रियनिकरि अवलोकन नाहीं होय है । एकेन्द्रिय विकलत्रय होय तब तौ इंद्रियही घाटि होय । बहुरि जाकै नेत्र होय तौ विगडी जाय बहुरि अवधिकेवलदर्शनावरणके उदयतैं ते दोऊ दर्शन प्रगट न होय । बहुरि निद्राके उदयतैं अंधकार अवस्था है । निद्रानिद्राके उदयतैं महा अंधारा है । प्रचलाके उदयतैं बैठाही घूमे नेत्र चलै, गात्र चलै, देखताही न देखै । प्रचलाप्रचलाके उदयतैं अत्यंत घूमै, ऊंघै, कोई शरीरमें शलाका आदि चुभावै तौ चेत न होय । स्त्यानगृद्धिका स्वरूप पहला कह्याही था ॥

आगें, तीसरी प्रकृति जो वेदनीय ताकी उत्तरप्रकृतिके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं--

॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥

याका अर्थ— वेदनीयकी साता असाता ए दोय प्रकृति हैं । तहां जाके उदयतैं देवादिगतिनिविषैं शरीरसंबंधी तथा मनसंबंधी सुखकी प्राप्ति होय सो सातावेदनीय है । सत् कहिये प्रशस्त सराहने योग्य जहां वेदने योग्य होय सो सद्वेद्य कहिये । बहुरि जाका फल नरक आदि गतिविषैं अनेकप्रकार दुःख होय, सो असातावेदनीय है । असत् कहिये अप्रशस्त वेदने योग्य होय सो असद्वेद्य है ॥

आगें चौथा मोहनीयकर्मकी उत्तरप्रकृतिके भेदके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दर्शनचारित्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडशभेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुंनपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय अकपायवेदनीय कपायवेदनीय ए च्यारि तिनकी संख्या तीनि दोय नव सोलह इनका यथासंख्य संबंध करि लेणा । तहां दर्शनमोहनीयके तीनि भेद, सम्यक्त्व मिथ्यात्व मिश्र ऐसैं । सो बंधअपेक्षा तौ एक मिथ्यात्वही है । अर सत्ताकी अपेक्षा तीनिप्रकार होय तिष्ठै है । तहां जाके उदयतैं सर्वज्ञका भाष्या जो स्वर्गमोक्षका मार्ग, तातैं पराङ्मुख होय तत्त्वार्थका श्रद्धानविषैं उत्साहरहित होय हितअहितका भेद जाननेकूं असमर्थ होय ऐसा मिथ्यादृष्टि होय ताका ऐसा भाव सो मिथ्यात्व कहिये । बहुरि तिसही मिथ्यात्वका भेदकूं सम्यक्त्व संज्ञा है । जातैं जो शुभपरिणामकरि विशुद्धताके बलतैं जाका विपाकरस हीन होय गया होय उदासीनकी ज्यौं अवस्थित हुवा संता आत्माके श्रद्धानकूं रोकि सकै नाहीं, तिसके उदयकूं वेदता संता पुरुष सम्यग्दृष्टिही कहिये, सो सम्यक्त्व नाम है ॥

बहुरि सोही मिथ्यात्व अपना रस आधाक शुद्ध भया आधाक मिथ्यात्व रह्या ऐसा होय ऐसैं अमलके कोऊ होय है तिनकूं जलतैं पखालतैं पखालतैं तिनकी मदशक्ति क्यों मिटी क्यों रही होय है तैसैं होय, सो मिश्र कहिये, याकूं सम्यङ्मिथ्यात्व भी कहिये । याके उदयतैं आत्माका श्रद्धान नामा परिणाम मिथ्यात्व सम्यक्त्व दोऊ मिल्या हुवा मिश्ररूप होय है । जैसैं मदके कोंदू धोयेतै आधे शुद्ध भये तिनकूं कोई भात पचाय खाय ताके निमित्ततैं कछू अमल कछू चेतन ऐसा मिश्रपरिणाम होय है तैसैं जानना ॥

बहुरि चारित्रमोहनीयके दोय भेद अकषायवेदनीय कषायवेदनीय । तहां ईषत् किंचित् कषायकूं अकषाय कहिये, इहां अकार निषेधवाचक न लेणा ईषत् अर्थ लेणा । सो याके नव भेद हैं, हास्यादिके भेदतैं । तहां जाके उदयतैं हास्य प्रगट होय, सो हास्य कहिये । बहुरि जाके उदयतैं कछु वस्तुसूं आसक्त होना सो रति है । बहुरि रतितैं विपरीत कछु न सुहावै सो अरति है । बहुरि जाके उदयतैं इष्टका वियोगकरि परिणामखेदरूप होय सोच करै रुदनादिक करै, सो शोक है । बहुरि जाके उदयतैं दुःखकारी पदार्थ देखि उद्वेग करना डरपना भागना सो भय है । बहुरि जाके उदयतैं अपना दोष तौ संकोचना परका दोष देखि परिणाम मलिन करना सो जुगुप्सा है । बहुरि जाके उदयतैं स्त्रीसंबंधी भाव पावै सो स्त्रीवेद है । जाके उदयतैं पुरुषसंबंधी भावनिकूं पावै, सो पुरुषवेद है । जाके उदयतैं नपुंसकसंबंधी भावनिकूं पावै, सो नपुंसकवेद है । बहुरि कषायवेदनीय सोलहप्रकार है । तहां अनंतानुबंधी क्रोध मान

माया लोभ ए च्यारि, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि, प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि, सज्वलन क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि ऐसैं सोलह भई ॥

तहां अनंत नाम मिथ्यात्वका है, जातैं यह मिथ्यात्व अनंतसंसारका कारण है, तिस मिथ्यात्वकी अनुसारणी याकै लार लगी यातैं अनुराग करावनहारी होय, सो अनंतानुवंधी है । याके उदयतैं सर्वथा एकांतरूप झूठा तत्वविर्षै तौ राग प्रीति होय है । अनेकान्तरूप सांच तत्त्वार्थतैं द्वेप होय है । झूठाकूं साचा थापि ताकी पक्ष करै है, ताके विर्पै सत्यार्थका अभिमान करै है, जो हमारा मानना सत्यार्थ है इत्यादि चेष्टा होय है । वहुरि जाके उदयतैं एकदेशत्यागरूप श्रावकके व्रत किंचिन्मात्र भी करि सकै है सो देश ईपत्प्रत्याख्यानकूं आवरण करै, सो अप्रत्याख्यानावरण है । वहुरि जाके उदयतैं सकलसंयमकूं न पाय सकै, सो सकलप्रत्याख्यानकूं न आचरै, तातैं प्रत्याख्यानावरण है । वहुरि संयमकी लार एक होय तिष्ठै दैदीप्यमान रहै तथा तिसके होतैं संयम भी दैदीप्यमान रह्या करै सो संज्वलन है ॥

इहां वेदनीयके भावनिका विशेप ऐसा, जो, स्त्रीसूं रमने आदि विकारभाव होय सो तौ पुरुपवेदके भाव हैं । वहुरि नपुंसकवेदविर्षै स्त्रीपुरुप दोऊसूं रमनेरूप आदि विकारभाव होय हैं । वहुरि स्त्रीवेदके भावका विशेप सो लज्जाकारि नम्री-भूतपणा होय, अर जाके मनकी ग्लानि प्रगट न दीखै, कामका अभिप्राय रहै, नेत्रनिका विभ्रम होय, आलिंगननितैं सुख मानै, पुरुपसूं रमनेकी वांछा रहै इत्यादिक जानना । सो भावनिका विशेप ऐसा कदाचित् पुरुपकै भी होय तव स्त्रीवेदका उदय कहिये । तथा नपुंसककै भी कदाचित् ऐसे भाव होय तव स्त्रीवेदहीका उदय कहिये । वहुरि स्त्रीकै भी कदा-चित् पुरुपनपुंसकके भावरूप वेदका उदय होय है अर शरीरके आकाररूप द्रव्य स्त्री पुरुप नपुंसक होय हैं । ते आकार नामकर्मके उदयतैं होय हैं ॥

वहुरि क्रोधादिपरिणामका विशेप, तहां अपना परका जातैं घात होय वहुरि उपकार जानैं नाहीं अहितही करनेवाला क्रूरपरिणाम होय ताकूं अमर्प कहिये, सोही क्रोध है । इहां भावार्थ ऐसा भी, जो, परद्रव्य परणमैं तामैं ऐसे भाव होय, जो 'यह ऐसैं क्यों परिणामै' ऐसैं खुनसि होय सो क्रोध है । ताका तीव्र मंद अपेक्षा च्यारि अवस्था हैं । ताके च्यारि दृष्टांत-- तीव्रतर तौ पापाणकी रेखासारिखा होय घणे कालमैं मिटै । तीव्र पृथ्वीकी रेखासारिखी होय सो थोरेही कालमैं मिटि जाय । मंद धूलिरेखासारखी होय, सो अलपकालहीमैं मिटि जाय । मंदतर जलकी रेखासारखी होय, सो तत्कालही मिटि जाय । ऐसैं वासनातैं क्रोधका विशेप है ॥

वहुरि जातिआदि आठ मदके कारण हैं, तिनके अवलंवनतैं परतैं नमनेरूप परिणाम न होय सो मान है । याके भी

तीव्र मंद अपेक्षा च्यारि दृष्टांत हैं। तीव्रतर तौ पाषाणके स्तंभसारिखा होय, जो खंड तौ होय परंतु नमना कठिन। बहुरि तीव्र अस्थिसारिखा होय, सो कोई कारणविशेषतैं केतेक काल पीछैं नमि जाय। बहुरि मंद काष्ठसारिखा होय, जो नमनेका कारण मिलै थोरेही कालमें नमि जाय। बहुरि मंदतर वेलिके तंतुसारिखे होय, तत्काल नमि जाय। ऐसैं मानका विशेष है॥

बहुरि मायाका विशेष, जो परकूं ठगनेके अर्थि परतैं छिपाय मन वचन कायका कुटिलपणाका विचार, सो माया है। याके भी तीव्रमंदके च्यारि दृष्टांत हैं। तहां तीव्रतर बांसके विडाके जडसारिखी जाका परकूं ज्ञान होय सकै नाहीं अर पैला ठिगाय जाय सो वहुत कालताईं प्रवर्तै कहि न मिटैं। बहुरि तीव्र मींढेके सींगसारिखी, जाकी वक्रता थोडी, थोडे कालमें मिटि जाय। बहुरि मंद गोमूत्रकसारिखी, जाके दोय च्यारि मोडेरूप वक्रता, सो अल्पकालमें मिटि जाय। बहुरि मंदतर खुरवा तथा लिखनेकी कलमसारिखी, जाकी एकमोडारूप वक्रता, तुरत मिटि जाय। ऐसैं मायाका विशेष है॥

बहुरि लोभका विशेष, तहां अपने उपकारका कारण जो द्रव्य आदिक वस्तु ताकी वांछा अभिप्रायमें रहै सो लोभ है, याके भी तीव्र मंदके च्यारि दृष्टांत हैं। तहां तीव्रतर किरिमिजी रंग सारिखा बहुतकालमें भी जाका मिटना कठिन। बहुरि तीव्र काजलके रंगसारिखा, जो थोडेही कालमें मिटि जाय। बहुरि मंद कर्दम लग्या हूवा सारिखा, सो अल्पकालमें जाका रंग उतरि जाय। बहुरि मंदतर हलदके रंगसारिखा, तुरत उडि जाय। ऐसा लोभका विशेष है। ऐसैं दर्शनमोहकी तीनि प्रकृति, च्यारि मोहनीयकी, पचीस कषायरूपप्रकृति ए अठाईस कहीं॥

आगें आयुकर्मके उत्तरप्रकृतिके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ नारकतैर्यग्योनमानुषदैवानि ॥ १० ॥

याका अर्थ-- नारक तैर्यग्योन मानुष दैव ए च्यारि प्रकृति आयुकर्मकी हैं। तहां नरकआदिविषैं भवके संबंधकरि आयुका नाम किया है। जो नरकविषैं उपजनेकूं कारण कर्म, सो नारकआयु है। जो तिर्यंचयोनिविषैं उपजनेकूं कारण कर्म, सो तैर्यग्योन है। जो मनुष्यविषै उपजनेकूं कारण कर्म, सो मानुष है। जो देवविषैं उपजनेकूं कारण कर्म, सो दैव है। इहां भावार्थ ऐसा, जो, जिस पर्यायमें यह जीव उपजै, तिसविषैं जीवना मरना इस आयुके आधीन है। तिस पर्यायसंबंधी दुःख तथा सुख आयुपर्यंत भोगवै है॥

आगें याके अनंतर कह्या जो नामकर्म ताकी उत्तरप्रकृतिके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ गतिजातिशरीराङ्गोपाङ्गनिर्माणबन्धनसंघातसंस्थानसंहननस्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रससुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्तिसेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥ ११ ॥

याका अर्थ— ए गतिआदि वियालीस भेद नामप्रकृतिके हैं । जहां जाके उदयतैं आत्मा अन्यपर्यायकूं गमन करै, सो गति है । सो च्यारिप्रकार है । नरकगति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति ऐसैं । बहुरि जिनविषैं अव्यभिचारी समानभावकरि एकतारूप भया जो अर्थका स्वरूप सो जाति है । सो पांचप्रकार है एकेन्द्रियजातिनाम, द्वीन्द्रियजातिनाम, त्रीन्द्रियजातिनाम, चतुरिन्द्रियजातिनाम, पंचेन्द्रियजातिनाम । बहुरि जाके उदयतैं आत्माके शरीर निपजै, सो शरीरनाम है । सो पांचप्रकार है औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्मण । बहुरि जाके उदयतैं अंग उपांग निपजै, सो अंगोपांगनाम है । सो तीनिप्रकार है औदारिक वैक्रियक आहारक ऐसैं । बहुरि जाके उदयतैं नेत्रादिककी यथास्थान तथा यथाप्रमाण निष्पत्ति होय, सो निर्माणनाम है । ताके दोय भेद हैं स्थाननिर्माण प्रमाणनिर्माण । बहुरि शरीरनामकर्मके उदयके वशतैं पाये जे पुद्गलके स्कंध तिनका परस्पर प्रदेशनिका अनुप्रवेश होय बंधाय होय, सो बंधननाम है । जो शरीरके नामतैंही जिनके नाम ऐसै पांचप्रकार हैं ॥

बहुरि जाके उदयतैं औदारिक आदि शरीरनिके परमाणुनिके स्कंध परस्पर अनुप्रवेशतैं एकरूप होय छिद्ररहित होय मिलै, सो संघातनाम है । सो भी शरीरनामधारक पांचप्रकार है । बहुरि जाके उदयतैं औदारिक आदि शरीरनिके आकार निपजै, ते संस्थाननाम हैं । सो छहप्रकार है समचतुरस्रसंस्थान, न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थान, स्वातिसंस्थान, कुब्जकसंस्थान, वामनसंस्थान, हुंडकसंस्थान । तहां जो ऊपर नीचैं समान बरावरि विभागरूप शरीरके अवयवनिका स्थापन होय 'जैसैं प्रवीण कारीगरका बनाया सर्व अवयव यथास्थान सुंदर होय तैसैं' समचतुरस्रसंस्थान है । बहुरि जो शरीरके अवयव उपरिलै तौ बडे होय नीचै छोटे होय वडवृक्षकी ज्यों सो न्यग्रोधपरिमंडल है । बहुरि याके उलटा उपरितैं छोटे होय नीचे चौंडे होय सो स्वाति है, जैसैं वंबी होय तैसा आकार होय । बहुरि जामें पीठि वडा होय सो कुब्जक है । बहुरि जामें सर्वही अंग छोटे होय सो वामन है । बहुरि जामें सर्वही अंग उपांग रुंड मुंड वुरे होय सो हुंडक है ॥

बहुरि जाके उदयतैं अस्थि कहिये हाड तिनकी बंधनका विशेष होय सो संहनननाम है । सो छह प्रकारका है । तहां जामें हाड अरु संधिके वडे कीला वज्रमयी होय अर वज्रमयी नसनिके वलयबंधनकारि बंधे होय, सो वज्रवृषभनाराच-

संहनन है। बहुरि जामें वज्रमयी हाड संधिके तथा बडे कीला होय सो वज्रमयी वलयबंधनकरि रहित होय सो वज्रनाराच संहनन है। बहुरि जामें हाड तथा संधिनके कीला तौ होय परंतु वज्रमयी न होय अर वज्रमयी वलयबंधन भी न होय, सो नाराचसंहनन है। बहुरि जामें हाडनकी संधिके कीला एकतरफ तौ होय दूसरी तरफ न होय, सो अर्धनाराचसंहनन है। बहुरि हाडनिकी संधि छोटी कीलनिकरि सहित होय, सो कीलकसंहनन है। बहुरि जामें हाडनिकी संधिमें अंतर होय चौगिरद बडी नस छोटी नस लिपटी होय मांसकरि भऱ्या होय, सो असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन है। ऐसें छह भये ॥

बहुरि जाके उदयतैं स्पर्श निपजै, सो स्पर्शनाम है। सो आठप्रकार है, कर्कश मृदु गुरु लघु स्निग्ध रूक्ष शीत उष्ण ऐसें। बहुरि जाके उदयतैं रस निपजै, सो रसनाम है। सो पांच प्रकार है, तिक्त कटुक कषाय आम्ल मधुर ऐसें। बहुरि जाके उदयतैं गंध उपजै, सो गंधनाम है। सो दोयप्रकार है, सुरभि असुरभि। बहुरि जाके उदयतैं वर्ण निपजै, सो वर्णनाम है। ताके पांच भेद हैं, कृष्ण नील रक्त पीत शुक्ल ऐसें। बहुरि जाके उदयतैं पहला शरीरका आकार बण्या रहै नवा शरीरकी वर्गणा ग्रहण न करै, जेतैं आनुपूर्व्यनाम है। याका उदय उत्कृष्ट तीनि समय विग्रहगतिमें रहै है। सो च्यारि प्रकार है, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य ॥

बहुरि जाके उदयतैं लोहके पिंडकी ज्यों भाऱ्या होयकरि तलै गिरि पडै तथा आकके फूफदाकेज्यों हलका होयकरि ऊपरकूं उडि जाय नाहीं, सो अगुरुलघुनाम है। यह कर्मकी प्रकृति है सो शरीरसंबंधी जाननी। जो अगुरुलघुनामा स्वाभाविक द्रव्यका गुण है, सो याकूं न जानना। बहुरि जाके उदयतैं अपना घात आपकरि होय, सो उपघातनाम है। बहुरि जाके उदयतैं अपना घात परकरि होय, सो परघातनाम है। बहुरि जाके उदयतैं आतपमय शरीर पावै, सो आतपनाम है। यहू सूर्यके विमानविषैं पृथ्वीकायिक जीवनिकै वर्तै है। बहुरि जाके उदयतैं शरीर उद्योतरूप पावै सो उद्योतनाम है। सो यहू चंद्रमाके विमानके पृथ्वीकायिकजीवनिकै तथा आग्या आदि जीवनिकैं उदय होय है। बहुरि जाके उदयतैं उच्छ्वास आवै, सो उच्छ्वासनाम है ॥

बहुरि जाके उदयतैं आकाशविषैं गमनका विशेष होय, सो विहायोगतिनाम है। इहां विहाय ऐसा नाम आकाशका हैं, यहू दोयप्रकार है, प्रशस्त अप्रशस्त, याकूं शुभचालि अशुभचालि कहिये। सो जीवकै कर्मके उदयतैं एक आत्माकरि भोगिये ऐसी बुरी भली चाल जाननी। जो क्रियावान् द्रव्यके स्वभावहीकरि गमन होय सो नाहीं लेना। बहुरि जाके उदयतैं एक आत्माकरिही भोगिये ऐसा शरीर पावै, सो प्रत्येकनाम है। बहुरि जाके उदयतैं बहुतजीवनिका भोगनेका

एकही शरीर होय, सो साधारण नाम है । बहुरि जाके उदयतैं द्वींद्रियादिविषैं जन्म होय, सो त्रसनाम है । बहुरि जाके उदयतैं एकेन्द्रियविषैं उपजैं, सो स्थावरनाम है । बहुरि जाके उदयतैं अन्यकूं प्यारी लागै, सो सुभगनाम है । बहुरि जाके उदयतैं रूप आदि सुंदरगुण होय, तौ अन्यकूं प्रीति न उपजै, सो दुर्भगनाम है । बहुरि जाके उदयतैं स्वर मनोज्ञ होय, सो सुस्वरनाम है । यातैं विपरीति बुरा स्वर होय सो दुःस्वरनाम है॥

बहुरि जाके उदयतैं शरीर रमणीक सुन्दर होय, सो शुभनाम है । यातैं विपरीति असुंदर होय, सो अशुभनाम है । बहुरि जाके उदयतैं सूक्ष्मशरीर निपजै, सो सूक्ष्मनाम है । बहुरि जाके उदयतैं अन्यकूं बाधा करै रोकै ऐसा शरीर उपजै सो बादरनाम है । बुहुरि जाके उदयतैं आहार आदि पर्याप्ति पूर्ण करै, सो पर्याप्तिनाम है । सो पर्याप्ति छह प्रकार है आहार, शरीर, इंद्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा, मन ऐसैं । बहुरि जाके उदयतैं छह पर्याप्ति पूर्ण न करै ऐसा अपर्याप्तिनाम है । बहुरि जाके उदयतैं शरीरके अंगोपांग दृढ होय, सो स्थिरनाम है । यातैं विपरीति अस्थिरनाम है । बहुरि जाके उदयतैं प्रभासहित शरीर होय पैला सहारी न सकै, सो आदेयनाम है । प्रभारहित शरीर होय, सो अनादेयनाम है । बहुरि जाके उदयतैं पवित्रगुण लोकमें प्रगट होय, सो यशःकीर्तिनाम है । बहुरि जाके उदयतैं छते गुण भी प्रगट न होय सकै अवगुण प्रगट होय सो अयशःकीर्तिनाम है । बहरि जाके उदयतैं अचिंत्यविभूतिविशेषसहित अरहंतपणा पावै, सो तीर्थंकरनाम है ॥

इहां कोई कहै, गणधर चक्रवर्ती आदि भी वडी विभूति पावै हैं, तिनकी प्रकृति क्यौं न कही? ताकूं कहिये, जो, ऊच्चगोत्रादिकके उदयतैं होय है । तातैं न्यारे न कहे अर तीर्थंकर होय हैं ते मोक्षमार्ग प्रवर्तावै है, यह फल चक्रवर्त्यादिककै नाहीं है । तहां चौदह तौ पिंडरूप प्रकृति हैं तिनके पैसठि भेद हैं । गति ४ । जाति ५ । शरीर ५ । अंगोपांग ३ । निर्माण २ । बंधन ५ । संघात ५ । संस्थान ६ । संहनन ६ । स्पर्श ८ । रस ५ । गंध २ । वर्ण ५ । आनुपूर्व्य ४ । विहायोगति २ । ऐसैं ६५ । बहुरि प्रत्येक शरीर आदि १० प्रतिपक्षीसहित कही ते वीस अर आठ अगुरुलघु आदिक ऐसैं अठाईस अपिंडरूप हैं । ऐसैं सब मिली तेरणवै प्रकृति जाननी । सूत्रमें इकतीसकें तौ न्यारी विभक्ति करी ते प्रतिपक्षी जाननी । दशके सेतर पद दे न्यारी विभक्ति करी, ते सप्रतिपक्षी जाननी । तीर्थंकरकै न्यारी विभक्ति करी सो याकैं प्रधानपणा जनावनेके अर्थि है ॥

आगें, नामकर्मकी प्रकृतिनिके भेद तौ कहे अब याके अनंतर कह्या जो गोत्रकर्म ताकी प्रकृतिका भेद कहिये हैं—

॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥ १२ ॥

याका अर्थ— उच्चगोत्र नीचगोत्र ये दोय गोत्रकर्मकी प्रकृति हैं। तहां गोत्र दोय प्रकार हैं उच्चगोत्र नीचगोत्र। तहां जाके उदयतैं लोकपूजितकुलविषैं जन्म होय, सो उच्चगोत्र है। बहुरि तिसतैं विपरीति निंद्यकुलमें जन्मका कारण होय, सो नीचगोत्र हैं ॥

आगें आठमां अंतरायकर्मकी उत्तरप्रकृति कहनेकूं सूत्र कहै है—

॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥ १३ ॥

याका अर्थ— दान लाभ भोग उपभोग वीर्य इन पांचनिका विघ्न करनेवाली अंतरायकी पांच प्रकृति हैं। तहां अंतराय करनेकी अपेक्षा भेद कहे हैं। दानका अंतराय लाभका अंतराय इत्यादि। जाके उदयतैं देनेकी इच्छा करै तौ दीया न जाय, सो दानान्तराय है। लेनेकी इच्छा होय सो पावै नाहीं सो लाभांतराय है। भोगनेकी इच्छा होय भोगने पावै नाहीं, सो भोगांतराय है। उपभोग करनेकी इच्छा होय उपभोग पावै नाहीं, सो उपभोगान्तराय है। कोई कार्यका उत्साह करै उत्साहकी सामर्थ्य न होय सो वीर्यांतराय है। ऐसे ये अन्तराय कर्मकी पांच प्रकृति जानना। ऐसैं प्रकृतिबंधके भेद तौ कहे। अब स्थितिबंधके भेद कहने हैं, सो स्थिति दोयप्रकार है, उत्कृष्ट जघन्य। तहां जिन प्रकृतिनिकी उत्कृष्टस्थिति समान है, ताका निर्देशके अर्थि सूत्र कहै हैं—

आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥ १४ ॥

याका अर्थ— आदितैं कहे जे ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय ए तीनि बहुरि अंतराय इन च्यारि कर्मनिकी उत्कृष्ट स्थिति तिस कोडाकोडी सागरकी बंधै है। इहां आदितः ऐसा शब्द तौ मध्यके तथा अंतके न लेने इसवास्ते कह्या है। अर अंतरायका ग्रहण न्यारा है ही। बहुरि सागरोपमका पहले स्वरूप कह्या ही था। बहुरि कोडिकोडिकूं कोटीकोटी कहिये। बहुरि परा कहनेतैं उत्कृष्ट जानना। इहां ऐसा अर्थ भया, जो, ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय इन च्यारिनिकी उत्कृष्टस्थिति तीस कोडाकोडी सागरकी है। सो यह मिथ्यादृष्टि संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवकै बंध होय है, अन्य जीवनिके आगमतैं जानना। तहां एकेन्द्रिय पर्याप्तके एकसागरके सात भाग कीजै तामें तीनि भाग, द्वीन्द्रियपर्याप्तके पचास

सागरके सात भाग कीजै तामें तीनि भाग, त्रीन्द्रियपर्याप्तके पचास सागरके सात भाग कीजे तामें तीनि भाग, चतुरिन्द्रियके सौ सागरके सात भाग कीजे तामें तीनि भाग, असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तके एक हजार सागरके सात भाग कीजे तामें तीनि भाग, बहुरि अपर्याप्तकै संज्ञी पंचेन्द्रियकै तौ अंतःकोडाकोडी सागरकी जानना अर एकेन्द्रियादिककै पूर्वोक्त भाग पल्यके असंख्यातवां भाग करि हीन जानने । बंधके प्रथम समयतैं लगाय जेते काल अवस्थान रहै सो स्थितिबंध जानना ॥

आगें, मोहनीयकर्मकी उत्कृष्टस्थितिके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥ १५ ॥

याका अर्थ— मोहनीय कर्मकी स्थिति उत्कृष्ट सत्तरि कोडाकोडी सागरकी है। इहां कोडाकोडी सागर उत्कृष्टकी पहले सूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी । यह भी स्थिति मिथ्यादृष्टि संज्ञी पर्याप्तकै बंधै है । अन्यकै आगमतैं जानना ॥

आगें नाम गोत्रकी उत्कृष्टस्थिति जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥ १६ ॥

याका अर्थ— नामकर्म अर गोत्रकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति वीस कोडाकोडी सागरकी है । इहां भी उत्कृष्ट कोडाकोडी सागरोपमकी अनुवृत्ति है । यह भी उत्कृष्ट स्थिति संज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्तकै बंधै है, अन्य आगमतैं जाननी ॥

आगें आयुकर्मकी उत्कृष्टस्थिति कहनेकूं सूत्र कहै हैं--

॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥ १७ ॥

याका अर्थ— आयुकर्मकी स्थिति उत्कृष्ट तेतीस सागरकी है । इहां उत्कृष्टकीही अनुवृत्ति है । इहां भी संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तकैही बंधै है, अन्यकै आगमतैं जाननी ॥

आगें, उत्कृष्टस्थिति तौ कही, अब जघन्य स्थिति कहनी है, तहां पांचकर्मकी तौ जघन्यस्थिति समान है, सो न्यारी कहसी, अर तीनि कर्मकी स्थितिमें विशेष है, सो पहली कहैं हैं । तहां दोय सूत्र हैं--

॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥

याका अर्थ-- वेदनीयकर्मकी जघन्यस्थिति बारह मुहूर्तकी है । इहां अपरा ऐसा जघन्यका नाम लेणा ॥

॥ नामगोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥

याका अर्थ— नामकर्म गोत्रकर्म इन दोऊनिकी जघन्यस्थिति आठ मुहूर्तकी है । इहां अपरास्थिति अन्तर्मुहूर्त इन शब्दनिकी अनुवृत्ति है । आगें, पांच कर्म न्यारे राखे थे, तिनकी जघन्यस्थिति कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥ २० ॥

याका अर्थ— शेष कहिये बाकीके पांच कर्म ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय मोहनीय आयु इनकी जघन्यस्थिति अंतर्मुहूर्तकी है । तहां ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय इन तीनिकी तौ जघन्यस्थिति सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानवालेकै बंधै है । बहुरि मोहनीयकर्मकी जघन्यस्थिति अनुवृत्ति बादरसांपराय कहिये नवमां गुणस्थानवालेकै बंधै है । बहुरि आयुकर्मकी जघन्य संख्यातवर्षका जिनका आयु ऐसैं कर्मभूमि मनुष्य तिर्यचनिकैं बंधै है ॥

आगें पूछै है, जो, दोऊ प्रकारकी स्थिति ज्ञानावरण आदि कर्मनिकी कही अब इनका अनुभवका कहा लक्षण है सो कहौ । ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं ।

॥ विपाकोऽनुभवः ॥ २१ ॥

याका अर्थ--- कर्मप्रकृति पचकर उदय आवै ताका रस अनुभवमें आवै सो अनुभव कहिये । इहां विपाकके दोय अर्थ हैं, एक तौ विशिष्ट पाक होय सो विपाक कहिये, दूजा नाना पाक होय सो विपाक कहिये । तहां पूर्वैं कहे जे तीव्र मंद कषायरूप भावाश्रवके विशेष तिनतैं कर्मनिके पाक रसमें विशेष होय, सो तौ विशिष्ट पाक है । बहुरि द्रव्यक्षेत्र काल भव भावके निमित्तके भेदतैं भया जो नानाप्रकारपणा जामें ऐसा जो कर्मका पचना, सो विपाक है । तहां इनमें शुभपरिणामनिके प्रकर्षतैं तौ शुभप्रकृतिका उत्कृष्ट अनुभव बंधै है । अर अशुभप्रकृतिनिका हीन अनुभव बंधै है । बहुरि अशुभपरिणामनिके प्रकर्ष होनेतैं अशुभप्रकृतिनिका उत्कष्ट अनुभव बंधै है । अर शुभप्रकृतिका

हीन अनुभव बंधै है। सो ऐसैं कारणके वशतैं प्राप्त भया जो अनुभव सो दोयप्रकार प्रवर्तै है, स्वमुख कारि बहुरि परमुखकारि। तहां मूलप्रकृतिके जे आठ कर्म तिनका तौ अनुभव स्वमुखहीकारि प्रवर्तै है। अपना अपना बंधके अनुसार उदय आवै है। अन्यकर्मका अन्यकर्मरूप होय उदय आवै नाहीं। बहुरि उत्तरप्रकृतिनिका जे तुल्यजातिकर्म होय तिनका परमुखकारि भी अनुभव होय है। तिनमें आयुकर्मके भेदनिकैं तौ परमुखकारि उदय नाहीं, जो आयु बंधै ताहीका उदय होय। बहुरि दर्शनमोह अर चारित्रमोहके परस्पर उलटना नाहीं है। जो बांधै सोही उदय आवै। सोही कहिये है। नरकआयु तौ तिर्यंचआयु होय उदय आवै नाहीं। मनुष्यआयु नरकतिर्यंचरूप होय उदय आवै नाहीं ऐसैं। बहुरि दर्शनमोह तौ चारित्रमोहरूप होय उदय आवै नाहीं अर चारित्रमोह दर्शनमोहरूप होय उदय आवै नाहीं। आगे शिष्य कहै है, जो, पूर्वैं संचय किया जो नानाप्रकार कर्म, ताका विपाक सो अनुभव है, सो यह तौ हमनें अंगीकार किया मान्या, परंतु यह न जानें है- यह अनुभव प्रसंख्यात कहिये जो प्रकृतिगणनामें आई तिसस्वरूपही है कि अप्रसंख्यात कहिये किछु और भांति है? ऐसैं पूछैं तैं आचार्य कहै हैं, प्रसंख्यातही हैं, जो, प्रकृतिगणनामें आई तिसरूपही उदय आये भोगिये है। जातैं ऐसा है ऐसैं सूत्र कहै हैं—

॥ स यथानाम ॥ २२ ॥

याका अर्थ— जो प्रकृतिमान है तैसाही ताका अनुभव है। तहा ज्ञानावरणका फल ज्ञानका अभाव है, शक्तिकी व्यक्ति न होना है। दर्शनावरणका फल दर्शनशक्तिकी व्यक्ति न होना है। ऐसैंही जैसा जाका नाम है तैसाही अर्थरूप अनुभव सर्वकर्मप्रकृतिनिका भेदनिसहित प्रतीतिमें ल्यावना ॥

आगें शिष्य कहै है, जो कर्मका विपाक सो अनुभव कह्या, तहां कर्म भोगे पीछैं आभूषणकी ज्यौं लग्या रहै है, कि भोगै पीछै साररहित होय गिरि पडै है झडि जाय है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ ततश्च निर्जरा ॥ २३ ॥

याका अर्थ— तिस अनुभवपीछे निर्जरा ही है। भोगेपीछे झडि जाय है। आत्माकूं दुःख सुख देकारि अर पूर्व-स्थितिके क्षयतैं फेरि अवस्थान रहै नाहीं। तातैं कर्मकी निवृत्ति ही होय है। जैसैं आहार खाय सो पचिकर झडिही जाय, तैसैं झडि जाय, याहीकूं निर्जरा कहिये। सो यह दोयप्रकार है, सविपाकतैं उपजी अविपाकतैं उपजी। तहां च्यारि हैं गति

जामें बहुरि अनेक जातिके विशेषनिकरि भऱ्या भ्रमणरूप ऐसा जो संसाररूप समुद्र ताविषैं घणे कालतैं भ्रमता जो यह प्राणी ताकै शुभअशुभकर्म अनुक्रमकरि परिपाककूं प्राप्त होय स्थिति पूरी करि अनुभव कहिये भोगनेका जो उदयावलीरूप नाला ताकेविषैं प्राप्त होय अपना फलकूं देय झडै है, सो तौ सविपाकनिर्जरा है । बहुरि जो कर्म स्थिति पूरी करि अपना उदयकालकूं न प्राप्त भया अर तपश्चरण आदि उपचारि क्रियाके विशेषनिकी सामर्थ्यतैं विना उदय आयाहीकूं जोरीतैं उदीरणा करि उदयावलीमें लेकरि वेदना भोगना "जैसैं आम्र तथा फनसका फल पालमें देकरि शीघ्र पचावैं तैसैं पचाय लेना" सो अविपाकनिर्जरा है । बहुरि सूत्रमें चशब्द है सो निर्जराका अन्य भी निमित्त है ऐसा जनावनेके अर्थ है । आगे कहेंगे जो तपसा निर्जरा ऐसा सूत्र सो अनुभवतैं निर्जरा होय है बहुरि तपतैं भी होय है ऐसा जनाया है ॥

इहां पूछै है, कि, इस अध्यायमें निर्जराका कथनका कहा प्रयोजन? संवरके पीछै निर्जरा कह्या चाहिये । जातैं संवरके पीछैं याका नाम है तैसैंही कहना । ताका समाधान, यह लघुकरणका प्रयोजन है, जो, संवरके पीछैं याकूं कहते तौ तहां भी 'विपाकोऽनुभवः' ऐसा फेरि कहना होता, तातैं इहां कहनेमें फेरि नाही कहना होय सो इहां विशेष कहिये है । ते कर्मप्रकृति दोयप्रकार हैं, घातप्रकृति अघातप्रकृति । तहां ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय ए तौ घातिकर्म हैं । अर वेदनीय नाम आयु गोत्र ए अघातिकर्म हैं । बहुरि घातिकर्मकी प्रकृति दोयप्रकार है, सर्वघाति देश-घाति । इहां केवलज्ञानावरण निद्रा निद्रानिद्रा प्रचला प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्धि केवलदर्शनावरण दर्शनमोह चारित्रमोहकी संज्वलननोकषाय विना बारहकषाय ऐसैं बंधकीअपेक्षा वीसप्रकृति सर्वघाति हैं । बहुरि ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरणकी तीनि अंतराय पांच संज्वलननोकषाय तेरा ऐसैं पचीस देशघाति हैं । यह भी बंधकीअपेक्षा जाननी । बहुरि अन्यविशेष है सो कहिये है, शरीर ५ बंधन ५ संघात ५ संस्थान ६ संहनन ६ अंगोपांग ३ स्पर्श ८ रस ५ गंध २ वर्ण ५ प्रत्येक साधारण २ स्थिर अस्थिर २ शुभअशुभ २ अगुरुलघु १ उपघात १ परघात १ उद्योत १ निर्माण १ ए बासठि प्रकृति तौ पुद्गलविपाककी कहिये पुद्गलहीकूं रस दे हैं, शरीरसंबंधी जाननी । बहुरि आनुपूर्व्य ४ क्षेत्रविपाककी कहिये जीवके प्रदेशनिके आकाररूप विपाक इनकै हैं । बहुरि आयु ४ भवविपाककी कहिये इनका भवसाधारणमात्र फल है । अब शेषप्रकृति जीवविपाककी कहिये । ते जीवके उपयोग आदि शक्तिकूं विपाक दे हैं । ज्ञानावरण ५ दर्शनावरण ९ अंतराय ५ मोहनीय २८ ऐसैं घातिकर्मकी तौ ४७ । बहुरि वेदनीय २ गोत्रकर्मकी २ नामकी २७ तिनके नाम गति ४, जाति ५, विहायोगति २, त्रसस्थावर २, सूक्ष्मबादर २, पर्याप्तअपर्याप्त २, सुस्वरदुःस्वर २, सुभगदुर्भग २, आदेय अनादेय २, यशःकीर्ति अयशःकीर्ति २, स्वासोत्स्वास १, तीर्थंकर १, ऐसैं सब मिलि ७८ जीवविपाककी प्रकृति हैं । ए सत्तरकी अपेक्षा एकसौ अठतालीस प्रकृति जाननी ॥

आगें सो अनुभवबंध तौ कह्या, अब प्रदेशबंध कहनेयोग्य है, ताकूं वक्तव्य होतें एते प्रयोजन कहने। प्रदेशबंधका कारण तौ कहां है? कौनसे कालविषैं होय है? काहेतैं होय है? कहा स्वभाव है? किसविषैं होय है? केते परमाण परमाणु है? ऐसैं अनुक्रमकारि प्रश्नके भेदकी अपेक्षा लेकारि तिसके उत्तरके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥ २४ ॥

याका अर्थ- ज्ञानावरण आदि प्रकृतिनिकूं कारण तीनि कालसंबंधी जीवके भावनिविषैं योगके विशेषतैं सर्वही आत्माके प्रदेशनिविषैं सूक्ष्म एकक्षेत्रावगाहकारि तिष्ठैं ऐसैं अनन्तानंत पुद्गलके स्कंध बंधरूप होय तिसकूं प्रदेशबंध कहिये। तहां नामके कारण होय ताकूं नामप्रत्यय कहिये इहां नामशब्दकारि सर्व कर्मप्रकृतिका ग्रहण है। जातैं स यथानाम ऐसा अनुभवबंधका सूत्र है। तातैं नाम कहनेतैं प्रकृति जाननी। ऐसे कहनेकारि तौ प्रदेशबंधकै कारणपणा कह्या। बहुरि सर्वतः कहिये सर्वभवनिविषैं इहां तस्प्रत्यय सप्तमीविभक्तिका अर्थमें है। जातैं व्याकरणका ऐसा सूत्र है, दृश्यतेऽन्यतोऽपि। इस वचनतैं सप्तमीविभक्तिमें भी तस्प्रत्यय होहै, इस वचनतैं कालका ग्रहण किया है। जातैं एकजीवकै अतीतकालमें अनंते भव वीते आगामी कालमें संख्यात तथा असंख्यात तथा अनंतभव होयेंगे। बहुरि योगविशेषात् कहिये मनवचनकायके योगके विशेषतैं पुद्गल हैं ते कर्मभावकारि जीव ग्रहण करैं हैं। ऐसैं कहनेकारि निमित्त-विशेषका स्वरूप कह्या ॥

बहुरि सूक्ष्मादिशब्दके ग्रहणतैं कर्मके ग्रहणयोग्य जे पुद्गल तिनका स्वरूपका वर्णन है। ग्रहणके योग्य पुद्गल सूक्ष्म हैं स्थूल नाहीं। बहुरि एकक्षेत्रावगाहवचन है सो अन्यक्षेत्रका अभाव जनावनेके अर्थि है। आत्माके प्रदेशनिहीमैं तिष्ठैं हैं अन्य जायगा नाहीं। बहुरि स्थिता ऐसा कहनेतैं तिष्ठैंही हैं, चलते नाहीं हैं ऐसा जनाया है। बहुरि सर्वात्मप्रदेशेषु ऐसा वचन है, सो, तिन कर्मप्रदेशनिका आधार कह्या है, एकही प्रदेशादिविषैं कर्म नाहीं तिष्ठैं हैं ऊपर नीचे तिर्यग् सर्वही आत्माके प्रदेशनिविषैं व्यापिकारि तिष्ठैं हैं। बहुरि अनंतानंतप्रदेशवचन है, सो, अन्यपरिमाणका अभाव जनावनेकूं है, संख्यात नाहीं हैं। असंख्यात नाहीं हैं, अनंत नाहीं हैं। जे पुद्गलस्कंध कर्मरूप होय हैं एक समयविषैं समयप्रबद्ध होय हैं ते अभव्यराशितैं अनंतगुणे सिद्धराशिकै अनंतवैं भाग परिमाण हैं। बहुरि घनांगुलके असंख्यातवे भाग क्षेत्रविषैं

समयकी स्थितिकूं लेकारि तिष्ठे हैं । पंच
अवगाह करै ऐसै हैं । बहुरि ते एक दोय तीनि च्यारि संख्यात असंख्यात
वर्ण, पंच रस, दोय गंध च्यारि स्पर्श गुणरूप भावकूं लिये आवै हैं । आठप्रकार कर्मकी प्रकृतिकै योग्य हैं, ते
योगके वशतैं आत्मा आप ग्रहण करै है । ऐसैं प्रदेशबंधका स्वरूप संक्षेपतैं जानना ॥

आगें बंध पदार्थके अनंतर पुण्य पाप भी गिणने ऐसी प्रेरणा है, सो पुण्यपाप बंधपदार्थविषैं अंतर्भूत हैं,
ऐसैं जानना । तहां ऐसा कह्या चाहिये, जो, पुण्यबंध तौ कहा है? अर पापबंध कहा है? तहां ऐसा पहले तौ पुण्य-
प्रकृतिकी संख्या कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥

याका अर्थ— सातावेदनीय शुभआयु शुभनाम शुभगोत्र हैं ए पुण्यप्रकृति हैं । तहां शुभ तौ प्रशस्तकूं कहिये, सराहने योग्य होय, सो शुभ है । सो शुभशब्द आयुआदि तीनि कर्मके न्यारा न्यारा कहना । तातैं शुभआयु शुभनाम शुभगोत्र ऐसा जानना । तहां शुभआयु तौ तीनि हैं । तिर्यंचआयु मनुष्यआयु देवआयु ऐसैं । तहां शुभनामप्रकृति तैंतीस हैं । मनुष्यगति, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, पांच शरीर, तीनि अंगोपांग, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभनाराचसंहनन, प्रशस्तवर्ण रस गंध स्पर्श ए च्यारि, मनुष्यदेवगत्यानुपूर्व्य दोय, अगुरुलघु, परघात, उछ्वास आतप, उद्योत, प्रशस्तविहा-योगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, सुभग, शुभ, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति, निर्माण, तीर्थंकर ऐसैं बहुरि उच्चगोत्र सातावेदनीय ऐसैं ब्यालीस प्रकृति पुण्यकर्मकी हैं ॥

आगे पापप्रकृतिनिके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ अतोऽन्यत् पापम् ॥ २६ ॥

याका अर्थ— एकही जे पुण्यप्रकृति तिनतैं अवशेष रही ते पापप्रकृति हैं । इस पुण्यनामा कर्मप्रकृतिके समूहतैं अन्यकर्म हैं सो पाप ऐसा कहिये । ते कौन कौन? ज्ञानावरण पांच, दर्शनावरण नव, मोहनीयकी छव्वीस, अंतरायकी पांच, नरकगति, तीर्यंचगति, जाति च्यारि, संस्थान पांच, संहनन पांच अप्रशस्त वर्ण गंध रस स्पर्श ए च्यारि, नरकगत्यानुपूर्व्य, तिर्यंचगत्यानुपूर्व्य, उपघात, अप्रशस्तविहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारणशरीर, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशःकीर्ति ऐसैं चौतीस नामकर्मकी प्रकृति बहुरि असातावेदनीय नरकआयु

नीचगोत्र ऐसे ब्यालीस प्रकृति पापकर्मकी हैं । ऐसैं पुण्यपापप्रकृति सर्व मिलि एकसौ चौतीस भई, सो यह कथन बंधकीअपेक्षा जानना । बंधप्रकृति एकसौ वीस कही हैं । तहां दर्शनमोहकी तीनि प्रकृतिमें बंध एक मिथ्यात्वहीका है । पीछैं तीनि होय हैं, तातैं दोय तौ एक घटी । बहुरि बंधन संघात शरीरतैं अविनाभावी है, तातैं शरीरहीमें अंतर्भूत किये, तातैं दश ए घटी । बहुरि वर्णादिक वीस हैं । तिनकूं संक्षेपकरि च्यारिही कहे, तातैं सोलह ए घटी । ऐसैं अठाईस घटनेतैं एकसो वीस रही । सो इहां वर्णआदि च्यारि पुण्यरूप भी हैं पापरूप भी हैं । तातैं दोयबार गिणतैं च्यारि बधी हैं । बहुरि इनहीको सत्ताकी अपेक्षा गिणिये तब वर्णादिक वीस दुबार गिणतैं एकसौ अठसठि प्रकृति होय । तामें पुण्यप्रकृति तौ अठसठि होय हैं । सो कैसें हैं? वेदनीय १, आयु ३, गोत्र १, नामकी तिरेसठि तहां गति २, जाति १, शरीर ५, बंधन ५, संघात ५, संस्थान १, संहनन १, अंगोपांग ३, वर्णादिक २०, आनुपूर्व्य २, विहायोगति, २, त्रस आदि १०, अगुरुलघु १, परघात १, उछ्वास १, आतप १, उद्योत १, निर्माण १, तीर्थंकर १, ऐसैं । बहुरि पापप्रकृति सौ । तहां घातिकर्मकी तौ ४७, वेदनीय १, आयु १, गोत्र १, नामकर्मकी ५०, तहां गति २, जाति ४, संस्थान ५, संहनन ५, वर्णादिक २०, आनुपूर्व्य २, त्रसस्थावरआदि १०, उपघात १, प्रशस्तविहायोगति १, ऐसैं जानना । ऐसैं बंधपदार्थ कह्या, सो यह अवधिमनःपर्ययकेवलज्ञानीनिकैं तौ प्रत्यक्षप्रमाणके गम्य है, ते प्रत्यक्ष जानै हैं । बहुरि अन्यके तिनके उपदेश आगमप्रमाणके गम्य है । तातैं भव्यजीवनिकूं तिनका उपदेश्या आगमतैं जानि इस कर्मबंधके विध्वंसका उपाय करना योग्य है ॥

॥ छप्पय ॥

बंध च्यारि परकार बांधि संसार भमें जिय,
मिथ्या अविरत अरु प्रमादहू कषाय योग लिय ।
दुःख अनेक परकार जनममरणादिक भुगतहि,
गिनत नांही सविकार ज्ञान परभावसु जुगतहि ।
जिनआगमके सरधानविन चारित सत्यारथ नहीं,
इम शुद्धातम अनुभवविगारि मुकति नाहि मुनि यों कही ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥ पुण्यपापमय है संसार । दोऊ करमबंध परकार ॥
ऐसैं पुण्य गहौ जिय सार । जो शिवमारगमें सहकार ॥ २ ॥

ऐसैं तत्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं
आठमां अध्याय पूर्ण भया ॥

इति श्री परमपूज्य धर्मसाम्राज्यनायक योगींद्रचूडामणि, सिद्धांतपारंगत, चारित्रचक्रवर्ती श्री १०८ आचार्य श्रीशांतिसागरजी महाराजके आदेशसे ज्ञानदानके लिए श्री. प. पू. चा. च. आ. श्री १०८ शांतिसागर दिगंबर जैन जीर्णोद्धारक संस्थाकी ओरसे छपी हुई श्री तत्त्वार्थसूत्रकी श्रीमत्पूज्यपादाचार्य विरचित सर्वार्थसिद्धीकी पंडित जयचंदजीकृता टीका-वचनिकाविषैं आठमा अध्याय संपूर्ण भया ॥ ८ ॥

ग्रंथप्रकाशन समिति, फलटण वीर सं. २४८१

—***—

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यवर्य श्री १०८ शांतिसागर महाराजके आदेशसे श्री दिगंबर जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्थाकी तरफसे ज्ञानदानके लिये छपी हुई

→ श्रीवीतरागाय नमः ←

वीर संवत् २४८१] ॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥ [ग्रथप्रकाशन समिति, फलटण

अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका वचनिका पंडित जयचंदजी कृता

दोहा— आस्रव रोकि विधानतैं, गहि संवर सुखरूप ।
पूर्वबंधकी निर्जरा, करी नमू जिनभूप ॥ १ ॥

ऐसैं मंगलके अर्थि जिनराजकूं नमस्कार करि नवमां अध्यायकी आदिविषैं सर्वार्थसिद्धि नाम टीकाकार कहै हैं, जो, बंधपदार्थ तौ कह्या अब याके अनंतर है नाम जाका ऐसा जो संवरनाम पदार्थ, ताका निर्देश करनेका अवसर है, यातैं तिसकी आदिमें यह सूत्र है—

॥ आस्रवनिरोधः संवरः ॥ १ ॥

याका अर्थ-- आस्रवका निरोध सो संवर है । तहां नवीन कर्मका ग्रहण करना, सो आस्रव है । सो तौ पहलें व्याख्यान किया । ताका निरोध, सो संवर है । सो दोयप्रकार है, भावसंवर द्रव्यसंवर ऐसैं । तहां संसारका कारण जो क्रिया, ताकी निवृत्ति कहिये न होना, सो भावसंवर है,। बहुरि तिस क्रियाके रोकनेतैं तिसके निमित्ततैं कर्मपुद्गलका ग्रहण होय तिसका विच्छेद भया ग्रहण होता रह गया सो द्रव्यसंवर है। सो विचारिये हैं। कौन गुणस्थानविषैं किस आश्रवका संवर भया? सो कहिये हैं । मिथ्यादर्शनके उदयके वशीभूत जो आत्मा ताकूं मिथ्यादृष्टि कहिये । इस गुणस्थानविषैं मिथ्यादर्शनकूं प्रधानकरि जो कर्म आश्रव होय था, सो तिस मिथ्यादर्शनके निरोध कहिये अभावकरि सासादन आदि

कहिये । याका भी अंतर्मूहूर्तका काल है । तहां ताकूं भोगिकै तौ मिथ्यादृष्टि होयकै फेरि सम्यक्त्वकूं प्राप्त होय है ॥

बहुरि अविरतसंयत चौथा गुणस्थान है । तहां औपशमिक तथा क्षायोपशमिक तथा क्षायिकसम्यक्त्व तौ पाईए अर चारित्रमोहकी प्रत्याख्यानावरणकषायके उदयतैं एकदेश संयमरूप भी परिणाम न होय सकै, तातैं अविरतसम्यग्दृष्टि ऐसा नाम है । बहुरि अप्रत्याख्यानावरणकषायके अभावतैं एकदेशविरति परिणाम होय, प्रत्याख्यानावरणके उदयतैं सकल-विरति न होय, तातैं विरताविरतनाम पावै ऐसा पांचवां गुणस्थान होय, याके धारककूं श्रावक कहिये ॥ बहुरि प्रत्या-ख्यानावरणकषायके उदयका भी अभाव होय अरु संज्वलननोकषायके तीव्रउदयतैं किंचित् प्रमादसहित सकलसंयम होय है, तातैं प्रमत्तसंयत ऐसा नामधारक छटा गुणस्थान होय है । बहुरि संज्वलननोकषायका हीन उदय होतैं प्रमादका अभाव होय तब अप्रमत्तसंयत सातमां गुणस्थान नाम पावै है ॥

बहुरि संज्वलननोकषायका भी जहां अव्यक्त उदय होय जाय तब उपशमश्रेणी तथा क्षपकश्रेणी नाम पावै है । सो श्रेणीके प्रारंभविषैं भी करणपरिणाम होय, जहां सातमां गुणस्थानवर्ती जब ध्यान करने लगे तब शुद्धोपयोगमें लीन होय, जब जिस जीवके श्रेणीका प्रारंभ होय सो सातिशय अप्रमत्त होय, अधःकरणपरिणाममें तिष्ठै, समयसमय अनंतगुणी विशुद्धताकरि वर्द्धमान होय, बहुरि विशुद्धता बधतैं बधतैं अपूर्वकरणपरिणाम होय, तब आठमां गुणस्थान नाम पावै । बहुरि अनिवृत्तिकरणपरिणाम होय तब नवमां अनिवृत्तिबादरसांपराय गुणस्थान नाम पावै । बहुरि कषाय घटतैं घटतैं सूक्ष्मरूप होय जाय, तब सूक्ष्मसांपराय दशमां गुणस्थान नाम पावै । बहुरि समस्तकषायनिका उपशम होय जाय, तब उपशांतमोह ग्यारहमां गुणस्थान नाम पावै । इहां यथाख्यातसंयम होय है । बहुरि समस्त मोहकर्मका सत्तामैंसूं नाश होय जाय तब क्षीणमोह नाम पावै । ऐसैं ये श्रेणीके गुणस्थान हैं । इनमें शुक्लध्यानकी प्रवृत्ति है ॥

बारमांकी आदितांई तौ पहला पाया प्रवर्तै है । बहुरि बारमां गुणस्थानकै अंत एकत्ववितर्कवीचार ध्यान होय है । ताके अनंतरही घातिकर्मका नाश करि केवलज्ञान उपजावै है । इन श्रेणीका गुणस्थाननिका काल अंतर्मुहूर्तका है । क्षपक श्रेणी चढनेवाला अंतर्मुहूर्तमें केवलज्ञान उपजावै है । उपशमश्रेणी चढनेवाला उलटा नीचा उतरि जाय है । बहुरि केवलज्ञान उपजै तब जेतैं योगनिकी प्रवृत्ति रहै तेतैं तौ सयोगकेवली नाम तेरह गुणस्थान है । याका काल उत्कृष्ट आठ वर्ष घाटि कोटिपूर्वका है । बहुरि जब योगनिकी प्रवृत्ति मिटै तब अयोगकेवली चौदहमां गुणस्थान नाम पावै है । याकी स्थिति पंच लघु अक्षरका उच्चारणमात्र काल है । एते कालमें अघातिकर्मकी सत्तामें प्रकृति रही थी, तिनका क्षयकरि

यथार्थमार्गतैं वाह्य प्रवर्तै ऐसै दोयप्रकार परिणाम जाके होय सो मिथ्यादृष्टि जीव है। सो इसके दोय भेद हैं। जो अनादिहीतैं जानैं सम्यक्त्व पाया नाहीं सो तौ अनादिमिथ्यादृष्टि है॥ बहुरि सम्यक्त्व पाये फिर मिथ्यात्वके उदयतैं मिथ्यादृष्टि होय सो सादिमिथ्यादृष्टि है। सो सम्यक्त्व पावनेका विधान ऐसैं है, जो, जब काललब्धि आवै तब मिथ्यात्वकर्मका तौ अनुभाग मंद उदयरूप होय अर वाह्य सर्वज्ञ वीतराग जिनेश्वरका यथार्थमार्गके उपदेशका निमित्त मिलै वीतरागकी मुद्रा निर्ग्रंथगुरुका दर्शन तथा जिनेंद्रके कल्याणक आदिकी महिमाका दर्शन श्रवण प्रभावनाअंग अतिशय-चमत्कारका देखना पूर्वभवका स्मरण होना इत्यादिक निमित्त मिलै तब यथार्थतत्वार्थविषैं रुचिरूप उत्साह ऐसा वधै, जो, आगे कहे हूवा नाहीं। ऐसैं उत्साहमें तीनि करणका आरंभ होय है। तिनके नाम अधःकरण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण ऐसैं। सो इनका आरंभ कैसैं जीवकै होय है सो कहिये है। शुभपरिणामनिके सन्मुख होय संज्ञीपंचेंद्रिय पर्याप्तक होय साकार उपयोगसहित होय अंतर्मुहूर्तपर्यंत समयसमय अनंतगुणी विशुद्धताकरि वर्द्धमान होय एकयोगका आलंबनसहित होय अतिमंदकषायरूप परिणया होय तीनि वेदमेंसूं एकवेदके परिणाम संक्लेशरहित होय विशुद्धताके बलतैं कर्मकी स्थितिकूं घटावता संता अशुभप्रकृतिनिके अनुभागबंधकूं हीन करता संता शुभप्रकृतिनिके अनुभागबंधकूं बधावता संता होय ताके करणनिका प्रारंभ होय है। इन तीनूंही करणनिका काल अंतर्मूहूर्तका जुदाजुदा जानूं। इनका विशेषवर्णन गोमटसारतैं जानना॥ तहां अनिवृत्तिकरणके अंतके समयकै लगताही अनादिमिथ्यादृष्टि तौ मिथ्यात्व अरु अनंतानुबंधि-चतुष्क इन पांच प्रकृतिनिका उपशमकरि प्रथमोपशमसम्यक्त्वकूं ग्रहण करै है। तहां सत्तामें तिष्ठता जो मिथ्यात्वका उदय ताका अनुभाग घटाय तीनि भाग करै है। केता एक द्रव्य तौ मिथ्यात्वरूपही रहै, अर केताएककूं सम्यङ्मिथ्या-त्वरूप करै, केता एककूं सम्यक्त्वप्रकृतिरूप करै, पीछे तहां अंतर्मूहूर्तकाल भोगिकरिकै तौ सम्क्त्वप्रकृतिका उदय आवनेतैं क्षायोपशमिकसम्यक्त्वी होयकै सम्यग्मिथ्यात्वके उदय आवनेतैं सम्यङ्मिथ्यादृष्टि होयकै पहलैं अनंतानुबंधीका उदय आवनेतैं सासादनसम्यग्दृष्टि होयकै मिथ्यात्वका उदय आवनेतैं मिथ्यादृष्टि होय, ऐसैं अनादिमिथ्यादृष्टिकी व्यवस्था है॥

बहुरि सादिमिथ्यादृष्टि होय सो भी ऐसैंही तीनूं करणनिका प्रारंभ करि सम्यक्त्वकूं परसै है। विशेष इतना, जो, याकै दर्शनमोहकी तीनि प्रकृतिका सत्व होय है। सो सात प्रकृतिका उपशम करि सम्यक्त्व पावै है। ऐसैं जाके अनंतानुवंधीका उदय मिथ्यात्वके पहलैं आवै सो सम्यक्त्वकी विराधनासहित भया। ए जघन्य एकसमय उत्कृष्ट छह आवलीपर्यंत बीचमें रहै, तेतैं सासादनगुणस्थान नाम पावै है। याके अनंतर मिथ्यात्वका अवश्य उदय आवै है, तब मिथ्यादृष्टि होय है। बहुरि सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिके उदयतैं सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान होय है। याका नाम मिश्र भी

अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपराय इन तीनि गुणस्थाननिमें तिष्ठै हैं तहां अपूर्वकरणके आदिविषैं संख्यातभागविषैं दोय प्रकृति निद्रानिद्रा प्रचला ए बंध है। ताके आगें संख्यातभागविषैं तीस पकृति बंधै हैं, तिनके नाम देवगति, पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियक आहारक तैजस कार्मण ए च्यारि शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियक आहारकशरीरांगोपांग, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उछ्वास प्रशस्तविहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थंकर ए तीस। बहुरि तिसही अपूर्वकरणके अंतके समयविषैं हास्य रति भय जुगुप्सा ए च्यारि प्रकृतिबंध हैं। सो ए तहां संबंधी तीव्रकषायके निमित्ततैं बंधै हैं। तातैं तिस तिस भावसंबंधी कषायके अभाव होतैं तिनका तिस भावतैं उपरि बंधका अभाव होय है। तहां संवर भया॥

बहुरि अनिवृत्तिबादरसांपरायके आदिसमयतैं लगाय संख्यातभागविषैं पुरुषवेद, क्रोध संज्वलन ए दोय बंध होय हैं। ताके उपरि बाकी रहे जे संख्यातभाग तिनविषैं मान माया ए दोय बंध है। बहुरि तिसहीके अंतके समयविषैं लोभ संज्वलन बंधै है ऐसे ए पांच प्रकृति मध्यमकषायके निमित्ततैं बंध होय है। सो तिस कषायके अभाव होतैं कहे तिस भागके उपरि तिनका संवर होय है। बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं सूक्ष्मलोभकषाय पाईये है, याकूं मंद भी कहिये, याके निमित्ततैं पांच ज्ञानावरण, च्यारि दर्शनावरण, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र, पंच अंतराय इन सोलह प्रकृतिका आश्रव होय है। सो तिस कषायका अभाव होतैं उपशांतकषायादिकविषैं तिनका बंध नाहीं होय हैं। बहुरि केवल योगहीके निमित्ततैं सातावेदनीयका आश्रव उपशान्तकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवलीकै होय है सो आगें योगके अभावतैं अयोगकेवलीकै तिसका भी बंध नाहीं हैं॥

इहां कोई पूछै है, गुणस्थाननिके क्रमकरि संवर कह्या, सो गुणस्थान कहा है? तहां कहिये, जो, इनका स्वरूप विशेषताकरि गोमटसारग्रंथमें लिख्या है, तहांतैं जानूं। कछु संक्षेप प्रयोजन इनका लिखिये है। ए गुणस्थान जीवके सामान्यपरिणाम हैं, जातैं इनका नाम अर्थ जो गुण कहिये जीवके गुण तिनके स्थान कहिये ठिकाणे सो गुणस्थान हैं, यह तौ सामान्यसंज्ञा। बहुरि विशेषसंज्ञा मोहकर्मके उदयआदिके विशेषतैं तथा योगतैं भई है। तहां मिथ्यादृष्टि ऐसा तौ अनादिमिथ्यात्व नामा कर्म इस जीवकें पाईये है ताके उदयतैं तत्वार्थनिका अश्रद्धानरूप परिणाम होय है। सो दोयप्रकार है, एक तौ नैसर्गिक है, तातैं तौ अनादिहीतैं अपना परका तथा हितअहितका यथार्थ स्वरूप भूलि रह्या है। जो पर्याय आवै है, ताहीकूं अपना स्वरूप मानि हिताहितकूं नाहीं जानि प्रवर्तै है। बहुरि दूजा परोपदेशतैं प्रवर्तै है, तातैं जैसा उपदेश दाता मिलै हितअहितका तथा आत्माका स्वरूप जैसा बतावै ताहीकूं सत्यार्थ जानि मिथ्यात्वके उदयतैं तथा अनंतानुबंधी कषायके उदयतैं तिसका पक्ष दृढ करि प्रवर्तै, जिनेश्वरकी आज्ञा जाननेवालेके उपदेशका श्रद्धानविना

अगिले गुणस्थाननिविषैं तिनका सवर होय है। ते प्रकृति कौन सो कहिये हैं। मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, नरकआयु, नरकगति, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय ए च्यारि जाति, हुंडकसंस्थान, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, नरकगत्यानुपूर्व्य, आतप, स्थावर, सूक्ष्म, साधारणशरीर, अपर्याप्त इन सोलह प्रकृतीका संवर भया। इनका आश्रव सासादनादिकविषैं नाहीं है ॥

बहुरि असंयम तीनि प्रकार है अनंतानुबंधीका उदयकृत, अप्रत्याख्यानावरणका उदयकृत, प्रत्याख्यानावरणका उदयकृत। सो इस असंमयके निमित्ततैं जिन प्रकृतिनिका आश्रव होय था, सो तिस असंयमके अभावतैं तिनका संवर होय है। सो कहिये हैं। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि, स्त्रीवेद, तिर्यंचआयु, तिर्यंचगति, च्यारि मध्यके संस्थान, च्यारि मध्यके संहनन, तिर्यंचगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, नीचगोत्र इन पचीस प्रकृतिनिका तौ अनंतानुबंधीकषायके उदयकृत असंयमकूं प्रधानकरि आश्रव होय था, एकेन्द्रियकूं आदि दे सासादनसम्यग्दृष्टीपर्यंत सर्वही जीव इनका बंध करै थे, सो तिस अनंतानुबंधी असंयमका अभाव होतैं सासादनतैं अगिले गुणस्थाननिविषैं तिनका संवर भया ॥

बहुरि अप्रत्याख्यानावरणके उदयकारि भया जो असंयम ताके निमित्ततैं अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, मनुष्यआयु, मनुष्यगति, औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग, वज्रवृषभनाराचसंहनन, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य इन दशप्रकृतिनिका आश्रव एकेन्द्रियतैं लगाय असंयतसम्यग्दृष्टीतांई जीव बंध करै थे, सो तिस अप्रत्याख्यानावरणकृत संयमके अभावतैं तिसतैं उपरिके देशसंयत आदि गुणस्थानविषैं तिनका संवर होय है। बहुरि सम्यग्मिथ्यात्व तीसरा गुणस्थानविषैं आयुका वंध नाहीं होय है। बहुरि प्रत्याख्यानावरणकषायके उदयकारि भया जो असंयम ताके होतैं प्रत्याख्यानावरण गुणस्थानवाले जीवनिताईं बंध करनेवाले थे सो तिस असंयमका अभाव भये तिनका संवर होय। अगिले प्रमत्तसंयतआदि गुणस्थाननिविषैं तिनका वंध नाहीं है। बहुरि प्रमादकारि सहित जीवकै असातावेदनीय अरति शोक अस्थिर अशुभ अयशःकीर्ति ए छह प्रमादके निमित्ततैं बंध होय थे, सो प्रमादका अभाव भये तिनका संवर होय है। अप्रमत्तआदि गुणस्थाननिमें तिनका बंध नाहीं होय है ॥

बहुरि देवायुका भी बंध प्रमत्तवाला करै है। अर अप्रमत्त भी ताके निकटवर्ती है, तातैं ताकै भी बंध हो है। आगें अपूर्वकरणआदिविषैं ताका भी बंध नाहीं हो है। बहुरि जिस कर्मका आश्रव कषाय होतैंही होय है, तिनका प्रमादादिकके अभावहीतैं अभाव नाहीं होय है। जातैं जे कषाय प्रमादादिभावकरि रहित तीव्र मध्य जघन्य भावकरि

शरीररूप गाडी ताहि समाधिरूप नगर पहुंचावना है। तातैं घृतादिका वांगकी ज्यौं आहार दे है। बहुरि उदर अग्निरूप दाहका रोग ताके बुझावनेकूं औषधीकी ज्यौं बुरी भलीका स्वाद न लेते देशकालसामर्थ्यकूं जाणि पवित्र आहार ले हैं। तामें उद्गम उत्पादन एषणा प्रमाण अंगार धूम आदि भेदसहित छियालीस दोष टलैं नवकोटि शुद्ध आहार करैं। छियालीस दोष वतीस अंतराय चौदह मल आदिका वर्णन आचार वृत्तिग्रंथके पिंडशुद्धि अधिकारमें है, तहांतैं जानना। ऐसा एषणासमितिका विशेष है। बहुरि आदाननिक्षेपण उत्सर्ग समिति पूर्वे कहीही है॥

इहां कोई कहै, यह समिति तौ वचनकायकी गुप्ति है। ताकूं कहिये, ऐसा नाहीं। गुप्तिविषैं तौ कालकी मर्यादा करि सर्वक्रियाकी निवृत्ति करै है। बहुरि समितिविषैं कल्याणरूप कार्यनिविषैं प्रवृत्ति होय है। बहुरि इहां कोई कहै, मुनि पात्रविना हस्तविषैं ले आहार करै हैं तहां आहार गिरै पडै तामें जीवहिंसा दीखे है, तहां एषणासमितिका अभावतैं संवरका भी अभाव आवे है। ताका समाधान, जो, पात्र राखैं तौ परिग्रहका दोष आवै है। तिसकी रक्षा करनी पडै है। अर कपाल आदि लिये फिरै तौ यामें दीनता आवे है। भाजन गृहस्थतैं मांगै तौ मिलै न मिलै। बहुरि ताके प्रक्षालनके आदिके विधानमें बडा आरंभ है। बहुरि आपके पात्रमें भोजन लेय अन्य जायगा जाय खानेमें आशा लार लगी रहै है। बहुरि गृहस्थ अवस्थामें सुन्दर पात्रमें भोजन करै थे, अव जैसेंतैसेंमें खाय तव वडी दीनता आवै तातैं अपनें हस्तरूप पात्रविषैंही आहार करना, यामें कछू भी दोष नाहीं उपजै है, स्वाधीन है, वाधारहित है। निरावाध देशविषैं खडा रहकरि भोजनकूं परखिकरि निश्चल होय भोजन करते किंचिन्मात्रही दोष लागै नाहीं है, ऐसैं जानना॥

आगें तीसरा संवरका कारण जो धर्म, ताके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसँयमतपस्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्याणि धर्मः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— उत्तमक्षमा, उत्तममार्दव, उत्तमआर्जव, उत्तमसत्य, उत्तमशौच, उत्तमसंयम, उत्तमतप, उत्तमत्याग, उत्तम-आकिंचन्य, उत्तमब्रह्मचर्य ए दश धर्मके भेद हैं, तिनतैं संवर होय है, इहां शिष्य पूछै है, जो ए धर्म कौन अर्थि कहे हैं? ऐसैं पूछैं ताका प्रयोजन कहै हैं— पहलैं तौ गुप्ति कही सो तो सर्वप्रवृत्तिके रोकनेकूं कही। पीछैं तिस गुप्तिविषैं असमर्थ होय तव प्रवृत्ति करी चाहिये। तातैं भलेप्रकार यत्नतैं प्रवर्तनेके अर्थि समिति कही। बहुरि यह दशप्रकारका धर्मका कथन है, सो, जे मुनि समितिविषैं प्रवर्तैं तिनकूं प्रमादके परिहारके अर्थि कहा है, ऐसैं जानना। तहां शरीरकी स्थितिका कारण जो आहार ताके अर्थि परघर जाता जो मुनि तिनकूं दुष्टजन देखिकरि दुष्ट वचन कहैं, उपहास करैं,

॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— ईर्या भाषा एषणा आदाननिक्षेप उत्सर्ग ए पांच समिति हैं, ते संवरके कारण हैं। इहां सम्यक्पदकी अनुवृत्ति लेणी, यातैं सम्यक्ईर्या इत्यादि पांचनिकैं लगाय लेणी। तहां जान्या है जीवनिके स्थान योनि आदिक भेदकी विधि जानैं ऐसा जो मुनि ताके यत्नतैं चलना, यत्नतैं बोलना, यत्नतैं शुद्ध निर्दोष आहार लेणा, यत्नतैं उपकरणादि उठावना धरना, यत्नतैं मलमूत्रआदि क्षेपणा ऐसैं प्रवृत्तिरूप पांच समिति हैं, ते प्राणिनिकी पीडाका परिहारके अर्थि होय हैं। ऐसैं प्रवर्तैं अन्यप्राणीनिकूं बाधा नाहीं होय है। तथा सम्यक् प्रवर्तमानके असंयमपरिणामके निमित्ततैं कर्म आश्रवरूप होय थे तिसका अभाव होय है तब संवर होय है॥

इहां विशेषविधि लिखिये है। तहां मुनि जीवस्थाननिके जाननहारे हैं। ते जीवस्थान संक्षेपकरि चौदह हैं। एकेन्द्रिय सूक्ष्मबादरकरि दोयप्रकार बेन्द्रिय, त्रींद्रिय, चौइन्द्रिय ए विकलत्रय कहिये। बहुरि पंचइंद्रिय संज्ञी असंज्ञी दोय भेद ऐसैं सात भये। ते पर्याप्त अपर्याप्त भेदकरि चौदह होय हैं। बहुरि अठ्याणवै कहे हैं। बहुरि च्यारिसे छह कहे हैं। बहुरि इनके उपजनेके ठिकाणेकूं योनि कहिये। तथा कुलनिके भेद अनेक हैं। तिनकूं जानि मुनि तिनकी रक्षानिमित्त समितिरूप प्रवर्तें हैं। तहां गमन करैं तब सूर्यके उदयका प्रकाशविषैं नेत्रनितैं जूदा प्रमाण भूमिकूं नीकैं निहारि जिस मार्ग मनुष्यादि पहले गये होय, भूमि मर्दली गयी होय, तिस मार्गविषैं मंदमंद पगनिकूं धरते गमनासिवाय अन्यविषैं मन न चलावतें शरीरके अंगनिकूं संकोचरूप राखते गमन करैं हैं, तिनकें ईर्यासमिति होय है॥

बहुरि वचन कहैं सो हित मित असंदिग्ध कहै। तहां जामैं मोक्षपद पावनेका प्रधानफल होय, सो तौ हित कहिये। बहुरि अनर्थक बहुतप्रलाप जामैं नाही होय, सो मित कहिये। बहुरि जाके अक्षर स्पष्ट होय तथा व्यक्त होय सो असंदिग्ध कहिये। याका विस्तार मिथ्यावचन, ईर्षासहितवचन, परकूं अप्रिय वचन, परका मर्म भेदनेका वचन, जामैं सार थोडा होय ऐसा वचन, संदेहरूप वचन, जातैं परके भ्रम उपजै ऐसा वचन, कषायसहित वचन, परका परिहास सहित वचन, अयुक्त वचन, असभ्य वचन, गाली आदिक तथा कठोर वचन, अधर्मका वचन, देशकालयोग्य नाहीं ऐसा वचन, अतिस्तुतिवचन इत्यादि वचनके दोष हैं; तिनतैं रहित मुनि वचन बोलै हैं, ताकै भाषासमिति होय है॥

बहुरि आहारके उद्गम आदि दोष तिनका वर्जना सो एषणासमिति है। सो गुणरूप रत्ननिका ले चलनवाली जो

यातैं अभ्युदयका अंग है, सो निर्जराका अंग कैसैं होय ? ताका समाधान, जो, यह दोष इहां नाहीं है । एक कारणकरि अनेक कार्य होते देखिये हैं । जैसैं अग्नि एक है तौ यातैं वस्तूका पचना नामा कार्य भी होय है बहुरि वस्तूकूं भस्म करि देना नामा कार्य भी होय है । तैसैं तपतैं अभ्युदय भी होय है अर कर्मका भी नाश होय है । यामें कहा विरोध है ? इहां अन्य भी दृष्टान्त है, जैसैं किसानकै खेती बोहनेकी क्रियाका फल धान्य उपजाना सो प्रधान है । अर पराल घास चारा उपजना गौण फल है । तैसैं मुनिनिके तपक्रियाका फल कर्मका नाश होना तौ प्रधान है, अर देवेन्द्रादिकपद उपजावना गौण फल है । ऐसा जानना ॥ आगें संवरके कारणनिविषैं आदिमें कह्या जो गुप्ति ताका स्वरूपके जाननेके आर्थि सूत्र कहै हैं ॥

॥ सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— काय वचन मनकी क्रियारूप जो योग तिनका सम्यक् प्रकार रोकना वसि करना, सो गुप्ति है । तहां योगका स्वरूप तौ पहलें कह्या सोही जानना । कायवाङ्मनःकर्म योगः इस सूत्रविषैं कह्या सो तिस योगकी स्वेच्छाप्रवृत्तिका मेटना, सो निग्रह कहिये । बहुरि सम्यक्पद है सो विषयसुखकी अभिलाषाके आर्थि योगनिकी प्रवृत्तिका निग्रह करै तौ गुप्ति नाहीं, ऐसैं जनावनेके अर्थि है । यातैं ऐसा अर्थ भया, जो, सम्यक् विशेषणकरि विशिष्ट अर जामें अधिक संक्लेश न उपजै ऐसा जो कायआदियोगका निरोध ताके होतैं जो योगनिकी स्वेच्छा प्रवृत्तितैं कर्मका आश्रव होय था ताका संवर होय है ऐसा प्रगट निश्चय करना । सो यहु गुप्ति तीनिप्रकार है, कायगुप्ति, वचनगुप्ति, मनोगुप्ति ऐसैं । इहां विशेष, इहां सम्यक् विशेषणका तौ यह विशेष, जो, गुप्तिका सत्कार न चाहै, बहुरि लोकतैं पूजा न चाहै, यहू महामुनि वडे ध्यानी हैं ऐसी लोकविषैं प्रसिद्धता न चाहै, तथा इस लोक परलोक संबंधी विषयअभिलाप न करै ॥

बहुरि कायवचनमनकी स्वेच्छाप्रवृत्तिका विशेष ऐसा, जो, कायकरि भूमिविषैं चलना होय तब विना देख्या विनाप्रतिलेख्या चलै तब कर्मका आश्रव होय । बहुरि वस्तुका उठावणा धरणा होय सो बहुरि बैठना होय सोवना होय तिसके निमित्ततैं कर्मका आश्रव होय । बहुरि वचन जैसैं तैसैं बोलै, तथा मनविषैं रागद्वेष प्रवर्तैं, विषयनिकी वांछा प्रवर्तैं, ताके निमित्ततैं कर्म आश्रवै सो महामुनि गुप्तिरूप रहै तिनके ऐसे कर्मका आश्रव रुकै है, तातैं संवर होय है ॥

आगें जो मुनि गुप्तिरूप रहनेविषैं असमर्थ होय आहारविहार उपदेशादिक्रियाविषैं प्रवर्तैं, तिनके निर्दोषप्रवृत्ति जैसैं होय ताके प्रगट करनेकूं सूत्र कहैं हैं—

सिद्धगतिकूं प्राप्त होय, लोकके शिखिरविषैं जाय तिष्ठै हैं, ते सिद्ध कहावै हैं । अनंतकाल आत्मिक आनंदमें लीन रहै हैं । फेरि संसारमें जिनका आगमन नाहीं । ऐसैं गुणस्थाननिकी प्रवृत्ति जाननी । विशेप जान्या चाहै सो गोमटसारग्रंथतैं जानूं ॥

आगैं, यह संवर कह्या, ताका कारणके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥ २ ॥

याका अर्थ— कह्या जो संवर, सो गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परीषहजय चारित्र इन छह भावनिकरि होय है । तहां संसारके कारण जे प्रवृत्तिभाव तिनतैं आत्माकूं गोपै राखै तिनकी प्रवृत्तिरूप न होने दे, सो गुप्ति है । वहुरि प्राणीनिकी पीडाके परिहारके अर्थि भले प्रकार प्रवृत्ति करना, सो समिति है । वहुरि अपना इष्टस्थान जो सुखका स्थान तासैं धरै सो धर्म है । वहुरि शरीरआदिका स्वभावका वार वार चिंतवन करना, सो अनुप्रेक्षा है । वहुरि क्षुधाआदिकी वेदना उपजै ताकूं कर्मकी निर्जराकेअर्थि सहै सो परिषह है, तिनका जीतना सो परिपहजय है । वहुरि चारित्रशब्दका अर्थ आदिसूत्रमें कह्या है । ऐसैं ए गुप्तिआदिक हैं तिनके संवरणक्रियाका साधकतमपणातैं करणरूप संवर है, ऐसा अधिकार किया है । वहुरि स ऐसा शब्द है सो गुप्त्यादिक साक्षात् संवंध करनेके अर्थि है । तहां ऐसा नियम जनाया है, सो यह संवर गुप्तिआदिकरिही होय है, अन्य उपायकरि नाहीं होय है । ऐसैं कहनेकरि तीर्थनिविषैं स्नान करना, अतिथिका भेषमात्र दीक्षा लेना, देवताकूं आराधना, ताके अर्थि अपना मस्तक काटि चढावना इत्यादि प्रवृत्ति करै यहू संवर नाहीं होय है, ऐसा जनाया है । जातैं राग द्वेप मोहकरि वांधे जे कर्म, तिनका अन्यप्रकार निवृत्ति होनेका अभावही है ॥

आगें संवरका तथा निर्जराका कारण विशेपके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ तपसा निर्जरा च ॥ ३ ॥

याका अर्थ— तपकरि निर्जरा होय है, वहुरि चकारतैं संवर भी होय है, ऐसा जानना । तहां तप है सो धर्मके भेदनिमें गर्भित है, सो भी न्यारा कह्या है, सो संवर अर निर्जरा दोऊका कारण जनावनेके अर्थि कह्या है अथवा सवरप्रति प्रधानपणां जनावनेके अर्थि है । इहां तर्क, जो, तप तौ देवेन्द्रादिपदवीकी प्राप्तिका कारण मानिये है,

अवज्ञा करै, ताडन करै, शरीरके घातआदि करै ऐसैं क्रोध उपजनेके कारण निकट होतैं भी चित्तमें क्रोधरूप कलुपता न उपजै, सो क्षमा है। वहुरि उत्तमजाति कुल रूप विज्ञान ऐश्वर्य शास्त्रादिकका ज्ञान लाभ वीर्य एते गुण आपमें पाईये हैं, तिनका मद न होना, पैलैं कोई अपमान किया होय तहां अभिमान न करना, सो मार्दव है। वहुरि काय वचन मनके योगनिकी सरलता मायाचारसूं रहित सो आर्जव है। वहुरि लोभतैं आत्माका परिणाम मलिन रहै है ताका अभाव उत्कृष्टपणें होय, सो पवित्रता है, सोही शौच है॥

इहां कोई कहै, लोभकी उत्कृष्ट निवृत्ति तौ गुप्तिविषैं भी है, तामें शौच आय गया, जुदा क्यों कह्या? ताका समाधान, जो, गुप्तिविषैं तौ मनका चलनेका निषेध है। वहुरि तिस गुप्तिविषैं असमर्थ होय ताकै परके वस्तु लेनेका अभिप्रायका निषेध धर्मविषैं जानना। वहुरि कहै, जो, आकिंचन्यधर्मविषैं आय जायगा शौच माति कहौ। ताकूं कहिये, आकिंचन्यविषैं ममत्वका अभाव प्रधानकरि कह्या है। अपने शरीरविषैं भी संस्कार आदिका निषेध हैं। वहुरि शौचविषैं च्यारिप्रकारके लोभकी निवृत्ति कही है। तहां लोभ च्यारिप्रकार कहा? सो कहिये है, जीवनेका लोभ नीरोग रहनेका लोभ, इन्द्रिय वणी रहनेका लोभ, उपभोगवस्तुका लोभ ऐसैं। सो यह भी अपना अर परका ऐसैं च्यारिनिपारि दोय दोय प्रकार जानि लेना ऐसैं लोभका अभाव शौचमें जानना। वहुरि दिगंबर यति अर तिनके भक्त श्रावक आदि तिनविषैं समीचीन वचन वोलना सो सत्य है॥

इहां कोई कहै, यह तौ भाषासमितिही है। ताकूं कहिये, समितिविषैं तौ सर्वही लोकतैं वोलनेका कार्य होय। तव हित मित वचन कहै। जो औरप्रकार वचन बोलै तौ राग अनर्थदंड आदि दोष उपजै। वहुरि सत्यधर्मविषैं मुनिश्रावकनिहीतैं शास्त्रज्ञान सीखने आदिका कार्यनिमित्त वहुत भी परस्पर आलाप होय है। तामें दशप्रकार सत्य कहा है ताकी प्रवृत्ति होय है ऐसा भेद है। तिनके नाम जनपद, सम्मित, स्थापना, नाम, रूप, प्रतीत्य, व्यवहार, संभावना, द्रव्य, भाव ऐसैं हैं। इनका स्वरूप उदाहरणसहित गोमटसारतैं योगमार्गणामें जानना है। वहुरि समितिविषैं प्रवर्तते जे मुनि तिनकै समितिकी रक्षाके अर्थि प्राणीनिकी रक्षा अर इन्द्रियनिकी रागसहित विषयनिका परिहार, सो संयम है। ताका दोय भेद, अपहृतसंयम उपेक्षासंयम। तहां अपहृतसंयम उत्कृष्ट मध्यम जघन्य भेदकरि तीनिप्रकार। तहां प्रासुक वसातिका आहार आदिमात्र है बाह्यसाधन जिनकै वहुरि स्वाधीन है ज्ञानचारित्रकी प्रवृत्ति जिनकै तिनकै गमन आसन शयनादि क्रियाविषैं जीव आय प्राप्त होय तौ तातैं आप अन्यक्षेत्रमें टलि जाय तिन जीवनिकूं पीडा न दे, ताकै उत्कृष्ट अपहृत संयम है। वहुरि कोमल मयूरपिच्छिका आदि उपकरणतैं तिस जीवकूं टालै सरकाय दे, ताकै मध्यम अपहृतसंयम है।

आपके उपदेशतैं बणै नाहीं आरंभरहित तहां सोवै बैठै, सो शयनासनशुद्धि है ॥ बहुरि पृथ्वी आरंभ आदिकी जामें प्रेरणा नाहीं और कठोर निर्लज्ज आदि परकूं जातैं पीडा होय ऐसा नाहीं अर व्रत शील आदिका उपदेश आदिकी जामें प्रधानता होय अर हितरूप मर्यादसहित मीठा मान आदरकारि सहित संयमीनिके योग्य ऐसा वचन प्रवर्तै, सो वाक्यशुद्धि है । याके आश्रय सर्वसंपदा है ॥ ऐसैं संयमधर्म कह्या ॥

बहुरि कर्मके क्षयके अर्थि जो तप ले सो तप है । सो बारह प्रकार है सो आगें कहेंगे । बहुरि संयमीनिके योग्य ज्ञानआदिक देना सो त्याग है । बहुरि शरीरआदि परिग्रह विद्यमान रहै हैं तिनविषैं भी मेरा यऊ है ऐसा ममत्व-भावका अभिप्राय नाहीं होय, सो आकिंचन्य है । नाहीं है किंचन कहिये कछू भी जामें ताकूं अकिंचन कहिये, तिसका भाव अथवा कर्म होय सो आकिंचन्य ऐसा याका अर्थ है । बहुरि पूर्वें स्त्रीनिके भोग किये थे तिनकूं यादि न करना, स्त्रीनिकी कथाका श्रवण न करना, स्त्रीनिकी संगति जहां होय तहां शयन आसन न करना, ऐसैं ब्रह्मचर्य परिपूर्ण ठहरै है । अथवा अपनी इच्छातैं स्वच्छन्दप्रवृत्ति निवारणें गुरुके निकट रहना, सो ब्रह्मचर्य है । जातैं ब्रह्म कहिये गुरु तिनिविषै चरण कहिये तिनके अनुसार प्रवर्तना ऐसा भी ब्रह्मचर्यका अर्थ होय है ॥ ऐसैं दशप्रकार धर्म हैं ॥

इन भेदनिमें कोई गुप्तिसमितिविषैं गर्भित हैं तौ फेरि कहनेतैं पुनरुक्तपणा नाहीं होहै । जातैं इनकैं संवर धारनेकी सामर्थ्य है । तातैं धर्म ऐसी संज्ञा सार्थक है । अथवा गुप्त्यादिकी रक्षाके अर्थि ऐर्यापथिक, रात्रिक, दैवसिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सारिक, उत्तमस्थान, अकाल ऐसैं सात प्रकार अतिक्रमणका उपदेश है । तैसैंही उत्तमक्षमादिक दशप्रकार धर्म भी न्यारा उपदेश है । तातैं पुनरुक्त नाहीं है । बहुरि इनकै उत्तमविशेषण है सो या लोकसंबंधी इष्टप्रयोजनके निषेधकै अर्थि है । बहुरि इन धर्मनिके गुणकी बहुरि इनके प्रतिपक्षी जे क्रोधआदि दोष तिनकी भावनातैं ए धर्म संवरके कारण होय हैं । सोही कहिये है । तहां व्रतकी अर शीलकी रक्षा या लोक परलोकमें दुःखका न होना सर्व जीवविषैं सन्मान सत्कार आदरका होना इत्यादिक क्षमातैं गुण होय हैं । बहुरि धर्म अर्थ काम मोक्ष इनका नाश होना बहुरि प्राणनिका नाश होना ए क्रोधतैं दोष होय हैं ॥

तहां कोई अन्यपुरुष आपके क्रोध उपजनेका कारण मिलाया तहां ऐसा चिंतवन करना, जो, आपविषैं दोष होय तिनका पैला निषेध करै । तब आप ऐसा विचारै, जो, मोविषैं ए दोष हैं, यह, कहा झूठ कहै है? ऐसा विचारि क्षमा करनी । बहुरि आपविषैं दोष न होय तौ ऐसा विचारै, जो, ए कहे हैं ते दोष मोविषैं नाहीं, पैला विना समझा अज्ञानतैं

कहै है, अज्ञानीतैं कहां क्रोध ? ऐसैं विचारि क्षमा करनी। बहुरि अज्ञानीका बालककासा स्वभाव विचारनां। कोई अज्ञानी परोक्ष आपकूं दुर्वचन कहै तब विचारणा, जो, यह परोक्ष कहै है, अज्ञानी तौ प्रत्यक्ष भी कहै है, सो मोकूं प्रत्यक्ष न कह्या एही भला भई। बहुरि प्रत्यक्ष भी कहै तौ ऐसी विचारणी, जो, अज्ञानी तौ मेरा ताडन भी करै यह दुर्वचनही कहै है, सो ही भला है। बहुरि ताडै तौ ऐसा विचारणा, जो, अज्ञानी तौ प्राणघात भी करै है, यह ताडै ही है, प्राणघात न किया, सो भला भई। बहुरि प्राणघात भी करै तौ ऐसा विचारै, जो, अज्ञानी तौ धर्मविध्वंस भी करै, यह प्राणघात करै है, धर्मविध्वंस न किया, यह भला ही भई। बहुरि विचारै, जो, यह मेराही अपराध है, जो, पूर्वै कर्म बांधे थे तिनका यह दुर्वचनादिक सुनना फल है, पैला तौ निमित्तमात्र है, ऐसा चिंतवन करना॥

बहुरि जो मार्दवधर्मकरि युक्त होय तापरि गुरु अनुग्रह करै, साधु भला मानें, तब सम्यग्ज्ञान आदिका पात्र होय तातैं स्वर्गमोक्षफलकी प्राप्ति होय यह मार्दवके गुण हैं। अर मानकरि मैला मन होय तामें व्रत शील आदि गुण न तिष्ठै। साधुपुरुष ताकूं छोडि दे। यह मान सर्व आपदाका मूल है। यह मानकषायके दोष है। बहुरि मायाचाररहित सरल हृदय जाका होय ताविषैं तिष्ठै मायाचारवालेका गुण आश्रय न करै निंद्यगति पावै। ऐसे आर्जवके गुण हैं, मायाके दोष है॥ बहुरि शौचधर्मयुक्त पुरुषका सर्वही सन्मान करै। सर्व विश्वास करै। सर्वगुण जामें तिष्ठै। लोभीके हृदयविषैं गुण अवकाश न पावै। परलोकमें तथा इसलोकमें बडी आपदा पावै। ऐसैं शौचके गुण लोभके दोष हैं॥

बहुरि सत्यवचन कहनेवालेविषैं सर्व गुण तिष्ठै सर्व संपदा तिष्ठै झूठ बोलै ताकी बंधुजन भी अवज्ञा करै। मित्र भी ताकूं छोडि दें। जीभछेदन सर्वस्वहरण आदि आपदा पावै। ए सत्यके गुण असत्यके दोष हैं॥

बहुरि संयम आत्माका हित है। जाकै संयम होय, सो लोककरि पूज्य होय परलोककी कहा कहणी ? असंयमी प्राणीनिके घात विषयनिके रागकरि अशुभकर्म बांधै। ऐसैं संयमके गुण असंयमके दोष हैं॥ बहुरि तप है सो सर्वप्रयोजनकी सिद्धि करनहारा है। तपहीतैं ऋद्धि उपजै है। तपस्वीनिके रहनेके क्षेत्र भी तीर्थ होय हैं। जाकै तप नाहीं सो तृणतैं भी छोटा है। जाकूं सर्वगुण छोडि दे है। तपविना संसारतैं भी नाहीं छूटै है। ऐसैं तपके गुण तपरहितविषैं दोष हैं॥ परिग्रहका त्याग दान है। सो पुरुषका हित है। परिग्रहका त्यागवाला सदा निर्वेद रहै है। मन जाका उज्वल रहै है। पुण्यका निधान है। परिग्रहकी आशा है सो बलवान है, सर्वदोष उपजनेकी खानि है, जातैं तृप्ति नाहीं होय है। जैसैं समुद्र जलतैं तृप्त नाहीं होय, तैसैं तृप्त नाहीं। इस आशारूपी खाडाकूं कौन भरि सकै ? जामें सर्व वस्तु क्षेपिये तौ रीतीही रहै। ऐसैं त्यागके गुण तृष्णाके दोष हैं॥ बहुरि जाकै शरीर आदिके विषैं ममत्व नाहीं होय सो परमसुखकूं पावै है।

जाकै ममत्व होय सो सदा शरीरसंबंधी दुःखकूं भोगवै है। ऐसैं आकिंचन्यके गुण ममत्वकै दोष हैं ॥ बहुरि ब्रह्मचर्य पालै ताकै हिंसादिदोष न लागै हैं। सर्व गुणसंपदा जामें वसै है। बहुरि जो स्त्री अभिलाषी है ताहि सर्व आपदा आय लागें हैं। ऐसैं ब्रह्मचर्यके गुण हैं अब्रह्मके दोष हैं ॥

ऐसैं उत्तम क्षमादिकके गुण अर तिनके प्रतिपक्षी क्रोधादिकके दोषका चिंतवन किये क्रोध आदिका अभाव होतैं तिनके निमित्ततैं कर्मका आश्रव होय था, ताकी निवृत्ति होतैं बडा संवर होय है। यह धर्म अविरतसम्यग्दृष्टि आदिकैं जैसैं क्रोधादिककी निवृत्ति होय, तैसैं यथासंभव होय है। अर मुनिनिके प्रधानपणै हैं ॥ आगें शिष्य कहै है, जो क्रोधआदिका न उपजना क्षमादिकका आलंबनतैं होय है ऐसा कह्या, सो यह आत्मा क्षमादिककूं कैसैं अवलंबन करै? जातैं क्रोधादिक न उपजै। ऐसैं पूछैं, कहै है, जो, जैसैं लोहका पिंड तपाया हूवा अग्नितैं तन्मय होय है, तैसैं क्षमादिकतैं तन्मय होय जाय, तब क्रोध आदि न उपजै। यामें जो आत्महितका वांछक है सो बारह अनुप्रेक्षाका वार वार चिंतवन करै ॥

॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्म-स्वाख्यातत्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ, धर्मस्वाख्यातत्व इन बारहनिका वारंवार चिंतवन करना, सो अनुप्रेक्षा है। तहां उपात्त कहिये लगे हुए अर अनुपात्त कहिये बाह्य जे द्रव्य तिनके संयोगतैं वियोग होना, सो अनित्यपणा है। तहां आत्मा रागादिरूप परिणामकरि कर्मनोकर्मभावकरि ग्रहे जे पुद्गलद्रव्य, ते तौ उपात्त कहिये। अर जे परमाणुआदि बाह्यद्रव्य हैं, ते अनुपात्त हैं। तिन सर्वनिके द्रव्यस्वरूप तौ नित्यपणां है। बहुरि पर्यायस्वरूपकरि संयोगवियोगरूप है। तातैं अनित्यपणा है। तातैं यह शरीर इंद्रियनिकै विषयरूप उपभोग परिभोग द्रव्य हैं ते समुदायरूप भये जलके बुदबुदेकी ज्यौं अनवस्थितस्वभाव हैं। गर्भकूं आदि लेकरि जे अवस्थाके विशेष तिनविषैं सदा संयोग वियोग जिनमें पाईये हैं। इनविषैं अज्ञानी जीव मोहके उदयके वशतैं नित्यपणा माने है। संसारविषैं कछु भी ध्रुव नाहीं है। आत्माका ज्ञानदर्शनरूप उपयोग स्वभाव है, सोही ध्रुव है। ऐसैं चिंतवन करना, सो अनित्यानुप्रेक्षा हैं। याप्रकार याके चिंतवन करनेवाले भव्यजीवकै शरीरादिकविषैं प्रीतिका अभावतैं जैसैं भोगकरि छोडे भोजन गंधमाला आदिक तिनकी ज्यौं वियोगकालविषैं भी शोक आदि न उपजै है ॥

या संसारविषैं जन्म जरा मरण व्याधि मृत्यु आदि कष्ट आपदासहित भ्रमता जो यह जीव ताके कोई भी शरण

नाहीं है । जैसें मृगका वच्चाकूं एकांत उद्यानविषैं भूंखा मांसका इच्छक वलवान् वघेराने पकड्या ताकूं कछू भी शरण नाहीं; तैसें । वहुरि यह शरीर है ताकूं निकें पोपिये है तौ भोजन करतेतांई सहाई है, कष्ट आये कछू भी सहाई नाहीं है । वहुरि वहुत यत्नकरि संचय किये जे धन ते भी भवांतरमें लार न जाय हैं । वहुरि जिनतें सुख दुःख वांटिकरि भोगिये ऐसै मित्र हैं ते भी मरणकालविषैं रक्षा नाहीं करै हैं । वहुरि रोगकरि व्याप्त होय तब कटुंवके भले होय ते भी प्रतिपाल नाहीं करि सकै हैं । जो भलेप्रकार धर्मका आचरण किया होय तौ यह धर्म अविनाशी है सो संसारके कष्ट-रूपी समुद्रविषैं तरणेका उपाय है । यह प्राणी कालकरि ग्रहण किया होय तब इंद्र आदिक भी शरण न होय हैं । तातैं कष्टविषैं धर्म ही शरण है, यह ही धनं है । कैसा है ? अविनाशी है । और कछु भी शरण नाहीं है । ऐसैं चिंतवन करना सो अशरणानुप्रेक्षा है । याकूं ऐसें चिंतवनेमें सदा अशरण हूं ऐसैं संसारतें विरक्त होनेतें संसारसंबंधी वस्तु-निविषैं ममत्वका अभाव होय है । भगवान अरहंत सर्वज्ञप्रणीत मार्गविषैंही यत्न होय है ॥

कर्मके उदयके वशतैं आत्माके भवांतरकी प्राप्ति सो संसार है । सो पहलै पांच परिवर्तनरूप व्याख्यान किया ही था । तिसविषैं अनेक योनि कुलकोटि लाखनिके वहुत संकट पाईये हैं । ऐसैं संसारविषैं भ्रमण करता तौ यहू जीव कर्मरूप यंत्रका प्रेर्‍या पिता होयकरि भाई होय है, तथा पुत्र होय है, तथा पिता होय है, माता होयकरि वहिन होय है, तथा स्त्री होय है, तथा पुत्री होय जाय है, तथा स्वामी होयकरि चाकर होय जाय है, दास होयकरि स्वामी होय जाय है । जैसैं नट अनेक स्वांग धारि नाचै है, तैसैं अनेक पर्याय धारि भ्रमै है । वहुरि वहुत कहा कहै ? आपही आपके पुत्र होय जाय है । इत्यादिक संसारका स्वभाव चिंतवन करना, सो संसारानुप्रेक्षा है । ऐसैं याकूं चिंतवन करते पुरुपकें संसारके दुःखके भयतैं उद्वेग होयकरि वैराग्यभाव होय है । तब संसारके नाश करनेकूं यत्न करै है । ऐसें संसारानुप्रेक्षा है ॥ इस संसारभावनामें ऐसा विशेप जाननां, आत्माकी च्यारि अवस्था हैं, संसार, असंसार, नोसंसार, तात्रितयव्यपेत ऐसैं । तहां च्यारिगतिविषैं अनेकयोनिमें भ्रमण करना, सो तौ संसार कहिये । वहुरि च्यारि गतितैं रहित होय फेरि न आवना मुक्त होना, सो असंसार है । तहां शिवपदविषैं परमआनंद अमृतरूपविषैं लीन है । वहुरि सयोग-केवली नोसंसार कहिये, जातैं चतुर्गतिभ्रमणका तौ अभाव भया अर मुक्त भये नाहीं, प्रदेशनिका चलना पाईये है, तातैं ईपत्संसार है, ताकूं नोसंसार कहिये । वहुरि अयोगकेवली चऊदमां गुणस्थानवालेकैं तत्रितयव्यपेत है । जातैं चतुर्गतिका भ्रमण नाहीं अर मुक्त भये नाहीं, तातैं असंसार भी नाहीं अर प्रदेशनिका चलना नाहीं, तातैं नोसंसार भी नाहीं, तातैं तीनहू अवस्थातैं जुदीही अवस्था है, ताकूं तत्रितयव्यपेत ऐसा नाम कह्या । सो यह संसार अभव्यकी अपेक्षा तथा

जाकै ममत्व होय सो सदा शरीरसंबंधी दुःखकूं भोगवै है। ऐसैं आकिंचन्यके गुण ममत्वकै दोष हैं॥ बहुरि ब्रह्मचर्य पालै ताकै हिंसादिदोष न लागै हैं। सर्व गुणसंपदा जामें वसै है। बहुरि जो स्त्री अभिलाषी है ताहि सर्व आपदा आय लागें हैं। ऐसैं ब्रह्मचर्यके गुण हैं अब्रह्मके दोष हैं॥

ऐसैं उत्तम क्षमादिकके गुण अर तिनके प्रतिपक्षी क्रोधादिकके दोषका चिंतवन किये क्रोध आदिका अभाव होतैं तिनके निमित्ततैं कर्मका आश्रव होय था, ताकी निवृत्ति होतैं बडा संवर होय है। यह धर्म अविरतसम्यग्दृष्टि आदिकें जैसैं क्रोधादिककी निवृत्ति होय, तैसैं यथासंभव होय है। अर मुनिनिके प्रधानपणै हैं॥ आगें शिष्य कहै है, जो क्रोधआदिका न उपजना क्षमादिकका आलंबनतैं होय है ऐसा कह्या, सो यह आत्मा क्षमादिककूं कैसैं अवलंवन करै? जातैं क्रोधादिक न उपजै। ऐसैं पूछैं, कहै है, जो, जैसैं लोहका पिंड तपाया हूवा अग्नितैं तन्मय होय है, तैसैं क्षमादिकतैं तन्मय होय जाय, तब क्रोध आदि न उपजै। यामें जो आत्महितका वांछक है सो बारह अनुप्रेक्षाका बार बार चिंतवन करै॥

॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वाशुच्यास्त्रवसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्म-स्वाख्यातत्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ, धर्मस्वाख्यातत्व इन बारहनिका वारंवार चिंतवन करना, सो अनुप्रेक्षा है। तहां उपात्त कहिये लगे हुए अर अनुपात्त कहिये बाह्य जे द्रव्य तिनके संयोगतैं वियोग होना, सो अनित्यपणा है। तहां आत्मा रागादिरूप परिणामकरि कर्मनोकर्मभावकरि ग्रहे जे पुद्गलद्रव्य, ते तौ उपात्त कहिये। अर जे परमाणुआदि बाह्यद्रव्य हैं, ते अनुपात्त हैं। तिन सर्वनिके द्रव्यस्वरूप तौ नित्यपणां है। बहुरि पर्यायस्वरूपकरि संयोगवियोगरूप है। तातैं अनित्यपणा है। तातैं यह शरीर इंद्रियनिकै विषयरूप उपभोग परिभोग द्रव्य हैं ते समुदायरूप भये जलके बुदबुदेकी ज्यौं अनवस्थितस्वभाव हैं। गर्भकूं आदि लेकरि जे अवस्थाके विशेष तिनविषैं सदा संयोग वियोग जिनमें पाईये हैं। इनविषैं अज्ञानी जीव मोहके उदयके वशतैं नित्यपणा माने है। संसारविषैं कछु भी ध्रुव नाहीं है। आत्माका ज्ञानदर्शनरूप उपयोग स्वभाव है, सोही ध्रुव है। ऐसैं चिंतवन करना, सो अनित्यानुप्रेक्षा हैं। याप्रकार याके चिंतवन करनेवाले भव्यजीवकै शरीरादिकविषैं प्रीतिका अभावतैं जैसैं भोगकरि छोडे भोजन गंधमाला आदिक तिनकी ज्यौं वियोगकालविषैं भी शोक आदि न उपजै है॥

या संसारविषैं जन्म जरा मरण व्याधि मृत्यु आदि कष्ट आपदासहित भ्रमता जो यह जीव ताके कोई भी शरण

नाहीं है । जैसैं मृगका बच्चाकूं एकांत उद्यानविषैं भूंखा मांसका इच्छक बलवान् वघेराने पकड्या ताकूं कछू भी शरण नाहीं; तैसें । बहुरि यह शरीर है ताकूं निकें पोषिये है तौ भोजन करतेतांई सहाई है, कष्ट आये कछू भी सहाई नाहीं है । बहुरि बहुत यत्नकरि संचय किये जे धन ते भी भवांतरमें लार न जाय हैं । बहुरि जिनतैं सुख दुःख बांटिकरि भोगिये ऐसै मित्र हैं ते भी मरणकालविषैं रक्षा नाहीं करै हैं । बहुरि रोगकरि व्याप्त होय तब कटुंबके भले होय ते भी प्रतिपाल नाहीं करि सकै हैं । जो भलेप्रकार धर्मका आचरण किया होय तौ यह धर्म अविनाशी है सो संसारके कष्ट-रूपी समुद्रविषैं तरणेका उपाय है । यह प्राणी कालकरि ग्रहण किया होय तब इंद्र आदिक भी शरण न होय हैं । तातैं कष्टविषैं धर्म ही शरण है, यह ही धनं है । कैसा है? अविनाशी है । और कछु भी शरण नाहीं है । ऐसैं चिंतवन करना सो अशरणानुप्रेक्षा है । याकूं ऐसैं चिंतवनेमें सदा अशरण हूं ऐसैं संसारतें विरक्त होनेतें संसारसंबंधी वस्तु-निविषैं ममत्वका अभाव होय है । भगवान अरहंत सर्वज्ञप्रणीत मार्गविषैंही यत्न होय है ॥

कर्मके उदयके वशतैं आत्माकै भवांतरकी प्राप्ति सो संसार है । सो पहलै पांच परिवर्तनरूप व्याख्यान किया ही था । तिसविषैं अनेक योनि कुलकोटि लाखनिके बहुत संकट पाईये हैं । ऐसैं संसारविषैं भ्रमण करता तौ यहू जीव कर्मरूप यंत्रका प्रेन्या पिता होयकरि भाई होय है, तथा पुत्र होय है, तथा पिता होय है, माता होयकरि बहिन होय है, तथा स्त्री होय है, तथा पुत्री होय जाय है, तथा स्वामी होयकरि चाकर होय जाय है, दास होयकरि स्वामी होय जाय है । जैसैं नट अनेक स्वांग धारि नाचै है, तैसैं अनेक पर्याय धारि भ्रमै है । बहुरि बहुत कहा कहै? आपही आपके पुत्र होय जाय है । इत्यादिक संसारका स्वभाव चिंतवन करना, सो संसारानुप्रेक्षा है । ऐसैं याकूं चिंतवन करते पुरुषकें संसारके दुःखके भयतैं उद्वेग होयकरि वैराग्यभाव होय है । तब संसारके नाश करनेकूं यत्न करै है । ऐसैं संसारानुप्रेक्षा है ॥ इस संसारभावनामें ऐसा विशेष जाननां, आत्माकी च्यारि अवस्था हैं, संसार, असंसार, नोसंसार, तात्रितयव्यपेत ऐसैं । तहां च्यारिगतिविषैं अनेकयोनिमें भ्रमण करना, सो तौ संसार कहिये । बहुरि च्यारि गतितैं रहित होय फेरि न आवना मुक्त होना, सो असंसार है । तहां शिवपदविषैं परमआनंद अमृतरूपविषैं लीन है । बहुरि सयोग-केवली नोसंसार कहिये, जातैं चतुर्गतिभ्रमणका तौ अभाव भया अर मुक्त भये नाहीं, प्रदेशनिका चलना पाईये है, तातैं ईषत्संसार है, ताकूं नोसंसार कहिये । बहुरि अयोगकेवली चऊदमां गुणस्थानवालेकैं तत्रितयव्यपेत है । जातैं चतुर्गतिका भ्रमण नाहीं अर मुक्त भये नाहीं, तातैं असंसार भी नाहीं अर प्रदेशनिका चलना नाहीं, तातैं नोसंसार भी नाहीं, तातैं तीनहू अवस्थातैं जुदीही अवस्था है, ताकूं तत्रितयव्यपेत ऐसा नाम कह्या । सो यह संसार अभव्यकी अपेक्षा तथा

भव्यसामान्यकी अपेक्षा तौ अनादिनिधन है । बहुरि भव्यविशेषकी अपेक्षाकरि सादि सनिधन है । बहुरि नो संसार है सो सादि निधन है । बहुरि असंसार सादि अनिधन है । बहुरि तात्रितयव्यपेत अयोगकेवली अंतर्मुहूर्तकाल है ॥

बहुरि पंचपरावर्तनरूप संसारका व्याख्यान तौ पहलै कियाही है, ताका संक्षेप ऐसा है, जो, द्रव्यनिमित्त संसार तौ च्यारिप्रकार है, कर्म नोकर्म वस्तु विपय, इनके आश्रयतैं च्यारि भेद होय हैं । बहुरि क्षेत्रनिमित्तके दोय प्रकार हैं, स्वक्षेत्र परक्षेत्र । तहां आत्मा लोकाकाशतुल्य असंख्यातप्रदेशी है, सो कर्मके वशतैं संकोचविस्ताररूप हीनाधिक अवगाहनारूप परिणमैं, सो स्वक्षेत्रसंसार है । बहुरि जन्मयोनिके भेदकरि लोकमें उपजै लोककूं स्पर्शै सो परक्षेत्रसंसार है । बहुरि काल निश्चयव्यवहारकरि दोयप्रकार है । तहां निश्चयकालकरि वर्ताया जो क्रियारूप तथा उत्पादव्ययध्रौव्यरूप परिणाम सो तौ निश्चयकाल निमित्तसंसार है । बहुरि अतीत अनागत वर्तमानरूप भ्रमण, सो व्यवहारकाल निमित्तसंसार है॥

बहुरि भवनिमित्तके वत्तीस भेद हैं । तहां पृथ्वी अप् तेज वायु कयिकके भव सूक्ष्म वादर पर्याप्त अपर्याप्तककरि सोलह हैं । प्रत्येकवनस्पति पर्याप्त अपर्याप्तककरि दोय हैं । साधारणवनस्पति सूक्ष्म वादर पर्याप्त अपर्याप्तकरि च्यारि हैं । बहुरि वेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चतुरिन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्तकरि छह । बहुरि पंचेन्द्रिय संज्ञी असंज्ञी पर्याप्त अपर्याप्तककरि च्यारि ऐसैं वत्तीस भये । बहुरि भावनिमित्तक संसार दोयप्रकार है, स्वभाव परभाव तहां मिथ्यादर्शनादिक अपने भाव सो स्वभाव है । बहुरि ज्ञानावरणआदि कर्मका रस, सो परभाव है ऐसा संक्षेप जानना ॥

जन्म जरा मरणकी आवृत्तिके महादुःखके भोगनेकूं मैं एकही हूं, मेरै कोई मेरा नाहीं, तथा मेरै कोई पर नाहीं, मैं एकही जन्मूं हूं, एकही मरूं हूं, मेरे कोई स्वजन नाहीं, तथा मेरे कोई परिजन नाहीं, जो मेरा व्याधी जरा मरण आदिकूं मेटै । वंधु मित्र हैं ते मेरे मरण पीछे मसाणतांई जाय हैं । आगें जाय नाहीं । मेरै धर्मही सहाय है, सो सदा अविनाशी है । ऐसैं चिंतवन करना सो एकत्वानुप्रेक्षा है ॥ एसैं याकूं भावनेवाला पुरुषकै स्वजनके विषैं तौ राग नाहीं उपजै है । परजनके विपैं द्वेप नाहीं उपजै है । तव निःसंगताकूं प्राप्त भया मोक्षहीके अर्थि यत्न करै है ॥

शरीरआदिका अन्यपणाका चिंतवन, सो अन्यत्वानुप्रेक्षा है । सोही कहिये हैं । बंधक अपेक्षा शरीर आत्माकै एक पणां है । तौ उपलक्षणके भेदतैं भेद है । तातैं मैं शरीरतैं अन्य हूं । शरीर अन्य है । बहुरि शरीर तौ इन्द्रिय गोचर है, मूर्तिक कहै । मैं अतीन्द्रिय हूं, अमूर्तिक हूं । बहुरि शरीर तौ अज्ञानी जड है । मैं ज्ञानरूप चेतन हूं । बहुरि शरीर तौ अनित्य है । मैं नित्य हूं । बहुरि शरीर तौ आदि अंतसहित है । मैं अनादि अनंत हूं । मेरे शरीर तौ या संसारमें भ्रमतें लाख निवीते अतीत भये । मैं अनादितैं था सोही हूं । शरीरनितैं न्याराही हूं । ऐसै शरीरतैंही

मेरे अन्यपणा है, तौ बाह्यपरिग्रहनिकी कहा कथा? ऐसें चिंतवन करते या आत्माके मनविषैं समाधान होय है। शरीर-आदिविषैं वांछा नाही उपजै है तातैं यथार्थज्ञानभावनापूर्वक वैराग्य बधतैं संतैं अंतरहित जो मोक्षका सुख, ताकी प्राप्ति होय है। ऐसैं अन्यत्वानुप्रेक्षा है ॥

बहुरि यह शरीर है सो अत्यंत अशुचि दुर्गंध शुक्रशोणितकी योनि है,। अशुचिहीकरि बध्या है, विष्ठाका स्थानकी ज्यौं अपवित्र है, उपरितैं चाममात्रकरि अनादित है—ढक्या है, अति दुर्गंध रसकरि झुरते जे नीझर तिनका बिल है, याके आश्रय अन्यवस्तु होय ताकूं भी अंगारेकी ज्यौं शीघ्रही तत्काल आपसारिखा अपवित्र करै है, स्नानसुगंधका लेपन धूपका वास सुगंधमाला आदिकरि भी याका अशुचिपणां दूरि न होय है। बहुरि याकूं सम्यग्दर्शनआदिकरि भाईये तौ जीवकै अत्यंत शुद्धता प्रगट करै है। ऐसैं याका यथार्थस्वरूपका विचारना सो अशुचित्वानुप्रेक्षा है। याकूं ऐसैं विचारता पुरुषकै शरीरतैं वैराग्य उपजै है। तब वैरागी हूवा संता संसारसमुद्र तिरिवेकूं चित्त समाधानरूप करै है॥ याका विस्तार ऐसा, जो, अशुचिपणा दोय प्रकार है, लौकिक अलौकिक। तहां आत्मा कर्ममलकलंककूं धोयकरि अपने शुद्धस्वरूपविषैं तिष्ठै सो तौ अलौकिकशुचिपणा है। याके साधन सम्यग्दर्शनआदिक हैं। अथवा ए जिनमें पाईये ऐसे महामुनि हैं। अर तिन मुनिनिकरि आश्रित जे निर्वाणक्षेत्र आदिक तीर्थ हैं ते ए शुद्धि आत्माकी प्राप्तिके उपाय हैं। तातैं तिनकी भी नाम-शुद्धि कहिये। बहुरि लौकिक शुचिपणा लोक आठप्रकार मानें हैं। काल अग्नि पवन भस्म मृत्तिका गोमय जल ज्ञान। जातैं इनके निमित्ततैं ग्लानि मिटै है। सो ए आठहि प्रकार या शरीरकूं पवित्र शुचि करनेकूं समर्थ नाहीं। जातैं यह शरीर अत्यंत अशुचि है, याकी उत्पत्ति जहां होय सो भी अशुचि, यह उपजा सो भी अशुचि। देखो! कवलाहार मुखमें लेतेही श्लेष्मका ठिकाणा पायकरि तौ तत्काल श्लेष्मतैं मिली द्रवै है। ता पीछैं पित्तके ठिकाणैं जाय पचै तब अशुचिही होय है। पीछैं पचिकरि वातके ठिकाणैं जाय वातकरि भेदरूप किया हूवा खलरस भाव परिणवै है। इन सर्वनिका भाजन भिष्ठाका ठिकाणाकी ज्यौं है। खलभाव तौ मलमूत्रआदि विकाररूप होय है। अर रसभाव रुधिर मांस मेद मज्जा शुक्ररूप होय है। याका पवित्र करनेका उपाय कछू भी नाहीं है॥

आश्रव संवर निर्जरा पहलें कहे ही थे। ते इहां भी कहै हैं। सो इनतैं उपजै गुण तिनके दोष चिंतवनके अर्थि कहै हैं। सोही कहिये है। ए आश्रव हैं ते इस लोक अर परलोकविषैं नाश अर दुर्गतिके कारण हैं। महानदीके प्रवाहके वेगकी ज्यौं महातीखण हैं। ते इंद्रिय कषाय अव्रत आदिक हैं। तहां प्रथम तौ इन्द्रिय स्पर्शन आदिक हैं। ते जीवनिकूं कष्टरूप समुद्रमें पटकै हैं। देखो! स्पर्शन इन्द्रियके वशीभूत भया वनका हस्ती बहुत बलवान है, तौ

जिनेन्द्रका उपदेश्या आदि अहिंसालक्षण है, सत्यकूं अधिकारकरि प्रवर्तै हैं, विनय जाका मूल है, क्षमाका जामें बल है, ब्रह्मचर्य जाकरि रक्षा है, उपशम कहिये कषायका अभाव जामें प्रधान है, नियति कहिये नियम त्याग निवृत्ति जाका स्वरूप है, निर्ग्रंथपणाका जामें आलंवन है ऐसा जिनभगवानकरि धर्मस्वाख्यातत्व भलेप्रकार व्याख्यान किया है । याके अलाभतैं यह जीव अनादितैं संसारविषैं भ्रमण करै है । पापकर्मके उदयतैं उपज्या जो दुःख ताहि भोगता संता भ्रमै है । बहुरि या धर्मके पाये अनेकप्रकार इन्द्रादिकपदकी प्राप्तिपूर्वक मोक्षकी प्राप्ति नियमकरि होय है । ऐसा चिंतवन करना सो धर्मस्वाख्याततत्वानुप्रेक्षा है । ऐसैं याकूं चिंतवते पुरुषके धर्मविषैं अनुरागतैं सदा उद्यम होय है याका व्याख्यान ऐसा भी है । जो जीवके धर्म गुणस्थान जीवस्थान मार्गणास्थान चौदह चौदह कहै हैं, सो धर्मस्वाख्याततत्व कहिये भलेप्रकार आख्यातपणा है । तिनका चिंतवन करै । सो गुणस्थानके नाम तौ पहलैं कहे ही थे । बहुरि जीवसभा चौदह भी पूर्वैं कहे थे । बहुरि मार्गणास्थान गति, इंद्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम दर्शन, लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक ए चौदह है, ते भी पूर्वैं कहे थ । तिनिपरि गुणस्थान जीवस्थान आगममें कहे हैं, तैसैं लगावणे । तिनका स्वरूप चिंतवन करते जीवके धर्मनिकी प्रवृत्ति नीकै जाणी जाय है । तातैं यथार्थज्ञान होय है । निश्चयव्यवहाररूप धर्मका स्वरूप जानिये है ऐसैं जानना । ऐसैं अनित्यत्व आदि अनुप्रेक्षाके निकट उत्तमक्षमादिधर्मके धारणतैं महान् संवर होय है । बहुरि धर्मके अरु परिषहनिकै मध्य अनुप्रेक्षा करनेतैं ऐसा जनाया है, जो, यह अनुप्रेक्षा चिंतवन करनेवाला पुरुष धर्मनिकूं तौ पालै है रक्षा करै है अर परीषहनिकूं जीतनेका उत्साह करै है ॥

आगें पूछे हैं, ते परीषह कौन हैं बहुरि तिनकूं कौनअर्थि सहिए है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परिषहाः ॥ ८ ॥

याका अर्थ— मार्ग कहिये संवर तातैं न छूटनेके अर्थि तथा कर्मकी निर्जराके अर्थि परिषह सहने । इहां संवरका प्रकरण है, तातैं तिसका विशेषण मार्ग किया है । मार्ग संवर है, तातैं च्युत न होनेके अर्थि बहुरि कर्मनिजराके अर्थि परीषह सहने कहै हैं । कष्ट आये मार्गतैं चिगै नाहीं, ताकी परीषह सहना साधन है । क्षुधा तृष्णा आदि बडे बडे कष्ट सहे तब भगवानका भाष्या मार्गतैं न छूटते संतैं तैसैं ते तिस मार्गतैं प्रवर्तते कर्मका आवनेका द्वार जो आश्रव ताका संवर करते संते आप उद्यमकरि पचाया जो कर्मका फल ताकूं भोगवते संते अनुक्रमतैं निर्जरै है कर्म जिनके ते महामुनि मोक्षकूं प्राप्त होय हैं ॥ आगें परिषहनिमित्त संज्ञासूत्र कहै हैं—

॥ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्य्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाचनालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥ ९ ॥

याका अर्थ— क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशक, नाग्न्य. अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, शय्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कारपुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान, अदर्शन ए बाईस परीषह हैं। ए क्षुधाआदिक हैं ते वेदना पीडाका विशेष हैं ते बाईस हैं इनका सहना मोक्षके अर्थिनकूं करना। सो कैसैं सोही कहै हैं। ऐसैं महामुनिके क्षुधाका जीतना कहिये। कैसे हैं? प्रथम तौ भिक्षावृत्तिकारि परके घर आहार ले हैं, तातैं तौ भिक्षु ऐसा नाम है जिनका। बहुरि निर्दोष आहार हेरै हैं, दोषसहित जैसैंतैसैं नाहीं ले है। बहुरि निर्दोषआहारका अलाभ होय तथा अंतरायादिकके कारणतैं थोरा मिलै तौ नाहीं मिटै है क्षुधाकी वेदना जिनकी। बहुरि अकाल अर अयोग्यक्षेत्रविषैं आहार लेनेकी वांछा जिनकै नाहीं है। ऐसा नाही, जो, क्षुधा उपजै तिसही काल आहारकूं दौडै तथा अयोग्यक्षेत्रमें भी ले ले ऐसैं नाहीं करै है। बहुरि आवश्यकक्रियाकूं किंचिन्मात्र भी घटावै नाहीं। क्षुधाके निमित्ततैं चित्त न लागै तब सामायिकआदि क्रिया जैसैंतैसे करै ऐसैं नाही है। बहुरि स्वाध्याय अर ध्यानकी भावनाविषैं तत्पर रहै हैं। बहुरि बहुतवार आप चलाय करै। तथा प्रायश्चित्तआदिके निमित्ततैं करै ऐसैं अनशन अवमोदर्य नीरसाहार तप तिनिकारि युक्त हैं। बहुरि इन तपनिके निमित्ततैं क्षुधा तृषाकी ऐसी दाह उपजै है, जैसैं ताते भांडेमें पड्या जो जलका बिंदू सो तत्काल सूकि जाय तैसैं आहार पाणी ले सो तत्काल सूकि जाय है। बहुरि उठी है क्षुधावेदना जिनकै तौ भिक्षाका अलाभ होय तौ ताकूं लाभतैं भी अधिक मानैं है, जो, हमारे यह भी अनशनतप भया सो बडा आनंद भया ऐसैं माने है। क्षुधाका चिंतवन नाहीं है। धन्य है वे मुनि, जिनकै ऐसे उज्वल परिणाम हैं। ऐसे मुनिकै क्षुधा जीतना सत्यार्थ है ॥ १ ॥

बहुरि ऐसे मुनिराजकै तृषाका परीषह जीतना होय है, जो जलविषैं स्नान अवगाहना छिडकनेके त्यागी हैं। बहुरि पक्षीकी ज्यौं अनियत है बैठना बसना जिनकै। बहुरि पवनकारि वनके बसनेकारि रुक्ष सचिक्कण प्रकृतिविरुद्ध आहारके निमित्तकारि ग्रीष्मके आतापकारि पित्तज्वर अनशनआदि तपकारि इन कारणनिकारि उपजी जो शरीर इन्द्रियनिविषैं दाह पीडा तौ जल पीवेनकी इच्छाप्रति नाहीं आदऱ्या है, ताका प्रतीकार इलाज ज्यां। तृषारूपी अग्निकी ज्वालाकूं धैर्यरूपी नवा घडाविषैं भऱ्या जो शीतल सुगंध समाधिरूपी जल ताकारि शमन करै है बुझावै है। ऐसैं मुनिराजनिकै तृषाका सहना सराहिये है ॥ २ ॥

कष्टमें गिरनेवाले निश्चयकारि अपने स्वरूपके ध्यान करते ऐसे परिषहतैं न चिगैं ते धन्य है ॥ ८ ॥

गमन करनेविषैं दोष न लगावै सो चर्यापरीषह है । कैसे है मुनि? घणे कालतैं धर्‍या है अभ्यासरूप किया है गुरुनिके कुलविषैं ब्रह्मचर्य जिनि, बहुरि जान्या है बंध मोक्ष पदार्थनिका यथार्थस्वरूप जिनि, बहुरि संयमके आयतन जे तीर्थंकर बडे मुनि तथा तिनकारि पवित्र भये ऐसैं निर्वाणक्षेत्र आदि देश तिनकी भक्तिके अर्थि किया है देशांतरगमन जिनि, बहुरि गुरुनिके आज्ञाकारी हैं, बहुरि पवन ज्यौं काहूंसौं संग न करै हैं-निर्लेप हैं, बहुरि बहुतवार किया जो अनशन अवमोदर्य वृत्तिपरिसंख्यान रसपरित्याग आदि तप ताकी बाधा ताकरि क्षीण भया है काय जिनका, बहुरि देशकालके प्रमाण मार्गविषैं गमन ऐसैं करै हैं, जातैं संयम विराध्या न जाय, बहुरि त्यागे हैं पगनिके जोडी आदि आवरण जिनके, कठोर कांकरेकी भूमि तथा कंटक आदिकारि बींधे गये जे पाद तिनका भया है खेद जिनकै, तौ पूर्व गृहस्थपणेमें पालकी घोडे रथ आदि चडते थे तिनकूं यादि नाहीं करै हैं, बहुरि कालकी काल आवश्यकक्रियाकी हानिकूं न करै हैं ऐसैं मुनिके चर्यापरिषहका सहन कहिये ॥ इहां विशेष जो , अनेकदेशनिविषैं गमन करै हैं तिन देशनिकी भाषा तथा क्रिया व्यवहारकूं जानते संते छोटे गाममें तौ एकरात्रि बसैं हैं, बडे नगरमें पंचरात्रि बसैं हैं, इह उत्कृष्ट बसना जानूं ॥ ९ ॥

आप संकलपमें किया जो आसन तिसतैं चलै नाहीं, सो निषद्यापरिषहका जीतना है । तहां स्मशान सूनां ठिकाणा पर्वतकी गुफा वृक्षनिके तलें वेलिनका मंडप इत्यादिक जिनमें पूर्वैं अभ्यास न किया कदे बैठे नाहीं ऐसे स्थानक तिष्ठै हैं । बहुरि सूर्यका प्रकाश तथा अपनी इन्द्रियका ज्ञान ताकरि परीक्षारूप किया प्रदेश क्षेत्र ताविषैं करी है नियमकी क्रिया ज्यां, कालका नियमकारि आसन मांडि बैठै हैं । तहां सिंह वघेरा आदिका भयानक शब्द सुननेकारि नाहीं किया है भय ज्यां, देव मनुष्य पशु अचेतनपदार्थनिकारि किया जो चारिप्रकार उपसर्ग तिनकारि नाहीं तज्या है मोक्षमार्गका साधन ज्यां, वीरासन उत्कुटिकासन इत्यादि जे कठिन आसन तिनकारि अविचलित है काय जिनका, ऐसैं आसनकी बाधाका सहना, सो निषद्यापरिषह है ॥ याका विशेष जो, आसनका नियम कारि बैठै तब उपसर्ग आवै तौ तिसका मेटनेका उपाय विद्या मंत्र जाप जाने हैं-मेटनेकूं समर्थ हैं, तौ ताका उपाय न करै हैं । बहुरि पूर्वैं कोमल गद्दी आदि बिछाय बैठे थे ताकूं यादि न करै हैं । प्राणीनिकी रक्षाका अभिप्राय है तथा अपने स्वरूपके ध्यानमें लागि रहे हैं । तातैं परीपहकी वेदना नाहीं है ॥ १० ॥

॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥

याका अर्थ— ज्ञानावरणकर्मका उदय होतैं प्रज्ञा अज्ञान ए दोय परीषह होय है। इहां तर्क, जो, यह अयुक्त है। जातैं ज्ञानावरणके उदय होतैं अज्ञानपरीषह तौ होय अर प्रज्ञापरीषह तौ ज्ञानावरणके अभाव होतैं होय है। सो दोऊ परीषह ज्ञानावरणके उदयतैं कहना अयुक्त है। ताका समाधान, जो, यह प्रज्ञा है सो ज्ञानावरणके क्षयोपशमतैं होय है। सो परकै ज्ञानावरणका उदय होतैं विज्ञानकला नाहीं होय तहां जाकै प्रज्ञा होय ताकै मद उपजावै है। अर सकल आवरणका क्षय भये मद नाहीं होय है। तातैं ज्ञानावरणके उदयतैं कहना बने है। इहां कोई कहै है, मद तौ अहंकार है सो मोहके उदयहीतैं होय है। ताका समाधान, जो, यह परीषह चारित्रवानकै ज्ञानावरणके उदयकी शक्तिकी अपेक्षा कही है। तातैं मोहके उदयमें अंतर्भाव याका नाहीं, ज्ञानावरणहीकी मुख्यता लिये है॥ आगें अन्य दोय कर्मके निमित्ततैं भये परीषहकूं कहै हैं—

॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ॥ १४ ॥

याका अर्थ— दर्शनमोहके होतैं तौ अदर्शनपरीषह होय है। अर अंतरायकर्मके होतैं अलाभपरीषह होय है। इहां यथासंख्य संबंध करना। दर्शनमोहके होतैं अदर्शन परीषह, लाभान्तरायके होतैं अलाभपरीषह ऐसैं॥ आगै पूछै है कि, आदिका मोहनीयका भेदतैं एक परीषह कह्या, बहुरि दूजा मोहनीयके भेदतैं केते परीषह होय है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्काराः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— चारित्रमोहके होतैं नाग्न्य, अरति, स्त्री, निषद्या, आक्रोश, याचना, सत्कारपुरस्कार ए सात परीषह हो है, इहां पूछै है कि, पुरुषवेदके उदयआदिके निमित्ततैं नाग्न्यादिपरीषह होय हैं। इहां सो इनकै तौ मोहका निमित्तपणा हमनें जाण्यां, परंतु निषद्यापरीषह तौ आसनका परीषह होय है, याकै मोहके उदयका निमित्त कैसैं? ताका समाधान, जो, आसनविषैं प्राणीनिका परिहार प्रयोजन है। सो प्राणिनिकी पीडाके परीणाम मोहके उदयतैं होय है।

ध्यानका उपचार कीजिये है; तैसैं परीषहका भी उपचार जानना । अथवा इस सूत्रका अर्थ ऐसा भी किया है, " एकादशजिने न सन्ति " ऐसा वाक्यशेष कहिये सूत्रमें चाहिये ते अक्षर लगावने । जातैं सूत्र हैं ते सोपस्कार कहिये अन्य उपकार करनेवाले अक्षरनिकी अपेक्षा करै हैं। तातैं सूत्रमें वाक्यशेष कल्पना योग्य है । बहुरि वाक्य है सो वक्ताके आधीन है, ऐसा मानिये है । तातैं इहां निषेधकूं न संति ऐसा वाक्यशेष लेना । जातैं इहां मोहके उदयका सहायके अभावतैं क्षुधाआदिकी वेदनाका अभाव है, तातैं ए परीषह भी नाहीं हैं ऐसा भी अर्थ जानना ॥

ए ग्यारह परीषहके नाम हैं । क्षुधा, तृष्णा, शीत, उष्ण, दंशमशक, चर्या, शय्या, वध, रोग, तृणस्पर्श, मल ऐसैं ग्यारह हैं । इहां दृष्टांत ऐसा भी जानना, जैसैं विषद्रव्य है सो मंत्र औषधिके बलतैं ताकी शक्ति मारनेकी क्षीण होय जाय तब ताकूं कोई खाय तौ मरै नाहीं, तैसैं ध्यानरूपी अग्निकारि घातिकर्मरूप ईंधनकूं ज्या वाल्या, तिनके अनंत निर्बाध ज्ञानादिचतुष्टय प्रगट भया सो अंतरायके प्रभावतैं निरंतर संचयरूप शुभपुद्गल होय हैं, सो वेदनीयकर्म है । सो सहाय विना क्षीणबल हूवा संता अपना प्रयोजन उपजावनेकूं समर्थ नाहीं हैं, तैसैं क्षुधाआदि वेदनारूप परिषहनिका अभावही जानना ॥

आगें पूछै हैं, जो, सूक्ष्मसांपरायआदिविषैं भेदरूप केई परीषह कहै तौ ए समस्तपरीषह कौनविषैं हैं ? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ बादरसाम्पराये सर्वे ॥ १२ ॥

याका अर्थ— बादरसांपराय कहिये प्रमत्ततैं लगाय अनिवृत्तिबादरसांपराय जो नवमां गुणस्थान तहांताईं सर्व परीषह हैं । तहां सांपराय तौ कषायकूं कहिये । बहुरि बादरकषाय जहां होय सो बादरसांपराय है । इहां गुणस्थान-विशेषका ग्रहण तौ न करना, प्रयोजनमात्रका ग्रहण करना तातैं प्रमत्तआदि संयमीका ग्रहण करना, तिनविषैं कषायनिका आशय क्षीण न भया । तातैं सर्व परीषह संभवै हैं । इहां कोई पूछै, जो, कैसैं चारित्रमें सर्व परीषह संभवे हैं ? तहां कहिये है, सामायिक छेदोपस्थापन परिहारविशुद्धि संयमविषैं कोई एक संयमविषैं सर्वपरीषहनिका संभव है ॥

आगें शिष्य कहै हैं, जो, परीषहनिका स्थानविशेषका तौ नियम कह्या, सो जान्या । परंतु कैसैं कर्मकी प्रकृतिका कैसे परीषह कार्य हैं ? यह न जान्या । ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

आगमकथित शयनतैं न चिगै सो शयनपरिषहका सहन है । तहां वे मुनि ध्यानका गमनका खेदकारि मुहूर्तमात्र निद्रा ले हैं । सो कठोर नीची उंची बहुत कांकरी ठीकरीनिकारि भरी भूमिविषैं तथा सकडी जहां शरीर स्वच्छंद पसरै नाहीं ऐसी भूमिविषैं तथा जहां अतिशीतता अतिउष्णता होय ऐसी भूमिप्रदेशविषैं सोहै हैं । एकपार्श्व किये तथा सूधे सोवैं सो प्राणीकूं बाधा होनेकी शंकाकारि जैसैंके तैसैं सूते रहै । अंगकूं चलाचल न करै कलोट न ले । जैसैं काठ पड्या होय तैसैं पडे रहै । तथा जैसैं मृतक पड्या होय तैसैं निश्चल रहै । ज्ञानभावनाविषैं लगाया है चित्त ज्यां व्यंतर आदिके उपसर्ग होतैं भी नही चलाया है शरीर ज्यां, जेतैं काल नियम किया तेतैं काल जेती बाधा आवै तेती सहै हैं, सो शय्यापरिषहका सहन है ॥

याका विशेष जो, भयानक प्रदेशविषैं शयन करै, तहां ऐसा विचार न उपजै, जो, यह प्रदेश नाहर वघेरा चीता आदि दुष्टप्राणीनिका निवास है, इहांतैं शीघ्र निकलना भला है, रात्रि बहुत बडी है, कदि पूरी होयगी ऐसैं विषाद न करै हैं। सुखकी प्राप्ति नाहीं वांछै है। पहलें कोमलशय्यापरि सोवते थे ताकूं यादि न करै हैं॥ ११ ॥

अनिष्ट दुर्वचन सहना, सो आक्रोशपरीषह है । मिथ्यादृष्टीनिके क्रोधके भरे कठोर बाधाके करनहारे निंदा अपमानके झूठे वचन सुनैं हैं, "जो ऐसैं दुर्वचन हैं तिनकूं सुनतेही क्रोधरूप अग्निकी ज्वाला बधि जाय है ऐसैं हैं" तौ तिन वचननिकूं झूठे मानै हैं। तत्काल ताका इलाज करनेकूं समर्थ हैं, जो आप क्रूरदृष्टीकारि भी ताकूं देखैं तौ पैला भस्म होय जाय तौ अपना पापकर्मके उदयहीकूं विचारै तिनकूं सुनिकारि तपश्चरणकी भावनाहीकेविषैं तत्पर हैं, कषायका अंशमात्रकूं भी अपने हृदयविषैं अवकाश न दे हैं। ऐसैं आक्रोशपरीषहका जीतना होय है॥ १२ ॥

मारने वालातैं क्रोध न करना, सो वधपरिषहका सहन है। तहां तीखण छुरी मूशल मुद्गर आदि शस्त्रनिके घातकारि ताडना पीडना आदितैं वध्या है शरीर जिनका, बहुरि घात करनेवालेविषैं किंचिन्मात्र भी विकारपरिणाम नाहीं करै है. विचारै हैं "जो यह मेरे पूर्वकर्मका फल है ए देनेवाला गरीब रंक कहा करै ? यह शरीर जलके बुदबुदेकी ज्यौं विनाशिकस्वभाव है, कष्टका कारण है, ताकूं ए बाधा करै है, मेरे सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्रकूं तौ कोई घात सकै नाहीं" ऐसा विचार करते रहै हैं। कुहाडी बसोलाकी घात अर चंदनका लेपन दोऊनिकूं समान दीखै हैं। तिनके वधपरीषहका सहना मानिये हैं। वे महामुनि ग्राम उद्यान वनी नगरनिविषैं रात्रिदिन एकाकी नग्न रहै हैं। तहां चोर राक्षस म्लेछ भील वधिक पूर्वजन्मके वैरी परमती भेषी इत्यादि क्रोधके वशि भये आदि करै हैं। तौ तिनके क्षमाही करै है। तिनके वधपरीषहसहना सत्यार्थ है॥ १३ ॥

मिथ्यादृष्टीही भले है, बडे भक्तिवान् है, जो अपना गुरु कछु भी नही जानता होय अज्ञानी होय ताकूं भी सर्वज्ञतुल्य मानि तिनका सन्मानकरि अपने मतकी प्रभावना करै हैं। बहुरि सुनिये हैं, जो, पूर्वकालमें व्यंतरआदिक बडे तपस्वीनिका पूजा करे थे सो यह कछु मिथ्याही दीखै है, सो यह साची होय तौ हमसारिखेनिका अवार पूजाआदि क्यों न करैं? ऐसा खोटा चिंतवन नाहीं करै है। ऐसैं मुनिकै सत्कारपुरस्कार परीषहका जीतना जाणिये ॥ १९ ॥

प्रज्ञा कहिये विज्ञान ताका मद न करना सो प्रज्ञापरीषहका जीतना है। तहां अंगपूर्वप्रकीर्णकके जाननेविषैं तौ प्रवीण हैं, बहुरि शब्द न्याय अध्यात्मशास्त्रनिविषैं निपुण है, ऐसा होय तौ मुनि आप ऐसा न विचारै, जो, मेरे आगे अन्य ऐसा भासे है " जैसैं सूर्यके प्रकाशकरि तिरस्कार किये जे आग्याकीट प्रकाशरहित दीखै " ऐसा विज्ञानका मद न करै, सो प्रज्ञापरीषहका जीतना कहिये ॥ २० ॥

अज्ञानपणेकरि अवज्ञातैं ज्ञानके अभिलाषरूप परीषहका जीतना सो अज्ञानपरीषहका सहन है। तहां मुनिकूं दुष्ट जन कहैं, यह मुनि अज्ञानी है, पशुसमान है, कछु जाने नाहीं इत्यादिक निन्दाके वचन कहै, ताकूं सहैं हैं। जो परमतपका आचरण करै है निरंतरप्रमादरहित वर्तै है तौ ऐसा न विचारै है, जो " मेरै अवताई भी ज्ञानका अतीशय नाहीं उपज्या, " ऐसा अभिप्राय नाहीं राखै है, ताके अज्ञानपरीषहका सहना जानना ॥ २१ ॥

दीक्षा लेना अनर्थक है ऐसी भावना न उपजै सो दर्शनपरीषहका सहन है। तहां कैसा है मुनि? परमवैराग्य-भावनाकरि शुद्ध है मन जाका, बहुरि जाना है सकलपदार्थका यथार्थस्वरूप जाने, बहुरि अरहंत अर अरहंतके प्रतिमा आदि तथा साधु तथा धर्म इनका पूजक है, बहुरि बहुतकालतैं मुनि भया है ऐसा है तौ ऐसा न विचारै है, जो " मेरे अवारताई ज्ञानका अतिशय उपज्या नाहीं, पूर्वे सुनिये है, जो महान उपवासादिकके करनेवालेनिकै प्रातिहार्यके विशेष उपजे हैं, सो यह कथनी तौ प्रलापमात्र झूंठी है, यहू दीक्षा अनर्थक है, व्रतका धारण विफल है " इत्यादिक नाहीं विचारै है। जातै मुनिकै दर्शनकी विशुद्धता योग है। ऐसैं अदर्शनपरीषहका सहन जानना ॥ २२ ॥

ऐसैं बाईस परीषह हैं। परीषह आये क्लेशपरिणाम न करैं। तातैं रागादि परिणामतैं होय था जो आश्रव, ताके निरोधमें महान् संवर होय है ॥ आगें पूछै हैं, जो, ए परीषह जे मुनि संसारके तरनेकूं उद्यमी भये हैं तिनकूं सर्वही अविशेषकरि आवै है, कि कछु विशेष है? तहां कहै है जो, ए क्षुधाआदि परीषह कहै, ते अन्यचारित्रविषैं तौ भेदरूप आवै हैं अर सूक्ष्मसांपराय अर छद्मस्थ वीतरागके तौ नियमकरि जेते होय हैं सो कहै हैं—

अनंतधर्मात्मक एक जीवादि वस्तुका यहु स्यात् शब्द है सो द्योतक है ॥

इहां प्रश्न — जो शास्त्रनिमैं तौ स्यात् शब्द वाक्यवाक्यप्रति सुण्या नांही। तुम कैसैं कहौ हौ ? जो सर्ववस्तुको स्यात् शब्दतैं साधिये। ताका उत्तर — जो शास्त्रमैं याका प्रयोग जहां नांही है तहां स्याद्वादी अर्थकारि सर्वशब्दनिपारि लगाय ले है। जातैं वस्तुस्वरूप अनेकांतात्मक ही है तातैं वस्तुके जाननेंवाले स्यात् शब्दकों जानिले हैं। ऐसैं श्लोकवार्तिकमैं कह्या है। बहुरि इहां अन्य उदाहरण कहिये है। जैसैं कोई एक मनुष्यनामा वस्तु है सो गुणपर्यायनिके समुदायरूप तौ द्रव्य है। बहुरि याका देहप्रमाण संकोच विस्तार लीये क्षेत्र है। बहुरि गर्भतैं ले मरणपर्यंत याका काल है। बहुरि जेती गुणपर्यायनिकी अवस्था याकै हैं ते भाव हैं। ऐसैं द्रव्यादि चतुष्टय यामैं पाईये है। तहां कालादिककरि अभेदवृत्तिकरि कहिये तब जेतैं काल आयुर्बलपर्यंत मनुष्यपणा नामा गुण है, तेतैं ही काल अन्य याके सर्वधर्म हैं, ऐसैं कालकरि अभेदवृत्ति है। तथा जो ही मनुष्यपणांकै मनुष्यरूप करणां आत्मरूप है, सो ही अन्य अनेक गुणनिकै है। ऐसैं आत्मरूपकरि अभेदवृत्ति है। तथा जो ही आधार द्रव्यनामा अर्थ मनुष्यपणाका है सो ही अन्य याके पर्यायनिका है ऐसैं अर्थकरि अभेदवृत्ति है। तथा जो ही अभिन्नभावरूप तादात्म्यलक्षण संबंध मनुष्यपणांकै है, सो ही अन्य सर्व गुणनिकै है, ऐसैं संबंधकरि अभेदवृत्ति है। तथा जो ही उपकार मनुष्यपणांकरि अपने स्वरूप करणां है, सो ही अन्य अवशेषगुणनिकरि कीजिये है, ऐसैं उपकारकरि अभेदवृत्ति है। तथा जो ही गुणीका देश मनुष्यपणांका है सो ही अन्य गुणनिका है ऐसैं गुणिदेशकरि अभेदवृत्ति है। तथा जो ही एक वस्तुस्वरूपकरि मनुष्यपणांका संसर्ग है, सो ही अन्य अवशेष धर्मनिका है, ऐसैं संसर्गकरि अभेदवृत्ति है। तथा जो ही मनुष्य ऐसा शब्द मनुष्यस्वरूप वस्तूका वाचक है, सो ही अन्य अवशेष अनेक धर्मोंका है, ऐसैं शब्दकरि अभेदवृत्ति है ॥ ऐसैं पर्यायार्थिकनयके गौण होते द्रव्यार्थिकनयकी प्रधानतातैं अभेदवृत्ति बणै है ॥

बहुरि द्रव्यार्थिक नय गौण होतैं पर्यायार्थिक प्रधान करतैं कालादिककी अभेदवृत्ति अष्टप्रकार न संभवै है, सो भी कहिये है। क्षणक्षणप्रति मनुष्यपणां और और गुणपर्यायरूप है। तातैं सर्वगुणपर्यायनिका भिन्न काल है। एककाल एकमनुष्यपणांविषैं अनेकगुण संभवै नाही। जो संभवै तौ गुणनिका आश्रयरूप जो मनुष्यनामा वस्तु सो जेते गुणपर्याय है तेते ठहरै। तातैं कालकरि भेदवृत्ति है। तथा अनेक गुणपर्यायनिकरि कीया उपकार भी जुदा है। जो एक ही मानिये तौ एक मनुष्यपणांही उपकार ठहरै। ऐसैं उपकारकरि भेदवृत्ति है। तथा गुणिका देश है सो गुणगुणप्रति भेदरूप ही कहिये। जो एक ही कहिये तौ मनुष्यपणांहीका देश ठहरै अन्यका न ठहरै तातैं गुणिदेशकरि भी भेदवृत्ति है।

जुदे ग्रहण करै तहां पर्यायार्थिकनय है। इहां अभेदरूप गौण है, भेदपक्ष मुख्य है। तहां भी किसी एक अंशकूं मुख्य करै तव दूसरा अंश गौण हो है। ऐसैं सर्व ही जीवादिक पदार्थ प्रमाणनयकारि सत्यार्थ प्रतिभासै हैं। जो सर्वथा एकांतकी पक्ष है सो कल्पना मिथ्या है। जातैं कल्पनामात्र ही है। मिथ्यात्वकर्मके उदयतैं यह निपजै है। वस्तुस्वरूप कल्पित है नांही। वहुरि नय हैं ते श्रुतज्ञानके अंश हैं। मति अवधि मनःपर्यय ज्ञानके अंश नांही। तातैं वचनके निमित्ततैं उपज्या जो परोक्ष श्रुतज्ञान ताहीके विशेष संभवै, प्रत्यक्षके विशेष संभवै नांही। वहुरि प्रमाणनयकारि भया जो अपनां स्वरूपका आकार तथा अन्यपदार्थका आकारसहित निश्चय ताकूं अधिगम कहिये। सो यहू प्रमाणका कथंचित् अभेदरूप फल है॥

केई वेदांतवादी तथा विज्ञानाद्वैतवादी अपनां स्वरूपका निश्चयकों ही अधिगम कहै हैं। केई परका निश्चयकों ही कहै हैं। तिनिका कहना वाधासहित हैं। केई ज्ञानकों अर्थके आकारसमान होनेकों प्रमाण कहै हैं। ताका अभेदरूप अधिगमकूं फल कहै हैं। सो भी सर्वथा एकांतवादिनिकै वर्णै नांही। ज्ञान अर्थसमान होय नांही। ज्ञान तौ ज्ञान ही है। अपनी स्वच्छतातैं अन्य अर्थकों जानै है, तहां तदाकार भी कहिये। वहुरि कोई नेत्र आदि इंद्रियनिकूं प्रमाण कहै हैं। ते भी विना समझ्या कहै हैं। अचेतन इंद्रिय प्रमाण कैसैं होय? वहुरि भावइंद्रिय ज्ञानरूप हैं ते प्रमाणके भेदनिमैं हैं ही॥

वहुरि प्रमाणनयकरि अधिगम कह्या सो भी ज्ञानात्मकके तथा शब्दात्मकके भेदकारि दोय प्रकार है। तहां ज्ञानात्मक तौ पंचप्रकार ज्ञान है, सो आगै कहसी। वहुरि शब्दात्मक है सो विधिनिषेधस्वरूप है। तहां कोई शब्द तौ प्रश्नके वशतैं विधिविषैं ही प्रवर्तै है। जैसैं समस्तवस्तु अपने द्रव्य क्षेत्र काल भावकारि अस्तित्वस्वरूप ही है। तथा कोई शब्द निषेधविषैं प्रवर्तै है। जैसैं समस्त वस्तु परके द्रव्य क्षेत्र काल भावकारि नास्तित्वस्वरूप ही है। तथा कोई शब्द विधिनिषेध दोऊविषैं प्रवर्तै है। जैसैं समस्त वस्तु अपने तथा परके द्रव्य क्षेत्र काल भावकारि अनुक्रमतैं अस्तिनास्ति स्वरूप है। तथा कोई शब्द विधिनिषेध दोऊकूं अवक्तव्य कहै है। जैसैं समस्त वस्तु अपने वा परके द्रव्य क्षेत्र काल भावकारि एक काल अस्तित्वनास्तित्वस्वरूप है। परंतु एककाल दोऊ कहै जाते नांही, तातैं अवक्तव्यस्वरूप है। तथा कोई शब्द विधिनिषेधकूं क्रमकारि कहै है। एककाल न कह्या जाय है तातैं विधिअवक्तव्य निषेधअवक्तव्य तथा विधिनिषेधअवक्तव्यविषैं प्रवर्तै है। जैसैं समस्तवस्तु अपने चतुष्टयकारि अस्तित्वरूप है, वक्तव्य है, एककाल स्वपरचतुष्टयकारि अवक्तव्यस्वरूप है। तातैं अस्तिअवक्तव्य ऐसा कहिये। तथा ऐसै ही परके चतुष्टयकारि नास्तिस्वरूप वक्तव्य है। एककाल स्वपरचतु-

॥ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्परायययथाख्यातमिति चारित्रम् ॥ १८ ॥

याका अर्थ— सामायिक छेदोपस्थापना परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसांपराय यथाख्यात ऐसे पांच भेदरूप चारित्र है । इहां प्रश्न, जो दशप्रकार धर्मविषैं संयम कह्या ही है, सोही चारित्र है, यह फेरि कहना अनर्थक नाहीं है। धर्मके विषैं अंतर्भूत है, तौ अंतविषैं चारित्रका ग्रहण किया है । जातैं यह मोक्षकी प्राप्तिका साक्षात् कारण है । चौदहवां गुणस्थानके अंत चारित्रकी पूर्णता भये लगताही मोक्ष होय है । तातैं साक्षात्कारण है ऐसा जनावनेकूं न्यारा कह्या है । सो सामायिकका स्वरूप तौ पहले श्रावकके सप्तशील कहे तहां कह्या ही था । सो दोयप्रकार है, एक तौ नियतकाल दूजा अनियतकाल । तहां कालकी मर्यादा करि तामें स्वाध्यायआदि कीजिये सो तौ नियतकाल है । बहुरि ईर्यापथआदिविषैं अनियतकाल है । बहुरि प्रमादके वशतैं उपज्या जो दोष ताकरि संयमका प्रबंधका लोप भया होय ताका प्रायश्चित्त आदि प्रतिक्रियाकरि स्थापन करना सो छेदोपस्थापना है । अथवा सामायिकविषैं अहिंसादिक तथा समित्यादिकका भेद करना सो छेदोपस्थापना कहिये । बहुरि प्राणिपीडाका जहां परिहार ताकरि विशेषरूप जो विशुद्धता जामें होय सो परिहारविशुद्धि कहिये ॥

बहुरि जहां अतिसूक्ष्म कषाय होय सो सूक्ष्मसांपरायचारित्र है । यह दशमा गुणस्थान सूक्ष्मलोभसहित होय है बहुरि जहां मोहनीयकर्मका सम्पूर्ण उपशम होय, तथा क्षय होय जाय सत्तामेंसूं द्रव्यका कर्म उठि जाय, तहां आत्माका स्वभावकी वीतराग अवस्था होय, सो यथाख्यातचारित्र है । अथवा पहले सामायिकआदि चारित्रके आचरण करनेहारेनें याका व्याख्यान तौ किया अर मोहके क्षयतैं तथा उपशमतैं पाया नाहीं, तातैं अब कह्या, तातैं याका नाम अथाख्यात भी कहिये । जातैं अथशब्दका अर्थ अनंतर पदार्थ होय सो है, यहू समस्त मोहके क्षय तथा उपशमके अनंतर होय हैं, तातैं अथाख्यात नाम सार्थक है । बहुरि आत्माका स्वभाव जैसा अवस्थित है तैसाही यामें कह्या है, तातैं याका नाम यथाख्यात भी कहिये । बहुरि सूत्रमें इतिशब्द है सो परिसमाप्ति अर्थविषैं है । तातैं ऐसा जानिये, जो, यथाख्यात चारित्रतैं सकलकर्मके क्षयकी परिसमाप्ति होय है । बहुरि सामायिकादिकका अनुक्रमका कहना है । ताकरि आगिले आगिले चारित्रविषैं गुणकी विशुद्धताकी वृद्धि है ऐसैं जनाया है ॥

इहां विशेष कहिये हैं, सर्वसावद्ययोगका अभेदकरि त्याग करै सो सामायिक है । याका शब्दार्थ ऐसा भी किया है, जो, प्राणीनिके घातके कारण जे अनर्थ तिनकूं आय ऐसा नाम कहिये सम ऐसा उपसर्ग देनेतैं एकीभूत अर्थ भया । तातैं अनर्थ एकठे भये होय तिनकू समाय ऐसा कहिये । ते समाय जाका प्रयोजन होय सो सामायिक कहिये । तातैं

ऐसा अर्थसिद्धि होय है। सो सर्वपापका सामान्य एकट्ठाही त्याग जहां होय सो सामायिकचारित्र हैं। इहां कोई कहै, ऐसा तौ गुप्ति भी है। ताका समाधान, जो, यामें मनसंबंधी प्रवृत्ति है, गुप्तिविषैं प्रवृत्तिका निषेध है। बहुरि याकूं समिति भी न कहिये। जातैं सामायिकवालेकूं प्रवृत्तिका उपदेश है। ताविषैं प्रवृत्ति होय ताकूं समिति कहिये। ऐसा सामायिकका कारण है सो समिति कार्य है। ऐसा कार्यकारणका भेद है। बहुरि परिहारविशुद्धिविषैं ऐसा विशेष है, जो, इसकूं धारै जो पुरुष तीसवर्षका होय, तीर्थंकरके निकट पृथक्त्ववर्षताईं सेवन किया होय, प्रत्याख्यानपूर्व तहां पढ्या होय, जीवनिकी उत्पत्ति मरणके ठिकाणे कालकी मर्यादा जन्म योनिके भेद देशका द्रव्यका स्वभावका विधानका जाननहारा होय, प्रमादरहित होय, महावीर्यवान होय, जाकै विशुद्धताके बलतैं कर्मकी प्रचुरनिर्जरा होती होय, अतिकठिन आचरणका धारणेवाला होय तीनूं संध्याविना दोयकोश नित्य विहार करनेवाला होय, ताकै परिहारविशुद्धि-संयम होय है। अन्यकै नाहीं होय है॥

बहुरि सूक्ष्मसांपरायसंयम ऐसैं मुनिके होय है, जो सूक्ष्मस्थूल प्राणिनिकी पीडाके परिहारविषैं प्रमादरहित होय, बहुरि स्वरूपके अनुभवविषैं बधता उत्साह जाकै होय, जाकै अखंडक्रियाविशेष होय, बहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानरूप प्रचंड पवनताकरि प्रज्वलित भई, जो शुद्धआशयरूप अग्निकी शिखा ताकरि दग्ध भये हैं कर्मरूप इंधन जाके, बहुरि ध्यानके विशेषकरि क्षीण किये हैं कषायरूप विषके अंकुरे जानें, बहुरि नाशके सन्मुख भया है मोहकर्म जाके, याहीतैं पाया है सूक्ष्मसांपराय संयम जानें ऐसा मुनिकै होय है। याका गुप्तिसमितिविषैं अंतर्भाव जानना। जातैं गुप्तिसमिति होतैं यामें सूक्ष्मलोभकषायका होना यह विशेष गुण है। ताकी अपेक्षा न्याराही जानना। बहुरि सूत्रके अनुक्रमवचनकरि उत्तरोत्तर अनंतगुणी विशुद्धता जाननी। बहुरि चारित्रके भेद शब्दकी अपेक्षा तौ संख्यात हैं। बुद्धिके विचारतैं असंख्यात है। अर्थतैं अनंतभेद हैं। ऐसैं यहु चारित्र आश्रवके निरोधतैं परमसंवरका कारण जानना। अर समितिविषैं प्रवर्तैं हैं। तामें धर्म अनुप्रेक्षा परीषहनिका जीतना चारित्र यथासंभव जाननें॥

आगें पूछै है कि, चारित्र तौ कह्या, ताके अनंतर 'तपसा निर्जरा च' ऐसा कह्या था सो अब तपका विधान कहना। ऐसैं पूछैं कहै हैं। तप दोयप्रकार है, बाह्य अभ्यंतर। सो भी प्रत्येक छहप्रकार है। तहां बाह्य तपके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्याग-
विविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥ १९ ॥

याका अर्थ-- अनशन, अवमोदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशय्यासन, कायक्लेश ए छह बाह्यतप हैं
तहा इष्टफल कहिये धनकी प्राप्ति; जगतमें प्रशंसा स्तुति होना, रोगादिक मिटना, भय मिटना, मंत्रसाधन करना इत्या-
दिक इसलोकसंबंधी फलकी अपेक्षा जामें नाहीं, तथा ऐसैंही परलोकसंबंधी विषयनिका सुखकी अभिलाषपणा स्वर्गआदिके
फलकी निदानरूप वांछा जामें नाहीं, अर संयमकी प्रसिद्धि, रागादिकका विनाश, कर्मकी निर्जरा, ध्यानकी प्राप्ति आग-
मके अभ्यासकी प्राप्ति; इनके अर्थि जो आहार कषायका विषयका त्याग करना, सो अनशन है ॥ १ ॥ बहुरि संयमकी
वृद्धि, निद्रा आलस्यका नाश, वात पित्त कफआदि दोषका प्रशमन, संतोष, स्वाध्यायआदि सुखतैं होना इत्यादिककी
सिद्धिके अर्थि आहार थोरा लेना, सो, अवमोदर्य है ॥ २ ॥ बहुरि मुनि आहारकूं जाय तब प्रतिज्ञा करै, जो, एकही घर
जावेंगे, तथा एकही रस्तामें प्रवेश करेंगे, तथा स्त्रीका दिया आहार लेंगे, तथा एकही द्रव्यका भोजन लेंगे इत्यादिक
अनेकरीति हैं; तिसकी प्रतिज्ञा करि नगरमें जाय तिस प्रतिज्ञाकी रीति मिलै तो ले, ना तरि फिरि आवै, सो वृत्तिपरि-
संख्यान तप है । यह आशाकी निवृत्तिके अर्थि है ॥ ३ ॥

बहुरि इन्द्रियका उद्धतपणाका निग्रह निद्राका जीतना स्वाध्याय सुखतैं होना इत्यादिके अर्थि घृत आदि पुष्ट स्वाद-
रूप रसका त्याग, सो चौथा रसपरित्याग तप है ॥ ४ ॥ बहुरि शून्यस्थानक आदि जे एकांत जगह जहा प्राणीनिकूं
पीडा न होय तहां संममी सोवना बैठना आसन करै, यातैं आपके स्वाध्यायध्यानमें बाधा न होय, ब्रह्मचर्य पालै,
स्वाध्यायध्यानकी सिद्धि होय, ऐसैं पांचवा विविक्तशय्यासन तप है ॥ ५ ॥ बहुरि आतापके स्थान वृक्षका मूल इनविषैं
वसना, चौडै निरावरण शयन करना, बहुतप्रकार आसनकरि प्रतिमायोग करना, इत्यादिक कायक्लेश तप है ॥ ६ ॥
सो यहू देहकूं कष्ट देनेकें अर्थि है, परीषहके सहनेको अर्थि है, सुखकी अभिलाषा मेटनेके अर्थि है, मार्गकी प्रभावनाके
अर्थि है इत्यादि प्रयोजनके अर्थ जानना ॥

इहां कोई पूछैं, जो परीषहमें अर यामें कहां विशेष है? ताका समाधान, जो स्वयमेव आवै सो तौ परीषह है
अर आप चलाय करै सो कायक्लेश है । फेरि कोई पूछै, इन छह तपनिके बाह्यपणा कैसैं है? ताका समाधान, जो, ये

ऐसा अर्थसिद्धि होय है। सो सर्वपापका सामान्य एकट्ठाही त्याग जहां होय सो सामायिकचारित्र हैं। इहां कोई कहै, ऐसा तौ गुप्ति भी है। ताका समाधान, जो, यामें मनसंबंधी प्रवृत्ति है, गुप्तिविषैं प्रवृत्तिका निषेध है। बहुरि याकूं समिति भी न कहिये। जातैं सामायिकवालेकूं प्रवृत्तिका उपदेश है। ताविषैं प्रवृत्ति होय ताकूं समिति कहिये। ऐसा सामायिकका कारण है सो समिति कार्य है। ऐसा कार्यकारणका भेद है। बहुरि परिहारविशुद्धिविषैं ऐसा विशेष है, जो; इसकूं धारै जो पुरुष तीसवर्षका होय, तीर्थंकरके निकट पृथक्त्ववर्षताईं सेवन किया होय, प्रत्याख्यानपूर्व तहां पढ्या होय, जीवनिकी उत्पत्ति मरणके ठिकाणे कालकी मर्यादा जन्म योनिके भेद देशका द्रव्यका स्वभावका विधानका जाननहारा होय, प्रमादरहित होय, महावीर्यवान होय, जाकै विशुद्धताके बलतैं कर्मकी प्रचुरनिर्जरा होती होय, अतिकठिन आचरणका धारणेवाला होय तीनूं संध्याविना दोयकोश नित्य विहार करनेवाला होय, ताकै परिहारविशुद्धि-संयम होय है। अन्यकै नाहीं होय है ॥

बहुरि सूक्ष्मसांपरायसंयम ऐसैं मुनिकै होय है, जो सूक्ष्मस्थूल प्राणिनिकी पीडाके परिहारविषैं प्रमादरहित होय, बहुरि स्वरूपके अनुभवविषैं वधता उत्साह जाकै होय, जाकै अखंडक्रियाविशेष होय, बहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानरूप प्रचंड पवनताकरि प्रज्वलित भई, जो शुद्धआशयरूप अग्निकी शिखा ताकरि दग्ध भये हैं कर्मरूप इंधन जाके, बहुरि ध्यानके विशेषकरि क्षीण किये हैं कषायरूप विषके अंकुरे जानें, बहुरि नाशके सन्मुख भया है मोहकर्म जाके, याहीतैं पाया है सूक्ष्मसांपराय संयम जानें ऐसा मुनिकै होय है। याका गुप्तिसमितिविषैं अंतर्भाव जानना। जातैं गुप्तिसमिति होतैं यामें सूक्ष्मलोभकषायका होना यह विशेष गुण है। ताकी अपेक्षा न्याराही जानना। बहुरि सूत्रके अनुक्रमवचनकरि उत्तरोत्तर अनंतगुणी विशुद्धता जाननी। बहुरि चारित्रके भेद शब्दकी अपेक्षा तौ संख्यात हैं। बुद्धिके विचारतैं असंख्यात है। अर्थतैं अनंतभेद हैं। ऐसैं यहू चारित्र आश्रवके निरोधतैं परमसंवरका कारण जानना। अर समितिविषैं प्रवर्तै हैं। तामें धर्म अनुप्रेक्षा परीषहनिका जीतना चारित्र यथासंभव जाननें ॥

आगें पूछै है कि, चारित्र तौ कह्या, ताके अनंतर 'तपसा निर्जरा च' ऐसा कह्या था सो अब तपका विधान कहना। ऐसैं पूछैं कहै हैं। तप दोयप्रकार है, बाह्य अभ्यंतर। सो भी प्रत्येक छहप्रकार है। तहां बाह्य तपके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्याग-विविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥ १९ ॥

याका अर्थ-- अनशन, अवमोदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशय्यासन, कायक्लेश ए छह बाह्यतप हैं तहा इष्टफल कहिये धनकी प्राप्ति, जगतमें प्रशंसा स्तुति होना, रोगादिक मिटना, भय मिटना, मंत्रसाधन करना इत्यादिक इसलोकसंबंधीं फलकी अपेक्षा जामें नाहीं, तथा ऐसैंही परलोकसंबंधी विषयनिका सुखकी अभिलाषपणा स्वर्गआदिके फलकी निदानरूप वांछा जामें नाहीं, अर संयमकी प्रसिद्धि, रागादिकका विनाश, कर्मकी निर्जरा, ध्यानकी प्राप्ति आगमके अभ्यासकी प्राप्ति; इनके अर्थि जो आहार कषायका विषयका त्याग करना, सो अनशन है ॥ १ ॥ बहुरि संयमकी वृद्धि, निद्रा आलस्यका नाश, वात पित्त कफआदि दोषका प्रशमन, संतोष, स्वाध्यायआदि सुखतैं होना इत्यादिककी सिद्धिके अर्थि आहार थोरा लेना, सो, अवमोदर्य है ॥ २ ॥ बहुरि मुनि आहारकूं जाय तब प्रतिज्ञा करै, जो, एकही घर जावेंगे, तथा एकही रस्तामें प्रवेश करेंगे, तथा स्त्रीका दिया आहार लेंगे, तथा एकही द्रव्यका भोजन लेंगे इत्यादिक अनेकरीति हैं; तिसकी प्रतिज्ञा करि नगरमें जाय तिस प्रतिज्ञाकी रीति मिलै तो ले, ना तरि फिरि आवै, सो वृत्तिपरिसंख्यान तप है । यह आशाकी निवृत्तिके अर्थि है ॥ ३ ॥

बहुरि इन्द्रियका उद्धतपणाका निग्रह निद्राका जीतना स्वाध्याय सुखतैं होना इत्यादिके अर्थि घृत आदि पुष्ट स्वादरूप रसका त्याग, सो चौथा रसपरित्याग तप है ॥ ४ ॥ बहुरि शून्यस्थानक आदि जे एकांत जगह जहा प्राणीनिकूं पीडा न होय तहां संममी सोवना बैठना आसन करै, यातैं आपके स्वाध्यायध्यानमें बाधा न होय, ब्रह्मचर्य पालै, स्वाध्यायध्यानकी सिद्धि होय, ऐसैं पांचवा विविक्तशय्यासन तप है ॥ ५ ॥ बहुरि आतापके स्थान वृक्षका मूल इनविषैं वसना, चौडै निरावरण शयन करना, बहुतप्रकार आसनकरि प्रतिमायोग करना, इत्यादिक कायक्लेश तप है ॥ ६ ॥ सो यहू देहकूं कष्ट देनेके अर्थि है, परीषहके सहनेको अर्थि है, सुखकी अभिलाषा मेटनेके अर्थि है, मार्गकी प्रभावनाके अर्थि है इत्यादि प्रयोजनके अर्थ जानना ॥

इहां कोई पूछै, जो परीषहमें अर यामें कहां विशेष है ? ताका समाधान, जो स्वयमेव आवै सो तौ परीषह है अर आप चलाय करै सो कायक्लेश है । फेरि कोई पूछै, इन छह तपनिके बाह्यपणां कैसैं हैं ? ताका समाधान, जो, ये

तप बाह्यद्रव्यकी अपेक्षा लिये हैं। तातैं आहारादिकका त्याग करना आदि इनमें प्रधान हैं। तातैं इनकूं बाह्यतप कहै हैं, तथा परके ए तप प्रत्यक्ष हैं, सर्वलोक इन तपनिकूं जाने हैं, तातैं भी बाह्यतप कहिये। तथा बाह्य कहिये मोक्ष-मार्गतैं बाह्य जे मिथ्यादृष्टि ते भी इनकूं करै हैं। तातैं भी इनकूं बाह्यतप कहिये हैं॥ आगें अभ्यंतर तपके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥

याका अर्थ-- प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यान ए छह उत्तर कहिये दूसरा जो अभ्यंतरतप ताके भेद हैं। इनकै अभ्यंतरपणा कैसैं हैं? सो कहै हैं। ए तप अन्यमतिनिकरि नाहीं कीजिये हैं। तथा मनकूंही अवलंब्यकरि इनका प्रवर्तन है। तथा बाह्यद्रव्यकी अपेक्षा इनमें प्रधान नाहीं हैं, तातैं इनकै अभ्यंतरपणा है। तहां प्रमादके वशतैं व्रतमें दोष उपजै ताके मेटनेकूं करिये सो तौ प्रायश्चित्त है॥ १॥ पूज्य पुरुपनिका आदर करना, सो विनय है॥ २॥ कायकी चेष्टाकरि तथा अन्यद्रव्यकरि जो उपासना टहल करना, सो वैयावृत्य है॥ ३॥ ज्ञानभावना-विषैं आलस्यका त्याग, सो स्वाध्याय है॥ ४॥ परद्रव्यकेविषैं यह मैं हूं यह मेरा है ऐसा संकल्पका त्याग, सो व्युत्सर्ग है॥ ५॥ चित्तका विक्षेप चलाचलपनेका त्याग, सो ध्यान हैं॥ ६॥ ऐसैं छह अभ्यंतरतप हैं॥ आगें इन तपनिके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ नवचतुर्दशपंचद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥

याका अर्थ— नवभेद प्रायश्चित्तके, च्यारिभेद विनयके, दशभेद वैयावृत्यके, पांचभेद स्वाध्यायके, दोयभेद व्युत्सर्गके ऐसैं अनुक्रमतैं जानने। ए ध्यानतैं पहलें पांच तपके भेद हैं। इहां यथाक्रमवचनतैं प्रायश्चित्त नवभेद है इत्यादि जानना। बहुरि प्राग्ध्यानात् इस वचनतैं ध्यानके भेद बहुत हैं। तातैं आगें कहसी ऐसा जानना॥ आगें आदिका प्रायश्चित्ततपके नवभेद कहे, तिनका स्वरूपभेदके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आलोचनप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥

याका अर्थ-- आलोचन, प्रतिक्रमण, ते दोऊ, विवेक, व्युत्सर्ग, तप, छेद, परिहार, उपस्थापना ए नवभेद प्रायश्चित्ततपके

हैं। तहां गुरुनिकूं अपना प्रमादकरि लागैं दोषका कहना ताकै दश दोष टालने, सो आलोचन है। बहुरि मोकूं दोष लागे हैं, ते मिथ्या होऊ निष्फल होऊ ऐसैं प्रगट वचनकरि कहना, सो प्रतिक्रमण है। बहुरि आलोचनाप्रतिक्रमण दोऊ करना, सो तदुभय है। बहुरि दोषकरि सहित जे आहार पाणी उपकरण तिनका संसर्ग भया होय तौ तिनका त्याग करना, सो विवेक है। कायोत्सर्गआदि करना सो व्युत्सर्ग है। अनशन आदि तप करना, सो तप है। दिवस पक्ष मास आदिकी दीक्षाका घटावना, सो छेद है। पक्ष मास आदिका विभागकरि दूरिपर वर्जन करना, संघवारे राखणा, सो परिहार है। अगिली दीक्षा छेदि नवा सरधे दीक्षा देना, सो उपस्थापन है॥

याका विशेष लिखिये है। तहां प्रमादजनित दोषका तौ सोधन, अर भावकी उज्वलता, अर शल्यका मिटना, अर अनवस्थाका अभाव, अरु मर्यादमें रहना, संयमकी दृढता इत्यादिकी सिद्धिके अर्थि प्रायश्चित्तका उपदेश है। तहां प्रायश्चित्तका शब्दार्थ ऐसा, प्रायः कहिये साधुलोकका समूह तिनका चित्त जिस कार्यमें प्रवर्तै, सो प्रायश्चित्त कहिये। अथवा प्राय नाम अपराधका है, ताका चित्त कहिये शुद्ध करना, सो भी प्रायश्चित्त कहिये। तहां दशदोषवर्जित गुरुका अपना लग्या दोष कहना, सो आलोचन कह्या। सो गुरु एकान्तविर्षै तौ बैठे होय, प्रसन्नचित्त होय, बहुरि देश काल जाननेवाला शिष्य होय सो विनयकरि अपना प्रमाददोषकूं कहै। ताके दशदोष टालै ते कौन सो कहिये है। शिष्य ऐसा विचारै, जो, गुरुनिकूं कछु उपकरण दीजिये तौ प्रायश्चित थोरा दे, ऐसैं विचारि कछू नजरि करना, सो प्रथम दोष है॥ मैं दुर्बल हौं, अशक्त हौं, रोगी हौं, उपवासादि करनेको समर्थ नाहीं, जो थोरासा प्रायश्चित्त दे तौ दोषका निवेदन करूं ऐसैं थोरा प्रायश्चित्त लेनेके अभिप्रायतैं कहना, सो दूसरा दोष है॥ अन्य जो न देखे तिनकूं छिपाय अर अन्यके देखैं प्रगट भये ते दोष कहने ऐसा मायाचार करना सो तीसरा दोष है॥ आलस्यतैं, प्रमादतैं, अल्पअपराधकूं तौ गिणै नाहीं, ताके जाननेका उत्साह नाहीं अर स्थूलदोषहीकूं कहना, सो चौथा दोष है॥ मोटे प्रायश्चित्त देनेके भयकरि बडा दोष तौ छिपावना अर तिसके अनुकूलही अल्पदोष कहना, सो पांचमा दोष है॥ ऐसैं व्रतके अतीचार होतैं कह्या प्रायश्चित्त होय है, ऐसैं अभिप्रायतैं प्रायश्चित्त जाननेकूं गुरुनिकी उपासना टहल करना दोष न कहना, सो छटा दोष है॥ पाक्षिक चातुर्मासिक सांवत्सरिक जो प्रतिक्रमण ताकूं घणे मुनि भेले होय करैं, तहां आलोचनाके शब्द बहुत होय तिनमें आप भी अपना दोष कहै अभिप्राय ऐसा होय जो कछू सुणैंगे कछू न सुणैंगे ऐसा विचारिकरि नचींत होना सो सातमां दोष है॥ गुरुनिकरि दिये प्रायश्चित्तविर्षै संदेह उपजावै, जो, यह प्रायश्चित्त दीया सो आगममें है कि नाहीं? ऐसी शंका करि अन्यमुनिनिकूं पूछै सो आठमां दोष है॥ कछु प्रयोजन विचारी अर आपसमान होय ताहीकूं अपना प्रमाददोष

तप बाह्यद्रव्यकी अपेक्षा लिये हैं। तातैं आहारादिकका त्याग करना आदि इनमें प्रधान हैं। तातैं इनकूं बाह्यतप कहै हैं, तथा परके ए तप प्रत्यक्ष हैं, सर्वलोक इन तपनिकूं जाने हैं, तातैं भी बाह्यतप कहिये। तथा बाह्य कहिये मोक्षमार्गतैं बाह्य जे मिथ्यादृष्टि ते भी इनकूं करै हैं। तातैं भी इनकूं बाह्यतप कहिये हैं॥ आगें अभ्यंतर तपके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥

याका अर्थ— प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यान ए छह उत्तर कहिये दूसरा जो अभ्यंतरतप ताके भेद हैं। इनकै अभ्यंतरपणा कैसैं हैं? सो कहै हैं। ए तप अन्यमतिनिकरि नाहीं कीजिये हैं। तथा मनकूंही अवलंब्यकरि इनका प्रवर्तन है। तथा बाह्यद्रव्यकी अपेक्षा इनमें प्रधान नाहीं हैं, तातैं इनकै अभ्यंतरपणा है। तहां प्रमादके वशतैं व्रतमें दोष उपजै ताके मेटनेकूं करिये सो तौ प्रायश्चित्त है॥ १॥ पूज्य पुरुषनिका आदर करना, सो विनय है॥ २॥ कायकी चेष्टाकरि तथा अन्यद्रव्यकरि जो उपासना टहल करना, सो वैयावृत्य है॥ ३॥ ज्ञानभावनाविषैं आलस्यका त्याग, सो स्वाध्याय है॥ ४॥ परद्रव्यकेविषैं यह मैं हूं यह मेरा है ऐसा संकल्पका त्याग, सो व्युत्सर्ग है॥ ५॥ चित्तका विक्षेप चलाचलपनेका त्याग, सो ध्यान हैं॥ ६॥ ऐसैं छह अभ्यंतरतप हैं॥ आगें इन तपनिके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ नवचतुर्दशपंचद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥

याका अर्थ— नवभेद प्रायश्चित्तके, च्यारिभेद विनयके, दशभेद वैयावृत्यके, पांचभेद स्वाध्यायके, दोयभेद व्युत्सर्गके ऐसैं अनुक्रमतैं जानने। ए ध्यानतैं पहलें पांच तपके भेद हैं। इहां यथाक्रमवचनतैं प्रायश्चित्त नवभेद है इत्यादि जानना। बहुरि प्राग्ध्यानात् इस वचनतैं ध्यानके भेद बहुत हैं। तातैं आगें कहसी ऐसा जानना॥ आगें आदिका प्रायश्चित्ततपके नवभेद कहे, तिनका स्वरूपभेदके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आलोचनप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥

याका अर्थ— आलोचन, प्रतिक्रमण, ते दोऊ, विवेक, व्युत्सर्ग, तप, छेद, परिहार, उपस्थापना ए नवभेद प्रायश्चित्ततपके

हैं। तहां गुरुनिकूं अपना प्रमादकरि लागैं दोषका कहना ताकै दश दोष टालने, सो आलोचन है। बहुरि मोकूं दोष लागे हैं, ते मिथ्या होऊ निष्फल होऊ ऐसैं प्रगट वचनकरि कहना, सो प्रतिक्रमण है। बहुरि आलोचनाप्रतिक्रमण दोऊ करना, सो तदुभय है। बहुरि दोषकरि सहित जे आहार पाणी उपकरण तिनका संसर्ग भया होय तौ तिनका त्याग करना, सो विवेक है। कायोत्सर्गआदि करना सो व्युत्सर्ग है। अनशन आदि तप करना, सो तप है। दिवस पक्ष मास आदिकी दीक्षाका घटावना, सो छेद है। पक्ष मास आदिका विभागकरि दूरिपर वर्जन करना, संघवारे राखणा, सो परिहार है। अगिली दीक्षा छेदि नवा सरधे दीक्षा देना, सो उपस्थापन है॥

याका विशेष लिखिये है। तहां प्रमादजनित दोषका तौ सोधन, अर भावकी उज्वलता, अर शल्यका मिटना, अर अनवस्थाका अभाव, अरु मर्यादमें रहना, संयमकी दृढता इत्यादिकी सिद्धिके अर्थि प्रायश्चित्तका उपदेश है। तहां प्रायश्चित्तका शब्दार्थ ऐसा, प्रायः कहिये साधुलोकका समूह तिनका चित्त जिस कार्यमें प्रवर्तै, सो प्रायश्चित्त कहिये। अथवा प्राय नाम अपराधका है, ताका चित्त कहिये शुद्ध करना, सो भी प्रायश्चित्त कहिये। तहां दशदोषवर्जित गुरुका अपना लग्या दोष कहना, सो आलोचन कह्या। सो गुरु एकान्तविषैं तौ बैठे होय, प्रसन्नचित्त होय, बहुरि देश काल जाननेवाला शिष्य होय सो विनयकरि अपना प्रमाददोषकूं कहै। ताके दशदोष टालै ते कौन सो कहिये है। शिष्य ऐसा विचारै, जो, गुरुनिकूं कछु उपकरण दीजिये तौ प्रायश्चित थोरा दे, ऐसैं विचारि कछू नजरि करना, सो प्रथम दोष है॥ मैं दुर्वल हौं, अशक्त हौं, रोगी हौं, उपवासादि करनेको समर्थ नाहीं, जो थोरासा प्रायश्चित्त दे तौ दोषका निवेदन करूं ऐसैं थोरा प्रायश्चित्त लेनेके अभिप्रायतैं कहना, सो दूसरा दोष है॥ अन्य जो न देखे तिनकूं छिपाय अर अन्यके देखै प्रगट भये ते दोष कहने ऐसा मायाचार करना सो तीसरा दोष है॥ आलस्यतैं, प्रमादतैं, अल्पअपराधकूं तौ गिणै नाहीं, ताके जाननेका उत्साह नाहीं अर स्थूलदोषहीकूं कहना, सो चौथा दोष है॥ मोटे प्रायश्चित्त देनेके भयकरि बडा दोष तौ छिपावना अर तिसके अनुकूलही अल्पदोष कहना, सो पांचमा दोष है॥ ऐसैं व्रतके अतीचार होतैं कह्या प्रायश्चित्त होय है, ऐसैं अभिप्रायतैं प्रायश्चित्त जाननेकूं गुरुनिकी उपासना टहल करना दोष न कहना, सो छटा दोष है॥ पाक्षिक चातुर्मासिक सांवत्सरिक जो प्रतिक्रमण ताकूं घणे मुनि भेले होय करै, तहां आलोचनाके शब्द बहुत होय तिनमें आप भी अपना दोष कहै अभिप्राय ऐसा होय जो कछू सुणैंगे कछू न सुणैंगे ऐसा विचारिकरि नचीत होना सो सातमां दोष है॥ गुरुनिकरि दिये प्रायश्चित्तविषैं संदेह उपजावै, जो, यह प्रायश्चित्त दीया सो आगममें है कि नाहीं? ऐसी शंका करि अन्यमुनिनिकूं पूछै सो आठमां दोष है॥ कछु प्रयोजन विचारी अर आपसमान होय ताहीकूं अपना प्रमाददोष

कहकारि प्रायश्चित्त आपही ले ले, सो नवमां दोष है, यामें बडा प्रायश्चित्त ले तौ फलकारी नांहीं ॥ अन्यमुनिनिकूं अतीचार लाग्या होय तानें कछु प्रायश्चित्त लीया होय ताकूं देखि तहां विचारै, जो, याकेसमान मोकूं भी अतीचार लाग्या सो याकूं प्रायश्चित्त दिया सोही मोकूं युक्त है ऐसैं विचारि अपना दोष प्रगट न करना प्रायश्चित्त ले लेना, सो दशमां दोष है ॥ अपने अपराधकूं घणें काल न राखणा तत्काल गुरुनिपै जाय कपटभावतैं रहित होय बालककी ज्यौं सहलपणांतैं दोपनिकूं कहै ताकै ए दोप नाहीं लागै हैं ॥

तहां मुनि तौ आलोचन करै, सो एक गुरु एक आप ऐसैं दोयही होते एकान्तमें करै। अर अर्जिका करै, तब एक गुरु होय दोय अर्जिका होय ऐसैं तीनि होतैं करै, सो प्रकाश होय जहां करै अंधकारमें न करै। बहुरि लज्जाकारि तथा अपमानके भयकारि दोप प्रगटकारि अतीचार न सोधै तौ नाहीं है धनविषैं लेना जाके ऐसा जो लोभी सो धन विनशै खेदखिन्न रहै है तैसैं चारित्रके दोषतैं खेदखिन्न रहै है। बहुरि जो आलोचना न करै तौ महान तप भी वांछित फलकूं नाहीं दे है। जैसैं कडीं औपधि कायविषैं गये विना फलदाता नाहीं, तैसैं जानना। बहुरि आलोचन भी करै अर गुरुका दीया प्रायश्चित्त न ले तो भी महान फल न होय है। जैसैं कोई अन्नादिक वीनने लगै, तामें एक एक देखतैं कंकर आदि देखता तौ जाय, अर कंकरकूं काढै नाहीं, तौ अन्न उत्तमस्वादरूप फलको नाहीं दे, तैसैं जानना। बहुरि आलोचनकारि प्रायश्चित्त ले तौ जैसैं मांजा आरसामें रूप उज्वल दीखै तैसैं व्रत उज्वल होय है ॥

प्रतिक्रमणका लक्षण पूर्वैं कह्याही है। बहुरि तदुभयका प्रयोजन यह है। कोऊ दोष तौ आलोचनहीतैं मिटै है। कोऊ प्रतिक्रमणहीतैं मिटै है। कोऊ दोप दोऊ करैं मिटै है। इहां कोई तर्क करै है, जो यह तौ अयुक्त है। कह्या, जो, विना आलोचन तौ प्रायश्चित्त नाहीं कह्या, फेरि कह्या, जो, प्रतिक्रमणहीतैं शुद्ध होय है, सो यहू अयुक्त है। बहुरि कहोगे, जो, आलोचनपूर्वक प्रतिक्रमण है, तौ तदुभयका कहना व्यर्थ है। ताका समाधान, जो, यह दोप इहां नाहीं है। जातैं सर्वही प्रतिक्रमण आलोचनपूर्वकही है। परंतु यामें विशेप है, सो कहा? जो पहली गुरुनिकी आज्ञातैं शिष्य जानि रहे हैं, जो प्रतिक्रमणमात्रतैं फलाणा दोप निर्वर्तन होय है। सो ऐसा दोपका प्रतिक्रमण तौ शिष्यही कारि ले है। सो तौ आलोचनपूर्वक भयाही। बहुरि जो पहली जा दोपका प्रतिक्रमणकी गुरुनिकी आज्ञा नाहीं, सो आलोचनपूर्वकही शिष्य करै ही है। अर गुरु करै सो आपही कारि ले है। बहुरि तिनकै आलोचना नाहीं है ॥

विवेकका विशेप जो, जा वस्तुविषैं सदोपका संदेह पड्या होय, तहां सदोपके विषैं निर्दोपका ज्ञान भया होय, तथा जाका त्याग किया होय, जाका ग्रहण हो जाय, तिसका फिरि त्याग करना, सो विवेक है। कायोत्सर्ग करै है सो

कालका नियमकारि करै । अर तप आदिक पहलै कहे तेही जानने । इन प्रायश्चित्तनिकूं कहां कहां लेने ताका संक्षेप कहिये है । विद्या पढना, आतापनादियोग करना, अन्यका उपकरण ग्रहण करणा इत्यादिक विनयसहित पूछै विना करै, तौ याका आलोचनमात्र प्रायश्चित्त है । बहुरि परोक्ष प्रमादसेबना, आचार्यका वचन न करना, आचार्यके प्रयोजननिमित्त विना पूछ्या जाना, परसंघमेंसूं विना पूछ्या आवना इत्यादिविषैं भी आलोचनाही है । आवश्यकआदिकी क्रियाका देश-कालका नियम किया था, ताकूं धर्मकथा करने आदिके निमित्तकारि विस्मरण होय जाय, ताका फेरि करनेविषैं प्रतिक्रमण करना, प्रायश्चित्त है । बहुरि इंद्रियवचनका दुःपरिणाम होय जाय, आचार्य आदिकै पग लागि जाय, व्रतसमितिगुप्तिविषैं स्वल्प अतीचार लागै, परका बिगाड होनेका वचन निकलै, कलह होय जाय, वैयावृत्य स्वाध्यायादिविषैं प्रमाद करै इत्यादिविषैं भी प्रतिक्रमण है । बहुरि अकाल भोजनके अर्थि गमन करै, लोंचन स्वच्छंद करै, स्वप्नविषैं रात्रिभोजना-दिका अतिचार लागै, उदरमैंसू कृमि नीसरै, मांछर पवनादिकके निमित्ततैं रोमांच होय, हरिततृणादिकी भूमि तथा पंक-परि गमन करै, गोडातांई जलमें प्रवेश करै, नावतैं नदी तिरै, अन्यका उपकरण आदि अपणावै, पुस्तक प्रतिमादिकका अविनय होय जाय, पंचस्थावरका घात होय जाय, अदृष्टदेशविषैं मलमूत्र क्षेपै, प्रतिक्रमण क्रिया व्याख्यानके अंत इत्यादिविषैं आलोचन प्रतिक्रमण दोऊ हैं ॥ बहुरि भयकारि तथा भूलिकारि तथा विना जाणे तथा कोई कार्यकी अशक्त-ताकारि शीघ्रताकारि महाव्रतमें अतिचार लागै, तौ तहां तपपर्यंत छहूप्रकार प्रायश्चित्त है । बहुरि त्यागने योग्यकूं छिपाय-कारि छोडै, बहुरि कोई कारणकारि अप्रासुकका ग्रहण होय जाय, तथा प्रासुकका भी त्याग किया था तथा भूलिकारि ग्रहण किया सो यादि आई ताका फेरि त्याग करणा, प्रायश्चित्त है ॥

बहुरि खोटा सुपना आवै, खोटा चिंतवन करै, मलमूत्रका अतीचारविषैं बडी नदी बडी बनीके प्रवेश तरणेविषैं कायो-त्सर्ग प्रायश्चित्त है । बहुरि बहुतवार प्रमादतैं बहुत प्रत्यक्ष अपराध करै प्रतिकूल प्रवर्तै, विरुद्ध श्रद्धा करै, तिनकूं अनु-क्रमतैं छेद मूलभूमि अनुपस्थापन पारंचिक ए प्रायश्चित्त हैं । तहां अपने संघके आचार्यके निकटही सर्वतैं नीचा पाडि प्रायश्चित्त दे सो तौ अनुपस्थापन है । बहुरि अन्य आचार्यके निकटि तीनिवार फेरैं सो पारंचिक है । ऐसैं नवप्रकार प्रायश्चित्त देशकाल शक्तिसंयमादिके अविरोधकारि जैसा अपराध होय तैसा प्रायश्चित्तकारि दोष मिटावै । जैसैं यथा रोग देशकालादि देखि वैद्य रोग मिटावै तैसैं करै । या जीवके परिणामके स्थानक असंख्यातलोकपरिमाण है । तेतेही अपराध लागें हैं । सो प्रायश्चित्तके भेद तेते नाहीं हैं । व्यवहारनयकारि सामान्यकारि प्रायश्चित्तके भेद यथासंभव होय हैं ॥

आगें विनयके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं

॥ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— ज्ञानका विनय, दर्शनका विनय, चारित्रका विनय, उपचारका विनय ऐसे विनयतपके च्यारि भेद हैं। इहां विनयका अधिकार है । तातैं विनयशब्दका संवंध करना । यातैं ज्ञानविनय दर्शनविनय चारित्रविनय उपचारविनय ऐसैं संवंध भया । तहां बहुमानसहित मोक्षके अर्थि ज्ञानका ग्रहण अभ्यास स्मरण इत्यादि करणा, सो ज्ञानविनय है । वहुरि शंकादिदोषरहित तत्वार्थनिका श्रद्धान करना, सो दर्शनविनय है । वहुरि ज्ञानदर्शनसहित होयकरि चारित्रविपैं समाधानरूप चित्तकूं कारण, सो चारित्रविनय है । वहुरि आचार्यआदि प्रत्यक्ष विद्यमान होय तिनकौं देखिकरि उठना तिनके सन्मुख जाना अंजली जोडना इत्यादि उपचारविनय तथा ते परोक्ष होय तौ मन वचन कायकरि हाथ जोड नमस्कार करना, गुणका स्तवन करना, स्मरण करना इत्यादि भी उपचारविनय हैं । याका प्रयोजन, जो, विनयतैं ज्ञानका लाभ होय है, आचारकी शुद्धता होय है, भली आराधना होय इत्यादिकके अर्थि विनयकी भावना है ॥

आगै वयावृत्त्यतपके भेदके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्षग्लानगणकुलसङ्घसाधुमनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥

याका अर्थ— आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन दशनिका वैयावृत्य करणा, ऐसैं याके दश भेद हैं । इहां विशेपके भेदतैं भेद जानने । तातैं आचार्यवैयावृत्य इत्यादि कहना । तहां जिनतैं व्रतआचरण कीजिये, ते आचार्य हैं । वहुरि जिनतैं मोक्षके अर्थि प्राप्त होय शास्त्र पढिये ते उपाध्याय हैं । वहुरि महान् उपवास आदि तप करते होय, ते तपस्वी है । वहुरि जे शास्त्र पढनेआदि शिक्षाके अधिकारी होय, ते शैक्ष हैं । वहुरि रोगआदिकरि क्षीण होय, ते ग्लान हैं । वहुरि जे स्थविर कहिये वडे मुनिनिकी परिपाटिके होय, ते गण कहिये । वहुरि दीक्षा देनेवाले आचार्यके शिष्य होय; तिनकूं कुल कहिये । वहुरि च्यारिप्रकार मुनिनिका समूहकूं संघ कहिये । वहुरि घणा कालका दीक्षक होय, सो साधु कहिये । वहुरि जो लोकमान्य होय सो मनोज्ञ कहिये । इनकैं रोग परिषह मिथ्या-त्वादिका संवंध आवै तव अपनी कायचेष्टाकरि तथा अन्य द्रव्य करि तिनका प्रतिकार इलाज करै, सो वैयावृत्य है । याका फल, जो, वैयावृत्यतैं समाधिका तौ धारण होय है, निर्विचिकित्साभाव होय है, प्रवचनका वात्सल्य होय है

इत्यादि आनना। इहां च्यारिप्रकारके मुनिकूं संघ कह्या, तहां ऋषि यति अनगार मुनि ए च्यारि जानने। तहां ऋद्धिधारीकूं तौ ऋषि कहिये, इन्द्रियकूं वश करै सो यति कहिये, अवधिमनःपर्ययज्ञानीकूं मुनि कहिये, सामान्य घरके त्यागी साधु सो अनगार कहिये। अथवा यति आर्यिका श्रावक श्राविका ऐसैं भी च्यारिप्रकार संघ है। बहुरि मनोज्ञ कह्या, सो जामें पंडितपणाकारि कला वक्तापणा आदि गुण होय, सो लोकविषैं मान्य होय सो मनोज्ञ है। तथा ऐसा अविरतसम्यग्दृष्टि होय, जामें मार्गकूं ऊंचो दिखावनेके गुण होय, ताकूं भी मनोज्ञ कहिये है॥ आगें स्वाध्यायके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय, धर्मोपदेश ए पांच स्वाध्यायतपके भेद हैं। तहां निर्दोष ग्रंथ अर्थ उभय उनका जो भव्यजीवनिकूं देना शिखावना सो तौ वाचना है। बहुरि संशयके दूरि करनेकूं निर्बाध निश्चयके समर्थनिकूं दृढ करनेकूं परकूं ग्रंथका अर्थ दोऊका प्रश्न करना, सो पृच्छना है। जो आपकी उच्चताकारि प्रार्थि परके ठगनेके अर्थि नीचा पाडनेके अर्थि परकी हास्य करनेकूं इत्यादि खोटे आशयसूं पूछै सो पृच्छना तप नाहीं हैं। बहुरि जिस पदार्थका स्वरूप जान्या, ताका मनकेविषैं बारबार चिंतवन करना, सो अनुप्रेक्षा है। बहुरि पाठकूं शुद्ध घोखना, सो आम्नय है। बहुरि धर्मकथा आदिका अंगीकार, सो धर्मोपदेश है। ऐसैं पांच प्रकारका स्वाध्याय है। याका फल प्रज्ञाका तौ अतिशय होय, प्रशस्त आशय होय, परमसंवेग होय, तपकी वृद्धि होय, अतीचारका शोधन होय इत्यादिक याके प्रयोजन हैं। तथा संशयका नाश होय, मार्गकी दृढता होय, परवादीकी आशंकाका अभाव होय, ए फल हैं॥

आगें व्युत्सर्गतपके भेदके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— बाह्य अभ्यंतर ऐसैं दोयप्रकारका परिग्रहका त्याग ए व्युत्सर्गके दोय भेद हैं। तहां व्युत्सर्ग नाम त्यागका है, सो दोयप्रकार है, बाह्य उपाधिका त्याग, अभ्यंतर उपाधिका त्याग। तहां अनुपात्तवस्तु जो आपतैं न्यारा धनधान्यादिक, सो तौ बाह्यपरिग्रह हैं। बहुरि कर्मके निमित्ततैं भये आत्माके भाव जे क्रोधआदिक, ते अभ्यंतर परिग्रह हैं। बहुरि कायका भी त्याग या अभ्यंतरमें गिणना। सो कालका नियमकारि भी होय है, अर यावज्जीव भी होय है।

आगें विनयके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं

॥ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— ज्ञानका विनय, दर्शनका विनय, चारित्रका विनय, उपचारका विनय ऐसे विनयतपके च्यारि भेद हैं। इहां विनयका अधिकार है । तातैं विनयशब्दका संबंध करना । यातैं ज्ञानविनय दर्शनविनय चारित्रविनय उपचारविनय ऐसैं संबंध भया । तहां बहुमानसहित मोक्षके अर्थि ज्ञानका ग्रहण अभ्यास स्मरण इत्यादि करणा, सो ज्ञानविनय है । बहुरि शंकादिदोषरहित तत्वार्थनिका श्रद्धान करना, सो दर्शनविनय है । बहुरि ज्ञानदर्शनसहित होयकरि चारित्रविषैं समाधानरूप चित्तकूं कारण, सो चारित्रविनय है । बहुरि आचार्यआदि प्रत्यक्ष विद्यमान होय तिनकौं देखिकरि उठना तिनके सन्मुख जाना अंजली जोडना इत्यादि उपचारविनय तथा ते परोक्ष होय तौ मन वचन कायकरि हाथ जोड नमस्कार करना, गुणका स्तवन करना, स्मरण करना इत्यादि भी उपचारविनय हैं। याका प्रयोजन, जो, विनयतैं ज्ञानका लाभ होय है, आचारकी शुद्धता होय है, भली आराधना होय इत्यादिकके अर्थि विनयकी भावना है ॥

आगै वयावृत्त्यतपके भेदके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्षग्लानगणकुलसङ्घसाधुमनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥

याका अर्थ— आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन दशनिका वैयावृत्य करणा, ऐसैं याके दश भेद हैं । इहां विशेषके भेदतैं भेद जानने । तातैं आचार्यवैयावृत्य इत्यादि कहना । तहां जिनतैं व्रतआचरण कीजिये, ते आचार्य हैं । बहुरि जिनतैं मोक्षके अर्थि प्राप्त होय शास्त्र पढिये ते उपाध्याय हैं । बहुरि महान् उपवास आदि तप करते होय, ते तपस्वी है । बहुरि जे शास्त्र पढनेआदि शिक्षाके अधिकारी होय, ते शैक्ष हैं । बहुरि रोगआदिकरि क्षीण होय, ते ग्लान हैं । बहुरि जे स्थविर कहिये वडे मुनिनिकी परिपाटिके होय, ते गण कहिये । बहुरि दीक्षा देनेवाले आचार्यके शिष्य होय; तिनकूं कुल कहिये । बहुरि च्यारिप्रकार मुनिनिका समूहकूं संघ कहिये । बहुरि घणा कालका दीक्षक होय, सो साधु कहिये । बहुरि जो लोकमान्य होय सो मनोज्ञ कहिये । इनकैं रोग परिषह मिथ्या-त्वादिका संबंध आवै तव अपनी कायचेष्टाकरि तथा अन्य द्रव्य करि तिनका प्रतिकार इलाज करै, सो वैयावृत्य है । याका फल, जो, वैयावृत्यतैं समाधिका तौ धारण होय है, निर्विचिकित्साभाव होय है, प्रवचनका वात्सल्य होय है

इत्यादि जानना । इहां च्यारिप्रकारके मुनिकूं संघ कह्या, तहां ऋषि यति अनगार मुनि ए च्यारि जानने । तहां ऋद्धिधारीकूं तौ ऋषि कहिये, इन्द्रियकूं वश करै सो यति कहिये, अवधिमनःपर्ययज्ञानीकूं मुनि कहिये, सामान्य घरके त्यागी साधु सो अनगार कहिये । अथवा यति आर्यिका श्रावक श्राविका ऐसैं भी च्यारिप्रकार संघ है । बहुरि मनोज्ञ कह्या, सो जामें पंडितपणाकारि कला वक्तापणा आदि गुण होय, सो लोकविषैं मान्य होय सो मनोज्ञ है । तथा ऐसा अविरतसम्यग्दृष्टि होय, जामैं मार्गकूं ऊंचो दिखावनेके गुण होय, ताकूं भी मनोज्ञ कहिये है ॥ आगें स्वाध्यायके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय, धर्मोपदेश ए पांच स्वाध्यायतपके भेद हैं । तहां निर्दोष ग्रंथ अर्थ उभय उनका जो भव्यजीवनिकूं देना शिखावना सो तौ वाचना है । बहुरि संशयके दूरि करनेकूं निर्बाध निश्चयके समर्थनिकूं दृढ करनेकूं परकूं ग्रंथका अर्थ दोऊका प्रश्न करना, सो पृच्छना है । जो आपकी उच्चताकारि प्रार्थि परके ठगनेके आर्थि नीचा पाडनेके अर्थि परकी हास्य करनेकूं इत्यादि खोटे आशयसूं पूछै सो पृच्छना तप नाहीं हैं । बहुरि जिस पदार्थका स्वरूप जान्या, ताका मनकेविषैं वारबार चिंतवन करना, सो अनुप्रेक्षा है । बहुरि पाठकूं शुद्ध घोखना, सो आम्नय है । बहुरि धर्मकथा आदिका अंगीकार, सो धर्मोपदेश है । ऐसैं पांच प्रकारका स्वाध्याय है । याका फल प्रज्ञाका तौ अतिशय होय, प्रशस्त आशय होय, परमसंवेग होय, तपकी वृद्धि होय, अतीचारका शोधन होय इत्यादिक याके प्रयोजन हैं । तथा संशयका नाश होय, मार्गकी दृढता होय, परवादीकी आशंकाका अभाव होय, ए फल हैं ॥

आगें व्युत्सर्गतपके भेदके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— बाह्य अभ्यंतर ऐसैं दोयप्रकारका परिग्रहका त्याग ए व्युत्सर्गके दोय भेद हैं । तहां व्युत्सर्ग नाम त्यागका है, सो दोयप्रकार है, बाह्य उपाधिका त्याग, अभ्यंतर उपाधिका त्याग । तहां अनुपात्तवस्तु जो आपतैं न्यारा धनधान्यादिक, सो तौ बाह्यपरिग्रह है । बहुरि कर्मके निमित्ततैं भये आत्माके भाव जे क्रोधआदिक, ते अभ्यंतर परिग्रह हैं । बहुरि कायका भी त्याग या अभ्यंतरमें गिणना । सो कालका नियमकारि भी होय है, अर यावज्जीव भी होय है ।

ऐसैं बाह्य अभ्यंतर जे परिग्रह, तिनका त्याग, सो व्युत्सर्ग है। याके प्रयोजन निःसंगपणा निर्भयपणा जीवितकी आशाका अभाव ए व्युत्सर्गके फल हैं। इहां ऐसा जानना, जो, व्युत्सर्ग महाव्रतमें भी कह्या, दशधर्ममें भी कह्या, प्रायश्चित्तमें भी कह्या, इहां तपका भेद भी कह्या। सो यामें विरोध नाहीं है। जातैं कोई पुरुषतैं कोईविषैं त्यागकी शक्ति होय ऐसैं शक्तिकी अपेक्षा अनेकप्रकारकरि कह्या है। उत्तरोत्तर उत्साह वढनेका भी प्रयोजन है। इहां एता विशेष और जानना, जो, महाव्रतमें परिग्रहका त्याग कह्या है, तहां तौ धनधान्य आदि वाह्यपरिग्रहका त्याग प्रधान है। अर दशधर्ममें कह्या है, तहां आहारादिक योग्यपरिग्रहका त्याग कह्या है। अर प्रायश्चित्तमें दोषका प्रतिपक्षी कह्या है। अर इहां तपमें कह्या, सो सामान्य है॥ आगें ध्यानके बहुतभेद कहनेकूं न्यारा राख्या था ताके अब भेद कहनेका अवसर है, सो ताके पहली ध्यानका करनेवालेका तथा ध्यानका स्वरूप तथा ध्यानका कालकी निर्धारके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ॥ २७ ॥

याका अर्थ— उत्तमसंहननका धारी पुरुषके एकाग्रचिंताका निरोध सो ध्यान है। सो उत्कृष्टपणें अंतर्मुहूर्ततांई रहै। तहां आद्यके तीनि संहननकूं उत्तम कहिये वज्रऋषभनाराचसंहनन वज्रनाराचसंहनन नाराचसंहनन ऐसैं। ए तीनूंही ध्यानके साधन हैं। वहुरि इनमें मोक्षका साधन एक आदिकाही है, अन्यतैं मोक्ष होय नाहीं। ऐसैं ए तीनि संहनन जाकै होय सो पुरुष ध्यानी है। वहुरि अग्र कहिये मुख, ऐसा एकमुख कहिये एकाग्र जाकै होय, सो एकाग्र कहिये मनकी चिंता है, सो अनेक पदार्थके अवलंबनतैं चलायमान है, याकूं अन्यसमस्तका अवलंबनतैं छुडाय एकअग्रविषैं नियमरूप करै, सो एकाग्रचिंतानिरोध है। यह ध्यानका स्वरूप कह्या। वहुरि अंतर्मुहूर्त ऐसा कालका परिमाण है, सो अंतर्गत कहिये मुहूर्तके माही होय, सो अंतर्मुहूर्त कहिये। आङ् ऐसा उपसर्ग जोडै मर्याद भई, जो, अंतर्मुहूर्ततांई लेणा आगे नाहीं, ऐसैं कालकी मर्यादा कही। जातैं एते कालसिवाय चिंताका एकाग्रनिरोध होय सकै नाहीं दुर्द्धर है। इहां प्रश्न, जो, चिंताका निरोध सो ध्यान है, तौ निरोध तौ अभावकूं कहिये है, तातैं ध्यान निर्विषय अभावरूप ठहऱ्या, सो गधेके सींगकी ज्यौं भया। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं। अन्यचिंताकी निवृत्तिकी अपेक्षा तौ अभावरूपही है। वहुरि चिंता जिसविषयकूं अवलंब्या तिसकै आकार प्रवृत्तितैं सद्भावरूप है। जातैं अभाव है सो भावान्तरके स्वभावरूप है, तातैं वस्तुका धर्म है, हेतुका अंग है। अभावतैं भी वस्तुही सधै है। अथवा निरोधशब्दकूं भावसाधन न करिये अर कर्मसाधन करिये, तव जो निरोधरूप भई सोही चिंता ऐसैं ज्ञानही चलाचलपणासूं रहित होय एकाग्र भया

है दीप्यमान होय, तैसें जानना ॥ स्थिर

सोही ध्यान है। जैसें अग्निकी शिखा निरावाधप्रदेशमें चलाचलपणातें रहित होयकारि स्थिर है दीप्यमान होय, तैसें जानना ॥

इहां विशेष श्लोकवार्तिकतें लिखिये है। इस सूत्रविषैं ध्याता ध्यान ध्येय ध्यानका काल ए च्यारि कह्या है। अर

सामर्थ्यतें याकी प्रवृत्तिकी सामग्री जानिये है। इहां कोई अन्यमती कहै है, जो, हमारे मतमें चित्तकी वृत्तिके निरोधकूं

योग कह्या है। ताकूं पूछिये, जो, साहीही चित्तकी वृत्तिका निरोध जाका कछू विषय नाहीं ऐसा कह्या है, कि, ज्ञानका

स्थिर होना कह्या है? जो, आद्यकी पक्ष कहैगा, तौ निर्विषय तुच्छ अभावरूप है, जो प्रमाणभूत नाहीं अर स्थिर ज्ञान-

स्वरूप कहैगा, तौ हमारी मिली। तहां वह कहै है, जो, हम तुच्छाभावरूप तौ नाहीं कहै। पुरुषका स्वरूपकेविषैं

अवस्थानकूं चित्तकी वृत्तिका निरोध कहै हैं। याहीकूं समाधि कहिये है। असंप्रज्ञातयोग ध्यान ऐसा कहिये है तहां

समाधिविषैं ज्ञानका भी उच्छेद होय जाय है। तातैं हमारै ऐसा कह्या है, जो, समाधिकालविषैं द्रष्टा कहिये पुरुष ताका

स्वरूपकेविषैं अवस्थान होय है। आत्मा तौ द्रष्टा है अर ज्ञाता प्रधान है। पुरुषका स्वरूपकेविषैं अवस्थान है, सो परम

उदासीनपणा है। ताकूं कहिये, जो, पुरुषकूं द्रष्टा कहै हैं, जो ज्ञाता भी पुरुषही है। देखना जानना तौ दोऊ अविनाभावी

है। जो प्रधानकूं ज्ञाता कहैगा तौ द्रष्टा भी प्रधानही ठहरैगा, तब पुरुष जड ठहरैगा ॥

इहां कहै, जो, ज्ञाता पुरुषकूं कहै ज्ञान अनित्य है। तातैं पुरुषकै अनित्यता आवैगी। तौ ऐसें तौ प्रधान भी

अनित्य ठहरैगा। तब वह कहै, प्रधानका परिणाम तौ अनित्य हम मानैंही हैं। तौ ताकूं कहिये ऐसैंही पुरुषके पर्यायके

ज्ञानके विशेषतैं अनित्य माननेमें कहा दोष है? तब कहै जो पर्याय पुरुषतैं अभेदरूप है, तातैं पुरुषकै अनित्यपणा आवै

है। तहां कहिये, जो, प्रधानतैं तिसका परिणाम कहा अत्यंतभिन्न है? जातैं प्रधानकै अनित्यता न आवै। तहां वह

कहै, जो, परिणामही अनित्य है परिणामी तौ नित्यही है। ताकूं कहिये, जो, ऐसें है तौ ज्ञान अरु आत्माकै अभेद

होते भी ज्ञानही अनित्य है, पुरुष नित्य है, या ठहरी। फेरि वह कहै, पुरुष तौ अपरिणामीही है। तौ ताकूं कहिये,

प्रधान भी अपरिणामी क्यों न कहे? तब वह कहै, व्यक्तितैं प्रधान परिणामी कहिये, शक्तितैं नाहीं। तहां ताकूं कहिये,

पुरुष भी ऐसैंही हैं, यामें विशेष कहा? जातैं जो स्वत्वरूप है सो सर्वही परिणामी है। अपरिणामीकै तौ क्रमपणा अरु

युगपत्पणा होय नाहीं। इनविना अर्थक्रिया होय नाहीं। तातैं द्रष्टा है तैसैंही आत्मा ज्ञाता है। यामें बाधा नाहीं। तातैं

असंप्रज्ञातयोगरूप ध्यान कहै, सो बणैं नाहीं। अज्ञानरूप पुरुषका स्वरूप अवस्थान संभवै नाहीं। यातैं जडपणा आवै है।

बहुरि संप्रज्ञातयोग है सो ज्ञानकी वृत्ति ज्ञेयका होना तिसमात्र है, सो ज्ञानका स्वरूपही है। यामैं तौ कछू विवाद

नाहीं है। जातैं ध्यान है सो ज्ञानहीका एकाग्र होना है ॥

वहुरि कोई कहै, जो, ज्ञान ज्ञेयस्वरूपही होय जाय है, सो यह बणै नाहीं । जातैं विषयरूप ज्ञेय तौ जड भी है । सो जडरूप तौ ज्ञान होय नाहीं । ज्ञानकी स्वच्छता ऐसैंही है, जो ज्ञेयवस्तु तौ जैसा है तैसा जहांका तहां तिष्ठै है । आप तिसकूं जाने है, तातैं तिस आकार भया उपचार कहिये है । ज्ञान आत्माका गुण है सो आत्मा अमूर्तिक है । तातैं ज्ञानही अमूर्तिक अर ताकी वृत्तिरूप अंश हैं ते भी अमूर्तिक हैं । तातैं अमूर्तिकमें काहू मूर्तिकका प्रतिबिंब कैसैं आय पडै ? जो ज्ञानकी वृत्तिकों मूर्तिक मानिये तौ इंद्रियनिकारि ग्रहण करने योग्य ठहरै । वहुरि मनकी ज्यौं अति-सूक्ष्मपणातैं अप्रत्यक्ष कहिये सो स्वसंवेदनगोचर भी न ठहरै । अर स्वसंवेदनस्वरूप भी न कहिये, तौ अन्य अर्थकूं भी नाहीं जानेगा । वहुरि दिपकी ज्यौं परप्रकाशकही बतावै तौ दीपक तौ जड है, अन्यके नेत्रनिकौं ज्ञानका कारण सहकारी-मात्र उपचार करि कहिये है, परमार्थतैं ज्ञानका कारण आत्माही है ॥

वहुरि मूर्तिककै तौ स्वसंवेदन कहूं देखा नाहीं । तथा काहूनें मान्या भी नाहीं । तातैं ज्ञानकी वृत्ति जे पर्यायके अमूर्तिकही हैं । वहुरि कहै जो ज्ञानकी वृत्तिके विषयके जाननेका नियम हैं, तातैं जानिये है, जो ज्ञेयनिके प्रतिबिंबनिकूं ए धारै हैं । ताकूं कहिये, जो, निराकारकै भी विषयका नियमकी सिद्धी है । जैसैं पुरुषके जाकूं देखै ताका भोगका नियम है, तैसैं । फेरि वह कहै, जो, बुद्धिके विषय अर्थका प्रतिबिंब है, ताहि पुरुष भोगवै है, तातैं विषयप्रति नियम है । ताकूं कहिये, जो, बुद्धि केईक अर्थका प्रतिबिंबकूं न धारै, अर समस्त अर्थका प्रतिबिंबकूं न धारै, सो इहां कारण कहा हैं ? तहां वह कहै, जो, अहंकार जिसविषैं भया तिसहीका प्रतिबिंबकूं बुद्धि धारै है । ताकूं कहिये, जो, ऐसैं तौ अहंकारके नियम ठहऱ्या । बुद्धि तौ प्रतिबिंब विनाही अर्थकूं स्थापै है यह ठहरी । अर मनका संकल्प अहंकार जान्या, अर इंद्रियनिका आलोच्या मन जान्या, ऐसैं अपनी अपनी सामग्रीतैं ही विषयप्रति नियम ठहऱ्या । तातैं प्रतिबिंबकी कल्पना करि कह्या । ऐसैं होतैं चित्तकी वृत्तिका सारूप्य कहिये पदार्थके प्रतिबिंब धारनेरूप समानरूपता नाहीं है, तातैं तिसमात्र संप्रज्ञातयोग ठहरै । तातैं अन्यमतिनिकै ध्यानका संभव नाहीं है ॥

वहुरि तिनकै ध्येयवस्तु भी नाहीं ठहरै है । तिनके ध्यानके सूत्रमें ध्येयका ग्रहण ही नाहीं है । वहुरि ध्यानकी सिद्धि नाहीं, तव ध्येयकी सिद्धि काहेतैं होय ? वहुरि स्याद्वादीनिकै ध्यान है सो विशिष्टध्येयविषैं कह्या ही है । जातैं चिंताका निरोधके एकदेशतैं तथा सर्वदेशतैं ध्यानके एकाग्रविषयपणांकारि विशेषण किया है, सोही ध्येय है । अनेकविषैं अप्रधानविषैं तथा कल्पितविषैं चिंतानिरोध नाहीं । तातैं एकाग्रविषैं चिंतानिरोधकूं ध्यान कह्या है । इहां एकशब्द है सो तौ संख्यावाचक है । वहुरि अंग्यते तत् अथवा अंगति तस्मिन् ऐसा विग्रहतैं अग्रशब्द निपज्या है । तातैं याका अर्थ

मुख है, भद्र इंद्र अग्र विप्र ए शब्द निपातसिद्ध हैं । अंगि ऐसी धातु है, सो गतिअर्थमें हैं । ताका कर्मविषैं तथा अधिकरणविषैं र ऐसा प्रत्ययका विधान है । बहुरि चिंता मनकी वृत्तिकूं कहिये है । बहुरि अनियम जाकै क्रिया होय ताका नियमतैं क्रियाका कर्तापणाविषैं अवस्थान होय सो निरोध कहिये । इहां समास करै हैं, एक अग्र कहिये मुख जाकै होय सो तौ एकाग्र कहिये । बहुरि चिंताका निरोध सो चिंतानिरोध कहिये । बहुरि एकाग्र सो ही चिंतानिरोध सो एकाग्रचिंतानिरोध कहिये । ऐसा एकाग्रचिंतानिरोध है सो ए काहेतैं होय है ? आत्माकी सामर्थ्यके विशेषतैं होय है । जैसैं दीपगकी शिखा निर्वातदेशविषैं अंतरंग बहिरंग हेतुके वशतैं निश्चल तिष्ठै है तैसैं चिंताहू वीर्यांतरायकर्मके क्षयोप-शमके विशेषतैं तथा निराकुलप्रदेशविषैं निश्चल तिष्ठै है । यातैं अन्यचिंतानिरोधतैं नानामुखपणाकी निवृत्ति कही । अथवा अग्रशब्द है सो अर्थपर्यायवाची है । जातैं याकूं कर्णसाधन करिये, तब अर्थपर्यायवाची होय है । एकपणा सोही अग्र सो एकाग्र कहिये । ऐसैं एकत्वकी संख्याविशिष्ट अर्थ भया । तथा एकशब्दकूं प्रधानवाची लीजिये । तब एकाग्रविषैं चिंतानिरोध कहिये । ऐसैं अनेक अर्थ जे गौणभूत तिनविषैं चिंतानिरोधका निषेध भया । तातैं कल्पनारोपित ध्यानका निषेध भया ॥

इहां तर्क, जो, अनेकवादीनिके सर्वपदार्थ एकानेकरूप मानिये है तातैं अनेकरूपका निषेध कैसैं होय ? एक अर्थविषैं ध्यान कैसैं होय ? ताका समाधान, यह विनाविचाऱ्या तर्क है । एक अर्थकी एकपर्यायके प्रधानपणाकरि ध्यानका विषय-पणा कहिये है । तहां द्रव्यकै अन्यपर्याय होतैं भी गौणपणातैं ध्यानके विषय नाहीं हैं, याहीतैं एकशब्द संख्यावाचीका यहां ग्रहण है । फेरि तर्क, जो, ऐसैं तौ कल्पनारोपितविषयविषैं ध्यान भया । जातैं पर्यायमात्र तौ वस्तु नाहीं, द्रव्यमात्र भी नाहीं है । द्रव्यपर्यायस्वरूप जात्यंतर वस्तु माना है । नयका विषय वस्तुका एकदेश है । जो नयका विषय सर्वदेश वस्तु मानिये तौ याकै विकलादेशपणाका विरोध आवै । ताका समाधान, जो, ऐसैं कहनेवाला भी न्यायका वेत्ता नाहीं । जो, सर्वथा द्रव्यपर्यायस्वरूपका निषेधरूप पर्यायमात्र मानिय तौ अवस्तु होय । अर जहां द्रव्यपर्यायकी परस्पर सापेक्षा होय तहां तौ अवस्तुपणा है नाहीं । तातैं नयका एकदेशविषय है तौ ताकूं अवस्तु न कहिये ॥

बहुरि कोई कहै, स्वरूपका आलंबन सोही ध्यान है । सो यह भी युक्त नाहीं । तातैं सर्वथा अंशरहित वस्तुकै तौ ध्यानध्येय-पणा आवै नाहीं । कथंचित् अनेकरूप वस्तुकैही तिसतैं अविरोध ध्यान होय है । अर्थांतरभूत जो ध्येयवस्तु तिसविषैं ध्यान प्रवर्तै है । ऐसैं आपतैं जुदाही जो द्रव्यपरमाणु तथा भावपरमाणुको आलंबै है । बहुरि ऐसा नाहीं, जो, द्रव्यपरमाणु भावपरमाणु

ऐसैं सदा रही उत्पत्ति, सदाही विनाश नाहीं ठहरै है । जातैं क्षणिककी सिद्धि न होय । सो ऐसैं मानेगा तौ अंतर्मुहूर्तस्थितिरूप भी ठहरैगा । सो अंतर्मुहूर्त ठहरिकरि नाश भया पीछैं अन्य अंतर्मुहूर्त ठहरनेकूं उत्पत्ति भई । ऐसैं समान है । बहुरि वह कहै, जो, ऐसैं है तौ संवर आदिपर्यंत ध्यानका काल क्यौं न कहै । ताका उत्तर, जो, जैसा जहां संभवै तैसा तहां कहिये । मनकी वृत्तिस्वरूप जो चिंताका निरोध एकध्येयविषैं अंतर्मुहूर्तशिवाय ठहरना संभवै नाहीं । यह अनुभवगोचर है । मनकी वृत्तिके एकविषयतै अन्यविषयविषैं उलटना देखिये है । ऐसैं हीनसंहननवालाके चिंताका निरोध अल्पकाल देखि अर उत्तमसंहननवालेके अंतर्मुहूर्तकी संभावना करिये है । आगमप्रमाणकरि भी यह सिद्ध है । बहुरि अंतर्मुहूर्तका स्वरूप आगमतैं जानना ॥

बहुरि इहां कोई कहै, जो, ज्ञान है सोही ध्यान है । ताकूं कहिये, जो, ऐसैं नाहीं है । ज्ञान है सो तौ चलाचल-रूप है । ध्यान है सो ज्ञानका निश्चलपणा है । यातै ज्ञानतैं याका लक्षण जुदा है । याहीतैं ध्यानकूं अधिकाररूपकरि ताका स्वरूप कहनेकूं अंतर्मुहूर्त कहनेतैं बहुतकालरूप दिवसादिकका निषेध है । जातैं ऐसी शक्तिका अभाव है । बहुरि सूत्रविषैं एकशब्द है ताका अर्थ प्रधानपणा भी होय है । तिस अर्थकी अपेक्षा इहां एक कहिये प्रधान जो ध्यान करनेवाला पुरुष ताही विषैं चिंताका निरोध करै । बहुरि अग्रशब्दका भी अर्थ पुरुष होय है । ताकी अपेक्षा भी पुरुषविषैं चिंताका निरोध कहिये अन्यध्येयकूं छोडि आपविषैंही ध्यानकी प्रवृत्ति होय है । ऐसैं अनेकअर्थका वाची जो एकाग्रशब्द सो सूत्रमें युक्त स्थाप्या है । इहां एकार्थ वचनही नाहीं ग्रहण करना । जो एकार्थ ऐसा वचन ग्रहण करिये तौ " विचारोऽर्थव्यंजनयोगसंक्रान्तिः " इस सूत्रमें द्रव्यपर्यायविषैं पलटनेका अर्थ है । ताका निषेध आवै । तातैं एकाग्रशब्दतैं पलटनेका अर्थ विरोध्या न जाय है । ऐसैं जानना ॥

बहुरि जो चिंताका निरोध दिवसमासादि पर्यंत ठहरना कहिये तौ वणै नाहीं । जातैं बहुतकाल रहे इंद्रियनिकै पीडा उपजै है । बहुरि जो श्वासोछ्वासके रोकनेकूं ध्यान कहिये तौ सांशरूपके तौ शरीरका नाश होय मृत्यु होय जाय है । बहुरि जो अन्यवादी कहै, मंद मंद श्वासोछ्वासका प्रचार करि रोकै तौ शरीरका पात न होय है, यामें पीडा भी नाहीं होय है ॥ ताकूं कहिये, जो, ऐसा नाहीं है । मंद श्वासोछ्वास रोकनेका साधन करना तौ ध्यानका साधन करना है । जैसैं आसनआदि साधिये है, तैसैं यह भी है । ध्यान तौ एकाग्रचिंतानिरोध होय सोही है । बहुरि जय आदिविषैं चित्तकी प्रवृत्ति रहै है सो भी ध्यान नाहीं है । बहुरि ध्यानके साधनके उपाय गुप्त्यादिक पहलै कहेही, ते संवरके कारण भी हैं । अर ध्यानके भी उपाय है ॥

आगें ध्यानके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ आर्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥ २८ ॥

याका अर्थ— आर्त रौद्र धर्म्य शुक्ल ए च्यारि ध्यानके भेद हैं। तहां ऋतुनाम दुःखका है, अथवा अर्दन कहिये अर्ति पीडा बाधा तिसविषैं उपजै सो आर्त कहिये। रुद्र नाम क्रूर आशयका है, ताका कर्म तथा ताविषैं उपजै सो रौद्र कहिये। धर्म पहला कह्या, सो तातैं सहित होय सो धर्म्य कहिये। शुचिगुणयोगतैं शुक्ल कहिये। आत्माका परिणाम कषायमलरहित उज्वल होय सो शुक्ल है। सो यह च्यारिप्रकार ध्यान है। प्रशस्त अप्रशस्त भेदतैं दोयप्रकार है। तहां अप्रशस्त आर्त रौद्र हैं। सो तौ पापके आश्रवकूं कारण हैं। बहुरि प्रशस्त धर्म्य शुक्ल है। सो कर्मके नाशकूं कारण हैं॥

आगें कहै है, प्रशस्तध्यान कैसें हैं ताका सूत्र—

॥ परे मोक्षहेतू ॥ २९ ॥

याका अर्थ— पर कहता अंतके दोय ध्यान हैं ते मोक्षके कारण हैं। तहां परशब्दतैं अंतका एक है ताके समीपतैं धर्म्यकूं उपचारकरि पर कहिये। जातैं सूत्रमें द्विवचन है, ताकी सामर्थ्यतैं गौणका भी ग्रहण भया। ऐसैं पर कहता धर्म्य शुक्ल ए दोय मोक्षके कारण हैं। प्रशस्त हैं इस वचनकी सामर्थ्यतैंही पहले आर्त रौद्र दोऊ अप्रशस्त संसारके कारण जानिये॥ आगें आर्तध्यान च्यारिप्रकार है, तहां आदिके भेदका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ आर्तममनोज्ञस्य सम्प्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥

याका अर्थ— अमनोज्ञवस्तुका संयोग होतैं तिसके वियोग करनेकूं बार बार चिंतवन होय, चिंताका प्रबंध होय, सो पहला आर्तध्यानका भेद है। तहां अमनोज्ञ नाम अप्रियका है। जो आपकूं बाधाका कारण एसैं विष कंटक शत्रु शस्त्र होय, सो अमनोज्ञ है। तिसके संयोग होतैं मेरै यह कैसैं वियोग होय? ऐसा संकल्प होय, सोही चिंताका प्रबंध ताकूं स्मृतिसमन्वाहार कहिये। यह पहला आर्तध्यान कहिये॥ आगें दूसरे भेदका लक्षणसूत्र कहै हैं—

यह रौद्रध्यान तीव्र होय है, तव अतिकृष्ण नील कापोतके वलतैं होय है। प्रमाद याका आश्रय है। नरकगतिका कारण है। इन दोऊ अप्रशस्त ध्याननितैं आत्मा ताता लोहका पिंड जैसैं जल खैंचै तैसैं कर्मनिकूं खैंचै है॥

आगैं पूछै है, जो, उत्तर दोय ध्यान मोक्षके कारण कहे, तामें आद्यका ध्यानके भेद स्वरूप स्वामीका निर्देश करना। ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं–

॥ आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यम् ॥ ३६ ॥

याका अर्थ– आज्ञा अपाय विपाक संस्थान इनिका विचय कहिये विचार ताकै अर्थि चिंतवन होय सो ए धर्म्यध्यानके च्यारि भेद है। तहा विचय विवेक विचारणा एकार्थ है। आज्ञा अपाय विपाक संस्थान इन च्यारिनिका विचय। वहुरि स्मृतिसमन्वाहारकी इहां अनुवृत्ति करणी सो जुदा जुदा लगाय लेणा। ऐसैं आज्ञाविचय स्मृतिसमन्वाहार इत्यादि संवंध जानना। सोही कहिये हैं। तहां उपदेशदाताके अभावतैं अपनी मंदबुद्धीतैं कर्मके उदयके वशतैं जे सूक्ष्म पदार्थ हैं तिनका हेतु दृष्टांत जानेविना सर्वज्ञका कह्या आगमहीकूं प्रमाणकारि अर " यह पदार्थका स्वरूप सर्वज्ञ भापा है, तैसैंही है, जातैं जिनदेव सर्वज्ञ वीतराग है, अन्यथा कहै नाहीं, " ऐसैं गहन पदार्थके श्रद्धानतैं अर्थका अवधारणा सो आज्ञाविचय है। अथवा आप जान्या है पदार्थका स्वरूप जानें, तैसाही परकूं कहनेकी है इच्छा जाकै ऐसे पुरुषके अपने सिद्धांतके अविरोधकारि तत्त्वार्थकूं दृढ करनेका है प्रयोजन जामें, वहुरि तर्क नय प्रमाणकी योजनाके विषैं प्रवीण ऐसा जो स्मृतिसमन्वाहार कहिये वार वार चिंतवन, सो भी आज्ञाविचय है। जातैं यामें सर्वज्ञकी आज्ञा प्रकाशनेहीका प्रयोजन भया, तातैं आज्ञाविचय ऐसा कहना॥

वहुरि ये प्राणी सर्वज्ञके आज्ञातैं विमुख हैं ते सर्व अंधकी ज्यौं मिथ्यादृष्टि है, अर मोक्षके अर्थि है परंतु सम्यङ्मार्गतैं दूरिही प्रवर्तैं हैं। ऐसैं समीचीनमार्गके अपायका चिंतवना सो अपायविचय है। अथवा मिथ्यादर्शन ज्ञान चारित्रतैं ए प्राणी कैसैं रहित होय, ऐसी चिंता वार वार करणी सो भी अपायविचय है। अपाय नाम अभावका है। सो मिथ्यादृष्टिनिके सांचे मार्गका अभाव चिंतवना तथा तिनके मिथ्यामार्गके अभावका उपाय चिंतवना तातैं अपायविचय कहिये। वहुरि ज्ञानावरणादि कर्मनिका द्रव्य क्षेत्र काल भव भावके निमित्ततैं भया जो फल ताके अनुभवका जो चिंतवना, सो विपाकविचय है। वहुरि लोकके संस्थानके विषैं चिंतवन रहै, सो, संस्थानविचय है। ऐसैं उत्तमक्षमादिरूप धर्म कह्या था तथा सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप धर्म तथा वस्तुका स्वरूप सो धर्म तिसतैं लग्या हूवा धर्मध्यान

च्यारिप्रकारही जानना । यह अविरतसम्यग्दृष्टि देशविरत प्रमत्तसंयत अर अप्रमत्तसंयत इनकै होय है ॥

इहां ऐसा जानना, जो, आज्ञा तौ सर्वज्ञकी वाणी है । अपाय मिथ्यात्वतैं अपशरण करना है । कर्मका फल सो विपाक । लोकका आकार सो संस्थान । तहां आज्ञासामान्य चिंतवै तव एकरूप चिंतानिरोध होय अरु न्यारा न्यारा पदार्थकूं आज्ञा प्रमाणकरि चिंतवै तब न्यारा जानना ॥ ऐसैंही संस्थानविषैं भी सामान्य विशेप चिंतवन जानना । अर अपायविपाकमें न्याराऩ्याराही चिंतवनविषैं चिंतानिरोध होय है ॥ बहुरि अविरतसम्यग्दृष्टि आदि तिनकै तौ गौणवृत्तिकरि ध्यान है । अरु अप्रमत्तकै यह ध्यान मुख्य है । बहुरि अनुप्रेक्षा तौ चिंतवनरूपही है । अरु जब एकाग्रचिंतानिरोध होय तब ध्यान कहिये है । ऐसैं अनुप्रेक्षातैं ध्यान जुदा जानना । बहुरि इहां कोई पूछै है, जो, मिथ्यादृष्टि अन्यमती तथा भद्रपरिणामी व्रतशीलसंयमादि तथा जीवनिकी दयाका अभिप्रायकरि तथा भगवानकी सामान्यभक्तिकरि धर्मबुद्धितैं चित्तकूं एकाग्रकरि चिंतवन करै है, तिनकै शुभ धर्मध्यान कहिये कि नाहीं ? ताका समाधान, जो, इहां मोक्षमार्गका प्रकरण है । तातैं जिस ध्यानतैं कर्मकी निर्जरा होय सोही इहां गणिये है । सो सम्यग्दृष्टिविना कर्मकी निर्जरा होय नाहीं । मिथ्यादृष्टिकै शुभध्यान शुभबंधहीका कारण है । अनादितैं केईवार ऐसा ध्यानकरि शुभ बांधै है, परंतु निर्जरा विना मोक्षमार्ग नाहीं । तातैं मिथ्यादृष्टिका ध्यान मोक्षमार्गमें सराह्या नाहीं, ऐसा जानना ॥

आगें तीनि ध्यानका तौ निरूपण किया अब शुक्लध्यानका निरूपण करना सो यह चारिप्रकार कहसी तिनमें आद्यके दोयके स्वामीके निर्देशके अर्थि सूत्र कहै हैं —

॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— आद्यके दोय शुक्लध्यान पूर्वके जाननेवालेकै होय हैं । तहां कहैंगे जे च्यारि शुक्लध्यानके भेद तिनमें आदिके दोय ध्यान पूर्वका जाकूं ज्ञान होय ताकै होय है । इहां पूर्वविदशब्दकरि श्रुतकेवली जानना । बहुरि सूत्रमें चशब्द है, ताकरि एसा जानना, जो, श्रुतकेवलीकै धर्मध्यान भी होय है । जातैं सूत्रके व्याख्यानतैं विशेषकी प्रतिपत्ति होय ऐसा वचन है । तातैं प्रमत्त अप्रमत्त गुणस्थानवर्ति मुनि भी पूर्वके वेत्ता होय हैं । तिनकै धर्म्यध्यान भी होय है । जातैं श्रेणीके चढने पहली तौ धर्म्यध्यान है । अरु श्रेणी चढै तब शुक्लध्यान होय है ऐसा व्याख्यान है । तातैं च शब्दकरि श्रुतकेवलीकै प्रमत्तअप्रमत्तविषैं धर्म्यध्यान होय हैं, ऐसा समुच्चय कीजिये ॥

योग कायवचनमनकी क्रियाकूं कहिये है । वहुरि संक्रांति कहिये परिवर्तन पलटना । तहां द्रव्यकूं छोडि पर्यायमें आवै, पर्यायकूं छोडि द्रव्यमें आवै यह तौ अर्थसंक्रांति है । वहुरि एक श्रुतके वचनकूं ग्रहणकरि फेरि ताकूं छोडि दूसरा श्रुतका वचनकूं आलंवन करै फेरि ताकूं भी छोडि अन्यवचनकूं आलंवै यह व्यंजनसंक्रांति है । वहुरि काययोगके आलंवनकूं छोडि वचनयोग तथा मनोयोगकूं आलंवन करै, अन्ययोगकूं छोडि फेरि फेरि काययोगकूं आलंवै यह योगसंक्रांति है । ऐसा परिवर्तन करै सो वीचार है ॥

इहां प्रश्न, जो, ऐसैं उलटै तव ध्यान कैसैं कहिये ? ध्यान तौ एकाग्र कह्या है । ताका समाधान, जो, एककूं आलंविकरि क्यौं एक ठहरि पीछै दूजेकूं आलंवन करै तहां ठहरै । ऐसैं ध्यान तौ ठहरनेहीकूं कहिये । परंतु इहां पहलैं ठहऱ्या फेरि ठहरना ऐसैं ध्यानका संतान है, सो ध्यानही है, यातैं दोष नाहीं । सो यह सामान्यविशेपकरि कह्या जो च्यारिप्रकार धर्मध्यान अर च्यारिप्रकार शुक्लध्यान सो पहले कहे जे गुप्ति आदि तिनस्वरूप जो अनेकप्रकार ध्यानके उपाय तिनकरि किया है उद्यम जानें ऐसा जो मुनि सो संसारके नाशके अर्थि ध्यान करनेकूं योग्य हो है । तहां द्रव्यपरमाणु अथवा भावपरमाणुकूं ध्यावता लिया है श्रुतज्ञानका वचनस्वरूप वितर्ककी सामर्थ्य जानें ऐसैं अर्थ अरु व्यंजन तथा काय अर वचनकूं पृथक्त्व कहिये भिन्नपणाकरि पलटता जो मन सो कैसा है मन ? जैसैं कोई पुरुप कार्य करनेकूं उत्साह करै सो जेता अपना वल होय तेतैं कियाही करै वैठि न रहै, तैसैं मनका वल होय तैसैं ध्यानकी पलटनी होवी करै, वैठि न रहै । ऐसैं मनकरि ध्यावता संता मोहकी प्रकृतिनिकूं उपशम करता संता तथा क्षय करता संता पृथक्त्ववितर्कविचार ध्यानका धारी होय है ॥

इहां दृष्टांत ऐसा, जैसैं, कोई वृक्षकूं काटने लगा ताकै शस्त्र कुहाडी तिखी न होय तव थोडा थोडा अनुक्रमतैं काटै, तैसैं इस ध्यानकेविर्षे मनकी पलटनि है सोहू शक्तिका विशेष है । तातैं अनुक्रमतैं मोहकी प्रकृतिका क्षय तथा उपशम करै है । वहुरि सोही ध्यानी जव समस्तमोहनीयकर्मकूं दग्ध करनेकूं उत्साहरूप होय तव अनंतगुणी विशुद्धताका विशेषकूं आश्रवकरि वहुत जे ज्ञानावरणकर्मकी सहाय करनेवाली कर्मप्रकृति तिनकी बंधकी स्थितिकूं घटावता तथा क्षय करता संता अपना श्रुतज्ञानका उपयोगरूप हूवा संता नाहीं रचा है अर्थव्यंजनयोगका पलटना जानें ऐसैं निश्चल मनस्वरूप होता संता क्षीण भये हैं कषाय जाके ऐसा वैडूर्यमणिकी ज्यौं मोहका लेपतैं रहित भया ध्यानकरि फेरि तिसतैं निवर्तन न होय पलटै नाहीं, ऐसैं एकत्ववितर्कअवीचार दूसरा होय है । ऐसैंही सो ध्यानी एकत्ववितर्क शुक्लध्यानरूप अग्निकरि दग्ध किये है घातिकर्मरूप ईंधन जानें अर देदीप्यमान भया है केवलरूप किरणनिका मंडल जाकै ऐसा वादलेके पिंजरमें

छिप्या था जो सूर्य जैसैं ताकूं दूरि भये निकलै तब बहुत देदिप्यमान सोहै, तैसैं सोहता संता भगवान् तीर्थंकर तथा अन्य केवली इंद्रनिकै आवनेयोग्य स्तुति करनेयोग्य पूजनेयोग्य उत्कृष्टकारि कछू घाटि कोटिपूर्व आयुकी स्थितितांई विहार करै है । जब अंतर्मुहूर्त आयु अवशेष रहै तब जो आयुकर्मकी स्थितिकै समानही वेदनीय नाम गोत्रकर्मकी स्थिति रह जाय तब तौ सर्व वचनमनयोग अर वादरकाययोगकूं निरोधरूप करि सूक्ष्मकाययोगकूं अवलंबै तब सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति ध्यानके ध्यावनेयोग्य होय है । बहुरि जो जब अंतर्मुहूर्त आयुकर्मकी स्थिति रहै तब वेदनीय नाम गोत्रकर्मकी स्थिति अधिक रही होय तौ यह सयोगी भगवान् अपना उपयोगका अतिशयकरि शीघ्र कर्मका पचावनेकी अवशेष कर्मरजका झाडनेकी शक्तिके स्वभावतैं दंड कपाट प्रतर लोकपूरण ए च्यारि क्रियारूप आत्माका प्रदेशनिका फैलना, सो च्यारि समयमें करि अरु बहुरि च्यारिही समयमें संकोच्या है प्रदेशनिका फैलना जानैं अर समानस्थिति किये है च्यारि अघातिकर्म जानैं ऐसे पहलैं शरीरप्रमाण था तिसही प्रमाण होयकरि सूक्ष्मकाययोगकरि सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति ध्यानकूं ध्यावै है । यह केवल समुद्घातकरि भया हो है । इहां उपयोगके अतिशयके विशेषण ऐसैं हैं । सामायिक है । सहाय जाकै, विशिष्ट है कारण कहिये परिणामनका विशेष जाकै, महासंवरस्वरूप है ऐसैं तीनि विशेषणरूप उपयोगका अतिशय है ॥

बहुरि तापीछै लगताही समुच्छिन्नक्रियानिवर्ति ध्यानका आरंभ करै है । तहां उच्छिन्न कहिये दूरि भया है श्वासोश्वासका प्रवर्तन जहां, बहुरि सर्व काय वचन मनयोग सर्वप्रदेशनिका चलना जहां दूरि भया है, यातैं याकूं समुच्छिन्नक्रियानिवर्ति ऐसा नाम कहिये है । तिस ध्यानविषैं सर्व बंध अर सर्व आश्रवकरि निरोधरूप अवशेष कर्मका झाडनेरूप सामर्थ्यकी प्राप्ति है । सो इस अयोगकेवली भगवानके सम्पूर्ण यथाख्यातचारित्र ज्ञान दर्शन भये हैं, ते सर्व संसारके दुःखके जालका जो संबंध ताका नाश करनेवाले हैं, साक्षात लगताही मोक्षके कारण हैं, ऐसे प्रगट भये हैं । सो यह भगवान तिस कालविषैं तिस ध्यानके अतिशयरूप अग्निकरि दग्ध भयो जो सर्वकर्मरूप मलका कलंक तातैं जैसैं अग्निके प्रयोगतैं धातु-पाषाणरूप समस्त कीट जाका वलि जाय दूरि होय, तब शुद्ध सुवर्ण नीसरै, तैसैं पाया है आत्मस्वरूप जानैं ऐसा होय निर्वाणकूं प्राप्त होय है । ऐसैं यह दोय प्रकार बाह्य आभ्यंतरका तप है, सो नवीनकर्मके आश्रवका निरोधका कारणपणातैं तौ संवरका कारण है । बहुरि पूर्वकर्मरूप रजके उडावनेकूं कारण है । तातैं निर्जराका कारण भी है ॥

इहां विशेष लिखिये हैं । केवलीकै चिंतानिरोधका अभाव है । जातैं क्षयोपशमज्ञानकी मानके द्वारा प्रवृत्ति होय सो चिंता है । क्षायिकज्ञानमें उपयोग निश्चल है अर ध्यानका लक्षण एकाग्रचिंतानिरोध कह्या, सो केवलीकै यह नाहीं । यातैं

करणके परिणाम तेई भई पैडी ताकरि ऊंचा चढता ऐसा जीव ताकै जो अतिशयकरि बहुत निर्जरा होय है, सो इस स्थानकतैं आगैं दशस्थाननिविषैं असंख्यातका गुणाकार है, सो ऐसा जीव जब प्रथमोपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति सोही भया निमित्त ताके निकट होतैं सम्यग्दृष्टि होता संता असंख्यगुणनिर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव चारित्रमोहका भेद जो अप्रत्याख्यानावरणकषाय ताके क्षयोपशमपरिणामकी प्राप्तिका कालविषैं श्रावक होता संता असंख्यातगुणनिर्जरावान होय है। बहुरि सोही जीव चारित्रमोहका भेद जो प्रत्याख्यानावरणकषाय ताका क्षयोपशमकी प्राप्तिका कालविषैं विशुद्धपरिणामके योगतैं विरत नाम पावै, तब तिस श्रावकतैं असंख्यातगुणनिर्जरावान मुनि होय है। बहुरि सोही जीव अनंतानुबंधीकषायकी चौकडीकूं परिणामकी विशुद्धताके बलतैं अप्रत्याख्यानावरण आदि कषायरूप संक्रमण प्रधानकारि परिणमता संता अनंतानुबंधीका वियोजक नाम कहावता संता तिस विरतसंयमी मुनितैं असंख्यातगुणनिर्जरावान मुनि होय है। बहुरि सोही जीव दर्शनमोहकी तीनि प्रकृति सोही भया तृणका समूह ताकूं दग्ध करता संता परिणामकी शुद्धिका अतिशयके योगतैं दर्शनमोहक्षपक नाम पावै तब तिस विरततैं भी असंख्यातगुणनिर्जरावान् होय है। बहुरि ऐसैं सो क्षायिकसम्यग्दृष्टि होयकरि श्रेणीकूं चढनेकूं सन्मुख होय तब चारित्रमोहके उपशमावनेप्रति व्यापाररूप होता संता परिणामकी विशुद्धताके योगतैं उपशमक ऐसा नाम पावता संता तिस क्षपकतैं असंख्यातगुणनिर्जरावान होय है। बहुरि सोही जीव समस्तचारित्रमोहका उपशम करनेका निमित्तकूं निकट होतैं पाया है उपशातकषाय नाम जानैं ऐसा होयकारि तिस उपशमकतैं असंख्यातगुणनिर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव समस्तचारित्रमोहकी उपशम करनेका निमित्तकूं निकट होतैं पाया है उपशांतकपाय नाम जानैं ऐसा होयकारि तिस उपशमकतैं असंख्यातगुणनिर्जरावान होय है। बहुरि सोही जीव समस्तचारित्रमोहकी क्षपणाप्रति सन्मुख हूवा संता परिणामकी विशुद्धताकारि वधता संता क्षपकनामकूं पावता संता तिस उपशांतकषायतैं असंख्यातगुणनिर्जरावान होय है। बहुरि सोही जीव चरित्रमोहके सम्पूर्ण क्षपणाके कारणपरिणामके सन्मुख हूवा संता क्षीणकषाय नाम पावता संता तिस क्षपकतैं असंख्यातगुणनिर्जरावान होय है। बहुरि सोही जीव द्वितीयशुक्लध्यानरूप अग्निकारि दग्ध किये हैं घातिकर्मके समूह जानैं ऐसा हूवा संता जिन नाम पावै, तब तिस क्षीणमोहतैं असंख्यातगुणनिर्जरावान होय है॥

इहां विशेष जो, एकादशस्थान एकजीवकी अपेक्षा कहे तैसैंही नानाजीवकी अपेक्षा जाननो। याका विशेष कथन गोमटसार लब्धिसार क्षपणासारतैं जानना॥ आगैं पूछै हैं, जो, सम्यग्दर्शन होतैं भी स्थानकस्थानकप्रति असंख्यातगुणी निर्जरा कही, यातैं परस्पर समानपणा तौ नाहीं भया। सो इहां विरतआदिके गुणका भेद है। यातैं जैसें श्रावक निर्ग्रंथ नाहीं

नाहीं तैसैं ते मुनि संयमी भी निर्ग्रंथ नाहीं ठहरेंगे । जातैं बाह्य आभ्यंतर ग्रंथ जिनकैं नाहीं ऐसे निर्ग्रंथ तौ ग्यारमां वारमां गुणस्थानवर्ती हैं, नीचिले तौ सग्रंथही ठहरेंगे । आचार्य कहै हैं, जो, यह ऐसा नाहीं है । तातैं गुणके भेदतैं परस्पर गुणका विशेष है तौ नैगमआदि नयके व्यापारतैं सर्वही संयमी मुनि निर्ग्रंथ हैं ऐसा सूत्र कहै हैं—

॥ पुलाकबकुशकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातका निर्ग्रन्थाः ॥ ४६ ॥

याका अर्थ— पुलाक बकुश कुशील निर्ग्रंथ स्नातक ए पांचप्रकार मुनि हैं, ते सर्वही निर्ग्रंथ हैं । तहां उत्तरगुणकी भावनाकरि रहित है मन जिनका बहुरि व्रतनिविषैं भी कोई क्षेत्रविषैं कोई कालविषैं परिपूर्णताकूं नाहीं पावते संते पुलाक ऐसा नाम पावै हैं । पुलाक ऐसा नाम परालसहित शालीका है, ताकी उपमा इनकूं देकरि संज्ञा कही है । सो मूलगुण-निविषैं कोई क्षेत्र कालके वशतैं विराधना होय है । तातैं मूलगुणमें अन्य मिलाय भया, केवल न भये, तातैं यह उपमा दे संज्ञा कही है । बहुरि निर्ग्रंथपणा जो सर्वथा बाह्य आभ्यंतर परिग्रहका अभाव तिसका तौ जिनकै उद्यम है, बहुरि व्रत जिनके अखंडित हैं, मूलगुण खंडित नाहीं करै हैं, बहुरि शरीर उपकरण इनकी जो विभूषा कहिये सुन्दरता ताका अनुवर्ती हैं कछू सुन्दरताका अनुराग है, जातैं संघके नामक आचार्य होय हैं तिनकैं प्रभावनाआदिका अनुराग होय है, तिनके निमित्ततैं शरीर तथा कमंडलू पिच्छिका पुस्तक तथा ताके बंधन तिनकी सुंदरताकी अभिलाष उपजै है, चैत्यालयके उपकरण आदिकी सुंदरताका अनुराग होय तथा शरीरकी सुंदरताका अनुराग संघनायककैं कदाचित् उपजै ऐसैं शरीर उपकरणानुवर्ती कहिये ॥

बहुरि नाहीं मिथ्या जो परिवारका अनुमोद कहिये हर्ष सोही भया छेद यातैं शवल कहिये चित्रवर्ण ताकरि युक्त हैं । इस विशेषणतैं ऐसा जानना, जो, पहलैं गृहस्थ थे तब परिवारसूं अनुराग था, सोही अनुराग अब संघतैं भया । इनकैं एकही परिवार है, सो परमनिर्ग्रंथअपेक्षा याकूं चित्रवर्ण आचरण कहिये । वीतरागता सरागताके मिलनेतैं चित्रला-चरण कह्या याहीतैं बकुश ऐसा नाम है । बकुशशब्द शवलका पर्यायशब्द है, दूसरा नाम है । इनका वार्तिकमें ऐसाही विशेषण किया हैं । ऋद्धिका अर यश अर शरीरका संस्कार अर विभूतिकेविषैं तत्परता है । तहां भी यहही आशय जानना, जो, ए दिगम्बर निर्ग्रंथमुनि हैं तिनकै कछु अशुभ लौकिकसंबंधी तौ व्यवहार है नाहीं धर्मानुराग है । सो मनकी प्रभावना संघसूं अनुराग है, ताके अर्थि ऋद्धिका अनुराग है, हमारै ऋद्धि पुरै तौ मार्गका वडी प्रभावना होय

ताईं है । पांच समिति तीनि गुप्तिका व्याख्यानरूप अधिकार आचारांगमें हैं, तहांताईं होय है । वहुरि स्नातक हैं ते केवली हैं, तिनकै श्रुत नाहीं है । बहुरि प्रतिसेवनापुलाकके तौ पंचमहाव्रत एक रात्रिभोजनकी त्याग छह व्रतानिमें परके वशतैं जवरीतैं एक व्रत कोईकी विराधना होय है ॥

इहां कोई पूछै है, कहा विराधन होय है ? तहां कहिय, जो, महाव्रतकी प्रतिज्ञा मन वचन काय कृत कारित अनुमोदनाकरि त्यागरूप है, तातैं दोष लागनेके अनेक भंग है । तातैं कोई भंगमें परके वशतैं विराधना होय जाय है । यह सामर्थ्यहीनपणाकरि दूषण लागै है । वहुरि बकुश दोयप्रकार है, उपकरणवकुश, शरीरवकुश । तहां उपकरणवकुशकै तौ वहुतविशेषनिकरि सहित कमंडलू पीछी पुस्तक वंधन आदि धर्मोपकरणकी अभिलाष होय तौ यह प्रतिसेवना है । वहुरि शरीरवकुशकै शरीरका संस्कार कदाचित् करै तव प्रतिसेवना है । वहुरि प्रतिसेवनाकुशील मूलगुण तौ विराधै नाहीं अर उत्तरगुणनिमें कोईक विराधना लगावै, सौ प्रतिसेवना है । वहुरि कषायकुशील निर्ग्रंथ स्नातकनिकै प्रतिसेवना नाहीं है । जाका त्याग होय ताकूं कोई कारणकरि ग्रहण करि ले तत्काल सावधान होय फेरि न करै सो प्रतिसेवना कहिये, याकूं विराधना भी कहिये । वहुरि तीर्थ कहता सर्व तीर्थंकरनिके समयविषैं सर्वही होय हैं ॥

वहुरि लिंग दोयप्रकार है, द्रव्यलिंग भावलिंग । तहां भावलिंगकरि तौ पाचूही भावलिंगी हैं, सम्यक्त्वसहित हैं, मुनिपणासूं निरादरभाव काहूकै नाहीं है । वहुरि द्रव्यलिंगकरि तिनमें भेद है । कोई आहार करै है, कोई अनशन आदि तप करै है, कोऊ उपदेश करै है, कोऊ अध्ययन करै है, कोऊ तीर्थविहार करै है, कोऊ ध्यान करै है, ताके अनेक आसन करै हैं, कोऊकौ दोष लागै है, प्रायश्चित्त ले है, कोऊ दोष नाहीं लगावै है, कोऊ उपाध्याय है, कोऊ प्रवर्तक है, कोऊ निर्यापक है, कोऊ वैयावृत्य करै है, कोऊ ध्यानविषैं श्रेणीका प्रारंभ करै है, कोऊकौं केवलज्ञान उपजै है, ताकी बाह्य वडी विभूतिसहित महिमा होय है इत्यादि मुख्य गौण वाह्यप्रवृत्तिकी अपेक्षा लिंगभेद है । ऐसा न जानना, जो, नग्न दिगंवर यथाजातरूप सामान्य सर्वकै है, तातैं भेद है । यह तौ सर्वकै समान है ऐसो न । कोई श्वेत पीत रक्त शाम आदि वस्त्र धारै, कोई जटा धारै, कोई कौपीन धारै, कोई दंड धारै, कोई शस्त्र धारै, कोई पालकी चढै, कोई रथ चढै इत्यादिक स्वरूप लिंगभेद नाहीं, ए सर्व अन्यमतीनिके भेद हैं । तथा इस पंचमकालमें जिनमतमें भी जैनाभास भये हैं । तिनमें भेद पड्या है । यह कालदोष है ॥

वहुरि लेश्या पुलाककै तौ तीनि शुभही होय हैं । जातैं याकै बाह्यप्रवृत्तिका आलंबन विशेष नाहीं है । अपने मुनि–

पणाहीसूं कार्य है । बहुरि बहुत तीव्र मंद परिणाम नाहीं होय हैं। बहुरि बकुश प्रतिसेवनाकुशीलके छह भी होय हैं। इहां अपिशब्दकरि ऐसा जनाया है, जो, अन्य आचार्य तीनि शुभही कहे हैं । बहुरि कषायकुशीलकै कपोततैं लगाय शुक्लपर्यंत च्यारि होय हैं । इहां भी अन्य आचार्यनिकी अपेक्षा तीनि जाननी । बहुरि निर्ग्रंथ स्नातककै एक शुक्लही है । लेश्याके स्थानक कषायनिके मंद तीव्र स्थानकनिकी अपेक्षा असंख्यात लोकपरिमाण कहे हैं । सो इनका पलटना सिद्धांतनितैं जानना ॥ बहुरि उपपादपुलाक तौ उत्कृष्टपणैं उत्कृष्टस्थितीवाले सहस्रारस्वर्गके देव तिनमें उपजै तहां अठारह सागरकी आयु पावैं । बहुरि बकुश प्रतिसेवनाकुशील उत्कृष्टपणैं आरण अच्युतस्वर्गके देव बाईससागरकी स्थितीवाले तिनमें उपजै हैं । बहुरि कषायकुशील निर्ग्रंथ तेतीस सागरकी स्थितिवाले सर्वार्थसिद्धिके देवनिविषैं उत्कृष्टपणें उपजे हैं । बहुरि जघन्यकरि ए सर्व सौधर्मकल्पविषैं दोयसागरकी स्थिति पावै हैं । मध्यके नानाभेद यथासंभव जानने । बहुरि स्नातक निर्वाणप्राप्तही होय है ॥

बहुरि स्थान कहिये संयमकी लब्धिके स्थानतैं कषायका तीव्रमंदपणा है सो है निमित्त जिनकूं ऐसे असंख्यात हैं । तहां सर्वजघन्य संयमस्थान पुलाक कषायकुशील इन दोऊनिकै समान होय ते असंख्यातस्थानतांई साथी रहैं, पीछें पुलाकका व्युच्छेद है । याके अगिले स्थान नाहीं अर अगिले स्थान असंख्यात एक कषायकुशीलकैही होय अन्यकै ते स्थान नाहीं । बहुरि आगें कषायकुशील प्रतिसेवनाकुशील दोऊ असंख्यातस्थानतांई लार रहै हैं । दोऊनिके समानस्थान होय है । पीछें प्रतिसेवनाकुशीलका व्युच्छेद है । अगिले स्थान याकै होय नाहीं । आगें असंख्यातस्थान कषायकुशीलकैही होय । ऐसैंही पीछैं कषायकुशीलका व्युच्छेद है । यातैं उपरि कषायरहित स्थान हैं ते निर्ग्रंथकैही हैं । ते भी स्थान असंख्यात हैं । पीछे निर्ग्रंथका भी व्युच्छेद हैं । आगें एक स्थान है, सो ताकूं पायकरि स्नातक केवली निर्वाणकूं प्राप्त होय है । ऐसैं ए संयमस्थान हैं । सो अविभागप्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा स्थानस्थानप्रति अनंतका गुणाकार है ॥ ऐसैं नवमां अध्यायमें संवर निर्जराका स्वरूप अर तिनके कारणके भेद स्वरूप, अनेकप्रकार गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परिषहका जीतना, चारित्र तप ऐसैं व्याख्यान भया । ताकूं भले प्रकार जानि श्रद्धान करि भव्यजीव हैं ते इनका धारण करौ । मोक्षकी प्राप्तिका यह उपाय है । यामें तत्पर होनायोग्य है । ऐसा श्रीगुरुनिका उपदेश है ॥

केवलज्ञानकी उत्पत्ति होय है । याहीतैं हेतु है लक्षण जाका ऐसी पंचमीविभक्तिका निर्देश किया है । तहां पूछैं है, मोहका
क्षय पहली कौन रीति करै है? सोही कहिये हैं । तहां प्रथम तौ भव्य होय, बहुरि सम्यग्दृष्टि होय, बहुरि परिणामकी
विशुद्धताकारि वर्द्धमान होय, सो जीव असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्त इन च्यारि गुणनिविषैं कोई गुणस्थानमें
मोहकी सातप्रकृति मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्व सम्यक्त्वप्रकृति अनन्तानुवन्धी क्रोध मान माया लोभ इनका क्षयकारि
क्षायिकसम्यग्दृष्टि होयकारि जब क्षपकश्रेणी चढवानें सन्मुख होय अधःप्रवृत्तिकरणकूं अप्रमत्तगुणस्थानविषैं पायकारि अपूर्व-
करणपरिणामका प्रयोगकारि अपूर्वकरण नामा क्षपकश्रेणीका गुणस्थानकूं भोगिकारि तहां नवीन शुभपरिणाम तिनमें क्षीण
किये हैं पापप्रकृतिनिके स्थिति अनुभाग जानैं, बहुरि वधाया है शुभकर्मका अनुभाग जानैं, ऐसा होय अनिवृत्तिकरणपरिणामकी
प्राप्तिकारि अनिवृत्तिवादरसांपरायनाम नवमां गुणस्थानकूं चढिकारि तहां कपायनिका अष्टक जो अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण
ताका सत्तामेंसूं नाशकारि फेरि नपुंसकवेदका नाशकारि फेरि स्त्रीवेदका क्षयकारि बहुरि नोकपायका षट्क हास्य रति अरति
शोक भय जुगुप्सा इनकूं पुरुषवेदविषैं क्षेपणकारि क्षय करै । बहुरि पुरुषवेदकूं क्रोधसंज्वलनमें क्षेपै । बहुरि क्रोधसंज्वलनकूं
मानसंज्वलनविषैं क्षेपै । बहुरि मानसंज्वलनकूं मायासंज्वलनविषैं क्षेपै । बहुरि मायासंज्वलनकूं लोभसंज्वलनविषैं क्षेपै । ऐसैं
संक्रमणविधानकारि अनुक्रमणतैं क्षयकारि वादरकृष्टिका विभागकारि, लोभसंज्वलनकूं सूक्ष्म कारि, अर सूक्ष्मसांपरायनाम क्षपक
गुणस्थान दशमांकूं भोगिकारि, तहां समस्तमोहनीयकर्मकूं मूलतैं नाशकारि, क्षीणकपायपणाकूं पायकारि, उतार्‍या है मोहनीय-
कर्मका बोझ जामें तिस बारमां गुणस्थानका उपांत्य कहिये अंत्यसमय ताके पहलैं समये निद्रा प्रचलानाम दोय प्रकृतिका
क्षय कारि, बहुरि पांच ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरण पांच अंतराय इन चौदहप्रकृतिनिका बारमां गुणस्थानके अंतसमये
क्षयकारि, ताके अनन्तरही ज्ञानदर्शन है स्वभाव जाका ऐसा केवलनामा आत्माका पर्याय अचिंत्य है विभूतिका विशेष
जामें ऐसी अवस्थाकूं पावै है । ऐसैं इहां तरेसठि प्रकृतिनिका सत्तामेंसूं नाश कारि केवलज्ञान उपजावै है ।
घातिकर्मकी । ४७ । आयुकर्मकी । ३ । नामकर्मकी । १३ ॥ आगें शिष्य कहै है, जो, मोक्ष कैसे हेतुतैं होय है अर ताका
लक्षण कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥ २ ॥

याका अर्थ— वंधका कारण जे मिथ्यात्व आदि तिनका अभाव अर निर्जरा इन दोऊनितैं समस्त कर्मका अत्यंत
अभाव होय, सो मोक्ष है । तहां मिथ्यादर्शनआदि जे वंधके कारण तिनके अभावतैं तौ नवीन कर्मका वंध नाहीं होय है ।

बहुरि पूर्वैं कहे जे निर्जराके कारण तिनकूं निकट होतैं पूर्वबंध जे कर्म तिनका अभाव होय । ऐसे ए दोऊ कारण होय तब भव कहिये पर्यायकी स्थितिका कारण जो आयुकर्म तिसकी स्थितिके समान स्थिति किये है अवशेष कर्मकी अवस्था जानैं ऐसा केवली भगवान ताकै एककाल समस्त अवशेष कर्मका विप्रमोक्ष कहिये अत्यंत अभाव सो मोक्ष है । ऐसी प्रतीतिरूप करना । इहां कहै है, जो, कर्मका अभाव दोय प्रकार है, यत्नसाध्य अयत्नसाध्य । तहां चरमशरीरी आत्माकै नरक तिर्यच देव इन तीनि आयुका तौ बंध होय नाहीं, तातैं पहलैंही अभाव है, सो तौ अयत्नसाध्य है। अर यत्नसाध्य कहिये हैं, असंयतसम्यग्दृष्टि आदि च्यारि गुणस्थाननिविषैं कोई एक गुणस्थानविषैं मोहनीयकर्मकी सात प्रकृतिका क्षय करै है । बहुरि निद्रानिद्रा; प्रचलाप्रचला; स्त्यानगृद्धि; नरकतिर्यचगति; एकेंद्रिय, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय ए च्यारि जाति; नरकतिर्यंचगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य; आताप; उद्योत; स्थावर; सूक्ष्म; साधारण इन सोलहप्रकृतिनिका अनिवृत्तिबादरसांपरायगुणस्थानविषैं युगपत् क्षय करै हैं । बहुरि तातैं परैं तिसही गुणस्थानमें अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण आठ कषाय क्षय करै है । बहुरि तिसही गुणस्थानमें अनुक्रमतैं नपुंसकवेद अर स्त्रीवेदकूं क्षय करै है। बहुरि तहांही नोकषाय षट्हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा इनकूं एककाल क्षय करै हैं। तापीछैं तिसही गुणस्थानमें अनुक्रमकरि पुरुषवेद संज्वलन क्रोध मान माया इनका अत्यंत नाश करै है । ऐसैं छत्तीस प्रकृतीकी नवमें गुणस्थानविषैं व्युच्छित्ति है । बहुरि लोभसंज्वलन सूक्ष्मसांपराय दशमगुणस्थानविषैं नाशकूं प्राप्त होय है । बहुरि क्षीणकषाय बारमां गुणस्थान जो छद्मस्थ वीतराग ताके उपांत्यसमय जो अंतसमयतैं पहला समय ताविषैं निद्रा प्रचला ए दोय क्षय होय हैं । बहुरि ताके अंतके समय पांच ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरण पांच अंतराय इन चौदहप्रकृतिनिका क्षय होय है । ऐसैं इहांताईं तौ तरेसठि प्रकृतिका क्षय भया । तापीछै अयोगकेवली चौदहवां गुणस्थानमें पिचासी प्रकृति क्षय होय हैं, तामें अंत्यका पहला जो उपांत्यसमय ताविषैं बहत्तरी प्रकृतिका क्षय होय हैं। तिनके नाम दोय वेदनीयमेंसूं एक तौ वेदनीय, देवगति, औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्मण ए पांचशरीर इनके वंधन ५, इनके संघात ५, संस्थान ६, औदारिक वैक्रियक आहारक शरीरके अंगोपांग तीनि ३, संहनन छह ६, वर्ण प्रशस्त अप्रशस्त पांच ५, गंध दोय २, रस प्रशस्त अप्रशस्त ५, आठ स्पर्श ८, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य १, अगुरुलघु १, उपघात १, परघात, १, उच्छ्वास १, विहायोगति प्रशस्त अप्रशस्त २, पर्याप्तक १, प्रत्येकशरीर १, स्थिर अस्थिर २, शुभ अशुभ दोय २, दुर्भग १, सुस्वर दुःस्वर दोय २, अनादेय १, अयशःकीर्ति १, निर्माण १, नीचगोत्र १, ऐसैं बहत्तरी बहुरि ताके अंत्यसमयमें तेरा प्रकृतिका क्षय है, तिनके नाम दोय वेदनीयमेंसूं एक वेदनीय १,

॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥ ५ ॥

याका अर्थ— सर्वकर्मका अभाव भये पीछैं जीव ऊर्ध्वगमन करै है, सो लोकके अंततांई जाय है। बहुरि इहां तदनंतर कहिये ताके अनंतर, सो कौन? सर्वकर्मका अभाव होना ताके अनंतर। बहुरि इहां आलोकान्तात् में आङ् उपसर्ग है सो अभिविधिअर्थमें है। तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, लोकके अंततांई गमन है, आगें अलोकमें नाहीं है। यातैं ऐसा भी जानिये, जो, मुक्त होय तथा तिष्ठै भी नाहीं है बहुरि अन्यदिशाकूं भी न जाय है॥ आगें पूछै है, जो, यह ऊर्ध्वगमनहेतुके कहे विना कैसैं निश्चय करिये? ऐसैं पूछैं ताके निश्चय करनेकूं हेतु कहै हैं—

॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥ ६ ॥

याका अर्थ— पूर्वके प्रयोगतैं असंगपणेतैं बंधके छेदतैं तैसाही गतिपरिणामतैं इन च्यारि हेतुनतैं ऊर्ध्वगमन निश्चय करना। आगें कहै हैं, हेतुका अर्थ पुष्ट भी है तौ दृष्टांत अरु समर्थविना साध्यके साधनेकूं समर्थ नाहीं होय है। तातैं वांछित साधनेकूं दृष्टांत कहिये हैं॥

आविध्दकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥ ७ ॥

याका अर्थ— पूर्वैं हेतु कह्या तिनके ए च्यारि दृष्टांत हैं। फिराये कुम्हारके चाककी ज्यौं लेपतैं रहित भये तूंबीकी ज्यौं एरंडके बीजके ज्यौं अग्निकी शिखाकी ज्यौं ऐसैं च्यारि दृष्टांतनिकारि ऊर्ध्वगमन जानना। पहले सूत्रमें कहे जे च्यारि हेतु अर इस सूत्रमें कहे जे च्यारि दृष्टांत तिनका यथासंख्य संबंध करना। सोही कहिये है। जैसैं कुम्हारके प्रयोगतैं भया जो हस्तका अरु दंडका अर चाकका संयोग, तिसकरि भया जो चाकका फिरना, सो कुम्हार फिरावता रहि गया तौ पहले प्रयोगतैं जहातांई वाके फिरनेका संस्कार न मिटै, तहांतांई फिरवौही करै। ऐसाही संसारविषैं तिष्ठता जो जीव तानैं मुक्तिकी प्राप्तिके अर्थ बहुतवार परिणाम चिंतवन अभ्यासकरि रह्या था सो मुक्ति भये पीछे तिस अभ्यासका अभाव भया, तौ पहले अभ्यासपूर्वक मुक्तजीवकै गमन निश्चय कीजिये है॥

बहुरि जैसैं मृत्तिकाका लेपतैं तूंबा भऱ्या होय उतारि जलविषैं पड्या पीछैं जलके संबंधतैं माटी जाय तब हलका होय जलके ऊपर आय जाय, तैसैं कर्मके भारकरि दब्या परवश भया आत्मा तिस कर्मके संबंधतैं संसारविषैं नियमकरि

पड्या है। जब कर्मका मिलाप दूरि होय तब ऊर्ध्वही गमन होय। बहुरि जैसैं एरंडका बीज एरंडका डोडामें बंधाणरूप था जब डोडा सूकिकरि तिडकै, तब बंधाणमेंसूं उछरि ऊर्ध्व चलै; तैसैं मनुष्यआदि भवकी प्राप्ति करणहारी जे गति जाति नाम आदि सकलकर्मकी प्रकृति ताका बंधाणम आत्मा है, जब इस बंधका छेद होय, तब मुक्तजीवकै गमनहीका निश्चय होय है। बहुरि जैसैं सर्वतरफ गमन करनहारा जो पवन ताका संबंधकरि रहित जो दीपगकी शिखा लोय सो अपने स्वभावतैं ऊंचीही चढै, तैसैं मुक्तजीव भी सर्वतरफ गमनरूप विकारका कारण जो कर्म ताके दूरि होतैं अपना स्वभाव ऊर्ध्वगमनरूप है तातैं ऊंचाही गमन करै है॥

आगैं पूछै हैं, जो, मुक्त भये आत्मा ऊर्ध्वगमनस्वभावी है, तौ लोकके अंततैं ऊर्ध्व क्यौं जाय नाहीं? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥ ८ ॥

याका अर्थ— मुक्तात्मा लोकके अंतताई जाय है। परै अलोकमें न जाय है। जातैं तहां धर्मास्तिकायका अभाव है। गति उपग्रहका कारण जो धर्मास्तिकाय सो लोकतैं परै उपरि नाहीं है। तातैं मुक्तात्माका अलोकमें गमनका अभाव है। बहुरि धर्मास्तिकायका अभाव सर्वत्र मानिये तौ लोकअलोकके विभागका प्रसंग होय। ऐसैं जानना॥

आग पूछैं है, कि, ए निर्वाणकूं प्राप्त भये जीव तिनके गति जाति आदिक तौ कारण नाहीं। तातैं इनविषैं भेदका व्यवहार नाहीं है कि कछू भेदका व्यवहार कीजिये? ताका उत्तर, जो, कथंचित् भेद भी करिये है, सो काहेतैं करिये? ताका सूत्र कहै हैं—

॥ क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुध्दबोधित- ज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— क्षेत्र, काल, गति, लिंग, तीर्थ, चारित्र, प्रत्येकबुद्धबोधित, ज्ञान, अवगाहना, अंतर, संख्या, अल्पबहुत्व इन बारह अनुयोगनिकरि सिद्धजीव भेदरूप साधने। क्षेत्रादि बारह अनुयोगनिकरि सिद्धनिकूं भेदरूप करने। तहां दोय नय लगावणी, प्रत्युत्पन्नग्राहकनय भूतप्रज्ञापननय। इन दो नयनिकी विवक्षाकरि भेद साधना। सोही कहिये हैं। तहां

अपेक्षा चारित्रविनाही सिद्ध भये कहिये । तहां अल्पवहुत्वे नाहीं । वहुरि भूतनयापेक्षया अनतर चारित्र यथाख्यातहीतैं सिद्ध होय हैं। तहां भी अल्पवहुत्व नाहीं। वहुरि अंतरसहित चारित्रकीअपेक्षा पंचचारित्रतैं भये अल्प हैं । तिनतैं संख्यातगुणा च्यारितैं भये हैं । वहुरि प्रत्येकवुद्धनितैं भय अल्प है. । तिनतैं संख्यातगुणा वोधितवुद्ध भये सिद्ध हैं । वहुरि प्रज्ञानकरि प्रत्युत्पन्ननयकीअपेक्षा तौ केवलज्ञानतैं सिद्ध भये तिनमें अल्पवहुत्व नाहीं । वहुरि भूतनयकीअपेक्षा दोय ज्ञानतैं सिद्ध भये अल्प हैं, तिनतैं संख्यातगुणा च्यारि ज्ञानतैं भये सिद्ध हैं । वहुरि तिनतैं संख्यातगुणा तीन ज्ञानतैं भये सिद्ध हैं । वहुरि अवगाहनाकरि जघन्यअवगाहनातैं सिद्ध भये सर्वतैं थोरे हैं। तिनतैं संख्यातगुणा उत्कृष्टअवगाहनातैं भये सिद्ध हैं । तिनतैं संख्यातगुणा मध्यअवगाहनातैं भये सिद्ध हैं । वहुरि संख्याविषैं एकसमयमें उत्कृष्टपणें एकसो आठ सिद्ध होय हैं । ते तौ सर्वतैं थोरे हैं । तिनतैं अनंतगुणा पचासताईंकी संख्यातैं भये सिद्ध हैं । तिनतैं असंख्यातगुणा गुणचासतैं लगाय पचीसकी संख्याताईं भये सिद्ध हैं । वहुरि तिनतैं संख्यातगुणे चोईसतैं लगाय एकताईंकी संख्यातैं भये सिद्ध हैं । ऐसैं जानना । इहांताईं टीकाका व्याख्यान है ॥

ऐसैं तत्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं दशमां अध्याय सम्पूर्ण भया ॥

स्वर्गापवर्गसुखमाप्तुमनोभिरार्यै- । जैनेन्द्रशासनवरामृतसारभूता ॥
सर्वार्थसिद्धिरिति सद्भिरुपात्तनामा । तत्वार्थवृत्तिरनिशं मनसा प्रधार्या ॥ १ ॥

याका अर्थ— स्वर्गमोक्षके पावनेकूं है मन जिनका ऐसे आर्य कहिये महंत पुरुष, तिनकरि यह तत्वार्थकी वृत्ति निरंतर मनकरि धारनेयोग्य है । कैसा है यह ? जिनेंद्रका शासन कहिये मत आज्ञा मार्ग, सोही भया उत्तम अमृत ताका सारभूत है । वहुरि कैसी है ? सर्वार्थसिद्धि ऐसा सत्पुरुषनिकरि पाया है नाम जानैं ॥ १ ॥

तत्वार्थवृत्तिमुदितां विदितार्थतत्वाः । श्रुण्वन्ति ये परिपठन्ति सुधर्मभक्त्या ॥
हस्ते कृतं परमसिद्धिसुखामृतं तै- । र्मर्त्यामरेश्वरसुखेषु किमस्ति वाच्यम् ॥ २ ॥

याका अर्थ— ये पुरुष यह कही जो तत्वार्थवृत्ति ताहि भलेप्रकार धर्मकी भक्तितैं सुणै हैं । वहुरि नीकैं पढैं हैं,

ते जान्या है तत्वार्थका यथार्थस्वरूप जिननें ऐसैं भये संते तिननें परमसिद्धि जो मोक्ष ताका स्वरूप अमृत सो हस्तविषैं किया। अन्य जे चक्रवर्तिपद इन्द्रपदके सुखनिविषैं कछु कहनेयोग्य है कहा? कछु भी नाहीं है ॥ २ ॥

येनेदमप्रतिहतं सकलार्थतत्व- । मुद्योतितं विमलकेवललोचनेन ॥
भक्त्या तमद्भुतगुणं प्रणमामि वीर- । मारान्नतामरगणार्चितपादपीठम् ॥ ३ ॥

याका अर्थ— मैं जु हूं टीकाकार सो तं कहिये वीर कहिये श्रीवर्धमान अंतिमतीर्थंकर परमदेव ताहि भक्तिकरि प्रणाम करौ हौं। ते कौन? जिननें यहु निर्बाध सकलपदार्थका स्वरूप यथार्थ कह्या प्रगट किया। सो कैसैं हैं? वे निर्मल केवलज्ञान हैं नेत्र जिनके। भावार्थ साक्षात् देखिकरि कहे हैं। बहुरि कैसे हैं? अद्भुत आश्चर्यकारी हैं गुण जिनमें। भावार्थ- अतिशयकरि सहित हैं। बहुरि कैसे हैं? निकट आयकरि नमे जे अमर कहिये देव तिनके गण कहिये समूह तिनकरि पूजित हैं सिंहासन जिनका। भावार्थ- सर्व देवनिके देव हैं ॥

आगे तत्वार्थवृत्ति सर्वार्थसिद्धि है नाम जाका तिसविषैं तत्वार्थका दशमां अध्याय समाप्त भया ॥ याका तात्पर्य तत्वार्थवार्तिकविषैं कह्या है सो लिखिये हैं—

ऐसैं निसर्ग अधिगमविषैं एकतैं उपज्या जो तत्वार्थश्रद्धानस्वरूप सम्यग्दर्शन शंकादिअतीचारनिकरि रहित संवेग अनुकंपा आस्तिक्यकरि जाका प्रगट होना ऐसा विशुद्ध ताहि अंगीकारकरि, बहुरि तिसहीकी प्राप्तिकरि विशुद्ध भया जो सम्यग्ज्ञान ताहि अंगीकारकरि, बहुरि नामआदि निक्षेप प्रत्यक्षप्रमाण निर्देश आदि सत् संख्या आदि अनुयोग नैगमादिनय इत्यादिक जे तत्वार्थके जाननेंके उपाय तिनकरि जीवनिके पारिणामिक औदयिक औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक जे भाव ते स्वतत्व हैं, तिनकूं जाणिकरि, बहुरि जीवके भोगके साधन जे अचेतनपदार्थ तिनके उत्पत्तिविनाशस्वभावके जाननेतैं तिनतैं विरक्त तृष्णारहित हूवा संता तीनि गुप्ति पांच समिति दशलक्षण धर्मके आचरणतैं बहुरि तिनका फल देखनेतैं मोक्षकी प्राप्तिके यतनके अर्थि बढाया है श्रद्धान अर संवेग जानें, बहुरि भावनाकरि प्रगट भया है अपना स्वरूप जाकै, बहुरि अनुप्रेक्षाके चिंतवनकरि दृढ किया है परद्रव्यका त्याग जानें, बहुरि संवररूप भया है आत्मा जाका,

आगें तत्वार्थसूत्रका दश अध्यायका जोडरूप संक्षेप अर्थ लिखिये हैं ॥

तहां प्रथम अध्यायमें प्रथमसूत्रमें तौ सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तीनकी एकता है। सो मोक्षमार्ग है ऐसा कह्या। आगें दूसरे सूत्रमें सम्यग्दर्शनका लक्षण कह्या। तीसरे सूत्रमें सम्यग्दर्शनकी उत्पत्ति दोयप्रकार कही। चौथे सूत्रमें सम्मग्दर्शनके विषयभूत सात तत्व कहे। बहुरि इनके स्थापनकूं व्यवहारका व्यभिचार मेंटनेकूं नाम आदि च्यारि निक्षेप कहे। आगें प्रमाणनयनिकारि सम्यग्दर्शनादिक तथा तिनका विषय जीवादिक तत्वनिका अधिगम होय है। बहुरि निर्देशादि छह अर सत् आदि आठ ऐसैं चौदह अनुयोगनिकारि अधिगम होय है, ऐसैं कह्या। बहुरि मति आदि पांच ज्ञानके भेद कहि अर तिनके दोय प्रकार प्रमाण कहे। परोक्ष दोय प्रत्यक्ष तीनि। बहुरि मतिज्ञानके उत्पत्तिके कारण कहि। ताके अवग्रहादिक भेद च्यारि सूत्रमें कहे। ते तीनसै छत्तीस होय हैं। बहरि श्रुतज्ञानका स्वरूप भेद कहे। बहुरि अवधिज्ञानका स्वरूप दोय सूत्रमें कह्या बहुरि मनःपर्ययका स्वरूप कह्या। ताके दोय भेदनिका विशेष कहि अवधिमनःपर्ययमें विशेष कह्या। आगें पांचू ज्ञानका विषय तीनि सूत्रमें कहि। अर एकजीवके एककाल च्यारिताईं ज्ञान होय है ऐसैं कह्या। बहुरि मति श्रुत अवधि विपर्ययस्वरूप भी होय है, ताका कारण कह्या। बहुरि नैगम आदि सात नयकी संज्ञा कहि। प्रथम अध्याय पूर्ण किया ॥ १ ॥

आगें दूसरे अध्यायमें जीवतत्वका निरूपण है। तहां प्रथमही जीवके औपशमिक आदि पांच भाव हैं। तिनके तरेपन भेद सात सूत्रमें कहे। आगें जीवका प्रसिद्ध धर्म देखि उपयोगकूं लक्षण कह्या। ताके आठ भेद कहे। आगें जीवके भेद कहे। तहां संसारी अर मुक्त अर संसारीनिमें संज्ञी असंज्ञी त्रस स्थावर त्रसके भद द्वीन्द्रियादिक पंचइन्द्रियताईं कहे। बहुरि पांच इन्द्रियके द्रव्यइन्द्रिय भावइन्द्रियकारि भेद तिनके नाम विषय कहे। बहुरि एकइन्द्रिय आदि जीवनिके इन्द्रिय पाईये तिनका निरूपण अर संज्ञी जीव कौन ऐसैं कह्या। बहुरि परभवकूं जीव गमन करै ताके गमनका स्वरूप कह्या। आगें जन्मके भेद योनिके भेद अर गर्भज कैसैं उपजै देव नारकी सन्मूर्छन कैसैं उपजै ताका निर्णय है। आगें पांच शरीरनिके नाम कहि। अर तिनके सूक्ष्मस्थूलका स्वरूप कहि। अरु ये जिनकै जैसैं उपजै तिनका निरूपण किया। आगें वेद जिनकै जैसा होय ताकूं कहिकारि जिनके उदय उदीरणाकारि मरण होय तिनका नियम कहि अध्याय पूर्ण किया ॥ २ ॥

आगें तीसरे अध्यायमें जीवका रहनेका लोक है तामें अधोलोक मध्यलोकका निरूपण है। तामें अधोलोकमें सात पृथ्वीनिके नाम कहे तिनविषैं नारकी जीव उपजै है। तिनके बिलनिका परिमाण कह्या। बहुरि जीवनिका अशुभ-

परिणाम आदि कहिकारि तिनकें परस्पर अर असुरनिकारि किया दुःख है ताकूं कहि तिनकी आयुका परिमाण कह्या। आगें मध्यलोकविषैं जंबूद्वीप आदि द्वीप लवणसमुद्र आदि समुद्र हैं तिनका व्यास आकार कह्या। बहुरि जंबूद्वीपका स्वरूप कहि ताके मध्य क्षेत्र हैं कुलाचलपर्वत हैं तिनका नाम वर्ण आकार कह्या। बहुरि कुलाचलनिउपरि ह्रद हैं तिनके नाम व्यासादिक बहुरि तिनमें कमल हैं तिनका व्यासादिक बहुरि तिनमें देवी वसैं हैं तिनकें नाम परिवार आयु कही। आगें ह्रदनिमेंसूं नदी गंगादि निकली हैं तिनके नाम परिवार गमन कह्या। बहुरि भरतक्षेत्रका विस्तार कहि अन्यका विस्तार जनाया। बहुरि भरत ऐरावतक्षेत्रमें काल घटै वधै अन्यमें अवस्थित है ऐसैं कहिकारि भोगभूमिके जीवनिकी स्थिती कही। बहुरि भरतआदि क्षेत्र धातकीखंड पुष्करद्वीपमें हैं सो कहे। मनुष्यक्षेत्रकी मर्यादा कही। कर्मभूमिके क्षेत्र कहे। बहुरि मनुष्यतिर्यंचनिकी आयुका प्रमाण कहि अध्याय पूर्ण किया ॥ ३ ॥

आगें चौथे अध्यायमें ऊर्ध्वलोकका वर्णन है। तामें च्यारिप्रकारके देव कहे। तिनके लेश्या कहि। अर इन्द्र आदि दश भेद कहि। अर इन्द्रनिकी संख्या अर तिनकी कामसेवनकी रीति कहि। बहुरि भवनवासीनिके भेद व्यंतरनिके भेद ज्योतिषीनिके भेद कहे। बहुरि ज्योतिषीनिका गमनका प्रकार अर मनुष्यक्षेत्रविषैं इनकारि कालका विभाग है। मनुष्य-क्षेत्रतैं परैं अवस्थित है ऐसैं कह्या। आगें विमानवासी देव तिनविषैं कल्प कल्पातीतका भेद बहुरि स्वर्गनिका नाम अर तिनके आयु आदि वधते वधते अर गमन आदि घटते घटते उपरि उपरि है सो कहि तिनकी लेश्या कहि। ग्रैवेयक पहली कल्प कहे। बहुरि पांचमां स्वर्गमें लौकांतिक देव हैं तिनके जातिभेदके नाम कहे। बहुरि औपपादिक मनुष्यसिवाय रहे ते जीव सर्व तिर्यंच हैं ऐसैं कह्या। आगें तिन देवनिकी आयुके निरूपणमें भवनवासीनिकी उत्कृष्टि कहि। अर स्वर्ग-वासीनिकी उत्कृष्टि जघन्य कही। अर नारकीनिकी जघन्य कही। भवनवासी व्यंतरनिकी जघन्य कही। अर उत्कृष्ट व्यंतर ज्योतिषीनिकी कही। ऐसैं चौथा अध्याय पूर्ण किया ॥ ४ ॥

आगें पांचमां अध्यायमें अजीवतत्वकूं प्रधानकारि निरूपण है। तहां धर्मआदि च्यारि अजीवास्तिकाय कहि। अर जीवास्तिकाय कह्या। तिन पांचनिकूं द्रव्य कहे। तिनमें च्यारि अरूपी पुद्गल रूपी अर आकाशताांई तीनि एकएक द्रव्य क्रियारहित कहे। धर्म अधर्म एकजीवके असंख्यातप्रदेश कहे। आकाशके अनंत कहे। पुद्गलके स्कंधकी अपेक्षा तीनूं प्रकार कहे। अणूके प्रदेश नाहीं, अर आकाशका उपकार, अवगाह, गति, स्थिति, धर्म, अधर्मका उपकार, शरीरादिक जीवकूं पुद्गलके उपकार, जीवनिकें परस्पर कालद्रव्यका वर्तना उपकार कह्या। बहुरि पुद्गलके स्पर्शआदि गुण शब्दआदि पर्याय कहे। अणुस्कंधभेद कहे। बहुरि द्रव्यका सत सामान्यलक्षण कह्या। नित्यताका स्वरूप कह्या। बहुरि मुख्यगौणकारि

भयौ बोध तव कछु चिंतयो । करन वचनिका मन उमगयौ ॥ सब साधरमी प्रेरण करी । ऐसैं मैं यह विधि उचरी ॥ १० ॥
काल अनादि भ्रमत संसार । पायौ नरभव मैं शुभकार ॥ जन्म फागई लयौ सुथानि । मोतीराम पिताके आनि ॥ ११ ॥
पायौ नाम तहां जयचंद । यह परजाय तणूं मकरंद ॥ द्रव्यदृष्टि मैं देखूं जवै । मेरा नाम आतमाकवै ॥ १२ ॥
गोत छावडा श्रावकधर्म । जामें भली क्रिया शुभकर्म ॥ ग्यारह वर्ष अवस्था भई । तव जिनमारगकी शुधि लही ॥ १३ ॥
आन इष्टिकौ ध्यान अयोगि । अपने इष्ट चलन शुभ भोगि ॥ तहां दूजौ मंदिर जिनराय । तेरापंथ पंथ तहां साज ॥ १४ ॥
देवधर्म गुरु सरधा कथा । होय जहां जन भाषैं यथा ॥ तव भो मन उमग्यो तहां चलो । जो अपनूं करनो है भलो ॥ १५ ॥
जाय तहां श्रद्धा दृढ करी । मिथ्या बुद्धि सबै परिहरी ॥ निमित पाय जयपुरमें आय । वडी जु शैली देखी भाय ॥ १६ ॥
गुणी लोक साधर्मी भले । ज्ञानी पंडित वहुते मिले ॥ पहलें थे वंशीधर नाम । धरै प्रभाव भाव शुभ ठाम ॥ १७ ॥
टोडरमल पंडित मति खरी । गोमटसार वचनिका करी ॥ ताकी महिमा सवजन करैं । वाचै पढै बुद्धि विस्तरैं ॥ १८ ॥
दौलतिराम गुणी अधिकाय । पंडितराय राजमैं जाय ॥ ताकी बुद्धि लसै सब खरी । तीन पुराण वचनिका करी ॥ १९ ॥
रायमल्ल त्यागी गृहवास । महाराम व्रतशीलनिवास ॥ मैं हूं इनकी संगति ठानि । बुधि सारू जिनवाणी जानि ॥ २० ॥
लखे पुराण आदि उत्तरा । और पुराण चरित्र जु खरा ॥ गोमटसार लब्धि पण सार । क्षपणसार तिलोक सुसार ॥ २१ ॥
टोडरमलकृत भाषा तणां । पाय सहाय संस्कृति भणा ॥ मूलाचार श्रावकाचार । लखे विचारे बुद्धि अनुसार ॥ २२ ॥
समयसार अध्यातमसार । प्रवचनसार रहसि मनधारि ॥ पंचास्तिकाया ए तीनि । नाटक त्रयो कहावै वीन ॥ २३ ॥
तत्वारथसूत्रकी टीका । सर्वार्थ सिद्धि नाम सुटीका ॥ दूजी तत्वारथवार्तिका । श्लोकरूप वार्तिक तार्तिका ॥ २४ ॥
तिनकौ कछू कियौ अभ्यास । बुद्धि जिसी जिम पायौ ख्यास ॥ पद्धति न्यायतणी इनमाहि । सो भी कछू विचारी जाहि ॥ २५ ॥
ग्रंथ परीक्षामुख संभलो । है प्रमाणकौ वर्णन भलौ ॥ देवागमस्तुति टीकासार । अष्टसहस्री नाम सुधार ॥ २६ ॥
आप्तपरीक्षादेखी सार । अर प्रमाणनिर्णय निरधार ॥ न्यायदीपिका सुगमप्रचार । सो पहलैं पढनेमें सार ॥ २७ ॥
देवसेनकृत गाथाबंध । है नयचक्र वढौ अर बंध ॥ और ग्रंथ जिनमतमें घणे । पाये जेशुभविधिवश वर्णे ॥ २८ ॥
ते भी कछु विचारे जवै । स्याद्वादमें समझे तवै ॥ नयप्रमाणकी कथनी महां । गुरुविन पार न पावै जहां ॥ २९ ॥
पै अभ्यास जोर वहु कियौ । बीजरूप सामान्य जु लीयौ ॥ और ग्रंथ बुधिसारू लखे । अपने मत परके मत अखे ॥ ३० ॥
नंदलाल मेरा सुत गुनी । बालपनेतैं विद्या सुनी ॥ पंडित भयौ वढौ परवीन । ताहूने प्रेरण यह कीन ॥ ३१ ॥
कोई ग्रंथ वचनिका करो । जामें सब समझें इम धरो ॥ मैं हूं तवै विचारी एम । रची वचनिका यह धरि प्रेम ॥ ३२ ॥

हीनाधिक यामें कछू होय। पंडित लोग सुधारो सोय ॥ ख्यातिलाभपूजाके हेतु । रची नाहिं इम शुभफल हेतु ॥ ३३ ॥
वांचौ पढौ पढावौ सुनूं । तत्वारथकूं जानू गुनू ॥ करौ प्रसिद्धि सबै धरि चाव । सतपुरुषनिकौ यहै स्वभाव ॥ ३४ ॥
हीनाधिक लखिहँसियो नाहिं । अल्पबुद्धि में क्षमा कराहिं ॥ यह मेरी प्रार्थना संभारि । अपनी उत्तमताकौं धारि ॥ ३५ ॥

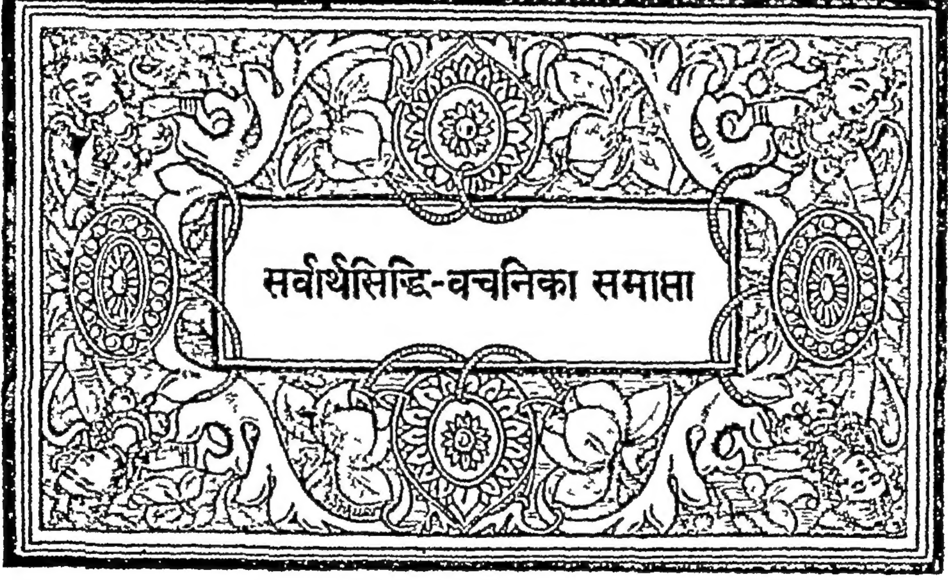
॥ सवैया ॥

शब्दकौ उच्चार सोहै पुद्गलविकार और अक्षरप्रकार इच्छा जीवकी मिलै जवैं ।
श्याही पत्र लेखनी हू पुद्गल दरवि जानूं क्रिया जीवके प्रदेश इच्छातैं हलै तवैं ॥
ग्रंथ रचनेकौ राग मोहकौ विकार शुभ ए तौ सबै पुद्गल हैं जीवकौ कहा फवैं ।
तातैं करनेकौ अभिमान तजो पंडित हो चेतनास्वरूप आप लखौ यो भलै अवैं ॥ ३६ ॥

दोहा— संवत्सर विक्रम तणूं । शिखि रस गज शशि अंक ॥
चैतशुक्ल तिथि पंचमी । पूरण पाठ निशंक ॥ ३७ ॥

॥ छप्पय ॥

मंगलमय अरहंत सिद्ध मंगल विनिकाई ।
आचारज उवझाय साधु मंगल सुखदाई ॥
वाणी मंगलरूप स्यातपद मुद्रित सांची ।
धर्मशुद्ध निजरूप क्षमादिक हैं गुणवाची ॥


सर्वार्थसिद्धि-वचनिका समाप्त